श्रीमती सरोजिनी नायडू के सामाजिक एवं राजनैतिक विचार - एक अध्ययन

[Social and Political Ideas of Smt SAROJINI NAIDU-A Study]

इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डॉक्टर आफ फिलासफी उपाधि के लिए प्रस्तुत

शोध - प्रबन्ध
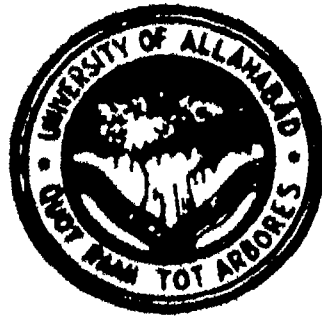
शोधकर्ता
निर्भय सिंह

निर्देशक
श्री डी०पी० घोष
अवकाश प्राप्त अध्यापक
राजनीति विज्ञान विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

राजनीति विज्ञान विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
2003

मेरे प्रिय अनुज स्व0 धीरेन्द्र सिंह
को सादर समर्पित
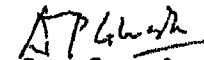
स्व0 धीरेन्द्र सिंह
स्वर्गवास दिनांक 16 नवम्बर, 2002

प्रमाण - पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि श्री निर्भय सिह आत्मजा स्व0 शिवकुमार, मार्च 1997 से इलाहाबाद विश्वविद्यालय के राजनीति विज्ञान विभाग में मेरे निर्देशन में शोध छात्र के रूप में पजीकृत हैं। इनके शोध का विषय "श्रीमती सरोजिनी नायडू के सामाजिक एव राजनैतिक विचार" - एक अध्ययन, इनका शोध कार्य पूरा हो चुका है। तथा इनके शोध प्रबन्ध का मेरे द्वारा अवलोकन किया गया है अत इन्हें शोध प्रबन्ध प्रस्तुत करने की अनुमति प्रदान की जाती है।

हस्ताक्षर

डी0 पी0 घोष

राजनीति विज्ञान विभाग,

इलाहाबाद विश्वविद्यालय

इलाहाबाद

प्रस्तावना

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध श्रीमती सरोजिनी नायडू के सामाजिक एव राजनैतिक विचारों के विश्लेषण का प्रयास है अत इन्हीं दो पक्षों के विशेष सन्दर्भ में यह अध्ययन प्रस्तुत किया गया है।

भारत में सरोजिनी नायडू के योगदान को हमेशा याद किया जायेगा, इस विलक्षण महिला की मूलात्मा को पकड़ पाना और फिर उसे शब्दों में निरूपित करना उतना ही असम्भव कार्य है जितना की सूर्योदय एव सूर्यास्त का वर्णन करना। अगर उनके योगदान पर, उस क्रान्तिकारी युग में अपने उच्च आदर्शों, बलिदानों और वक्तव्य कौशल द्वारा इस देश को एक सूत्र में बाधने के लिए एक नेता के रूप में किया।

सरोजिनी नायडू के सम्बन्ध उनके जीवन के 1919 से 1936 के उस काल के वारे में अधिक सामग्री प्राप्त नहीं हो सकी जिसमें वह बम्बई काग्रेस की राजनीति में अधिक व्यस्त थी क्योंकि प्राय लोग पत्र, टिप्पणिया और ऐतिहासिक अभिलेख तथा कागज, फोटो, अखबारों की फाइलें आदि नहीं रखते ऐसा ही सरोजिनी नायडू के बारे में भी है। क्योंकि इतनी बड़ी कवियत्री, स्वतत्रता आन्दोलन की नेता होने के बावजूद भी उनके बारे में ऐतिहासिक एव तथ्यात्मक जानकारी कम मिलती है।

सरोजिनी नायडू के असख्य मित्र और सहयोगी थे। सरोजिनी नायडू ने जिस समय जन्म लिया उस समय हिन्दुस्तान अग्रेजी शासन के अधीन था। अग्रेज सरकार भारतीयों पर तमाम जन विरोधी कानून बनाकर जनता के उपर जुल्म और ज्यादती करते थे। जनता पर हो रहे अत्याचारों एव परिवार में विद्वानों एव राजनीतिक, समाज सुधारकों के सम्पर्क के कारण सरोजिनी कवियित्री एव समाज सुधारक बनी, तथा आजादी के आन्दोलन का एक हिस्सा बनीं और स्वतत्रता आन्दोलन में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। कठिनाइयों एव परेशानियों के बावजूद अग्रेजी शासन से लोहा लिया। वह अकेली ऐसी महिला थी जिन्होंने काग्रेस के आन्दोलन में हिस्सा लिया एव काग्रेस की अध्यक्ष बनीं। वह सामाजिक बुराइयों के प्रति हमेशा सचेत रहीं एव महिलाओं को आगे मुख्यधारा में लाने का जमकर प्रयास किया और अग्रेजों तथा इस सम्बन्ध में वह अपने सहयोगियों से भी लड़ती थी। वह जातिवाद से परे तथा सीमाओं में बधना उनको पसन्द नहीं था वह खुले विचारों की स्वतत्र महिला थी वह

विनोदी स्वभाव की थी। वह मजदूरी एव प्रवासी भारतीयों के खिलाफ हो रहे अत्याचार के विरुद्ध हमेशा भाषण देती रही। हिन्दू मुस्लिम एकता का उन्होंने जो प्रयास किया वह किसी भी अन्य नेता ने नहीं किया। वह ससार के सभी परतन्त्र राष्ट्रों के प्रति कृतज्ञ भाव से देखती थी एव उनके आजादी की पक्षधर थी। वह हास्य एव व्यग्य के जरिये अपनी तार्किक शक्ति का परिचय अपने सहयोगियों को देती रहती थीं। उन्होंने बचपन से लेकर अध्ययन एव कविता तथा समाज सुधार के साथ राजनीतिक आन्दोलनों में भाग लिया। आजादी के लिए प्रत्येक सघर्ष में वह पुरुषों के साथ कधा से कधा मिलाकर चली, राज्यपाल के रूप में भी उन्होंने अपना स्वभाव नहीं छोड़ा और अपनी कार्यशैली को अजाम देती रहीं। वह महान थी इसीलिए मात्र भारत वर्ष में ही नहीं बल्कि विदेशों में भी उनके कार्यों एव सघर्षो की चर्चा होती है एव उनका नाम इज्जत एव सम्मान से लिया जाता है। तथा 13 फरवरी को महिला दिवस के रूप में भारतवर्ष मनाता है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में श्रीमती सरोजिनी नायडू के सामाजिक एव राजनैतिक विचार एक अध्ययन विषय को छ अध्यायों में किया गया है।

प्रथम अध्याय में श्रीमती सरोजिनी नायडू के व्यक्तित्व के बारे में अध्ययन किया गया है। चूकि सरोजिनी नायडू ने जिस परिवार में जन्म लिया था वह परिवार विद्वान एव शिक्षित था, उनके पिता स्वय रसायन शास्त्र से डाक्टरेट करने के बाद भी दिन प्रतिदिन अपनी घरेलू प्रयोगशाला में अनेक नये-नये प्रयोग करते रहते थे, वह एक सामाजिक व्यक्ति थे उनके यहाँ राजनीतिक, विद्वान एव समाज सुधारक आते जाते रहते थे वह सभी का आदर भी करते थे। उनकी माता भी एक कुशल गृहणी थी वह भी बगला में कवितायें लिखती एव गाया करती थीं। जिनका प्रभाव सरोजिनी पर पड़ा, घर में समाज सुधार एव राजनीति तथा शिक्षा सम्बन्धी चर्चायें हमेशा होती रहती जिससे घर का माहौल, उच्च-नीच, जाति-पाँति, साम्प्रदायिकता से परे था। इसका प्रमाण सरोजिनी के विवाह से दिया जा सकता है क्योंकि सरोजिनी नायडू ने अध्ययन, एव 19-20 वर्ष की आयु में अपने से दूसरी जाति एव दूसरे प्रदेश के विधुर व्यक्ति से विवाह कर के दिया, जिससे, जाति प्रथा प्रदेश की सीमायें एव बाल विवाह एक सिरे से नकारे जा सकते हैं। सरोजिनी एक सशक्त व्यक्तित्व की महिला

थीं एव विनोदी स्वभाव की थी, उनके बारे में राजगोपालाचार्य ने लिखा था ''सरोजिनी देवी असदिग्ध रूप से उन थोड़े से लोगों में से थीं जिनमें स्वाधीनता सघर्ष के दौरान वास्तविकताओं की परख के साथ-साथ हास्य विनोद की क्षमता भी जुड़ी थी'' राबर्ट बर्ने ने उन्हें अपनी ''दि नेकेड फकीर'' नामक पुस्तक में ''महात्मा गाधी के छोटे से दरबार की विदूषक की पदवी दी।'' महात्मा गाधी को तो उन्होंने ''मिकी माउस'' की उपाधि दे डाली थी।

द्वितीय अध्याय में श्रीमती सरोजिनी नायडू के साहित्य में योगदानों का अध्ययन किया गया है। श्रीमती सरोजिनी नायडू बचपन से ही कल्पना में खोयी रहती थीं। भरे-पूरे परिवार में होते हुए भी कभी-कभी वह अपने आपको कल्पनालोक में लीन पातीं। पिता की इस इच्छा के विपरीत भी वह गणितज्ञ या वैज्ञानिक बने। वह बीजगणित के सवाल को हल करने के प्रयास में 11 वर्ष की आयु में कवियित्री बन गयीं और ''लेडी ऑफ द लेक'' नामक 1300 पक्तियों की कविता छ दिनों में लिख डाली। प्राय उनकी कविता की भाषा अग्रेजी थी और वह अग्रेजी में ही कविता लिखती थी किन्तु उन्होंने उर्दू में भी गजलें लिखीं, फारसी में एक नाटक लिखा ''मोहर, मुनीर'' जो स्थानीय पत्रिका में छपा, हैदराबाद के निजाम भी इससे प्रभावित हुए। सरोजिनी नायडू ने एक उपन्यास भी लिखा। वह प्राय अग्रेजी परिप्रेक्ष्य में ही कवितायें लिखती थीं। सबसे पहले ''साग्ज'' 1896 में प्रकाशित हुयी ''द गोल्डेन थ्रेसोल्ड'' 1905 में प्रकाशित हुयी और इग्लैण्ड में सबसे अधिक बिकने वाली पुस्तकों में थी। डब्ल्यू0 हीनमान ने 1912 में ''द बर्ड ऑफ टाइम'' और 1917 में ब्रोकन बिग'' प्रकाशित किया। डाडमीड एड कम्पनी ने सन् 1937 ई0 में ''द स्केप्टर्ड फूलूट'' प्रकाशित किया। इसकी भूमिका जोसेफ आसलैडर ने लिखी है। ''द गिफ्ट ऑफ इडिया'' 1914 और 1915 में मुद्रित हुयी। ''द सोल ऑफ इण्डिया'' 1917 में कैम्ब्रिज प्रेस ने छापा। ''फादर ऑफ डान'' 1961 में प्रकाशित हुयी जिसे उनके मरणोपरान्त उनकी बेटी पद्मजा नायडू ने एशिया पब्लिशिग हाउस, बम्बई द्वारा प्रकाशित किया। कलकत्ता के राष्ट्रीय पुस्तकालय, अभिलेखागार में उनकी कुछ प्रारम्भिक कवितायें सुरक्षित हैं। एक गद्य गीत ''नीलाम्बुज'' में उन्होंने प्रवाहशील और अलकारिक भाषा में स्वप्नलोक की रचना की है।

इस तरह सरोजिनी अग्रेजी कविता के अलावा ऊर्दू में, गजलें एव फारसी में नाटक तथा उपन्यास, गद्यगीत सहित तमाम रचनाओं के माध्यम से देश विदेश को आकर्षित किया।

तृतीय अध्याय में श्रीमती सरोजिनी नायडू के सामाजिक विचारों का विश्लेषण किया गया है। साहित्य समाज का दर्पण होता है, किसी भी कवि के विचार उसकी कविताओं में उसी प्रकार समझे जा सकते हैं जैसे एक लेखक के उसकी रचनाओं में एक उपन्यासकार के विचार उसकी उपन्यासों एव कहानीकार के विचार उसकी कहानियों से। सरोजिनी चूकि एक सशक्त व्यक्तित्व एव विचारशील महिला थी। इस कारण उन्होंने महिला एव समाज सुधार पर अधिक बल दिया। उन्होंने हर जगह महिलाओं के अधिकारों की वकालत की एव उनके अधिकारों के लिए लड़ीं। उन दिनों महिलाओं की स्थिति समाज में अच्छी नहीं थी उन्हें बाहर निकलने की मनाही, बचपन में विवाह कर देना एव विधवा विवाह न होने की वह हमेशा खिलाफ रहती थीं। वह पुरुषों के समान अधिकार की पक्षधर थीं वह देश एव समाज का सर्वांगीण विकास तब तक सम्भव नहीं मानती थी जब तक पुरुष अपने समान महिलाओं को अधिकार नहीं देते। वह महिलाओं की शिक्षा पर हमेशा जोर देती थी। बचपन से उन्होंने समाज सुधार के गुर अपने माता-पिता से सीखे थे। वह हमेशा अपने प्रत्येक भाषण में महिलाओं के बारे में बोलती थीं। उनको शिक्षा सहित समाज में आगे आने और हर क्षेत्र में बढ चढकर हिस्सा लेने के लिए प्रेरित एव उत्साहित करती थीं। आजीवन वह महिलाओं के लिए लड़ती रहीं। वह जाति प्रथा के विपरीत थीं तथा देश एव प्रदेश की क्षेत्रीय सीमाओं से उपर थीं, उन्होंने अपना विवाह अन्तर्जातीय एव अर्न्तप्रदेशीय किया। वह ऊँच-नीच एव छुआछूत को राष्ट्र के विकास एव स्वाधीनता आन्दोलन में बाधक मानती थीं। हैदराबाद हिन्दू-मुस्लिम सस्कृति के समन्वय का शहर था। वहा सरोजिनी का जन्म एव बचपन बीता इसलिए वह हिन्दू-मुस्लिम एकता की जरूरत हमेशा महसूस करती रहीं एव अपने जीवन में सबसे अधिक प्रयास उन्होंने इसी क्षेत्र में किया। हिन्दू-मुस्लिम एकता के सम्बन्ध में काग्रेस एव स्वतत्रता आन्दोलन के सभी नेता इनकी कद्र करते थे एव गाधी जी भी इस सम्बन्ध में बिना सरोजिनी के कुछ नहीं करते थे वह अक्सर मुस्लिम बैठकों में आमन्त्रित की जाने

वाली अकेली महिला एव नेता हुआ करती थीं। जिनकी मुस्लिम इज्जत एव सम्मान करते थे। वह मु0 अली जिन्ना को बहुत मानती थीं वह चाहती थीं कि हिन्दू एव मुस्लिम एकता के बिना भारत की आजादी व्यर्थ है। इस सम्बन्ध में इन्होंने कई जगहों पर अपने विचार रखे। सामाजिक विचारों में वह शर्तबन्द कुली प्रथा से बहुत आहत रहती थीं। उनके विचारों से स्पष्ट होता है कि वह अपने भाई-बहनों, जो धोखे से मजदूरों के रूप में द्वीपों में ले जाये जाते हैं। वहा उनपर बहुत अत्याचार होते थे। जो स्त्रियाँ वहाँ मजदूरों के रूप में काम करने जाती हैं वहाँ उनपर बहुत जुल्म और अत्याचार किया जाता है। मानवता के प्रति इससे बड़ा स्नेह एव विचार क्या हो सकता है कि कई भाषणों में उन्होंने पुरुषों को ललकारते हुए कहा कि तुम्हारी माताओं एव बहनों के साथ जुल्म एव अत्याचार हो रहा है और तुम खामोश हो। वह हमेशा शर्तबन्द कुली प्रथा का विरोध करती रहीं।

चतुर्थ अध्याय - श्रीमती सरोजिनी नायडू के राजनीतिक विचारों का विश्लेषण इस अध्याय में किया गया है। राजनीति के क्षेत्र में श्रीमती नायडू का प्रवेश 1913 में हुआ जब इन्होंने लखनऊ की मुस्लिम लीग में हिन्दू मुस्लिम एकता के सम्बन्ध में बड़ा प्रभावपूर्ण भाषण दिया था। उसके फलस्वरूप दो वर्ष के भीतर ही दोनों जातियों का राजनैतिक वैमनस्य कम से कम कुछ समय के लिए बहुत कुछ गिर गया।

सन् 1915 से श्रीमती नायडू भारत की राष्ट्रीय काग्रेस में भाग लेने लगीं और तब से अधिकाधिक उत्साह के साथ काग्रेस के द्वारा देश सेवा में लगी रहीं। 1915 में श्रीमती नायडू काग्रेस में सम्मिलित हुयीं। सरोजिनी नायडू की कीर्ति राजनीतिक क्षेत्र में दिन प्रतिदिन बढ़ती ही गयी और काग्रेस द्वारा चलाये गये प्रत्येक राजनीतिक आन्दोलनों में सिरकत किया एव अपने विचार रखे। प्रारम्भ में 1916 में सरोजिनी नायडू ने लखनऊ की काग्रेस स्वराज्य के प्रस्ताव के समर्थन में अपने विचार रखे एव बहुत ही प्रभावपूर्ण भाषण दिया। उनके विचार थे कि "हम सब एक हो गये हैं और ऐसे जोर से एक हुये हैं कि कोई भी बाहरी शक्ति यहा तक कि उपनिवेश भी हमें हमारे अधिकारों और रियायतों से तथा उन स्वतत्रताओं से वचित नहीं रख सकते जो हमारी है एव जिसका दावा हम सब मिलकर कर रहे हैं।

स्वराज्य का दावा करने में श्रीमती नायडू प्रथम श्रेणी के नेताओं में थीं। उनका दृढ़ विश्वास है कि राष्ट्र अपने ही बल पर स्वराज्य होते हैं। दूसरा राष्ट्र कृपा करके अपने अधीन राष्ट्र को स्वराज नहीं दिया करते। यद्यपि मान्टेग्यू सुधारों के समय आल इण्डिया होम रूल लीग का जो डेपुटेशन जुलाई 1919 में इग्लैण्ड गया उसमें सरोजिनी नायडू भी थीं। और इन्होंने अपने व्याख्यानों द्वारा भारतीय भाग की स्वतन्त्रता ब्रिटिश जनता के सामने प्रतिपादित की थी। किन्तु ज्यों ही महात्मा गाधी के नेतृत्व में काग्रेस ने असहयोग द्वारा स्वराज्य लेने की ठानी त्यों ही सरोजिनी असहयोग सेना में सबसे पहले भर्ती हो गयीं।

मद्रास के गोखले हाल में रौलट एक्ट के विरुद्ध जो सभा हुयी उसमें सरोजिनी ने कहा कि हमें बड़ी लम्बी-चौड़ी वकृताए देकर ही चुप न हो जाना चाहिए। बल्कि इस एक्ट का विरोध करने में सब कुछ भूल जाना चाहिए। केवल प्रस्ताव पास कर लेने से कुछ नहीं होगा हम भीख नहीं मागते हैं। रौलट एक्ट के विरुद्ध महात्मा गाधी जी ने सत्याग्रह का जो परिपत्र तैयार किय था सरोजिनी ने सबसे पहले उस पर हस्ताक्षर बनाया तब सरोजिनी महात्मा गाधी सहित अन्य नेताओं के साथ 7 अप्रैल 1919 को प्रतिबन्धित किताबें बेचीं।

गाधी के अहिंसात्मक आन्दोलन में क्रियात्मक भाग लिया एव महात्मा गाधी की अत्यन्त विश्वासपात्र बन गयीं तब उन्होंने भारत में ही नहीं विलायत में भी खिलाफत और पजाब के अत्याचारों तथा स्वराज्य के लिए आन्दोलन किया। महात्मा गाधी के नेतृत्व में अहिंसात्मक आन्दोलन का नेतृत्व स्वीकार किया। वायसराय को उन्होंने अपना "केसरे हिन्द" का तमगा भी वापस कर दिया था। 1920 में पजाब में हुए अत्याचारों का विरोध किया। हिन्दू-मुस्लिम एकता का जबरदस्त प्रयास किया। भारतीय जातियों के एकता के प्रयास में बल दिया। शर्तबन्द कुली प्रथा का विरोध किया। प्रवासियों पर हो रहे अत्याचारों के खिलाफ अपनी आवाज बुलन्द करने में वह नहीं हिचकिचायीं। अपने विचारों के माध्यम से सरोजिनी ने कई बार सरकार को सावधान होने की चेतावनी दी। मालाबार के अत्याचारों से सरोजिनी कराह उठी थीं। इसमें उन्होंने सरकार को जमकर लताड़ा। राष्ट्र के लिए उन्होंने महात्मा गाधी के विचारों को सहमति प्रदान की लेकिन वह ऐसा नहीं कि महात्मा गाधी के विचारों को

वह आँख मूदकर मान लें वह सोच समझ कर ही अपने विचार रखती थीं। कहीं-कहीं महात्मा गाधी से भिन्न भी उन्होंने अपने विचार व्यक्त किये। वह एशिया महाद्वीप की विशेषता एव गुलाम राष्ट्रों के बारे में चिन्तित रहती थीं एव उन्हें सावधान करती रहती थीं। 1925 में वह राष्ट्रीय काग्रेस की प्रथम भारतीय एव द्वितीय महिला अध्यक्ष बनीं। जिसमें उन्होंने बहुत ही सगठित तरीके से कार्यक्रम प्रस्तुत किये। एक प्रस्ताव रखे। वह स्वतत्र भारत की पहली महिला राज्यपाल के रूप में भी कार्य किया

पाँचवा अध्याय - श्रीमती सरोजिनी नायडू स्वतत्रता आन्दोलन एव उसके पश्चात प्रस्तुत अध्याय में श्रीमती सरोजिनी नायडू के राष्ट्रीय आन्दोलन, स्वतत्रता आन्दोलन एव उसके सहभागिता एव विचारों के विश्लेषण का अध्ययन किया गया है, उन्होंने प्रारम्भ से ही राजनीतिक आन्दोलनों में हिस्सा लेना आरम्भ किया था उन्होंने महात्मा गाधी द्वारा आजादी के लिए किये गये सभी आन्दोलन में पूरी निष्ठा एव ताकत के साथ हिस्सा लिया। वह अग्रेजी हुकूमत के खिलाफ थी वह अग्रेजों द्वारा भारतीयों के ऊपर थोपे जा रहे कानूनों का जो जनता के लिए अनुचित थे, विरोध करती थीं। इस सम्बन्ध में वह कई बार जेल भी गयीं। 1932 को जब सभी काग्रेसी नेता जेल में थे तो 3 मार्च 1932 को एक वक्तव्य जारी कर जनता को आन्दोलन के लिए प्रेरित किया। 12 मार्च 1930 को डाडी यात्रा शुरु हुयी 6 अप्रैल को जब गाधी जी नमक कानून तोड़ने समुद्र तट पर गये तो सरोजिनी उनके साथ थीं उसी समय वह चिल्ला उठीं "मुक्तिदूत को प्रणाम" उसके बाद हजारों स्त्री पुरुष समुद्र में घुस गये। उन्होंने कहा कि अब औरतें होने का बहाना लेकर आन्दोलन से अलग नहीं रह सकती। उन्हें आजादी की लड़ाई में खतरों और बलिदान में पुरुषों की तरह बराबर हिस्सा लेना होगा। पुलिस ने उन्हें घरसाना नमक कारखाने के पास रोक लिया सरोजिनी ने आन्दोलनकारियों से अहिंसात्मक आन्दोलन की अपील की।

आगे पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया। और कारावास भेज दिया गया। गोलमेज सम्मेलन के समय 1931 में गाधी जी और सरोजिनी को रिहा कर दिया गया। दूसरे गोलमेज सम्मेलन के लिए 29 अगस्त 1931 को पानी की जहाज से लदन गाधी जी और सरोजिनी गये। सम्मेलन में सरोजिनी ने भारत और महिलाओं के लिए आवाज उठायी। गोलमेज के खत्म होने के बाद सरोजिनी को दक्षिणी अफ्रीका

जाने वाले प्रतिनिधि मडल का सदस्य नियुक्त करके वहाँ भेज दिया गया। 1932 में सरोजिनी ने डाकखानों का बहिष्कार करने के लिए डाक सप्ताह मनाने का आदेश जारी किया।

यरवदा जेल से सरोजिनी को 8 मार्च 1933 को रिहाकर दिया गया। 1935 में काग्रेस की स्वर्णजयन्ती मनाई जा रही थी सरोजिनी बम्बई प्रान्त की काग्रेस की अध्यक्षा थीं। सरोजिनी इस वक्त बहुत व्यस्त थीं। राजनीतिक गतिविधियाँ नये मोड़ ले रही थी आजादी की लड़ाई ने सुभाष चन्द्र बोस के नेतृत्व में उग्र रूप धारण कर लिया था।

तृतीय विश्व युद्ध शुरु हो गया था चारों तरफ स्थिति तनाव पूर्ण थी, सरोजिनी शान्ति की स्थापना चाहती थीं। 1940 में काग्रेस ने अहिंसात्मक सविनय अवज्ञा का झडा उच्च रखने के लिए व्यक्तिगत सत्याग्रह शुरु किया।

जुलाई 1942 में काग्रेस अधिवेशन में "भारत छोड़ो" आन्दोलन का प्रस्ताव पास किया इसके बाद सरोजिनी कस्तूरबा गाधी को आगा खाँ महल में नजरबन्द कर दिया गया व अगस्त 1942 को भारत छोड़ो आन्दोलन शुरु हो गया। गिरफ्तारिया हुयी सरोजिनी को जेल की यह लम्बी यातना कई वर्ष झेलनी पड़ी। 1945 में रिहा होने के बाद शिमला सम्मेलन, इसमें जिन्ना पाकिस्तान बनाने के लिए अड़ गये। 11 दिसम्बर 1946 को स्वतत्र भारत का सविधान बनाने की कार्यवाही शुरु की गयी इसमें सरोजिनी ने कहा था कि "भारत का सविधान भारत की प्रत्येक मनुष्य की स्वतत्रता और मताधिकार, पूर्ण नागरिकता का सविधान है, भले ही वह राजकुमार हो या किसान।" 22 मार्च 1947 को नई दिल्ली में 'एशियाई सम्बन्ध सम्मेलन' हुआ उसकी अध्यक्षता सरोजिनी नायडू ने की। दीवार पर एशिया का मानचित्र टगा था, उस सम्मेलन में एशिया के कई देशों ने भाग लिया।

अपने अध्यक्षीय उद्‌बोधन में उन्होंने कहा "हम एशिया के लोग सकटों से पराजित और किसी भी बात से निरूत्साहित हुए बिना एक साथ आगे बढ़ेंगे, मुझे विश्वास है कि जो मगलकारी है वह नष्ट नहीं हो सकता। 15 अगस्त 1947 को महान नेताओं के प्रयास से भारत आजाद हो गया। सरोजिनी नायडू ने इस लड़ाई में बहुत रूचि लिया था उनका स्वास्थ्य प्राय खराब रहता था किन्तु वह उसकी परवाह

नहीं करती थीं। हमेशा यात्रायें एव आन्दोलन में भाग लेती रहती थीं। उन्हें अपने परिवार की भी परवाह नहीं थी। वह देश की आजादी को बहुत अधिक महत्व देती थीं। सरोजिनी ने देश को आजाद कराने के लिए तरह-तरह की परेशानिया उठाईं, कठिनाइयों का सामना किया किन्तु उससे निराश नहीं हुयीं।

षष्ठम अध्याय – उपसहार में समूचे मूल्याकन की दिशाओं को स्पष्ट किया गया है कि किस तरह से व्यक्ति विचारों के माध्यम से देश एव समाज को दिशा देता है उसके ऊपर हो रहे अन्यायों के खिलाफ लड़ता है। उसके अन्दर चेतना पैदा करता है उनको जाग्रत करता है कि वह अपने अधिकारों के लिए किस तरह लड़ना चाहिए, अपने ऊपर हो रहे जुल्म, और अत्याचार के विरुद्ध आवाज उठानी चाहिए, ऐशो आराम और अमीरी में पली हुयी सरोजिनी ने देश और समाज के लिए कठिनाइयों, कष्टों, मुसीबतों के साथ सघर्ष का रास्ता चुना। और आजीवन अपने देश की आजादी के लिए सघर्ष करती रहीं। अपने कार्यों एव विचारों के माध्यम से समाज के प्रति जनता में चेतना पैदाकर उत्साहित एव प्रेरित करती रहीं। उससे हमारा देश अग्रेजी हुकूमत से आजाद हो सका। यह उन्हीं महान नेताओं के सघर्षों विचारों एव सोच का नतीजा है कि आज हम और आप आजादी की हवा में सास ले रहे हैं।

उपर्युक्त पृष्ठभूमि में श्रीमती सरोजिनी नायडू के सामाजिक एव राजनैतिक विचार को समझने के लिए समस्त अध्याय को छ अध्यायों में विभाजित कर अध्ययन किया गया है। प्रत्येक अध्याय में उनसे सम्बन्धित जानकारी एव घटनाओं के आधार पर अध्ययन कर निरोपित करने की कोशिश की गयी है। प्रथम अध्याय में व्यक्तित्व विचार स्तोत्र, चिन्तन परिधि, प्रेरणास्रोत, पूर्वज एव परिवार, शिक्षा-दीक्षा, विवाह का विवरण एव विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। द्वितीय अध्याय में श्रीमती नायडू के साहित्य में योगदान साहित्य की भाषा, अग्रेजी परिप्रेक्ष्य, इग्लो-इग्लियन कविता का इतिहास, कविता की प्रकृति, गद्य रचना, ऊर्दू एव फारसी भाषा में, गजलें नाटक एव उपन्यास, काव्य कला में जीवन दर्शन, महत्वपूर्ण कविताओं को अकित करने का प्रयास किया गया है। तृतीय अध्याय में श्रीमती नायडू के सामाजिक विचारों में महिला स्थिति, महिला शिक्षा, विधवा विवाह, बाल विवाह, महिला आन्दोलन, जाति प्रथा, अशपृश्यता निवारण, हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्ध, कुली प्रथा मजदूरों

के सम्बन्ध में उनके विचारो का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। चतुर्थ अध्याय में श्रीमती नायडू के राजनीतिक विचार, राजनीति में प्रवेश, काग्रेस में योगदान, राजनीतिक आन्दोलनों में भागीदारी, एशियाई एकता, स्वराज्य एव शासन सम्बन्धी विचार, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध पर विचारों को विश्लेषित किया गया है। पचम अध्याय में श्रीमती सरोजिनी नायडू के स्वतत्रता आन्दोलन में योगदान एव उसके पश्चात उनके विचारों एव कार्यों का वर्णन किया गया है। षष्टम अध्याय में उपसहार के माध्यम से उनके जीवन के सम्पूर्ण क्रिया कलापों का विश्लेषण कर उनका मूल्याकन किया गया है।

चूकि प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में श्रीमती सरोजिनी नायडू के सामाजिक एव राजनैतिक विचारों को प्रकाश में लाने का प्रयास किया गया है जिससे इन अध्यायों का आकार बड़ा है। किन्तु सरोजिनी एक कवियित्री थी एव स्वतत्रता आन्दोलन की कर्णधार थीं। इसलिए इन अध्यायों का स्वरूप भी बड़ा हो गया है। चूकि सरोजिनी नायडू के सम्बन्ध में पर्याप्त जानकारी हिन्दी में उपलब्ध नहीं है और न ही इनके सम्बन्ध में तमाम स्त्रोत्र है इसलिए अथक प्रयास के बावजूद सामग्री इकट्ठा कर एव पुस्तकालयों में जाकर इकट्ठा कर शोध प्रबन्ध तैयार कर प्रस्तुत करने की कोशिश की गयी है।

शोध प्रबन्ध के विषय सामग्री को उनकी कविताओं उनके भाषणों एव लेखों उनके समकालीन लेखकों के लेखों एव विचारों, पुस्तकों, अन्य नेताओं, साहित्यकारों, समाज सेवियों की पुस्तकों एव जीवनियों से एकत्रित किया गया है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध की अध्ययन पद्धति मूलत ऐतिहासिक तथा विवरणात्मक, तथ्यात्मक एव विश्लेषणात्मक है। शोध प्रबन्ध को पूरा करने के लिए जिन महान व्यक्तियों एव सस्थाओं का सहयोग मिला है उनके प्रति आभार प्रकट करना मेरा पुनीत कर्तव्य है।

सर्वप्रथम प्रस्तुत शोध प्रबन्ध विद्वान, सत्यनिष्ठ, सूक्ष्म अन्वेषक, सामाजिक, श्रद्धेय गुरुवर माननीय डी0पी0 घोस (अवकाश प्राप्त रीडर, राजनीति विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद) के कुशल निर्देशन में सम्पन्न हुआ। पूज्यनीय गुरुदेव ने आद्यात शोध प्रबन्ध को साकार रूप देने में गुरुत्तर दायित्व का निर्वाह

किया। श्रद्धेय गुरुदेव ने हमेशा गुरु एव शिष्य की परम्परा को कायम रखा। इस पुनीत कार्य हेतु आदरणीय गुरुजी ने अमूल्य एव पाडित्यपूर्ण मार्ग-दर्शन प्रस्तुत किया। मैं उनका हृदय से आभारी हूँ एव इस कार्य हेतु उनके प्रति श्रद्धावनत हूँ।

गुरुवर द्वारा प्रदत्त परामर्श, हार्दिक सहयोग तथा मानसिक सम्बल के सहारे ही यह शोध कार्य अन्तिम चरण तक पहुँच सका है। किन शब्दों में मैं अपना आभार प्रकट करूँ। मैं स्पष्ट अनुभव कर रहा हूँ कि कहीं-कहीं शब्द हृदयागत भावों की अभिव्यक्ति में पूर्णत समर्थ नहीं होते।

मैं राजनीति विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय के उन सभी गुरुजनों के प्रति विशेष रूप से डॉ0 आलोक पन्त (विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद) जिन्होंने मुझे मानसिक सम्बल एव शोध प्रबन्ध को प्रस्तुत करने की प्रेरणा एव सहयोग दिया। डॉ0 पकज कुमार, डॉ0 वी0के0 राय, डॉ0 डी0डी0 कौशिक, डॉ0 असलम, डॉ0 शाहिद, डॉ0 अनुराधा अग्रवाल, प्रो0 यू0के0 तिवारी (पूर्व विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद) प्रो0 के0के0 मिश्रा (अवकाश प्राप्त अध्यापक) प्रो0 एच0एम0 जैन (पूर्व विभागाध्यक्ष राजनीति विज्ञान, विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद) डॉ0 सुनीता अग्रवाल, डॉ0 एम0एस0 काजमी एव अन्य विभागीय अध्यापकों के प्रेरणाप्रद व्यक्तित्व के प्रति अपना प्रणति निवेदित करता हूँ। जिनका आशीर्वाद एव सहयोग मुझ अकिचन को प्राप्त होता रहा है। ये विद्वत बिन्दु मेरे लिए सम्बल है।

मैं इलाहाबाद विश्वविद्यालय के प्रो0 माताम्बर तिवारी, डॉ0 हर्ष कुमार, डॉ0 मानिकचन्द्र गुप्ता, डॉ0 भूरेलाल का आभरी हूँ जिन्होंने मुझे प्रेरणा एव सम्बल प्रदान कर सहयोग दिया जिससे मैं इस शोध प्रबन्ध को प्रस्तुत कर सका। मैं इनके प्रति श्रद्धावनत हूँ।

पारिवारिक सहयोग के बिना कोई कार्य पूर्ण नहीं होता, शोध कार्य के समय इसका हमेशा अनुभव होता रहा है। मेरी ममतामयी पूज्यनीया माताजी श्रीमती रामबाई का स्नेह एव आशीर्वाद ही है जो मुझे आगे बढ़ने की प्रेरणा देता रहा है और विषम परिस्थितियों में भी मैं उन्हीं से प्रेरित होता रहा हूँ। प्रात स्मरणीय मेरे पिता स्व0 श्री शिवकुमार जो हमे बचपन में ही छोड़ कर इस दुनिया से चले गये

उस समय मेरी उम्र 6 वर्ष की थी और मैं भाईयों में सबसे बड़ा था, उनकी कमी और प्रेरणा ने हमेशा मुझे आगे बढने के लिए प्रेरित किया।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध अपने प्रिय अनुज स्व0 धीरेन्द्र सिह को समर्पित है, जिसने 16 नवम्बर 2002 को अल्पायु में अपना परिवार एव हमें छोड़कर इस दुनिया को अलविदा कह दिया, उसके प्रति किस भाव से कृतज्ञता व्यक्त करूँ जिसने अपनी पढाई मेरे लिए छोड़ दी मुझे पढने के लिए, आगे बढने के लिए प्रेरित करता रहा, वह भी अपने भविष्य को दाव पर लगा कर। आज वह हमारे बीच नहीं है किन्तु भावनापूर्ण यादें मुझे प्रेरणा देती रहीं, एक समय जब शोध प्रबन्ध तैयार कर रहा था उस समय उसकी मौत ने मुझे विचलित कर दिया किन्तु उसकी स्नेहमयी बातों को यादकर उसकी प्रेरणा के सहारे यह शोध प्रबन्ध प्रस्तुत हो सका। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध उसी के प्रति समर्पित है।

परिवार के अन्य लोगों में मेरे बाबाजी श्री अमर सिह जो अपने जवान बेटे की मौत को भुला ही नहीं पाये थे कि उनकी आखों के सामने उनके पौत्र स्व0 धीरेन्द्र सिह ने इस दुनिया से अलविदा कह दिया, जिससे वह टूट गये एव अस्वस्थ होकर बिस्तर में लेट गये जो अभी तक लेटे हैं। अन्य लोगों में छोटे बाबा स्व0 लवसिह, श्री कुशल सिह, चाचा श्री जयकरन सिह के साथ ही अपने सबसे छोटे भाई श्री जितेन्द्र सिह जिसने मेरी पढ़ाई के लिए घरेलू कामों में लगकर मेरी मदद किया। आज यह उसी का फल है जिससे मैं यह शोध प्रबन्ध पूरा कर सका। मैं उनके प्रति आभार प्रकट करता हूँ।

मैं अपनी पत्नी श्रीमती प्रभा सिह जिनके सहयोग के बिना यह शोध प्रबन्ध कार्य करना असम्भव था, मैं उनके प्रति भी औपचारिक आभार प्रकट करता हूँ।

मैं कैसे भूल सकता हूँ उन लोगों को जिसमें मेरे मामा श्री दिनेशचन्द्र सिह, नाना स्व0 श्री बैजनाथ सिह, नानी स्व0 श्रीमती बृजरानी, मामा स्व0 श्री सन्तोष सिह एव सुरेश सिह तथा अपनी सभी मामियों को जिन्होंने मुझ अनाथ पर रहम कर मेरी शिक्षा एव रहन-सहन का भार बचपन से लेकर अब तक उठाते रहे हैं। मैं उनका आभारी हूँ एव उनके प्रति विनयावनत हूँ।

मैं अपने मामा श्री आनन्द कुमार सिह (उपजिलाधिकारी, बड़कोट, उत्तरकाशी, उत्तराचल) का आभारी हूँ, जिन्होंने हमेशा मुझे आगे बढने एव पढने में मन लगाने की प्रेरणा दी तथा समय-समय पर मेरा आर्थिक एव मानसिक सहयोग किया। इसलिए मैं उनका आभारी हूँ।

अन्य लोगों में मैं अपने फूफा श्री ज्ञानसिह, एव मौसिया श्री अवधेश सिह, का भी आभारी हूँ जिन्होंने मेरा सहयोग किया।

मैं इलाहाबाद के प्रतिष्ठित डॉक्टर एव समाजसेवी डॉ0 ए0के0 गुप्ता एव ख्यातिलब्ध चिकित्सक डॉ0 ए0के0 बजाज तथा डॉ0 आर0आर0 सिह का हृदय से आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होंने हर तरह से मेरा सहयोग किया।

मैं अपने परममित्र श्री रघुनाथ द्विवेदी पूर्व उपाध्यक्ष, इलाहाबाद युनिवर्सिटी यूनियन के प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ, जिनके परामर्श, उत्साहवर्धन एव सहयोग के बिना इस शोध प्रबन्ध को पूरा करना असम्भव था। ममतामयी भाभी श्रीमती मजरी द्विवेदी का भी आभारी हूँ। श्री राधेरमण वर्मा जिन्होंने मित्रवत सम्बन्धों के चलते सबसे अधिक समय और सहयोग दिया तथा मानसिक सम्बल प्रदान किया, जिनके प्रति मैं आभार प्रकट करूँ तो वह औपचारिकता होगी। डॉ0 अशोक प्रियदर्शी, श्रीमती मजुला शुक्ला, जिन्होंने शोध प्रबन्ध को पूरा करने में मेरा पूरा सहयोग किया मैं उनका हृदय से आभारी हूँ, अन्य लोगों में इष्ट मित्रों में राजेश सिह, शिवकुमार वर्मा, राकेश वर्मा, सुरेश यादव, श्री नारायण यादव, रामनयन यादव, सुरेन्द्र चौधरी, अभिषेक शुक्ला, नरसिह पटेल, रमाकान्त रावत का चिर ऋणी हूँ जिन्होंने अपना सहयोग कर मेरे शोध प्रबन्ध को प्रस्तुत करने में मेरी मदद किया। मैं अपने छोटे भाई अजय सिह, दीपक सिह, सूरज सिह का भी आभारी हूँ। इसके अतिरिक्त विभागीय कर्मचारियों एव अन्य सगे सम्बन्धियों के प्रति भी आभार प्रकट करता हूँ जिनका प्रत्यक्ष एव अप्रत्यक्ष रूप से सहयोग रहा है।
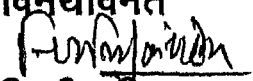
शोध प्रबन्ध की पूर्णता में, इलाहाबाद विश्वविद्यालय लाइब्रेरी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद, हिन्दुस्तान अकादमी इलाहाबाद, पब्लिक लाइब्रेरी इलाहाबाद, राजकीय पब्लिक लाइब्रेरी इलाहाबाद, लोक भारती पुस्तकालय इलाहाबाद, गाधी विचार एव अध्ययन सस्थान इलाहाबाद, जवाहर लाल नेहरू मेमोरियल लाइब्रेरी (त्रिमूर्ति

लाइब्रेरी) नई दिल्ली, दिल्ली युनिवर्सिटी आर्ट लाइब्रेरी, नई दिल्ली, जे0एन0यू0 लाइब्रेरी, नई दिल्ली, साहित्य अकादमी लाइब्रेरी, रवीन्द्रभवन नई दिल्ली, राष्ट्रीय गाधी सग्रहालय एव पुस्तकालय राजघाट, नई दिल्ली, गाधी साहित्य केन्द्र नई दिल्ली, अखिल भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस कार्यालय नई दिल्ली, राष्ट्रीय काग्रेस प्रदेश कार्यालय, लखनऊ, सूचना केन्द्र लखनऊ से शोध प्रबन्ध सम्बन्धित सामग्री प्राप्त हुयी। इसलिए मैं वहा के पुस्तकालयाध्यक्षों एव अधिकारियों, कर्मचारियों को सहृदय धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ। अन्त में मैं अपने कम्प्यूटर टकण श्री अवधेश कुमार मौर्य एव अजीत कुमार को धन्यवाद देता हूँ जिन्होंने बहुत ही अल्पसमय में शोध प्रबन्ध को पूरा किया।

विनयागत होकर मैं यह शोध प्रबन्ध प्रस्तुत कर रहा हूँ। मुझे आशा ही नहीं विश्वास है कि विद्वतजन इसमें हुयी त्रुटियों को क्षमा करेंगे। यदि प्रस्तुत शोध प्रबन्ध "श्रीमती सरोजिनी नायडू के सामाजिक एव राजनैतिक विचार" एक अध्ययन- के प्रति किचित भी ध्यानाकर्षित करता है तो मैं अपना अथक प्रयास सफल समझूगा।

राजनीति विज्ञान विभाग

इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद

विनयावनत

निर्भय सिह

अनुक्रमणिका

प्रथम अध्याय

श्री मती सरोजिनी नायडू का जीवन परिचय एव व्यक्तित्व

"तुम हमारी सरक्षता में रहकर हमें सिखाने क्यों नही देते कि तुम्हारे देश की शासन व्यवस्था किस तरह होनी चाहिए? हमें क्यों नही धीरे-धीरे ही शासन का अधिकार अपने हाथ से छोड़कर तुम्हे सौंपने देता? यही कपट पूर्ण बात है जिसने हमारे कितने ही उच्च कोटि के पुरुषों के हृदयों से यह मिथ्या धारणा पैदा कर दी है कि हमें स्वतत्रता का पाठ पढाया जा रहा है। परन्तु स्मरण रहे कि स्वतत्रता की शिक्षा दूसरों के द्वारा नही मिलती। इसका विचार तो स्वमेव अपने ही भीतर उत्पन्न होता है। एक देश का दूसरे देश पर शासन धर्म विरूद्ध है।"[1]

यह निर्भयता पूर्ण कथन श्रीमती सरोजिनी नायडू ने 1922 के आरम्भ में होने वाली पहली कर्नाटक प्रादेशिक कार्फ्रेस की सभानेत्री की हैसियत से दिये हुए भाषण में ये खरी बातें उस समय कही थीं जब कि देशभर में नौकरशाही की राक्षसी दमन नीति का चक्र बड़ी तेजी से चल रहा था और देश के अनेक नेता जेलों में सड़ाये जा रहे थे। तथा स्वय महात्मा गॉधी को गिरफ्तार करने की तैयारियाँ हो रही थीं। अन्य किसी देश के लिए चाहे यह बात नयी ही क्यों न हो, किन्तु पुण्यभूमि भारत में तो अनादि काल से राजाओं के राक्षसी अत्याचारों का अन्त भारत की देवियों द्वारा होता रहा है। जिस समय राजा का अन्याय और अत्याचार अपनी सीमा पार कर जाता है और प्रजा की जान और माल तथा धर्म पर आघात पहुचता है, उसी समय भारत की देविया सामने आती हैं और अन्यायों तथा अत्याचारों का अन्त करने में सहायक होती हैं। यहाँ तक कि साथ में कृपाण लेकर अत्याचारों का नाश करने में भी प्रवृत्त हुई हैं। हम भारतीयों को इस बात का गर्व है, कि हमारे इतिहास ऐसी देवियों के चरित्र से भरे पड़े हैं। भारत के इन गिरे दिनों में भी यहाँ ऐसी देवियों की कमी नही थी, जो स्वतत्रता की लड़ाई वीरतापूर्वक लड़ रही है। इन्ही में से सबसे आगे श्रीमती सरोजिनी नायडू जी थीं।

पूर्वी बगाल में एक गाव है ब्रम्हनगर। उस गाव में एक चटोपाध्याय या चटर्जी परिवार रहता था, इस परिवार के पुरखे अरण्य मुनि थे, ये महान तपस्वी थे बहुत

---

[1] सरोजिनी नायडू, श्री मातासेवक पाठक, पेज -1

बुद्धिमान और विद्वान भी थे। इनको प्रकृति से गहरा लगाव था, ब्रम्हनगर में बसने वाला यह एक गरीब परिवार था। बाद में यह परिवार हैदराबाद में बस गया।[1]

किसे मालूम था कि इसी परिवार में एक ऐसी कन्या जन्म लेगी, जिसका नाम सारी दुनिया में प्रसिद्ध होगा। यही महिला स्वतन्त्र भारत में पहली महिला राज्यपाल बनेगी, उसकी सगीतमय वाणी ससार में गूजती रहेगी उसे भारत कोकिला की उपाधि मिलेगी, हर देश और जाति में अनेक महापुरुष जन्म लेते हैं। लेकिन ऐसी महान् महिला का जन्म विरले ही होता है ऐसी महिला जिसने अपनी प्रतिभा, सूझबूझ, व्यक्तित्व, विचार, काव्य प्रतिभा, भाषण कला और अपने सम्पूर्ण क्रियाकलापों से यह सिद्ध कर दिया कि नारी किसी भी तरह पुरुषों से कम नहीं है अपने कर्मो से आने वाली पीढियों को बहुत कुछ सिखाया, नया मार्ग दिखाया। इन्होंने देश को इतना कुछ दिया कि उनका नाम सदा सिर ऊँचा करके लेते रहेंगे। वह हमारे लिये एक धरोहर हैं, पूजी हैं। हम उन पर गर्व करते रहेंगे। इतिहास में उनका नाम सदा अमर रहेगा। यह बालिका है सरोजिनी।

सरोजिनी का जन्म 13 फरवरी, 1879 को हैदराबाद में हुआ, बाद में यही बालिका श्रीमती सरोजिनी नायडू स्वतत्र भारत के उ0प्र0 राज्य की प्रथम महिला राज्यपाल बनीं। इस प्रतिभा सम्पन्न बालिका की कहानी बड़ी अनुपम है, कहानी हमें बताती है कि बालिका सरोजिनी में अदम्य विश्वास था। उसमें मानवता के प्रति प्रेम और आस्था थी, उसी के सहारे वह उँचा से उँचा पद पाती रही। गुण ही आदमी को महान बनाते हैं, कुछ गुण तो बच्चों को परिवार से, कुछ आस-पास के वातावरण से मिलते हैं, कुछ गुण समझदारी, अनुभव एव ज्ञान से प्राप्त होते हैं। कुछ गुण व्यक्ति में जन्मजात और ईश्वर की देन होते हैं। बालिका सरोजिनी जिस घर में पैदा हुयी, जिस मिट्टी में खेली, जिस समाज में पली बढ़ी, और रही वह कोई और नहीं यही है जिसमें आप और हम सब रहते हैं।

बालिका सरोजिनी के पिता का सम्बन्ध ब्रम्हनगर के अरण्य मुनि परिवार से था। यह परिवार तपस्वियों और विद्वानों का परिवार था। सरोजिनी के पिता अघोरनाथ

---

[1] सरोजिनी नायडू, ले0 पदमिनीसेन गुप्ता पेज -12,

चट्टोपाध्याय को ज्ञान और कर्मठता अपने पुरखों से विरासत में मिली थी, उन्होंने अपने पूर्वजों के सस्कृत ज्ञान से बहुत कुछ सीखा था। आरम्भ में अघोरनाथ को बहुत सी आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। वे एक निर्धन छात्र थे। उनके पास किताबें खरीदने के लिए पैसे नहीं होते थे। वे किताबें प्राय उधार लिया करते थे। वे सड़क के किनारे लगी लालटेन की रोशनी में पढा करते थे।

विद्वान होने के साथ ही वे प्रकृति-प्रेमी भी थे। लम्बे समय तक या तो जगलों में साधना करते रहे या बासन्ती जगल के विषय में दार्शनिकता से सोचते रहे। डॉ0 अघोरनाथ भी सस्कृत के पडित थे। साथ ही भारत और पश्चिम का नाट्य साहित्य तथा काव्य पढे हुए थे। वे स्कूल में सदा प्रथम आते थे, किन्तु सदा किताबों में ही डूबे न रहकर भ्रमण करते थे। हर किसी से मित्रता जोड़ते थे। उन्हें बगाल की धूप में नहाती चौड़ी नदियाँ, नावें बहुत पसन्द थीं। इसीलिए उन्होंने नाविकों से मैत्री जोड़ी थी। उनकी छोटी नौका में उनके साथ जाया करते थे। ऐसी ही एक यात्रा में उनकी डकैतों से भेंट हुई जो बाद में मित्रता में बदल गई। उन्हें अघोरनाथ की कहानी गढ़ने की आदत बहुत पसन्द आई और उन्होंने अपने से आयु में छोटे अघोर को अपना नेता मान लिया। अघोरनाथ जाति-पॉति और परम्परा को नहीं मानते थे। चौदह वर्ष की आयु में उन्होंने अपना जनेऊ तोड़कर गगा में फेंक दिया था। एक बार नौका से उनकी दृष्टि एक नौ वर्ष की बालिका पर पड़ी और वे मुग्ध हो गए। बाद में अपने डाकू दोस्तों की सहायता से वे उससे मिले और उसी बालिका से शादी हो गई।

गाँव के स्कूल की शिक्षा पूरी हो जाने पर वे कलकत्ता विश्वविद्यालय के छात्र बने। गरीब होने के कारण औरों से किताबें माँगकर सड़क की रोशनी में पढ़ा करते थे। पर धीरे-धीरे उन्होंने उस समय के नामी विद्वानों जैसे रजनी नाथ रॉय, शशिभूषण दत्त, क्षीरदचन्द्र रॉय चौधरी आदि में अपना स्थान बनाया। वे अग्रेजी तथा सस्कृत के विद्वान थे। साथ ही ग्रीक, हिब्रू, फ्रेंच, जर्मन तथा रशियन में पारगत थे।

हर दिन कुछ नया सीखना उनका लक्ष्य था और जिस दिन ऐसा न हो पाए उसे वे व्यर्थ मानते थे।[1]

कलकत्ता में उनकी भेंट केशवचन्द्र सेन से हुई। ब्रह्मानन्द सेन ने उन्हें नवविधान सम्प्रदाय में ले लिया। कुलीन ब्राह्मण होते हुए भी वे अपनी जाति की कुरीतियों को सुधारने का प्रयास करते रहे। उन्होंनें युवकों का एक दल बनाया जो कुलीन लड़कियों को जाति के सम्मान के लिए बूढ़े और मृतप्राय लोगों से ब्याहे जाने में बाधा डालते थे, उन्हें उनके माता-पिता और सम्बन्धियों के चगुल से छुड़ाकर बग महिला विद्यालय में शिक्षा दिलवाते थे। भारत में यह पहली सस्था थी जहाँ लड़कियों को दसवीं तक की शिक्षा दी जा रही थी। इस दल के नेता भारत के प्रमुख समाज-सुधारक द्वारकानाथ गागुली थे, जिन्होंने नारी शिक्षा तथा नारी-मुक्ति के क्षेत्र में बहुत काम किया था। अघोरनाथ के साथ इस दल में उनके रिश्ते के भाई नवकान्त, शीतलकान्त और निशिकान्त चटर्जी के अतिरिक्त वरदाकान्त और शारदाकान्त हालदार भी थे। पर शीघ्र ही इस दल की कड़ी आलोचना होने लगी। उनके रिश्तेदारों ने उन्हें त्याग दिया। तब पूरे दल ने ब्राह्म-समाज को अपना लिया। उस समय बगाल में केशवचन्द्र सेन के नेतृत्व में ब्राह्म-समाज अत्यन्त शक्तिशाली था।

भारत में शिक्षा पूरी हो जाने पर अघोरनाथ "गिलक्राइस्ट स्कॉलरशिप" पर विदेश गए।[2] जाने से पहले अपनी पत्नी को केशवचन्द्र सेन द्वारा चलाए जा रहे भारत आश्रम में छोड़ गए। यहाँ वरदासुन्दरी को शिक्षा के साथ घर-गृहस्थी चलाने का ज्ञान भी दिया गया। बाद में वे अपनी सुघड़ता के लिए प्रसिद्ध हुई। उधर अघोरनाथ ने "बैक्स्टर फिजीकल साइन्स स्कॉलरशिप" पाई और "होप" पुरस्कार जीता। 1877 में एडिनबरा विश्वविद्यालय से डॉक्टर ऑफ साइन्स की उपाधि प्राप्त की और "वास डनलप (Vans Dunop) स्कॉलरशिप" पाई। वे पहले भारतीय थे जिन्हें डॉक्टर की पदवी मिली थी। वहाँ से वे जर्मनी गए जहाँ उनकी प्रतिभा को और पनपने का अवसर मिला।

---

[1] सरोजिनी नायडू, ले0 उमा पाठक, पेज -15
[2] सरोजिनी नायडू ले0 ताराअली बेग पे09 ।

बॉन में वे प्रसिद्ध डच रसायनविद् वॉन हॉफ के सम्पर्क में आए जिन्होंने इनकी बुद्धिमत्ता का सिक्का मान लिया। पी0सी0 रे बर्लिन में इनसे मिले थे। उन्हें इस बात का बहुत दुख रहा कि अघोरनाथ जैसे विद्वान की प्रतिभा और बुद्धि रसायनशास्त्र के क्षेत्र में व्यर्थ रही क्योंकि भारत लौटने पर उन्होंने उस उत्साह से अनुसन्धान कार्य नहीं किया जिससे विदेश में कर रहे थे।

1878 में भारत लौटने पर उन्हें हैदराबाद आमन्त्रित किया गया, जहाँ उन्होंने अग्रेजी माध्यम का स्कूल खोला, अध्यापक के रूप में उन्हें बहुत मान सम्मान मिला। निजाम ने उनकी विद्वता को पहचाना और उन्हें उचित सम्मान दिया। वे उच्च शिक्षा के लिए कॉलेज शुरु करना चाहते थे। अघोरनाथ ने हैदराबाद कॉलेज की स्थापना की, और उसके प्राध्यापक बने। आरम्भ में यह कॉलेज मद्रास विश्वविद्यालय से जुड़ा रहा, बाद में निजाम कॉलेज बना। वर्षो बाद भी वहाँ अघोरनाथ का चित्र लगा रहा था।[1]

वे आदर्श प्रधानाध्यापक थे जो अपने छात्रों के साथ व्यक्तिगत तथा मैत्री सम्बन्ध स्थापित करने में विश्वास करते थे। उनके घर में सबका स्वागत था। उन्होंने विद्वानों का एक दल बनाया जो सामाजिक व राजनीतिक समस्याओं पर विचार करता था। पाँच साल तक मानवता के लिए काम करने के बाद धीरे-धीरे राजनीति से इतने जुड़ते चले गए कि उनके अपने कार्यक्षेत्र का विकास थम गया। वे रसायनशास्त्र से सगीत की ओर गए थे। फिर सगीत से स्त्री-मुक्ति की ओर जिसमें उनकी पत्नी ने उनकी पूरी सहायता की। वे महिलाओं की शिक्षा के पक्षधर थे क्योंकि वे यह मानते थे कि स्त्रियों के लिए आर्थिक स्वतन्त्रता बहुत आवश्यक है। वे स्त्रियों को समान अवसर देना चाहते थे। उन्होंने बाल-विवाह रोकने तथा विधवा-विवाह करवाने की दिशा में बहुत काम किया। क्रमश वे राजनीति की ओर झुके, पर अधिक समय तक नहीं रहे। हैदराबाद के दीवान सालारजग की मृत्यु के बाद प्रशासन का काम राजप्रतिनिधि प्रशासक मडल के हाथ में दिया गया उनसे मुठभेड़ होने पर उन्हें चौबीस घटे के अन्दर निजाम की राज्यसीमा से निकल जाने का आदेश दिया गया। ग्यारह अरबी

---

[1] सरोजिनी नायडू, ले0 पदमिनी सेन गुप्ता, पे0-13

सैनिकों के पहरे में ले जाकर जबरन रेलगाडी में बिठा दिया गया, पहले दर्जे का टिकट तक नहीं लेने दिया गया। उन्होंने विचलित हुए बिना वहाँ एकत्रित जनसमूह को बताया कि वे साक्षी हैं कि उन्हें हठपूर्वक गाड़ी में चढ़ा जा रहा है। कुछ समय बाद उन्हें वापस बुलाकर फिर से निजाम कॉलेज का प्रधानाध्यापक बनाया गया। इस प्रकार उनके अपमान का प्रतिकार हुआ। अघोरनाथ के आग्रह पर 1872 में हैदराबाद में भी ब्रिटिश भारत में प्रचलित विशेष विवाह कानून लागू किया गया। उन्होंने युवाओं में सुधार के लिए एक ट्रस्ट बनाया जो भारतीय महिलाओं के पुनरुद्धार के लिए कार्य करने लगा। उन्होंने अग्रेजी के महत्व को समझने के कारण एक स्कूल खोला जहाँ मातृभाषा के महत्व पर बल देने के साथ अग्रेजी की आवश्यकता को भी बताया गया था। उन्होंने एक परीक्षण समिति की भी स्थापना की थी जो उर्दू की परीक्षा लेती थी। इसमें भारत के हर प्रान्त के छात्र आते थे। पर बाद में अर्थाभाव के कारण यह समिति बन्द हो गई थी। अघोरनाथ के निजामशाही रोड स्थित घर पर अखिल भारतीय सस्कृत परिषद् की वार्षिक सभाएँ हुआ करती थीं। यही नहीं, इस घर में "इकवान-उस-सफा" नामक सभा सास्कृतिक कार्यक्रम करती थी, और एक मासिक पत्रिका भी निकालती थी।

1885 में राष्ट्रीय काग्रेस का जन्म हुआ। राजसी प्रदेशों ने सहायता की। अघोरनाथ, अब्दुल कयूम, रामचन्द्र पिल्लै और अन्य लोगों ने हैदराबाद में राष्ट्रीय आन्दोलन फैलाने में बहुत महत्वपूर्ण योगदान दिया। 1888 में वहाँ के अखबार "सफीर-ए-दक्कन" में कुछ लेख काग्रेस के पक्ष में छपे। अघोरनाथ और अब्दुल कयूम को सरकार-विरोधी विचार फैलाने के लिए दोषी ठहराया गया।[1]

हैदराबाद में लोकमान्य तिलक के उग्रवादी विचारों का प्रचार शुरु हुआ। चन्दरघाट के एक अखाड़े में स्वदेशी आन्दोलन का केन्द्र बना। अघोरनाथ प्राय वहाँ की सभाओं का नेतृत्व करते थे। कुछ बगाली युवक छिपकर हैदराबाद आते थे और बगाल के ढाँचे पर विद्रोह फैला रहे थे। तिलक और विपिनचन्द्र पाल की तस्वीरों के साथ लेख छापे जा रहे थे। 'स्वदेशी का प्रयोग करो' नारा बन गया था।

[1] डॉ0 सैयद अब्दुल लतीफ, सरोजिनी नायडू, मेमोरियल वाल्यूम, 1968

"वन्देमातरम्" को राष्ट्रीय गीत के रूप में अपनाया जा रहा था। और कुछ वर्षो में स्वदेशी आन्दोलन बढता गया।

हैदराबाद के शासकों को प्रान्त में स्वदेशी चीजों का पहुँचना अच्छा नहीं लग रहा था। किन्तु ब्रिटिश शासकों के उनके निर्माण पर प्रतिबन्ध न लगाने के कारण कुछ किया नहीं जा सका। स्वदेशी पन्थ धीरे-धीरे हिंसक होने लगा। नासिक के कलक्टर श्री जैक्सन को एक मराठी छात्र अनन्त लक्ष्मण कनारे ने 21 दिसम्बर, 1909 को गोली मार दी। बहुत लोगों को हिरासत में लिया गया, सजा भी दी गई। हैदराबाद में बन रहे हथियारों का भी पता चला। बहुत से नागरिकों पर सन्देह किया गया। कुछ को शिक्षा-विभाग से हटा दिया गया। अघोरनाथ को शीघ्र ही हैदराबाद छोड़कर कलकत्ता जाना पड़ा, क्योंकि वहाँ राष्ट्रीय कांग्रेस और स्वदेशी आन्दोलन लाने में उनका बहुत बड़ा हाथ था। कलकत्ता के लवलॉक स्ट्रीट स्थित घर में उन्होंने जीवन के अन्तिम वर्ष बिताए। उनके राजनीतिक विचारों के लिए उनकी बलि चढा दी गई।

सरोजिनी ने अपने पिता और पूर्वजों का विवरण दिया "मेरे पूर्वज हजारों साल से जगलों और पहाड़ों की गुफाओं के प्रेमी रहे थे। वे विद्वान, सन्त तथा कल्पनाशील थे। मेरे पिता स्वप्नद्रष्टा भी थे, जबरदस्त स्वप्नद्रष्टा, एक महान पुरुष जिनका जीवन पूर्ण रूप से असफल था। मैं समझती हूँ, पूरे भारत में उनसे बढकर ज्ञानी कुछ ही लोग रहे होंगे और मुझे नहीं लगता कि बहुत लोग उनसे अधिक लोकप्रिय रहे होंगे। उनकी लम्बी सफेद दाढी थी और एक तरफ से देखने पर होमर जैसे लगते थे। हँसी ऐसी थी कि छत नीचे गिरा दें। उन्होंने केवल दो चीजों पर सारा पैसा लुटाया था, एक दूसरों की मदद और दूसरा रसायनशास्त्र पर। वे प्रतिदिन बगीचे में बड़ा सा दरबार लगाते थे जिसमें हर धर्म के ज्ञानी लोग एकत्रित होते थे। राजा हो या भिखारी, साधु हो या शैतान - उनका सभी के साथ एक-सा व्यवहार होता था। उनकी रसायनशाला में दिन-रात प्रयोग होते थे। पर यह रसायनशास्त्र आप जानते हैं, एक कवि की सौन्दर्य की, शाश्वत सौन्दर्य की इच्छा का भौतिक प्रतिरूप है। सोना गढ़नेवाला हो या कविता लिखनेवाला - दोनों स्रष्टा हैं जो ससार की रहस्य

के प्रति छिपी इच्छा को बढावा देते हैं, मेरे पिता में जो उत्सुकता की प्रतिभा है – जो सम्पूर्ण वैज्ञानिक प्रतिभा का मूल है – वही मुझमें सौन्दर्य की इच्छा के रूप में है।"[1]

अघोरनाथ की रातभर लम्बी सभाओं की कहानिया मिलती हैं, उनके दोस्त विचित्र थे। वे मौज–मस्ती मनाते थे। अघोरनाथ उनके नेता हुआ करते थे। वे हसमुख व्यक्ति थे। वैज्ञानिक होने के साथ ही उर्दू और बगला के कवि भी थे। लोगों को एकत्रित कर कवितायें सुनाया करते थे।[2]

सरोजिनी की माता वरदासुन्दरी कोमल और स्वप्नद्रष्टा थीं। वे मानी हुई गायिका थीं और उनकी आवाज चिड़िया जैसी मीठी थी। बचपन में उन्होंने पूर्वी बगाल के गॉव के स्कूल में हुई गीत प्रतियोगिता में वायसराय का सोने का पदक जीता था। उनके सबसे छोटे पुत्र हरीन्द्रनाथ ने उनके बारे में लिखा है "वे हैदराबाद वाले घर के आँगन की पुराने फाटक की तरफ खुलनेवाली चौड़ी खिड़की की चौखट पर बैठने की शौकीन थीं। जब वे गाती थीं, तो ऑखों में आँसू आ जाते थे, आवाज घुट जाती थी। तब उनके बच्चे चिल्लाते थे, मॉ तुम इतना प्यारा गाती हो, पर रोती क्यों हो ?"[3]

वरदासुन्दरी केवल गाती ही नहीं थीं, बल्कि सुन्दर बगला गीत लिखती भी थीं। उनके पति बहुत बार उनसे गाने या गीत सुनाने के लिए कहते थे। उनके समसामयिक कवि उन्हें अच्छी कवियित्री मानते थे। उनके बच्चों के लिए प्राय माँ का गाना या कविता सुनाना, पिता का ऊँची आवाज में अपनी बात बताना एक आम बात थी। इस घर में सगीत, नाटक तथा कविता का वातावरण तो था ही, बहुत कुछ पाने के स्वप्न और हवाई किले बनाना भी था। वहाँ एक मानवीय स्पर्श था जो गरीब–अमीर सभी के लिए समान था।

वरदासुन्दरी अत्यन्त सवेदनशील थीं। उनमें भविष्य को जानने की क्षमता थी। हरीन्द्रनाथ एक समय की घटना बताते हैं कि एक रात उन्होंने सोते हुए पति को जगाकर लालटेन लेकर मुर्गियों के दड़बे की ओर जाने को कहा क्योंकि उन्होंनें स्वप्न

---

[1] सरोजिनी नायडू, दि गोल्डेन थ्रशोल्ड की भूमिका, पे0 न0 14-15
[2] सरोजिनी नायडू, श्री माता सेवक पाठक, पेज न0 3
[3] हरीनाथ चट्टोपाध्याय, जीवन और मैं, पे0न0 71

में एक मुर्गी को मरते देखा था। नींद में डूबे पति ने उन्हें डाँटा, पर उनके न मानने पर जाकर देखा तो सच में एक मुर्गी पत्थर पर मर रही थी। उनमें कुछ अन्धविश्वास भी थे जैसे बढ़ते हुए दूज के चाँद के दिन वे सबसे पहले अपने छोटे बेटे हरीन्द्रनाथ का मुँह देखना चाहती थीं। उन्होंने अपने बच्चों को भगवान में विश्वास करना सिखाया था।[1]

हरीन्द्रनाथ ने माता-पिता के विषय में लिखा कि "हमारे माता-पिता ने हमें सब कुछ दिया था, जिससे हमें जीवन केवल इन्द्रधनुषी और सुन्दर लगता था।" उन्होंने यह भी लिखा कि "वे केवल साधारण मानव नहीं थे बल्कि असाधारण आध्यात्मिक लोग थे, दो ऐसे सच्चे दैवी प्रकाश थे जो जीवन के अँधेरे को आलोकित करते थे। जहाँ जाते थे वहीं उजाला भर देते थे। जीवन की राह पर जिनसे मिलते थे, उन्हीं के जीवन में आशा और आशीर्वाद भर देते थे।" वे जब तक इस ससार में रहे, तब तक सबके साथ अच्छे रहे। जब गए तब सपनों की दुनिया का एक टुकड़ा छोड़ गए जो सरोजिनी ने उनसे पाया। उन्होंने उसी के आसपास इन्द्रधनुषी आकृतियाँ बनाई। उनके सौन्दर्य से अपने दुखी देश को सजाने-सँवारने का काम किया।[2]

सरोजिनी हैदराबाद के जिस विशाल घर में अपने माता-पिता और परिवार के साथ रहती थीं, वहाँ का वातावरण उदात्त था। सरोजिनी ने भाषणों में बार-बार इस ओर सकेत किया है मैं ऐसे घर में पली थी, जहाँ भारत के महानतम पुरुषों में से एक घर का मुखिया था, जो सत्य, प्रेम, न्याय तथा देशभक्ति का प्रतिरूप था। वह घर भारतीयों का था, हिन्दू या ब्राह्मण का नहीं। मेरे प्रिय पिता कहा करते थे कि तुम्हें गर्व होना चाहिए कि तुम केवल भारतीयता की सीमा में नहीं बँधे हो, बल्कि विश्व के नागरिक हो।[3] हरीन्द्रनाथ के अनुसार उनका घर अजायबघर और चिड़ियाघर का मिला-जुला रूप था। अजायबघर इसलिए क्योंकि उसमें ज्ञान और सस्कृति की बहुमूल्य वस्तुएँ थीं और चिड़ियाघर इसलिए कि उसमें विचित्र लोगों का जमघट था। पिता अधिकतर आरामकुर्सी पर बैठते थे और दोस्तों का झुड आसपास बैठा रहता था,

---

[1] लाइफ़ एण्ड माईसेल्फ, ले0 हरीन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय पे0न0 15
[2] ले0 उमा पाठक पे0 18 सरोजिनी नायडू, 16
[3] दि गोल्डेन थ्रेशोल्ड पे0 15 सरोजिनी नायडू ।

कुछ बड़े आदमी होते थे तो कुछ छोटे, कुछ ज्ञानी तो कुछ मूर्ख, कोई नवाब होता तो कोई भिखारी। एक नर्स थी गगू। बच्चे उसे गग्गा कहते थे। वह उनके लिए दूसरी माँ जैसी थी। उसकी नाक चपटी, आँखें झिरीभर और बाल अफ्रीकनों जैसे थे, पर वह सुन्दर थीं कि परेशान मत होओ, वह लौट आएगी और सच ही दूसरे-तीसरे दिन वह फिर काम करती दिखाई देती थी। अन्त में जब उसकी मृत्यु हुई तो उसे तेलुगु ढग से बिठाकर ले जाया गया। उसकी जगह कभी नहीं भर पाई। उस घर में एक और व्यक्ति वल्लया दर्जी था जो बड़ी सी गहरे लाल रग की पगड़ी पहनता था।[1]

वरदासुन्दरी हैदराबाद से कलकत्ता आ गई पर वर्षो बाद भी मित्र उनके नाच-गाने को याद करते थे। वे केवल सगीत और नृत्य में ही रुचि नहीं रखती थीं बल्कि उन्हें खाना बनाने का भी शौक था और वे बडी स्वादिष्ट चीजें बनाती थीं। उनकी रसोई सदा स्वादिष्ट खाने से भरी होती थी। उनके चारों ओर स्वामीभक्त नौकरों की भीड़ रहा करती थी, जिन्हें वे परिवार के सदस्यों की तरह मानती थीं, उनसे अपनेपन से बातचीत करती थीं। वे ऐसी गृहस्थिन थीं कि किसी भी समय छ फालतू आदमियों को खाना खिला सकती थीं। वे अपने साम्राज्य की रानी थीं। हरीन्द्रनाथ ने माँ का चित्रण अत्यन्त सूक्ष्मता से करते हुए बताया है कि उनका चेहरा गोल था, उनकी आँखों में सदा करुणा, दया और आशा छलकती थी। सरोजिनी की राजनीति की चिन्ता से रहित, शान्त आँखों में माँ की आँखों की झलक दिखाई देती थी। वे सुन्दर साड़ियाँ पहनती थीं, पर घर में काम करते समय सादी सूती साड़ियाँ पहनती थीं। उनमे अहकार कत्तई नहीं था वे अपने कर्तव्य का ध्यान रखती थीं। वे स्वभाव से कोमल तथा हँसमुख थीं। उनके बच्चों में विशेषकर सरोजिनी में वही स्वभाव मिलता था।

वरदासुन्दरी और अघोरनाथ आपस में बगला भाषा में बात करते थे, पर बच्चों से सदा हिन्दुस्तानी में और नौकरों से तेलुगु में बातचीत होती थी। अघोरनाथ के अलावा उस घर में कई भाषाविद् थे। वरदासुन्दरी कई भाषा जानती थीं। सबसे बड़ा बेटा वीरेन्द्रनाथ सोलह भाषाएँ जानता था।[2]

---

[1] लाइफ एण्ड माईसेल्फ, ले० हरीन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय पे० 17

[2] ले० पदमिनी सेन गुप्ता, पे० 15, सरोजिनी नायडू ।

अघोरनाथ और वरदा सुन्दरी देवी के आठ असाधारण बच्चे थे, जिनकी सम्मिलित शक्ति बहुत अधिक थी। उनमें से प्रत्येक भिन्न प्रकार की प्रतिभा से सपन्न था तथा प्रत्येक ने दुनिया को महत्वपूर्ण देन दी। सरोजिनी का जन्म 13 फरवरी 1879 को हुआ था। वे उनमें सबसे बड़ी थीं तथा सबसे अधिक प्रसिद्ध हुई। वे मूलत उदार विचारों की थीं तथा यदि उनका जन्म इतने क्राति काल में न हुआ होता तो वे भारतीय और विदेशी साहित्यिक क्षेत्रों में अग्रणी रही होतीं। वीरेन्द्रनाथ का जन्म 1880 में हुआ था। वह जन्मजात क्रातिकारी थे। और जहा कहीं भी जन्मे होते वह क्राति की राह अपनाते। उनके क्रियाकलाप के कारण उन्हें भारत से देश निकाला दिया गया तथा दिसबर 1942 के स्तालिन युग में उनका देहान्त हृदय की गति रूक जाने से हुआ। यूरोप में उनकी मृत्यु का यह समाचार उनके परिवार को बहुत देरी से मिला।[1] दूसरे भाई भूपेन्द्रनाथ का जन्म 1882 में हुआ था। वह हैदराबाद में सहायक महालेखाधिकारी हो गए थे। उनका देहान्त 1933 में बम्बई में हुआ। मृणालिनी का जन्म 1883 में हुआ था। उन्हें परिवार में प्यार से गुन्नू कहा जाता था। उन्होंने कैम्ब्रिज से विज्ञान में ऑनर्स परीक्षा पास की और वह शिक्षिका बनीं। बाद में वह गर्ल्स कालेज, लाहौर की प्रिंसिपल हो गई थीं। उनकी छात्राए उन्हें इतना अधिक स्नेह देती थीं कि उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन शिक्षा को समर्पित कर दिया तथा आजीवन अविवाहित रहीं। सुनालिनी देवी का जन्म 1890 में हुआ था, वह एक उत्कृष्ट कलाकार और नर्तकी बनीं। उन्होंने श्री राजम के साथ विवाह किया और उनका बेटा प्रह्लाद सी0राजम अमरीका के एन आर्बर में अपनी ही सस्था में एक प्रख्यात वैज्ञानिक हुआ। रणेन्द्रनाथ का जन्म 1895 में हुआ और उनका देहात 1959 में कैंसर से हुआ। उनकी इकलौती बेटी मृणालिनी हैदराबाद में आध्र प्रदेश जीवन बीमा कोष की सचिव हुई।[2]

अघोरनाथ के सबसे छोटे तथा सबसे अधिक तेज-तर्रार बेटे हरीन्द्रनाथ का जन्म 1898 में हुआ। वह कवि, कलाकार तथा नाटककार हुए। उनमें स्वच्छदता वादी कवि मूर्तिमान हो उठा। उनका इकलौता बेटा राम इजीनियर-परामर्श-दाता हुआ। राम

---

[1] सरोजिनी नायडू, ताराअली बेग पे0 14
[2] सरोजिनी नायडू, ले0 माधवदास पे0 6

की मा भूतपूर्व समाजवादी नेता कमला देवी चट्टोपाध्याय ने अपना पूरा जीवन भारत की पारपरिक कला एव हस्तकौशल को पुनर्जीवित करने में खपा दिया। इससे जहाँ उन्हें सम्मान और महत्व मिला वहीं देश को निर्यात का एक विशाल बाजार भी प्राप्त हो गया। सरोजिनी की सबसे छोटी बहिन सुहासिनी का जन्म उन की दूसरी सतान पदमजा के जन्म के एक वर्ष बाद 1901 में हुआ था। सुहासिनी अपने भाई वीरेन्द्र की तरह उत्कट साम्यवादी हुई तथा वह और उनके पति आर0एस0 जाम्भेकर बबई के उपनगरी खार में रहने और काम करने लगे। सरोजिनी के भाई-बहनों में 1969 में केवल हरीन्द्र और सुहासिनी जीवित बचे थे।

मृणालिनी, सुहासिनी और हरीन्द्रनाथ ने अपने बचपन की बहुत सी घटनाओं का उल्लेख किया है। सुहासिनी को बराबर यह शिकायत रही कि वह बहुत छोटी थी और उसे अपनी बड़ी बहन के बारे में ज्यादा याद नहीं है। सुहासिनी जब छह वर्ष की हुई उस समय सरोजिनी का विवाह हो चुका था और वह सार्वजनिक जीवन में प्रवेश कर चुकी थीं। हरीन्द्रनाथ भी उस समय छोटे ही थे फिर भी उन्होंने अपनी पुस्तक 'जीवन और मैं' (लाइफ एण्ड माइसेल्फ) में सरोजिनी की प्रिय शैली में सजीव बिम्बों और समृद्ध भाषा के माध्यम से अनेक नितात पारिवारिक घटनाओं का उल्लेख किया है।

अपने जीवन के अतिम दिनों में गुन्नू सुनाया करती थी कि बचपन में सरोजिनी छोटे भाई-बहनों पर बहुत रौब जमाती थीं। उन्होंने परिवार के छोटे सदस्यों पर शासन करना अपना अधिकार ही मान लिया था तथा वह ऐसी बातों की जिम्मेदारी भी उठा लेती थीं जो उनकी राय में माता-पिता के कार्यक्षेत्र में आती थीं। देहात से एक वर्ष पूर्व 1968 में गुन्नू ने एक घटना सुनाई थी। बात यह हुई कि अकबर हैदरी ने उनके परिवार को यह चेतावनी दी थी कि वीरेन्द्र के क्रातिकारी कार्यकलाप से सरकारी अधिकारी चौकन्ने हो गए हैं अत हो सकता है कि उसके कारण परिवार पर कोई विपत्ति टूट पड़े। अकबर हैदरी ने सरोजिनी से कहा कि इस बारे में कुछ करो, अपने भाई को सार्वजनिक तौर पर अस्वीकार कर दो। अपने माता-पिता को बचाने की चिता और उत्साह में उन्होंने हैदरी को एक पत्र लिखा,

जिसमें यह घोषणा कर दी कि पिता और भाई के साथ मेरा कोई सबध नहीं है। यह पत्र प्रकाशित हो गया। इससे उनके पिता बहुत नाराज हो गए और उन्होंने सरोजिनी के लिए घर के दरवाजे बन्द कर दिये। वह वीरेन्द्र के राजनीतिक विचारों से सहमत तो न थे लेकिन उन्होंने हमेशा उनका साथ दिया। वीरेन्द्र का चित्र अब कलकत्ता के शहीद भवन की शोभा बढा रहा है किन्तु साम्राज्यवाद का घोर शत्रु होने के कारण उन्होने अपनी सम्पूर्ण प्रौढ़ावस्था मे देश निकाले का दड भोगा।[1]

सरोजिनी की सबसे छोटी बहन सुहासिनी ने बचपन की एक बहुत मजेदार घटना सुनाई बात यह हुई कि वीरेन्द्र ने मृणालिनी के नाम जर्मनी से गोपनीय रीति से एक पत्र भेजा था। गुप्तचर विभाग को उस पत्र की भनक पड़ गई और उसने चालीस सिपाहियों की मदद से उनका घेर लिया। जिस समय पुलिस कप्तान सर चार्ल्स टेग्गर्ट ने घर में घुसने की अनुमति मागी और अघोरनाथ से कहा कि वह पत्र हमें दे दीजिए। उस समय सुहासिनी अपनी गुड़िया से खेल रही थी। अघोरनाथ ने अपने स्वाभाविक सौजन्य के साथ पुलिस कप्तान से कहा कि आप बैठिए। बच्चे शात भाव से सारा तमाशा देखते रहे और पुलिस घर की तलाशी लेती रही। पुलिस ने पत्र की तलाश में घर का कोना-कोना छान मारा और इन बच्चों का गुड़ियाघर भी अस्तव्यस्त कर दिया। उस समय रणेन्द्र बगीचे में अलग-थलग खेल रहा था और धीरे-धीरे मुह में कुछ चबाता जा रहा था। जब पुलिस पत्र प्राप्त करने में विफल हो गई तो अघोरनाथ ने अपने बेटे वीरेन्द्र का एक चित्र सर चार्ल्स को दिखाया और उसके लौटते समय कहा कि आप लोग उनसे कह दीजिएगा कि मेरा बेटा वीरेन्द्र उन्हें स्वतन्त्रता दिलाएगा। पुलिस के लौट जाने के बाद आठ साल के रणेन्द्र ने अपने विख्यात बड़े भाई के पत्र के टुकड़े गभीरतापूर्वक मुँह में से निकाले।

वीरेन्द्र ने कम्युनिस्ट नेता सुश्री एग्नेस स्मेडले के सग विवाह किया था, जो आजीवन उनकी सगिनी रहीं। वह अब चीन में दफन हैं। उनकी कब्र पर लगे पत्थर पर ये शब्द उत्कीर्ण हैं धरती की बेटी। वीरेन्द्र ने मुख्य रूप से जर्मनी में काम किया। वह साम्राज्यवाद-विरोधी लोगों के साथ मिलकर काम करते रहे। लेनिन की

---

[1] सरोजिनी नायडू, ताराअलीबेग पे015

कृतियों के सग्रह में वीरेन्द्र के बारे में कुछ दिलचस्प टिप्पणिया हैं। लेनिन ने लिखा है कि कम्युनिस्ट इटरनेशनल की तीसरी काग्रेस के अवसर पर वीरेन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय, जी0ए0 लुगानी और पी0 खानखोजे ने 'भारत और विश्वक्राति' विषय पर प्रबध भेजा था जिसे कम्युनिस्ट इण्टरनेशनल की कार्यसमिति और काग्रेस से पूर्वी देशों की समस्याओं से सम्बन्धित आयोग के सामने रखा गया था।[1] उन्होंने लेनिन के नाम एक पत्र लिखकर उनसे मिलने की इच्छा प्रकट की थीं। उन्होंने लिखा था कि हमें आशा है कि आपके पास जब समय होगा तब हमें आपसे मिलकर भारत की समस्या के बारे में बात करने का अवसर मिलेगा।

बाद में वीरेन्द्र ने स्वीकार किया कि उस प्रबन्ध के अधिकाश अश राजनीतिक दृष्टि से गलत थे फिर भी लेनिन ने उत्तर दिया था। वह पत्र मार्क्सिज्म-लेनिनिज्म सस्थान के केन्द्रीय दलीय सग्रहालय में पाच सौ एक क्रमाक पर सुरक्षित है। लेनिन का यह उत्तर 8 जुलाई 1921 का है। वीरेन्द्रनाथ उन दिनों सोवियत समाजवादी गणराज्य सघ की विज्ञान अकादमी के अतर्गत भारतीय प्रजातीय विज्ञान विभाग में वरिष्ठ वैज्ञानिक के रूप में कार्य कर रहे थे और उन्होंने अकादमी की साधारण बैठक में प्रस्तुत अपने प्रतिवेदन में लेनिन के पत्र के निम्न अवतरण का हवाला दिया था - "मैंने आपके प्रबन्ध को गहरी रूचि लेकर पढ़ा है, लेकिन नए प्रबन्ध की क्यों आवश्यकता है, मैं शीघ्र ही इसके बारे में आपके साथ चर्चा करूगा।"[2]

वीरेन्द्रनाथ क्राति के उग्र-पक्ष के प्रतिनिधि थे। वह भारत नहीं लौटे। जर्मनी में उनके जीवन और कार्यो का विस्तृत विवरण बलिन की विज्ञान अकादमी के डॉ0 हर्स्ट क्रूगर ने उनकी जीवनी के रूप में दिया है। स्वीडन के लेखक ईलिया एहरेनबर्ग ने उन्हें 'महान भारतीय' कहा है। भाई ने जहा क्रातिकारी राजनीतिक जीवन के अग्रिम दस्ते में विदेशों में ख्याति प्राप्त की, बहिन ने वहा भारत में एक सर्वथा भिन्न मार्ग से प्रसिद्धि पाई। समग्रता और सृजनात्मकता सरोजिनी के स्वभाव की मूल प्रवृत्तियाँ थीं। स्वभावत वह सामजस्य और बधुत्व, शाति और प्रेम से ओत-प्रोत थीं तथा उन्होंने अपने जीवन में रोषपूर्ण और कठोर भाषा का प्रयोग केवल मातृभूमि के प्रति होने वाले अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध ही किया।

---

[1] सरोजिनी नायडू, ले0 ताराअली बेग, पे0 16
सरोजिनी नायडू, ले0 ताराअली बेग, पे0 17

1908 में सरोजिनी नायडू को कैसरे-हिन्द का स्वर्णपदक प्राप्त हुआ। वीरेन्द्रनाथ के जीवन और कार्यो के साथ इससे बढकर और क्या वैषम्य हो सकता था। उन दिनों रेजीडेन्सी में दी जाने वाली शानदार दावतों में उनका सामाजिक व्यक्तित्व सबसे अधिक मुखर रहता और जिस समय मूसा नदी की भयकर बाढ ने हैदराबाद के जीवन को अस्त-व्यस्त कर दिया तथा वहा के लोगों को अकथनीय सकटो का सामना करना पड़ा उस समय उन्होंने लडी हैदरी के साथ मिलकर बाढ-सहायता कार्य के लिए स्वयसेवकों को सगठित किया। सगठन की दिशा में उनका यह पहला बड़ा प्रयास था। सरोजिनी के स्वभाव में एक बहुत बड़ा गुण यह था कि वह सब तरह के लोगों में घुलमिल जाती थीं। इस गुण के कारण उनमें जनसाधारण को साथ से लेकर काम करने की क्षमता विकसित हो गई।

अघोरनाथ ने अपनी सबसे बड़ी बेटी को विविध वस्तुओं में रूचि रखना सिखाया। उन्हें जल्दी स्कूल भेजा गया। वे अत्यन्त मेधावी छात्रा थीं। और सदा कक्षा में प्रथम आती थीं, पर उन्हें स्कूल की अपेक्षा घर अधिक प्रिय था। पिता के उत्साह तथा विस्तृत अध्ययन ने उनमें ऐसा ज्ञान और विश्वास भर दिया कि वे स्कूल में नेता बन गई। फिर भी कई बार पिता की इच्छा के विरुद्ध विद्रोह कर देती थीं, पिता की इच्छा थी कि सरोजिनी अग्रेजी भाषा में पारगत हो, जबकि वे सीखना ही नहीं चाहती थीं। इतनी जिद्दी थीं कि सीखने और बोलने को तैयार ही नहीं होती थीं। एक दिन क्रुद्ध पिता ने नौ साल की सरोजिनी को कमरे में बन्द कर दिया, सारा दिन बन्द रहने के बाद भी वे न तो परेशान हुई, न रोईं, न चिल्लाई। किन्तु पिता की बात मानने का निश्चय अवश्य किया। उस कैद से छूटने पर बोलीं कि वे अग्रेजी सीखेंगी। शीघ्र ही वे माता-पिता से अग्रेजी में बात करने लगीं।

सरोजिनी ने अपने काव्य-सकलन 'दि गोल्डन थ्रेशोल्ड' की भूमिका में लिखा है कि बचपन में उन्हें कविता लिखने का शौक रहा हो, ऐसा नहीं लगता, पर वे प्रारम्भ से ही स्वप्नदर्शी थीं। पिता चाहते थे कि वे वैज्ञानिक या गणितज्ञ बनें। पर माता-पिता दोनों ही कलाप्रेमी थे। माँ अपने यौवन में सुन्दर बगला गीत लिखती थीं। बेटी ने दोनों से काव्य-प्रतिभा पाई होगी और वही अधिक प्रबल रही होगी। एक दिन

ग्यारह वर्ष की सरोजिनी को बीजगणित का एक सवाल ठीक से समझ में नहीं आ रहा था। वे उसे लेकर परेशान हो गई थीं। तभी एक पूरी कविता उन्हें सूझती गई वे लिखती गई। तब से उनका काव्य-जीवन आरम्भ हुआ। तेरह वर्ष की आयु में उन्होंने 'लेडी ऑफ दि लेक' कविता लिखी। छह दिन में तेरह सौ पक्तियों की यह कविता लिख डाली थी। इसी समय के आसपास दो हजार पक्तियों का एक नाटक लिखा, जो पहले से सोचे बिना पल-भर में शुरु कर दिया था।[1] एक बार जब वे बहुत बीमार थीं, तो डॉक्टर ने उनसे किताबें छूने को भी मना कर दिया था, यहाँ तक कि उनकी पढाई बन्द करवा दी गई थी। पर उन्होंने सम्भवत चौदह से सोलह वर्ष की आयु में सबसे अधिक पढाई की। एक उपन्यास लिखा, जर्नल की मोटी प्रतियाँ लिखीं।

अघोरनाथ की बडी इच्छा थी कि सरोजिनी दसवीं पास कर लें। हैदराबाद में कोई अच्छा स्कूल न होने के कारण उन्हें मद्रास भेजा गया जहाँ से उन्होंने बारहवें साल में दसवीं की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास कर ली। वे मद्रास प्रेसीडेन्सी में प्रथम आईं। भारतीय लड़की के लिए यह एक बहुत बड़ी उपलब्धि थी, विशेषकर इसलिए क्योंकि 1891 में परीक्षा सहज नहीं होती थी। जिस समय लड़कियाँ ऊँची कक्षाओं में पढने के लिए स्कूल जाती थीं, उस समय सरोजिनी ने अग्रेजी, विज्ञान, गणित, इतिहास तथा भूगोल लेकर परीक्षा पास की। उन दिनों कुछ विषयों का दसवीं का स्तर आज के स्नातक स्तर का था। सरोजिनी की सफलता के कारण भारत में उनकी प्रसिद्धि हुई। पर वे स्वय विशेष प्रसन्न नहीं हुईं क्योंकि उन्हें प्रदर्शन नहीं भाता था। बाद में उन्होंने आर्थर सीमन्स से कहा था कि "ईमानदारी से कहती हूँ कि मैं खुश नहीं हुई थी, ऐसी चीजें मुझे नहीं भातीं।" उनके इस कथन की पुष्टि डॉ0 सी0पी0 रामास्वामी ने भी की। वे उनसे केवल नौ महीने छोटे थे और आजीवन उनके मित्र रहे थे। उनके पिता अघोरनाथ को जानते थे। वे कहते थे कि सरोजिनी को सहनशक्ति, साम्प्रदायिक एकता और मुस्लिम सस्कृति के सभी पक्षों की प्रशसा का

---

[1] पोएम्स ले0 कुमारी एस0 चटोपाध्याय, 3 अक्टूबर 1896, प्रकाशक अघोरनाथ चटोपाध्याय, ये प्रारम्भिक कवितायें 1892-1896 के बीच लिखे गये पद्यों का सग्रह है।

गुण पिता से मिला। पिता और पुत्री दोनों ही स्वप्नद्रष्टा, सीधे-सादे और अपने प्रति लोगों की श्रद्धा से बेखबर थे।[1]

1895 में निजाम की (वेलकम स्कालरशिप) जिसमें आने-जाने के किराये के अतिरिक्त 300 पौंड प्रतिवर्ष खर्च के लिए उन्हें दिये गये। छात्रवृत्ति पर वे आगे पढने के लिए इग्लैंड गई। पहले वे किंग्स कॉलेज, लन्दन गई, फिर गिरटन कॉलेज, केम्ब्रिज गई।[2] पर क्लास के बन्धन में उनका रोमाटिक मन घुटता था। सुन्दर प्रकृति निरन्तर उन्हें आकर्षित करती थी और वे बहुत बार कक्षा से बाहर चली जाती थीं। आश्चर्य की बात है कि दसवीं कक्षा प्रथम श्रेणी में पास करने वाली सरोजिनी ने फिर कोई परीक्षा नहीं दीं। लन्दन और केम्ब्रिज में कुछ समय रहीं, पढ़ाई की, पर परीक्षा नहीं दी। सम्भवत इसका प्रमुख कारण यह रहा होगा कि उस समय वे मात्र सोलह वर्ष की थीं। तीन वर्ष बाद उन्नीस वर्ष की आयु में लौट भी आई। इतनी छोटी उम्र में बीए कर पाना सम्भव नहीं था। विशेषकर जब औपचारिक शिक्षा में रूचि भी नहीं थी। इसके अतिरिक्त दसवीं के बाद अस्वस्थता के कारण 1892 से 1995 तक उन्हें स्कूल भी नहीं भेजा गया। शिक्षा के प्रारम्भिक समय में इतना व्यवधान महत्वपूर्ण होता है।

परीक्षा भले ही न दी हो, उनकी रूचियाँ अत्यन्त विस्तृत थीं। उन्हें उर्दू तथा अग्रेजी का अच्छा ज्ञान था। स्कूल आदि की सब चिन्ताओं से दूर रहकर वे कवयित्री बन गई। खूब लिखती रहीं। कलकत्ता की प्रकाशित प्रति है। उसके मुखपृष्ठ पर हाथ से लिखा है, 'कविताएँ सरोजिनी चट्टोपाध्याय, दिनाक 3 अक्टूबर, 1896 (Poems by Sarojini Chattopadhyaya, dated 3rd Oct 1896) । इसमें 1892 से 1896 तक की कविताएँ सकलित हैं। ये कविताएँ वय सन्धि की बालिका के प्रौढ विचारों को व्यक्त करती हैं।[3]

दसवीं के बाद ही सरोजिनी डॉ गोविन्द राजुलु नायडू से प्रेम करने लगी थीं। उनकी प्रारम्भिक कविताएँ अत्यन्त रोमाटिक हैं, 'लब्स विजिन' , लब्स एडिऊ, 'लव'

---

1 पदमिनी सेन गुप्ता पे0 16
2 मातासेवक पाठक पेज - 5
3 सरोजिनी नायडू ले0 उमा पाठक पे0 22

जैसी कविताएँ उसी प्रेम का परिणाम रही होंगी। एक दिन डॉ नायडू अघोरनाथ के घर गए और उनसे उनकी बेटी का हाथ मागा। वे अचरज मे पड़ गये और पूछा कि क्या मेरी बेटी इस बारे में जानती है। डॉ नायडू ने इनकार करते हुए कहा उन्होंने सरोजिनी से इस विषय में बात नहीं की थी क्योंकि यह भारतीय परम्परा के विरूद्ध होता। अघोरनाथ ने उसे कहा कि वे अपनी पत्नी से बात करने के बाद निर्णय लेंगे। पत्नी बेटी के मन की बात जानती थीं, पर पति के समान ही उस समय शादी के पक्ष में नहीं थीं। डॉ0 नायडू दूसरी जाति के ही नहीं, सरोजिनी से उम्र में भी बहुत बड़े थे और पहले एक विवाह कर चुके थे।[1]

अधिकाश जीवनी-लेखकों का विचार है कि उन्हें इगलैंड इसलिए भेजा गया ताकि उनकी दूसरी जाति में शादी न करती पड़े। किन्तु यह विश्वसनीय नहीं है, क्योंकि अघोरनाथ पक्के सुधारक थे, जातिभेद को नहीं मानते थे, पर वे बाल-विवाह के विरोधी थे। सरोजिनी उस समय केवल पन्द्रह वर्ष की थीं। अत विवाह करने का प्रश्न ही नहीं उठता था।

इग्लैंड में सरोजिनी प्रसिद्ध आलोचक एडमड गॉस से मिलीं। प्रथम भेंट तथा उनकी कविता के विषय में गॉस ने उनके सकल 'दि बर्ड ऑफ टाइम' की भूमिका में इस प्रकार लिखा है " जब सरोजिनी चट्टोपध्याय - जो वे तब थीं-पहले पहल लन्दन आई तब वे सोलह वर्षीया बालिका थीं, पर अपनी ही उम्र की अग्रेजी लड़की से वे इतनी भिन्न थीं जैसे कमल या कैक्टस लिली ऑफ दि वैली से । व उस उम्र में मानसित स्तर पर परिपक्व थीं, आश्चर्यजनक अध्ययन किए हुए थीं और ससार से उनका परिचय एक पश्चिमी लड़की की अपेक्षा बहुत अधिक था।"[2]

इग्लैंड में ये कुछ वर्ष सरोजिनी ने गीतों के सहारे बिताए। वे अपने माता-पिता तथा प्रिय के पास लौटने की कामना से आकुल थीं। वहाँ लिखी गई प्रारम्भिक कविताओं में पलायनवादिता थी। वे 'नींद के जादुई जगल' में प्रेम, शान्ति तथा सत्य की कल्पना करती थीं। नवम्बर 1896 में गिरटन के जगलों में लिखे गीत में सराजिनी के हृदय की उदासी व्यक्त हुई है। उनके सपने 'उड़ते पत्तों की तरह' गायब हो चुके थे।

---

[1] सरोजिनी नायडू ले0 डॉ0 माजदा असद, पे015
सरोजिनी बायडू दि बर्ड ऑफ टाइम, ले0 पे04

1896 में गिरटन कॉलेज के छात्रों के लिए लिखी एक कविता में वे कहती हैं, 'बच्चों, तुम जिये नहीं।'' स्वचय प्रेम में डूबी सरोजिनी प्रेम के उत्तर को आमन्त्रित करती हैं

हठी सगीत की तान के जादू-सी

समुद्रो को पार करती

तुम्हारी आत्मा मेरी को उत्तर दे।

केम्ब्रिज में युवा कवियित्री को एक और अच्छे मित्र और आलोचक आर्थर सीमन्स मिले। गॉस के समान वे भी उनसे बहुत प्रभावित हुए। उनकी हसी ने भी सीमन्स को आकर्षित किया। सरोजिनी राइमर्स क्लब के सदस्यों से भी मिलीं, जिनसे मिलकर अग्रेजी कविता की भाषा और शिल्पगत विशेषताओं से परिचित हुई।[1]

इग्लैंड में जल्दी ही उनका स्वास्थ्य और अधिक खराब हो गया। कुछ जीवनी लेखको के अनुसार उनका स्नायवीय असन्तुलन हो गया था। बीमारी ने उनका उत्साह छीन लिया था। वे इग्लैंड की सीली जलवायु को छोड़कर स्विट्जरलैंड जाने को विवश हो गई। वहा की पहाडी हवा में वे खुश थीं। फिर वे इटली गई, उनकी स्वच्छन्द आत्मा को इग्लैंड की अपेक्षा इटली ज्यादा भाया। उन्होंने लिखा "यह देश इसानों का है या भगवान का ? यह धरती है या स्वर्ग?" उन्हें लगता था कि "इटली सोने से बना है, सुबह दिन की रोशनी में स्वर्ण, फिर तारों का स्वर्ण, मई के जादुई महीने मे अजीब मुग्धकारी लय में नाचते जुगनुओं का स्वर्ण जो अन्धकार का हवाई स्वर्ण है। मेरी कामना है कि उनके परियों जैसे नृत्य के सूक्ष्म सुर को पकड़कर एक ऐसी लयात्मक विता रचूँ जिसमें उनकी अनायास चमक उठनेवाली गति को बाँध सकूँ। इनसे मुझे एक अजीब-सी अनुभूति हुई, जैसे में इसान नहीं एक परी की आत्मा हूँ।[2]

फ्लोरेन्स के सौन्दर्य से अभिभूत सरोजिनी ने आर्थर सीमन्स को बताया कि वे "सौन्दर्य ऐसे पी रही हैं जैसे देवता की उपयुक्त सुनहरी, सुगन्धित, चमकती हुई मदिरा पी रही हों, दो हजार वर्ष पूर्व एस्ट्रिया के मृत देवता उसे पी चुके हैं, क्या

---

[1] सरोजिनी नायडू - ले० उमा पाठक, पे०23
सरोजिनी नायडू - दि गोल्डेन थ्रेशोल्ड, पे० 20-21

मैंने मृत कहा? नहीं, क्योंकि देवता अमर होते हैं और वे अब भी किसी को भी फीसोल की स्लेटी पहाड़ी की वीरान घाटी में घूमते हुए मिल सकते हैं। क्या मैने उन्हें देखा कि, उनकी कब्रों में देखा वे एट्रूस्कन देवता शक्तिशाली और आदिम सौन्दर्य से युक्त दिखाई दिए।"[1]

वे वहाँ की महिलाओं से बहुत प्रभावित हुई थीं। कैसीन में रहते समय उन्होनें लिखा था "पश्चिम की सुन्दर सासारिक स्त्रिया अपने सुन्दर प्रसाधन से आकर्षण की सूक्ष्म बारीकियों की कुशल कलाकार हैं। पर क्या यह सीम ओछापन, मिथ्याहकार, प्रसाधन और चपलता उनके आकर्षण के लिए आवश्यक है?" उधर वे स्त्रियाँ सरोजिनी से प्रभावित थीं। उनके आसपास घूमती थीं, उन्हें थपथपाती थीं जैसे वे एक छोटी अच्छी बच्ची हों या खिलौना हो। उन्हें स्वप्न में भी यह भान नहीं था कि सरोजिनी उन पर तरस खाती थीं कि वे जो दिखती हैं उससे अधिक कुछ नहीं हैं। उनका जीवन खाली है, उनमें आत्मिक सौन्दर्य नहीं है।[2]

आर्थर सीमन्स को लगता था कि वे सबके बीच बैठकर, उनके बारे मे सोच कर अपने निष्कर्ष निकालती थीं । अपने यूरोपीय मित्रों को सत्रह साल की छोटी उम्र में ही उन्होंने बहुत प्रभावित किया था। वे प्रौढ स्त्री की तरह औरों की चिन्ताओं और कष्टों के बारे में सुनती थीं उनकी मानसिक शान्ति के सम्मुख तुच्छ और क्षणिक विचार जलकर, धुआँ बनकर उड़ जाते थे। वे उन योगियों की सन्तान थीं जिन्होनें रहस्यात्मकता की गहराई को पा लिया था। सीमन्स का विचार था कि सरोजिनी में बुद्धि के साथ सवेदनशीलता थी, जो दूसरों के दुख-सुख को समझती थीं, उनकी भावनाएँ केवल फूलों के प्रति न होकर मित्र के दुख-दर्द के प्रति भी समान थी। सरोजिनी के तीव्र उत्तेजनापूर्ण स्वभाव, उनकी हसी और उदासी, उनकी बुद्धिमता औरों के प्रति सहानुभूति आदि के भावों ने विदेश में हलचल मचा दी। वे पूर्व की वह सरस्यपूर्ण बालिका थीं, जिन्होंने पश्चिम पर अविस्मरणीय गहरा जादुई प्रभाव छोड़ा था। सितम्बर 1898 में वे भारत लौट आई।[3]

---

[1] सरोजिनी नायडू दि गोल्डेन थ्रेशोल्ड पे0 21-22
[2] सरोजिनी नायडू - ले0 उमा पाठक, पे0 24
[3] दि वर्ड आफ टाइम, पेज 3-4

विदेश में बिताए तीन वर्षो में उनका डॉ नायडू के प्रति प्रेम कम नहीं हुआ था। डॉ0 नायडू फौजी डॉक्टर के पुत्र थे। 18 वर्ष की आयु में उनका विवाह हुआ था, पर एक वर्ष के अन्दर पत्नी की मृत्यु हो गई थी। इसके बाद वे डॉक्टरी की पढाई के लिए इग्लैंड गए और एक सफल डॉक्टर बनकर लौटे। निजाम सरकार ने उन्हें बहुत सम्मान दिया, डॉ0 नायडू को महामहिम की शाही सेना की चिकित्सा सेवा का अध्यक्ष एव मेजर का पद सरोजिनी के सितम्बर 1898 स्वदेश वापसी के पहले दिया जा चुका था। उनका सरोजिनी के प्रति सच्चा और गहरा प्यार था। तीन साल अलग रहकर भी दोनों की भावनाओं में कोई परिवर्तन नहीं आया। उनके विवाह से भारत में बहुत से सुधारों के लिए रास्ता खुल जाने की सम्भावना थी। उन्होंने अन्तर्जातीय एव अन्तरप्रातीय भावनाओं को पूरी तरह समाप्त करना चाहा।[1]

दिसम्बर 1898 में जब मेजर डॉ0 नायडू से सरोजिनी ने अपना विवाह कर लिया यद्यपि डॉ0 नायडू अन्य जाति के थे और सरोजिनी ब्राह्मण परिवार से थीं डॉ0 नायडू छोटी जाति के थे, 19 वर्ष की अवस्था हो जाने तथा उच्च शिक्षा प्राप्त कर लेने एव परिपक्व होने के पश्चात विवाह करने से जहा श्रीमती नायडू देवी ने भारत में प्रचलित नाशकारिणी बाल-विवाह की कुप्रथा तथा "स्त्री शूद्रों न कीमताम" की घातक उक्ति का समुचित तिरस्कार किया, वहाँ एक मिश्र जाति के पुरूष के साथ विवाह करके अपनी स्वातत्रप्रियता का मीखासा परिचय दे दिया। सामाजिक बन्धनों का इस तरह तिरस्कार करने वाली श्रीमती सरोजिनी नायडू यदि भान देश के समाज सुधार के आन्दोलनों में प्रमुख भाग लेती और देशोद्धार के कार्य में निर्भयता पूर्व लगी हुयी हैं तो इसमें आश्चर्य नही था।[2]

उन दिनों अन्तर्जातीय विवाह नहीं होते थे। अत उनका विवाह सामाजिक सुधार की दिशा में एक उदाहरण बन गया। उनसे अठारह वर्ष पूर्व कोंकणी चितपावन ब्राह्मण पडिता रमाबाई सरस्वती ने एक बगाली कायस्थ से विवाह किया था, जिससे तहलका मच गया था। किन्तु सरोजिनी के विवाह से केवल बगाल तथा तक्षिण के पारम्परिक समाज में थोड़ी हलचल हुई, वैसा विरोध नहीं हुआ जैसा रमाबाई के

---

[1] माजदा असद, पे0 16

[2] माता सेवक पाठ्क , पे0 5
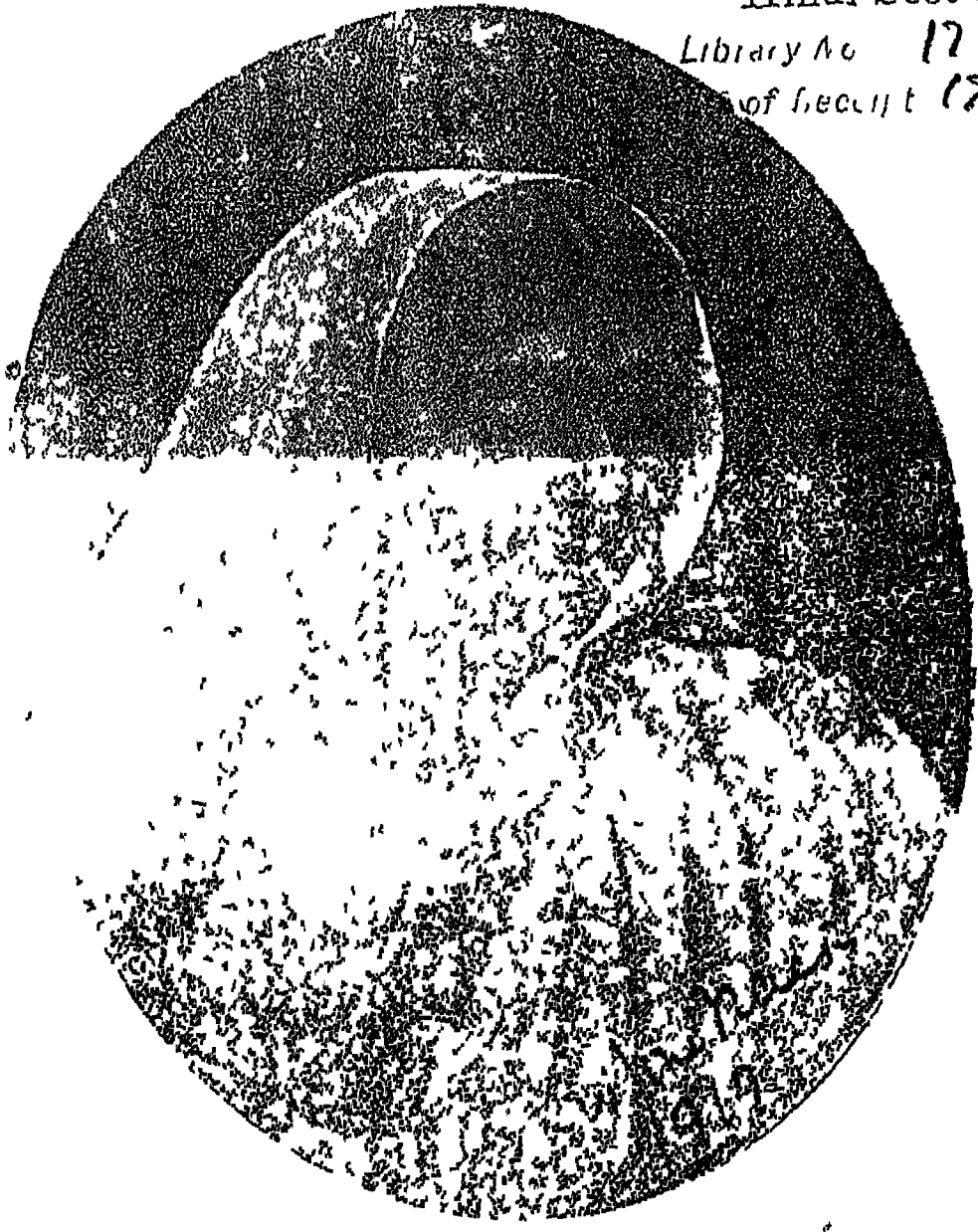
श्री मती सरोजिनी नायडू

विवाह से हुआ था। लोगों के इस सन्देह के बावजूद कि दो अलग प्रदेशों व जातियों के लोग कैसे मिल पाएगें, इस विवाह ने अन्तर्जातीय तथा अन्तप्रादेशिक विवाहो की नींव डाली।

10 मार्च, 1872 को केशवचन्द्र सेने ने (विशेष विवाह कानू 1872 का कानून 3) ब्राह्म विवाह बिल पास करवाया था, जिसे हैदराबाद में लाने में अघोरनाथ का हाथ था। वे चाहते थे कि जातिगत पूर्वाग्रह टूटें और समाज में सुधार आए। उन्होन यह कल्पना भी नहीं की होगी कि उनकी बेटी उसी एक्ट के अर्न्गत विवाह करेगी। 2 दिसम्बर, 1898 को मद्रास में डॉ नायडू और सरोजिनी का विवाह हुआ। एक समाचार पत्र में इसका रोचक विवरण प्रकाशित हुआ "यह रूचिकर घटना कई तरह से बेजोड़ मानी जाएगी। देश के सुधार आन्दोलन के इतिहास में यह युगान्तकरकारी है। वर बालिजा जाति का है, जबकि वधू जन्म से ब्राह्मण है, वर मद्रासी है और वधू बगाली। दोनों इग्लैंड से लौटे हिन्दू हैं। डॉ नायडू एम बी सी एम हैं और विलायत से डॉक्टरी पास करके आए हैं, सरोजिनी मद्रास से दसवी करके ऊँची पढाई के लिए कुछ वर्ष को विदेश गई थीं।"[1]

19 वर्षीया वधू सरोजिनी ने हैदाराबाद में घर बसाया। माता-पिता का घर भी पास ही में था। इस समय युवा कवियित्री के बराबर प्रसन्न कोई नहीं हो सकता था। शादी होने के कुछ वर्ष बाद तक वे प्रेम, कल्पना और आदर्श के सुन्दर ससार में निमग्न रहीं । वे अपनी पूरी शक्ति से औरों की सहायता करती थीं तथा कठिनतम परिस्थिति में भी साहस बनाए रखती थीं। अतिथि सेवा में कुशल थीं। मित्रों के प्रति प्रेमभाव रखती थीं। उनके चार बच्चे हुए – जयसूर्य (1901), पद्मजा (1902), रणधीर (1903) और लालामणि (1904) । उनका घर सदा बचें की हसी और उनके प्यार से भरा रहता था। बच्चों के लिए कविता लिखी 'टू माई चिल्ड्रन' (To my Children) जो 1905 में "दि गोल्डन थ्रेशोल्ड" में प्रकाशित हुई। उनके पति उनकी प्रतिभा को पहचानते थे। वे जानते थे कि घर का ध्यान रखने पर भी वे निजी अभिव्यक्ति के लिए आतुर रहती हैं। अत डॉ0 नायडू उनकी काव्य-रचना तथा

---

[1] फुलर, मार्क्स बी राग्स आफ इडियन बुमनहुड पे 219-220

सरोजिनी नायडू एव पद्मजा नायडू

वक्तृता को प्रोत्साहन देते थे। इस पूरे प्रसन्नतापूर्ण वातावरण में उनकी अस्वस्थता ही एकमात्र दुख का कारण थी।

1916 ई0 में मार्गरेट ई कजन्स उनके हैदराबाद स्थित घर पर आई और उसका वर्णन इस प्रकार किया। "उनकी सुन्दर बैठक में घुसते ही मुझे सस्कृति और शान्ति का सुन्दर दृश्य दिखाई दिया, जिसने मेरी इन्द्रियों का स्वागत किया। कलात्मक रूचि की पूर्णता बता रही थी कि सरोनवाला जाता है कि पूर्वी रगों से बने कालीन और अन्य अस्तकला के नमूनों को पाश्चात्य बैठक की आधुनिक सुख-सुविधाओं के साथ कैसे जोड़ा जाना चाहिए। वहा लम्बे और गोल फूलदान थे जिनमें अत्यन्त सुन्दर कमल के फूल सजे थे।[1] उन दिनों सरोजिनी बीमार थीं। कजन्स को आश्चर्य हुआ कि बीमारी ने उनकी इच्छाओं को मारा नहीं था और वे बिछौने पर से इतना काम कर पा रही थीं।

सरोजिनी इसे सन्तुष्ट नहीं थीं। इन्होनें आर्थर सीमन्स को लिखा, " सब सोचते हैं कि मैं कितनी अच्छी, हसमुख, शक्तिशाली हू, सब वे साधारण बातें जिनके होने में सुविधा है। मेरी मा मुझे एक बेहद शान्त बच्ची के रूप में जानती है मैंने भी एक पल से दूसरे तक जीने का दर्शन सीख लिया है। भले ही यह भोगवादी सिद्धात लगता है खाओं, पीओं, खुश रहो, क्योंकि कल हमें मर जाना है। मैं बहुत बार मृत्यु से लड़ने के कारण जान गई हू कि जीवित रह पाने से बढकर हर्ष की कोई बात नहीं है। जीवन या मेरे स्वभाव ने मुझे जो कुछ दिया है उसमें हसी के उपहार को मैं अमूल्य मानती हू।"[2] अब उनमें प्रेम और कल्पना के ससार से ऊपर उठकर कुछ पानेकी तीव्र इच्छा, आकाक्षा बलवती होती जा रही थी। प्रारम्भ में वे उस कली के समान थीं जो सूर्य के प्रेमपूर्ण स्पर्श से फूल बन जाती है, पर क्रमश उनमें एक गहरी बौद्धिक भूख, एक अतृप्त आत्मिक प्यास बढ़ती गई, जो निरन्तर सौन्दर्य की खोज में थी। उन्होंने 'नीलाम्बुजा' नामक एक गद्यगीत लिखा जिसकी नायिका सम्भवत वे स्वय हैं। इस रचना में उन्होंने हैदराबाद के जीवन का सम्पूर्ण चित्राकन किया है। वह समाज पर्दे की ओट में जी रहा था। वहा महल और आरामगाह थे,

---

[1] कजन्स मार्गरेट ई दि अवेकनिंग ऑफ एशियन वुमनहुड पे0 116-117

[2] पदमिनी सेन गुप्ता पे024, सरोजिनी नायडू ।

साथ ही लाल पीले फूलों से लदे बाग भी थे। सरोजिनी ने हैदराबाद और सिकन्दराबाद को अपनी कविताओं का केन्द्र बनाया। चारमीनार, हुसैनसागर, गगासागर, विक्टोरिया गार्डन, सालारजग म्यूजियम आदि वहा के प्राचीन स्मारक हैं। शहर के बीच से छोटी सी शान्त नदी मुसी, गोलकुडा की कब्रें, रोमाटिक हीरो-हीरोइनों की यादें जगाती हैं। उन्होने अपनी कविता के विषय रूप में इन्हें चुना।[1]

सरोजिनी को अपने शहर की मुसलमानी सस्कृति बहुत प्रिय थी। वे मानती थीं कि यहा दो सौ साल से इस्लाम की परम्परा चली आ रही है। इसके अन्तर्गत सभी जातियों का एक से अधिकार और लाभ देने का नियम है। वे इस्लामी सस्कृति और काव्य से बहुत प्रेम करती थीं। क्योंकि उन्होंने बचपन में पहले शब्द अमीर खुसरो की जुबान से सुने थे। उनके साथी मुसलमान बच्चे थे और प्रारम्भिक मुसलमान स्त्री-पुरुषों से जुड़ी थीं।[2]

हैदराबाद के आसपास के इलाकों ने भी सरोजिनी को आकर्षित किया। वे इतिहास में रुचि रखती थीं और उसके साथ अपनी कल्पना को मिलाकर अतीत को साकार करती थीं। वे गोलकुडा के शाही मकबरों के बीच बेगमों की खिलखिलाहट, तेज हवा में भालों की टकराहट सुन पाती थीं। शताब्दिया बीत जाने पर भी वे गढ नष्ट नहीं हुए थे। उनके पिता हर आगन्तुक को गोलकुडा ले जाते थे। जब स्वय नहीं जा पाते थे अपनी बड़ी बेटी को गाइड बनाकर भेजते थे। नौ वर्षीया सरोजिनी ने ऐसी ही एक यात्रा के समय वहाँ के एक मकबरे की दीवार पर कविता लिखी, जिसके सौन्दर्य से मित्र परिवार चकित रह गया।

हैदराबाद की पर्दे में छिपी स्त्रियों से सरोजिनी बहुत प्रभावित थीं। जो इतने बन्धनों में बधी होकर भी प्रेम से अपना घर सजाती-सवारती हैं। उनकी प्रसिद्ध कविता 'पर्दानशीन' में जेबुन्निसा अपने सौन्दर्य का इस प्रकार वर्णन करती हैं -

जब मैं अपने गालो से घूघट उठाती हूँ
तब गुलाब ईर्ष्या से पीले पड़ जाते हैं।

---

[1] सरोजिनी नायडू दि गोल्डेन थ्रेशोल्ड पे020
[2] सरोजिनी नायडू ले0 उमा पाठक पे027

वे उनके गोरे रग और कोमल सौन्दर्य से अभिभूत थीं। सूखसूरत कपडों में सजी, मेंहदी गले हाथों में नक्काशीदान पनडिब्बे थामे, हीनों को मात देती दमकती आखें, फूलों तथा इत्र की खुशबू में रची-बसी स्त्रियाँ, अगरबत्तियों की खुशबू से भरे कमरे उन्हें आनन्दित करते थे।

हैदराबाद में उनका एक बगला था जिसका नाम 'दि गोल्डन थ्रेशोल्ड' (स्वर्णिम देहरी) था। उसके चारों तरफ दीवार थी बीच में आँगन था। बाग में बड़े-बड़े पेड़ थे। बरामदे में दक्षिण प्रदेश के घरों की तरह एक झूला पड़ा था। पिजरे में बन्द पक्षियों के साथ बाहर की बुलबुल और कोयल सुर मिलाकर गाती थीं। उन्हें अपना घर बड़ा प्रिय था। काग्रेस अध्यक्ष बनने से पहले जवाहरलाल जी को लिखा पत्र इसका प्रमाण है मैं यह पत्र 'दि गोल्डन थ्रेशोल्ड' में अपने नक्काशीदार सोफे पर बैठकर लिख रही हूँ। मेरे पास चार पैरोंवाले घर के शासक-रासतफारी, पावों नौर्मी, निकोल पिसानों और डिक डिक महाजोंग-आराम से मेरे चारों तरफ फैले पड़े हैं।"[1] बाहर के ससार का विवरण भी उतना ही सुन्दर है, जहॉ दहकते गुलमोहर और लाल गुलाब खिले हुए हैं, सूर्य, पक्षी या लाल रग की छोटी चिड़िया और मुधमक्खियाँ गा रही है।

उनके घर के कमरे सादगी से सजे हुए थे। दीवारों के चित्र, मेज का सामान सरोजिनी और उनके पति की सार्वदेशिक रूचि के द्योतक थे। वे सजावट के दिखावे से ज्यादा जोर शान्ति और आराम पर देते थे। जब वे कुछ समय घर पर रहती थीं तो घर की सफाई करके उसे आकार्षक बनाने की चेष्टा करती थीं। उन्होने अपने माता-पिता से, विशेषकर पिता से अनौपचारिक दावतें देने का शौक लिया था। उन्हें लोगों का आतिथ्य करना बहुत अच्छा लगता था। वे अतिथियों को बातें सुनाकर अत्यन्त खुश होती थीं। हर बातचीत पर अकेली हावी नही होती थीं। दूसरों को बोलने को प्रेरित करती थीं और अच्छी श्रोता भी थीं। एक समारोह में उन्हें देखकर कजन्स ने लिखा था, "उन्हें देखकर उनके पिछले जन्म की कल्पना की जा सकती थी। उन्हें फ्रासीसी सेलून के चमकते सितारे के रूप में कल्पित किया जा सकता था।"[2]

---

[1] ए बच आफ गोल्ड लैटर्स पे042

[2] कजन्स मार्गरेट ई दि अवेकनिंग आफ इडियन वुमनहुड पे0117

वे अच्छे खाने की प्रेमी थी, फिर चाहे वह किसी भी प्रदेश का हो। यही कारण था कि उनके समारोहों में बातचीत प्रधान होने पर भी खाने की अवहेलना नहीं होती थी। घर की सजावट की तरह खान-पान में भी पूर्व और पश्चिम का समन्वय था। गाधीजी भी उन्हे शाकाहारी नहीं बना पाए। जैसे ही वे अपने आश्रम में खाने का न्यौता देते थे तो वे झट से उत्तर देती, "घास और बकरी का दूध? नहीं धन्यवाद!" पर ताजे फल उन्हें बहुत प्रिय थें। इलाहाबाद के अमरूद, लखनऊ के दशहरी आम उनकी दुर्बलता थे। उन्हें मिठाई भी बहुत पसन्द थी। एक बार उन्होंने हसी में कहा था कि बगालियों की सब कमियाँ रसगुल्ले के कारण माफ कर दी जानी चाहिए। वे यह कत्तई नहीं मानती थीं कि महान और व्यस्त लोगों को खाने-पहनने में रूचि नहीं रखनी चाहिए।[1]

सरोजिनी भड़कीले रगों की साड़िया पहनती थीं । बगाल से बहुत प्रेम होते हुए भी, वहा की महिलाओं के सफेद और हल्कें रगों की साड़ियाँ की आलोचना करती थीं। बहुत बार टोकती थीं कि तुम सफेद और हल्के क्यों पहनती हो, चटक और इन्द्रधनुषी रग क्यों नहीं पहनती? एक बार वे कलकत्ता में डॉ बी सी रॉय के घर ठहरी हुई थीं। उन्हीं दिनों उनके रिश्तेदार की सगाई थी। भाव वधू हल्के गुलाबी रग की साडी पहने सहेलियों से घिरी बैठी थी। तभी सरोजिनी वहा आई। उन्होंने मोरपखी नीले रग की चटकीली साड़ी पहनी हुई थीं। वे ज्यादा वधू जैसी लग रही थीं। वहा बैठकर बोली,"लड़की को इतने हल्के रग के कपड़े क्यों पहनाए हैं? उसे कोई अच्छा चटक रग क्यों नही पहनाया?" वे बगाल की तुलना में राजस्थान, पजाब और आन्ध्र की स्त्रियों के पहनावे से अधिक प्रभावित थीं क्योंकि वे गहरे रग पहनती थीं। गाधीजी से अत्यन्त घनिष्ठ होने पर भी न चरखा चलाती थीं और न खद्दर पहनती थीं। स्वतन्त्रता सग्राम जब अपने चरम शिखर पर था तब कुछ समय खादी पहनी भी तो रगीन ही पहनी। एक बार एक विदेशी आगन्तुक ने कहा था कि भारत में एकमात्र सरोजिनी ऐसी महिला हैं, जो खद्दर भी आकर्षक रगों में हो और अच्छी तरह सिला हुआ हो तो ऊँचे दर्जे का दिखता है। एक बार अखिल भारतीय महिला

---

[1] सरोजिनी नायडू ले0 उमा पाठक पे029

दल की नेता के रूप में माटगू से मिलने जाना था। वे अपनी साड़ी के रग के विषय में बोलीं, "मैनें बहुत सोच-समझकर यह साडी पहनी है ताकि गहरे नीले प्रकाश रूपी तहखाने से निकलती चादी सी चमकती चादनी का प्रभाव डाल सके।"

उन्हें बागवानी का शौक था। चटकीले फूल जैसे गुलमोहर, अमलतास, गुलाब के अतिरिक्त कार्नेशन तथा पैन्जी उन्हें विशेष्ज्ञ प्रिय थे। वे सुगन्धपूर्ण सफेद फूलों की अपेक्षा रगीन फूल पसन्द करती थी, भले ही उनमें सुगन्ध न हो। वे कोई फूलों की प्रदर्शनी नहीं छोड़ती थीं। भले ही समय कम हो। जेल में भी उन्होंने अपनी कोठरी के बाहर फूल की एक क्यारी तैयार की। जब फूल आने का समय हुआ तो उनकी रिहाई के आदेश आ गए। उन्होंने कुछ दिन और रूकने की आज्ञा मागी जो अस्वीकार कर दी गई।

बागवानी के अलावा उनकी हस्तकला में भी बहुत रूचि थी। हैदराबाद में उनके घर पर भारत के अनेक प्रदेशों की हस्तकला के नमूने थे। उत्तर प्रदेश की गवर्नर बनने पर उन्होनें कुटीर उद्योग के विकास में व्यक्तिगत रूचि ली। वे यह ध्यान रखती थीं कि मशीनों से बनी चीजों की प्रतियोगिता में हाथों से बनी चीजों का स्तर गिर न जाए। लखनऊ के सरकारी घर में परम्परा तोड़ते हुए हाथ के बुने कपड़े के पर्दे लगाए। उन्हें लगता था कि किसी भे देश का व्यक्ति यदि कुशल और सुन्दर ढग से अपने हाथों से कोई चीज बनाए तो वह बहुमूल्य होती है। वे 'स्वदेशी' के सकुचित अर्थ से मुक्त थीं। उन्होंने कहा, "मेरे लिए स्वदेशी महात्मा गाधी के चरखे से शुरू होता है, पर वही खत्म नहीं होता इसका अर्थ यह है कि देश की प्रत्येक कला और हस्तकला को पुनर्जीवित किया जाना चाहिए मेरे लिए इससे यह अर्थ निकलाता है कि साहित्य में पुनर्जागरण आए, सगीत को फिर से जीवित किया जाए। हमारी आधुनिक जीवन-प्रणाली को ध्यान में रखते हुए वास्तुशिल्प में एक नई दृष्टि अपनाई जाए।"[1]

इतनी रूचियों के बावजूद वे परविार के प्रति तटस्थ नहीं थीं। उनके पति और बच्चे उनकी रूचियों में भागीदार थे। उनका व्यक्तिगत जीवन खुश और सुचारू था।

---

[1] सरोजिनी नायडू ले० उमा पाठक पे०29

उनका अपने भाई-बहनों से प्यार था, माता-पिता के प्रति आदर था। राजनीतिक और सामाजिक दायित्वों के कारण लम्बे समय तक घर से दूर रहने पर भी वे उनसे दूर नहीं थीं।

1911 से 1915 तक वे अपना समय कलकत्ता और हैदराबाद के बीच बिताती रहीं क्योंकि पिता कलकत्ता चले गए थे। मृत्यु के समय वे कलकत्ता के लवलॉक स्ट्रीट स्थित घर में थे। उस समय सरोजिनी हैदराबाद में थीं। पिता की मृत्यु के दिन एक अजीब घटना हुई जिसकी चर्चा उनके भाई हरीन्द्रनाथ ने की। उस दिन सरोजिनी के घर एक पार्टी थी जिसमें हरीन्द्र भी उपस्थित थे। सहसा फाटक के पास एक बूढी भिखारिन आई और बोली,"मै तुमसे भीख नहीं मागूगी। वह जो खुले दिल से देता था, गया गया गया। देनेवाला गया।" इतना कहकर वह भिखारिन गायब हो गई। तभी एक तार आया जिसमें अघोरनाथ की मृत्यु की सूचना थी। उपस्थित सभी लोग आश्चर्यचकित रह गए। तार पाते ही सरोजिनी की छोटी बहन सुहासिनी तथा भाई हरीन कलकत्ता के लिए चल दिए। तब तक उनके तीसरे भाई देवेन्द्र नाथ ने, जो उस समय कलकत्ता में था, उनका अन्तिम सस्कार कर दिया। पति की मृत्यु के बाद उनकी माँ ने आसू नहीं बहाए बल्कि सब बच्चों से बोलीं, तुम्हारी मा मर गई है, मैं तुम्हारा पिता जीवित हूँ।" किन्तु पति के जाते ही उनके बाल बिलकुल सफेद हो गए। वे साल भर बाद 1916 में मर गईं। पर जीते जी मृत के समान रहीं। वे बिलकुल चुप, शान्त और बेबस सी हो गई थी। सरोजिनी बहुत दुखी हुईं, पर उन्होंने अपने कार्यो में व्यवधान नहीं आने दिया।

प्राय प्रसिद्ध महिलाओं के पति व्यक्तित्वहीन माने जाते हैं, पर डॉ नायडू पृष्ठभूमि में रहने पर भी सामान्य नहीं थे। उनका अपने कार्यक्षेत्र में अच्छा सम्मान था और प्रसिद्ध लोगों से मित्रता थी। सरोजिनी की जरूरत पर वे सदा साथ होते थे। वे शर्मीले, चुपचाप घर पर रहने वाले आदर्श डॉ0, मानवता को शान्ति देने वाले, उदारहृदय, प्रसन्नचित व्यक्ति थे। वे अपनी पत्नी की प्रतिभा को पहचानते थे, और उनकी आकाक्षाओं को पूरे होने का अवसर देते थे। सरोजिनी पति की निर्णय-शक्ति पर विश्वास रखती थीं, अत समय-समय पर महत्वपूर्ण निर्णयों में उनसे सलाह लेती

थीं। कुल मिलाकर देखा जाए तो दोनों का जीवन के प्रति मूल दृष्टिकोण एक सा था।

सरोजिनी में जीवन के प्रति मोह था। 1898 में जब वे इटली गईं तो साधुओं के चेहरे देखकर उन्हें लगा कि वे भी निर्वाण की खोज में निकल पड़ें पर फिर स्वय ही सोचा 'नहीं, नहीं, नहीं हजार बार नहीं। कैसे कोई जानबूझकर इस धरती की रगीन हलचलों से भरे मानव-जीवन को छोड़ सकता है।' इस जीवन प्रेमी के लिए मठ का बन्धनपूर्ण जीवन अपनाना सम्भव नहीं था। वे जीवन को केवल जीने के लिए बल्कि सन्तोष और सुख के लिए चाहतीं थीं। वे घर को बहुत समय देती थीं। चार बच्चों के अतिरिक्त बड़ी सख्या में पालतू पशु-पक्षी, मेहमान, रिश्तेदार, आनेवाले लगे रहते थे। बेवरली निकोल्स से बातचीत में उन्होंने अपना घर सरकस बताया और अपने आपको प्रमुख कलाकार कहा था। निकाल्स ने अपनी पुस्तक 'वर्डिक्ट ऑन इडिया' में भारत के विषय में पूर्वाग्रहपूर्ण विवरण दिया है किन्तु सरोजिनी की प्रशसा की है। उनके बच्चे बिल्लियों के साथ केक बाँटते थे, शरबत कपड़ों पर गिराते थे। फिर भी आनेवालों को उनका घर न केवल सुन्दर बल्कि आरामदेह लगता था। एक अध्याय में केवल सरोजिनी का चित्राकन है।

सरोजिनी स्वभाव से विनोदी थीं। उन्होंने एक बार कहा था कि भगवान ने उन्हें जो उपहार दिए, उनमें सबसे मूल्यवान विनोदप्रियता है। उनमें कठिन-से-कठिन परिस्थिति में भी वातावरण को हसीपूर्ण बनाने की क्षमता थी। वे अपने जीवनकाल में विनोदप्रियता और कवि प्रतिभा के लिए प्रसिद्ध थीं। पर इन दोनों में कोई साम्य नहीं था। कविता में एक भी छन्द पाठक या श्रोता को हसानेवाला नहीं मिलेगा। वैसे तो भाषण भी सामान्यतया गम्भीर होते थे किन्तु उनमें कभी-कभी मजाकिया कथन या सकेत होते थे जिनसे श्रोता हस उठते थे या तालियाँ बजाने लगते थे। उनकी हसी का वास्तविक आनन्द उनकी बातचीत में मिलता था। पत्रकार कई अवसरों पर उनसे हुई बातचीत का और मित्र व्यक्तिगत वार्तालाप में हसी का विवरण देते हैं । कुछ पत्रों में भी इसकी झलक देखने को मिलती है। पत्रकारों के विशेषकर विदेशी पत्रकारों के प्रश्नों के उत्तर में वे कई बार हसी-हसी में व्यग्यपूर्ण बात कह देती थीं।

विशेषकर जब कोई विदेशी लेखक भारत की निन्दापूर्ण आलोचना करता हो। जैसे 'मदर इडिया' पुस्तक की लेखिका कैथरीन मेयो के विषय में पूछे जाने पर वे बोलीं, "वे कौन हैं?" बाद में स्वय बोली, "वे गन्दी नाली की निरीक्षक हैं।" इसी प्रकार बेवरले निकोल्स की 'वर्डिक्ट ऑफ इडिया' के बार में कहा, "मेरे विचार से वह इतनी बुरी पुस्तक नहीं है। उन्होंने वास्तव में मेरी बिल्ली की प्रशसा की है।"[1]

सरोजिनी ने जीवन का अधिकाश भाग स्वतन्त्रता-सघर्ष में लगाया। उनके साथी, सहकर्मी जब बहुत चिन्तित होते थे, तब वे हल्की-फुल्की हसी की बात कहकर सबके तनाव को कम कर देती थीं। राजनीतिक सभाओं में जब स्थिति बहुत गम्भीर हो जाती थी, तब वे एक मजाकिया बात कहकर सबका पारा नीचे ले आती थीं। कुछ लोग उन्हें गाधी के छोटे से दरबार का विदूषक मानते थे। पर निर्णयात्मक और योजनात्मक कार्यो में उनके हल्के व्यवहार से कोई अन्तर नहीं पड़ता था, क्योंकि वे परिहासपटु होने पर भी ओछापन नहीं रखती थीं। उनके कथन प्रमुदित करते थे, पर नासमझी के नहीं होते थे। सबके खीझे, चिढे हुए दिमाग को ठडा करती थीं और यह बताती थीं कि कोई समस्या अतिरिक्त गम्भीरता से नहीं सुलझती किन्तु स्वय ही सबसे पहले गम्भीर काम की ओर लौटा ले जाती थीं।

वे मित्रों के बारे में जो कुछ कहती थीं उसमें केवल हास्यप्रियता नहीं, स्नेह का सूत्र भी दिखता था। गाधीजी को 'मिकी माउस', 'चमगादड़', 'बदसूरत देवता' आदि कहने पर भी उनके प्रति असीम श्रद्धा, विश्वास और स्नेह रखती थीं। गाधीजी और च्याग-काई-शेक की बातचीत चल रही थी। वे हसकर बोलीं, "मिकी माउस और डोनाल्ड डक की बातचीत हो रही है।" भगी कॉलोनी, दिल्ली में गाधी के रहने का प्रबन्ध किया जा रहा था जिसे देशकर वे बोलीं, "महात्मा को गरीबी में रखने के लिए बहुत पैसा लगाना पड़ता है।" एक बार बम्बई में छात्रों ने गाधी से भाषण देने को कहा। वे बोले हरिजन चन्दे के लिए दो हजार रूपए दोगे तो चलूँगा। इतने पैसे दे सकने में असमर्थ परेशान छात्र सरोजिनी के पास पहुँचे और सारी बात बताई तो वे बोलीं, "तुम उस बनिये पास गए ही क्यों? वह तो पैसे लूटना चाहते हैं।"

---

[1] सरोजिनी नायडू, ले0 अमरनाथ झा पे095

काग्रेसी राजनीति में महत्वपूर्ण योग देनेवाले डॉ विधानचन्द्र रॉय प्रसिद्ध काय-चिकित्सक थे। वे सरोजिनी का इलाज भी करते थे। सरोजिनी उन्हें भी अपने मजाक का पात्र बनाती थीं। कलकत्ता प्रवास के समय गम्भीर बीमारी से उठने के कारण डॉ राय ने उनके भोजन पर प्रतिबन्ध लगा रखा था। उन्हें जो बेस्वाद खाना बताया गया था, वे उसे बिलकुल खाना नहीं चाहती थीं। उन्हें बगाली खाना विशेष प्रिय था। एक दिन उन्होंने छिपाकर मसालेदार खाना मगाया। अभी खाया भी नहीं था कि डॉक्टर के भारी कदमों की आवाज द्वार पर सुनाई दी। उन्होंने फुसफुसाकर कहा, "मैगाफोन आ रहे हैं। जल्दी-जल्दी सबकुछ हटा दो। डिक्टेटर हैं।" काग्रेसी भोजों से दुखी सरोजिनी अपने मित्रों से खाने पर आमन्त्रित करने को कहती थीं। ऐसे ही एक अवसर पर उन्होंने अपने डॉक्टर एस के सेन को फोन करके कहा, "क्या तुम खाली हो? मैं आ रही हूँ। मैं भूख से मर रही हूँ। मैं अभी घास पात खाकर आई हूँ।"

उनकी विनोदप्रियता के विषय में काफी मात्रा में वास्तविक और काल्पनिक कहानियाँ मिलती हैं। कुछ बातें उनके मित्र प्रोफेसर अमरनाथ झा सुनाते थे तो कुछ की चर्चा पद्‌मिनी सेन गुप्ता द्वारा लिखी गई जीवनी में मिलती है। छोटा सा लेख हो अथवा पूरी पुस्तक, इस पक्ष की ओर सकेत हो या विस्तृत विवरण मिलता अवश्य है। एक बार झा उनकी उपस्थिति में उनके बारे में कुछ कहानियाँ सुना रहे थे, वे हसते हसते सुनती रहीं उन्हें 'गद्‌दार' कहा, फिर अजीब-गरीब चेहरे बनाकर, बनावटी गुस्से से उनकी तरफ मुट्‌ठी नचाकर हसती रहीं। पर जैसे औरों की हसी उड़ाती थीं वैसे ही अपने बारे में सुनने या स्वय अपना मजाक उड़ाने की सामर्थ्य भी रखती थीं। क्योंकि उनके मजाक में कोई वैमन्स्य नहीं होता था, न ही वे किसी को ठेस पहुचाना चाहती थीं। अपने बारे में जब वे स्वय कुछ कहानियाँ सुनाती थीं, तो वे और भी रोचक लगती थीं क्योंकि वे उन्हें मुख-मुद्राओं, भाव-भगिमाओं तथा हाथ-पैर नचाकर सुनाती थीं। किसी और की बात बताते समय उसकी नगल उतारती थीं, पर कभी किसी को चोट नहीं पहुचाती थीं। अधिकतर स्त्रियाँ उम्र या रूप को लेकर बहुत भावुक होती हैं। किन्तु सरोजिनी में यह दुर्बलता नहीं थी। एक बार एक हट्‌टा-कट्‌टा पठान उनके पास गया। उत्तर-पश्चिमी सीमा प्रदेश का सीधा-सादा आदमी तीस साल

बाद उन्हें देख रहा था। आकर्षक युवती के झुर्रीभरे चेहरे को देखकर, उदासी से सिर हिलाकर बोला, "हाय! गई जवानी!" कोई और स्त्री होती तो नाराज हो जाती, पर वे हस पडी। साठ से ऊपर की आयु होने तक सरोजिनी का वजन काफी बढ़ गया था। एक जनसभा के बाद कुछ फोटोग्राफर उनका चित्र लेना चाहते थे। वे लोग काफी देर तक कैमरा लेकर इधर-उधर से देख रहे थे। अन्त में वे अधीर होकर बोलीं, "लड़कों, लल्दी करो, मैं सब तरफ से एक सी मोटी और गोल हूँ।"

उनके प्रभावशाली व्यक्तित्व के आग्र कई बार लोग बौखला जाते थे। एक बार वे बम्बई के तालमहल होटल में ठहरी हुई थीं। दक्षिण भारत के कुछ छात्र उनसे मिलने आये। उनके यह पूछने पर कि वे बम्बई में क्या कर रहे हैं। वे बोले कि घूमने और अच्छी-अच्छी जगहें देखने आए हैं। वे शैतानी से बोलीं, "क्या मैं उन अच्छी जगहों में हूँ।" छात्र बोला, "हाँ मैडम! निश्चित रूप से।"

वे इतनी हाजिरजवाब थीं कि पल भर में उपयुक्त उत्तर दे देती थीं। एक बार एक विदेशी पत्रकार ने पूछा कि भारत के स्वतन्त्र हो जाने के बाद रानी विक्टोरिया के बुतों का क्या किया जाएगा? एक पल झिझके बिना उन्होंने उत्तर दिया, "उनके सिर काटकर उनकी जगह मेरे लगा दिये जाने चाहिए।" एक बार जब गाधी भगी कॉलोनी में रह रहे थे तब नेहरू उनसे मिलने आए। सरोजिनी ने उनहें गाधी का प्रिय पेय नीबू का पानी शहद डालकर दिया। गाधी ने हसकर कहा कि उनके एकस्वाधिकारपूर्ण पेय को देने के लिए उनका कुछ प्राप्य होगा। उन्होंने झट से उत्तर दिया, "आपके पेय का विज्ञापन करने के बदल में मुझे कुछ मिलना चाहिए।"

उनके साथ काम करनेवाले देशभक्त यह मानते थे कि राजनीति तथा तपस्या को साथ चलना चाहिए। वे हसी-मजाक को देशविरोधी मानते थे। किन्तु वे ऐसा नहीं मानती थी। यदि उनकी हसी न होती तो भारत का स्वतन्त्रता आन्दोलन एक उदास, आनन्दरहित कार्यक्रम रहता। उन्हीं के कारण सत्याग्रहियों के जीवन मे पूर्वाग्रहों का दमन हुआ। इस तथ्य को नेहरू तथा अन्य राजनेता निरन्तर स्वीकार करते थे। एक बार एक काग्रेसी महिला कार्यकर्ता के बारे में उन्होंने कहा,"वे गाधी की समर्पित

अनुयायिनी हैं, बहुत ईमानदार हैं, पर हसती बहुत कम हैं। मुझे कोई ऐसा साथी दो जिसके साथ मैं हस सकूँ।''

सरोजिनी जितनी हसमुख थीं, उतनी ही लोगों में सकुचितता देखकर क्रुद्ध हो जाती थी। उन्हें लगता था कि भारतीय सदा अपने दोष देखते हैं और अपने नेताओं की आलोचना करते हैं, चाहे कोई उनसे पूछे या न पूछे, वे सदा एक काली तस्वीर खींचते हैं। कम-से-कम गलतियाँ गिनाने से पहले कुछ अच्छी बातें भी बताई जानी चाहिए। यही नहीं, भारतीय प्रदेश की बात सोचते हैं। एक बार कलकत्ता में वे एक मित्र के घर खाने की मेज पर बैठीं थीं। तभी एक बगाली ने खेदपूर्वक कहा कि काग्रेस में बगाली नेताओं का अभाव है तो सरोजिनी ने गुस्से से मेज पर इतनी जोर से हाथ मारा कि गिलास-चम्मच सब खनकने लगे। उन्होंने कहा,''बगाल को भूल जाओ। पूरे भारत की सोचों। बगाल अलग नहीं भारत का एक अग ही है।''

इसी प्रकार एक बार इलाहाबाद में अखिल भारतीय महिला सभा हो रही थी। नेहरू और आचार्य कृपलानी के भाषण के बाद सरोजिनी को धन्यवाद देना था। कृपलानी ने सीता-सावित्री का उदाहरण देते हुए त्याग और बलिदान की बातें कही थीं। सरोजिनी ने अपने भाषण में कहा,''आदमियों का हम औरतों से बलिदान की बात कहना उचित नही लगता। भारतीय स्त्रियाँ युगों से बलिदान कर रही हैं। अब पुरूषों के सीखने की बारी है। मैं समझ नहीं पा रही कि हमारे विद्वान आचार्य (कृपलानी) हमसे क्या चाहते हैं। उन्होने हमसे सीता-सावित्री का अनुसरण करने को कहा। क्या पुरूषों के आचार्य यह चाहते हैं कि हम विधवा बनकर या अपहृत होकर अपने गुण प्रमाणित करें?'' उनकी यह स्पष्टवादिता कई लोगों का बहुत अखरती थी। एम ओ मथाई की पुस्तक में इससे सम्बद्ध एक ऐसी जानकारी दी गई है जो अपने आप में अत्यन्त दुखद लगी। उन्होंने लिखा है कि 1946 में जब नेहरू काग्रेसाध्यक्ष बने तो गाधी ने उन्हें कार्यकारिणी में न लेने की सलाह दी क्योंकि उन्हें यह भय था कि वह समय अग्रेजों से महत्वपूर्ण बातचीत का था और उन्हें डर था कि सरोजिनी की बातों का नकारात्मक प्रभाव न पड़े। गाधी से इतना निकट सम्बन्ध होते हुए भी उन्होंने ऐसा निर्णय लिया। सरोजिनी कुछ समय तक बहुत क्रुद्ध और क्षुब्ध रहीं।

वे पूर्ण रूप से स्वतन्त्र महिला थीं। किन्तु दूसरों की बात समझना, उनके प्रति सहानुभूति रखना उनके स्वाभाविक चारित्रिक गुणों में था। उनके इस पक्ष की ओर जहाँ एक ओर विदेशी प्रशसकों ने सकेत किया वहीं भारतीयों ने भी। गॉस और सीमन्स ने उनके सोलह–सत्रह वर्ष की आयु में भी औरों के दुख को समझने की क्षमता पर अचरज व्यक्त किया है। मीरा बहन ने जेल में बिताए समय में इस ओर इगित किया। मथाई ने अपनी लखनऊ यात्रा के सन्दर्भ में बताया कि नेहरू के पुराने निजी भृत्य हरि के प्रति उनका स्नेह भुलाया नहीं जा सकता। वे स्वय उसके लिए फलों का टोकरा लेकर गई। किसी और गवर्नर से ऐसा अपेक्षा नहीं का जा सकती थी। इस सवेदनशीलता के कई किस्से मिलते हैं। उनकी मित्र लक्ष्मी मेनन ने अपनी मित्र को स्नेहपूर्ण श्रद्धा अर्पित करते हुए लिखा है कि वे दूसरों की सीमाएँ ही नहीं, जरूरतों को भी समझती थीं। कभी कोई परेशान व्यक्ति उन्हें कहीं मिला हो तो वे उसे याद रखती थीं। अवसर मिलते ही स्नेहपूर्ण पत्र लिखकर उनके उदास मन को खुशी से आलोकित कर देती थीं। उनमें चेहरे याद रखने की आश्चर्यजनक क्षमता थी। कोई भी उदार काम अपनी परेशानी के कारण रोकती नही थीं। एक बार सर्दियों के दिनों में सुबह अहमदाबाद के स्टेशन पर श्रीमती कजन्स को लेन पहुची । कारण केवल यह था कि कजन्स को खुशी होगी। इसी प्रकार हसा मेहता हैदराबाद कैम्प में थी। सरोजिनी जब सिन्ध गई तो बीमार थीं। पर हसा की प्रसन्नता की बात सोचकर कैम्प तक की लम्ब यात्रा की। कहीं जाने का निश्चय दूसरों की निराशा सोचकर रद्द नहीं करती थीं । अस्वस्थ होने पर, डॉक्टरी मत के विरूद्ध भी वे जनसभाओं में जाती रहती थीं। वे सदा जरूरतमन्द की सहायता के लिए तत्पर रहती थीं। किन्तु कभी अपने पद या मान का अनुचित लाभ उठाने की चेष्टा नहीं करती थीं। सिफारश करने के बाद दुबारा नही डालती थीं, ताकि काम करनेवाले को कोई परेशानी न हो।

वे दूसरों को प्रेरणा देती थीं वे आशा, साहस और कलात्मकता की उद्‌बोधक थीं। उनको अच्छाई में इतना अटूट विश्वास था कि वे कहती थीं कि जो अच्छा है वह कभी नष्ट नहीं हो सकता। सभी मनुष्यों के प्रत उनमें प्रेम था। यही प्रेम और सवेदनशीलता उनकी कविता में व्यक्त हुई। प्रकृति के प्रति प्रेम, मानव के प्रति प्रेम,

देश के प्रति प्रेम और अपने आप के प्रति प्रेम उनकी कविता का मूल स्वर बना। और कविता उनके जीवन का मूल स्वर थी। शैशव में माता-पिता में वही झलक देखी जो बाद में अपने व्यक्तित्व का प्रमुख अग बनी। वे राजनीति में प्रवेश के बाद भी कुछ समय तक कविताएँ लिखती रहीं। उनके भाषण और पत्र ही नहीं बातचीत भी काव्यात्मकता लिए हुए होती थीं।

सरोजिनी के प्रेरणा स्रोत

उनके व्यक्तित्व को बहुत लोगों ने प्रभावित किया। उनमें गोखले, महात्मागाधी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, एनी बेसेंट, मुहम्मद अली जिन्ना ओर जवाहरलाल नेहरू उल्लेखनीय हैं -

गोपाल कृष्ण गोखले

गोखले सरोजिनी की बहुत प्रशसा करते थे और सरोजिनी भी उनकी प्रशसक थीं। गोखले ऐसे व्यक्ति थे जिनकी महात्मा गाधी गगा से तुलना करते थे। सरोजिनी उनको गुरू मानतीं थीं सन् 1907 से 1915 तक के वर्षो में सरोजिनी नायडू गोखले के सपर्क में अधिक रहीं। हर मुलाकात में गोखले, सरोजिनी नायडू को बहुत प्रभावित करते थे। वे उनको गुरू की तहर मानती और बात पर पूरा ध्यान देतीं। गोखले ने सरोजिनी और उनकी आत्मा की आवाज को पहचान लिया था। गोखले बहुत परिश्रमी समाज सेवक थे और सरोजिनी नायडू कल्पनाओं से परिपूर्ण कवयित्री। लदन में गोखले बीमार थे। वे सरोजिनी के साथ किगसिगटन बाग में जाया करते थे। एक बार उन्होने सरोजिनी से कहा, 'अपने दिमाग का एक कोना मुझे दे दो जिसे मैं अपना कह सकू।' सरोजिनी ने वास्तव में उनके लिए वह कोना बचाकर रखा था और उसमें गोखले के प्रेरणा देने वाले वचन उन्होनें समेट कर रख छोड़े थे। सरोजिनी उनकी बीमारी के समय उनसे मिलने जातीं। गोखले उनको देखकर कहते कि उनको जितनी भी दवाइयाँ दी जाती हैं, उन सब दवाओं से श्रेष्ठ सरोजिनी का आना है। सन् 1915 में गोखले ने यह ससार छोड़ दिया। मरने से कुछ दिन पहले उन्होंने सरोजिनी से कहा, "मैं नहीं सोचता कि हम फिर मिलेंगे। अगर तुम जिदा

रहती हो तो याद रखो कि तुम्हारा जीवन देश की सेवा के लिए समर्पित है। मेरा काम तो पूरा हो गया।"[1]

जब तक गोखले जिदा रहे सरोजिनी को बराबर प्रेरित करते रहे। वह उनके कामों की सराहना करने के लिए उनको बराबर चिट्ठी भेजते रहते थे। कभी-कभी उन चिट्ठियों में मीठी फटकार और उपयोगी राय भी होती । वह एक पिता की तरह यह अनुभव करते थे कि यदि उन्होंने सरोजिनी की ज्यादा तारीफ की तो उनको घमड हो जाएगा। सरोजिनी ने उनसे देश-भक्ति और देश पर अपने आपको बलिदान करने का पाठ सीखा। सरोजिनी पर जिन व्यक्तियों का प्रभाव पड़ा उनमें गोखले सर्वप्रथम हैं। गोखले की मृत्यु पर उन्होंने अग्रेजी में एक कविता लिखी जिसका शीर्षक था – 'याद में' । उस कविता में अपने दिल की गहराई से गोखले के व्यक्तित्व को उन्होंने पूरी तरह उजागर किया। कुछ पक्तिया इस प्रकार है –

हे सूरमना,
हमारे युग के अतिम आशा पुरुष,
मोहताज कहाँ तुम,
हमारी प्रेम-प्रशसा के ?
हमारे वज्राहत राष्ट्र का,
पोषण सरक्षण
और रहे उन्नति
उसकी एकता की मणि
उस नित्य उपासना मे
सिखाया है जो तुमने।

महात्मा गाधी

सरोजिनी नायडू महात्मा गाधी से आयु में 10 वर्ष छोटी थीं। उनकी पहली मुलाकात 1914 में गाधी जी से लदन में हुई। महात्मा गाधी उस वक्त पूरी तरह महात्मा बन चुके थे। विश्वयुद्ध आरभ हो गया था। गाधी जी दक्षिणी अफ्रीका से

[1] सरोजिनी नायडू ले0 माजदा असद पे076

इग्लैण्ड पहुँचे थे। विश्वयुद्ध के दिनों में घायलों की सेवा में महात्मा गाधी और सरोजिनी नायडू दोनों सहयोग दे रहे थे। इसी समय गाधी जी के साथ उनकी दोस्ती बढ गई। गाधी जी सरोजिनी नायडू को बहुत प्यार करते थे। सरोजिनी भी उनके साथ बहुत बेतकल्लुफ थीं। उनके साथ मजाक भी किया करती थीं। उन्होंने गाधी जी के कई नाम रखे हुए थे। वह उनको 'मिकी माउस' भी कहती थीं। और कभी-कभी 'बौना आदमी' भी। कभी गाधी जी पर व्यग्य भी बिना किसी हिचक के कर डालती थीं। सन् 1992 में महात्मा गाधी पर मुकदमा चलाया गया। सरोजिनी कचहरी में जाया करती थीं। सरोजिनी को देखकर एक बार गाधी जी ने उनसे मजाक किया, 'तुम मेरे पास बैठो जिससे मुझे सहारा दे सको, यदि मैं टूट जाऊ तो।' और यह कहकर वह हँस पडे। गाधी जी सरोजिनी को लगातार आजादी की लड़ाई लड़ने और महिलाओं को रास्ता दिखाने के लिए प्रेरित करते रहे। गाधी जी ने ही उनको काग्रेस की अध्यक्षता के लिए भी प्रेरित किया। सरोजिनी ने गाधी जी के आदर्शो के प्रति अपने आपको समर्पित कर दिया। सत्याग्रह आदोलन में सरोजिनी, गाधी जी के साथ जातीं और जगह-जगह भाषण देती थीं। गाधी जी उन पर बहुत विश्वास किया करते थे। वे गाधी जी के लिए प्रेरणा थीं और गाधी जी उनके लिए। उन्होंने गाधी जी के साथ निरतर आजादी की लड़ाई लड़ीं। गाधी जी जब उपवास करते तो सरोजिनी उनका बराबर ध्यान रखतीं। कभी-कभी उनके अगरक्षक के रूप में भी काम करतीं। सुबह से शाम तक वे सतरी की तरह उन पर पहरा देतीं।

30 जनवरी, 1948 को गाधी जी की हत्या कर दी गई। उससे सारे देश में शोक छा गया। सरोजिनी नायडू को इस समाचार से बहुत सदमा पहुँचा। वे अनेक वर्षो तक उनके साथ रह चुकी थीं। उन्होंने गाधी जी को श्रद्धाजलि देते हुए कहा[1]

वह जो शातिदूत था, उसे
एक महान सेनानी के योग्य
सपूर्ण सम्मान के साथ
ले जाया गया है श्मशान भूमि को।
रणभूमि में सेनाओं का नेतृत्व करने वाले
सभी सेनापतियों से कहीं अधिक बड़ा था वह
लघु मानव कहीं अधिक वीर, सबसे महानतम विजेता।

---

[1] सरोजिनी नायडू ले० ताराअली बेग पे०1

रवीन्द्रनाथ टैगोर

सरोजिनी नायडू का बहुत समय बगाल में बीता। उस समय सरोजिनी नायडू को टैगोर से मिलने का अवसर मिला। दोनों परिवारों में बहुत मेल था। सरोजिनी नायडू और टैगोर में बड़ी गहरी मित्रता थी। सरोजिनी जब कभी बगाल जातीं तो टैगोर से जरूर मिलती थीं। टैगोर और सरोजिनी दोनों कवि थे। दोनों में बहुत सी बातें मिलती-जुलती थीं। जिस समय रवीन्द्रनाथ टैगोर का नोबल पुरस्कार प्राप्त काव्य 'गीताजलि' छपा तो सरोजिनी लदन में थीं। गीताजलि के बारे में सरोजिनी का विचार था कि इस रचना ने टैगोर की ख्याति को पश्चिमी देशों में पूरी तरह फैला दिया है।[1]

उन्हें टैगोर के गीत बहुत अच्छे लगते थे। उनको वह प्राय सुना करती थीं। समय के साथ-साथ दोनों में घनिष्ठता भी बढती गई। सरोजिनी नायडू ने सन् 1933 ई0 में बबई में रवीन्द्रनाथ टैगोर सप्ताह का आयोजन किया था। टैगोर भी सरोजिनी नायडू को महान् मानते थे। उनसे स्नेह करते थे। दोनों एक-दूसरे को पत्र लिखा करते थे। उनमें हास-परिहास होता, कभी दार्शनिकता होती और कभी कविता। सरोजिनी उनको 'विश्व कवि' कहकर सबोधित करतीं। अपनी रचनाएँ भेंट स्वरूप देती थीं।

सरोजिनी को ऐनी बेसेंट से बहुत प्रेरणा मिली। वे उनके साथ लदन गयीं। सरोजिनी सोचती थीं कि एनी बेसेंट विदेशी होकर भारत की आजादी की लड़ाई लड़ रही हैं। हम इस देश में पैदा हुए हैं। इस देश की मिट्टी में खेले हैं। पले बढ़े हुए हैं। हमें तो अपना तन मन धन देश पर लगा देना चाहिए।

मुहम्मद अली जिन्ना और जवाहर लाल नेहरू सरोजिनी नायडू से छोटे थे। दोनों सरोजिनी के मित्र थे। एक दूसरे को प्रेरणा देते थे।[2]

इस तरह सरोजिनी नायडू को अनेक लोगों ने प्रेरणा दी। वे बहुत होशियार थीं। समझदार थीं। राष्ट्र उनके लिए सर्वोपरि था। देश की आजादी उनका लक्ष्य था। राष्ट्र की उन्नति उनकी कामना थी। उसके लिए उन्हें जहाँ से भी प्रेरणा मिलती उसे

---

[1] सरोजिनी नायडू ले0 डॉ0 माजदा असद पे078
[2] सरोजिनी नायडू ले0 डॉ0 माजदा असद पे079

सहर्ष ग्रहण करतीं। देश के लिए उन्होंने अपने पारिवारिक सुख चैन को भी बलिदान कर दिया। देश के लिए उन्होंने अपने आपको अर्पित कर दिया था। आज वे हमारे बीच नहीं है। उनके कार्य हमें प्रेरणा देते रहेंगे। भारत के इतिहास में सरोजिनी नायडू का नाम सदा अमर रहेगा।

प० जवाहर लाल नेहरू

सरोजिनी पूरे नेहरू परिवार के साथ घनिष्ठ थीं। वे उस परिवार की सदस्य के समान थीं। उनके नेहरू को लिखे पत्रों में करूणा, चिन्ता, हसी और प्रशसा सभी कुछ है और उनके द्वारा नेहरू परिवार से उनके सम्बन्धों की विविधता का पता चलता है। सबसे पहले पत्र सम्भवत 1917 में लिखे गए जो 'ए बच ऑफ ओल्ड लैटर्स' में सुरक्षित हैं। उनमें इन्दिरा के जन्म पर बधाई, नेहरू के अध्यक्ष चुने जाने पर, उनके पचासवें जन्मदिन पर कुछ पत्र हैं तो अन्य पारिवारिक सदस्यों की अस्वस्थता आदि के विषय में जानकारी के लिए है। ज्यों-ज्यों भारत की स्वतन्त्रता के लिए सघषट तीव्रतर होने लगा तो दोनों की भेंट अधिक होने लगी। और क्रमश व्यक्तिगत मित्रता में बदलती गई। वे प्राय आनन्द भवन जाती रहती थीं। प० मोतीलाल नेहरू को पापाजी और स्वरूपरानी को मम्माजी पुकारती थीं।[1]

1929 में जब लखनऊ में नेहरू भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के अध्यक्ष चुने गए तब उन्होंने बहुत सुन्दर पत्र लिखा - "मैं सोच रही थी कि क्या कल पूरे भारत में तुम्हारे पिता से अधिक गौरवपूर्ण और तुमसे अधिक बोझिल किसी का हृदय रहा होगा? मेरी स्थिति अजीब थी, मैं उनके गर्व और तुम्हारे दर्द को बराबरी से महसूस कर पा रही थी   तुम्हारे चुनाव पर जब सब तुम्हें सम्मान दे रहे थे, मैं तुम्हारा चेहरा देख रही थी और राज्याभिषेक के साथ मृत्युदड की भी कल्पना कर रही थी।" किन्तु नेहरू की योग्यता पर पूरा विश्वास था। उन्होंने अपने पूरे सहयोग का आश्वासन भी दिया। जब जवाहरलाल नेहरू अपनी बीमार पत्नी कमला को लेकर स्विट्ज़रलैंड गए थे, तब भी वे पत्र-सम्पर्क बनाए रही थीं।[2]

---

[1] ए बच आफ ओल्ड लैटर्स पे042

[2] सरोजिनी नायडू ले0 उमा पाठक पे077

सरोजिनी पुस्तकों की भूमिका आदि लिखने से इनकार कर देती थीं पर कृष्णा हाथीसिह की पुस्तक की भूमिका लिखने से न नहीं कर सकीं। उसमें उन्होंने लिखा था कि नेहरू परिवार भारत के स्वतन्त्रता सग्राम की कहानी का अभिन्न अग और प्रतीक रहा है। यही कारण था कि उनका जवाहरलाल नेहरू को लिखा पत्र, भले ही जन्मदिन के अवसर पर हो, राजनीतिक परिस्थितियों पर भी महत्वपूर्ण प्रतिक्रियाएँ देता था। वे अपने मित्र के अकेलेपन और उदासी को भलीभाति समझती थीं। तभी उनके पचासवें जन्मदिन पर लिखा था कि तुम भाग्य के वह पुरुष हो जिसे समझा नही जाएगा। भगवान करे, तुम्हारी अन्वेषी आत्मा को उसका लक्ष्य मिल जाए। तुम्हे गौरव और सौन्दर्य मिले। यह तुम्हारी गायिका बहन और सहयोगिनी सरोजिनी का आशीर्वाद है।

अधिकतर जब व्यक्ति ऊँचे पद पर पहुँच जाता है तो पिछली मैत्री टूट जाती हे। पर नेहरू के प्रधानमन्त्री बन जाने के बाद भी इनके सम्बन्ध पूर्ववत् रहे। सरोजिनी आजाद भारत के सबसे बड़े प्रान्त उत्तर प्रदेश की गवर्नर बनीं। उनकी कई वार भेंट होती रहती थी। अपनी मृत्यु के पाँच हफ्ते पहले लखनऊ विश्वविद्यालय के विशेष दीक्षान्त समारोह में नेहरू तथा अन्य महान लोगों को मानद उपाधि दिए जाने के अवसर पर उनके विषय में बोलते समय उन्हें अपना नेता, मित्र, भाई तथा पुत्र तक कहा। नेहरू उनके भाषण से भावविहवल हो उठे थे। उन्होंने आधुनिक भारत के इतिहास में कई स्थानों पर उनके महत्वपूर्ण योग और अपने ऊपर उनके प्रभाव का वर्णन किया था। अपनी आत्मकथा में उन्होंने लिखा था कि 1916 में वे लखनऊ कागेस में सरोजिनी द्वारा दिये गए प्रभावपूर्ण और चित्ताकर्षक भाषण से बहुत प्रभावित हुए थे।

उनकी मृत्यु के उपरान्त जवाहरलाल नेहरू ने ससद को सम्बोधित करते हुए कहा –''राष्ट्रीय आन्दोलन में आने के बाद उन्होंने कागज-कलम से बहुत कविताएँ नहीं लिखीं पर उनका पूरा जीवन एक कविता और एक गीत बन गया। उन्होंने आश्चर्यजनक काम किया – उन्होंने हमारे राष्ट्रीय सघर्ष में कलात्मकता और कविता भर दी। जैसे राष्ट्रपिता ने आन्दोलन में नैतिक भव्यता और महानता ला दी, वैसे ही

सरोजिनी नायडू ने उसमें कलात्मकता और कविता भर दी और जीवन का उत्साह दिया। वह अदम्य आत्मा दी जो न केवल विनाश और विपत्ति का सामना करती थी बल्कि मन से, होंठों पर गीत और चहरे पर मुस्कान के साथ विषमताओं का मुकाबला करती थीं। हमारे राष्ट्रीय जीवन के लिए इससे अधिक मूल्यवान उपहार क्या हो सकता था कि उन्होंने हमें शुद्ध राजनीति के स्तर से कलात्मकता के ऊँचे स्तर पर पहुचाया वे अग्नि-स्तम्भ थीं, जो उनका स्पर्श करता उसे अपने तेज से भर देती थीं, पर साथ ही वे बहते हुए शान्तिदायक शीतल जल के समान भी थीं जो लोगों जीवन में अपने राजनीतिक उत्साह से शान्ति लाती थीं।

"हमारी आनेवाली पीढियाँ निस्सन्देह उन्हें याद रखेंगी। पर जो हमारे बाद आएँगे, जो उनके निकट सम्पर्क में नहीं आए थे, वे उनके व्यक्तित्व की समृद्धि को नहीं जान पाएगे क्योंकि उसे शब्दों में नहीं कहा जा सकता वे महान भारतीय सस्कृति की प्रतीक थीं। वे भारत की ही नहीं पूर्व और पश्चिम की विभिन्न सास्कृतिक-धाराओं का मिश्रित रूप थीं। इसलिए वे केवल महान राष्ट्रीय नेता न होकर सच्ची अन्तर्राष्ट्रीय थीं। हमें खासकर आज की कठिन परिस्थितियों में यह याद रखना चाहिए कि हम दबाव में आकर कभी-कभी सकुचित राष्ट्रीयता की ओर बह जाते हैं और उन बड़े उद्देश्यों को भूज जाते हैं जिनकी प्रेरणा ने हमारे राष्ट्रीय आन्दोलन की नींव रखनेवालों को उत्साहित किया था।"

नेहरू ने यहाँ तक कहा कि जिनके लिए हमारे मन में बहुत स्नेह होता है उनके विषय में बोलना या उनकी विवेचना करना अत्यन्त कठिन होता है, क्योंकि इस समय मुझे लग रहा है मानो मेरे मन का कोई अन्तरग हिस्सा कट गया हो यह प्रथा है कि जानेवाले के परिवारजनों को सहानुभूति और सवेदना भेजी जाती है। मैं कह भी रहा हूँ, पर वास्तव में जिस बन्धन से सरोजिनी यहाँ हमसे और सैकड़ों, हजारों देशवासियों से जुड़ी, वह बन्धन उतना ही बड़ा और घनिष्ठ था जितना उनका अपने बच्चों और सम्बन्धियों से। वास्तव में हमारे हृदय को भी शान्ति के लिए इस सन्देश की उतनी ही आवश्यकता है।

नेहरू का यह सवेदनापूर्ण सन्देश उनके पारस्परिक सम्बन्ध और स्नेह की गहराई का प्रमाण है।

स्वतन्त्रता सग्राम में स्त्रियों को उतारनेवाली सरोजिनी थीं। उनसे पूर्व ऐनी बेसेंट भी काम कर रही थीं, किन्तु सरोजिनी ने अपने कार्यो द्वारा गोखले, गाधी आदि के सम्मुख प्रमाणित कर दिया कि स्त्रियाँ अपने प्राचीन गौरव से रहित नहीं हुई हैं बल्कि उसी प्रकार पुरूष की सहचरी होने का दायित्व निभा सकती हैं।

इसके अतिरिक्त उमर सोबानी, फिरोज शाह मेहता, मो0 अली जिन्ना आदि के घनिष्ठ एव प्रेरणाप्रद थीं।

****

द्वितीय अध्याय

श्रीमती सरोजिनी नायडू का साहित्य में योगदान (कवियित्री के रूप में)

"मैं वास्तव में कवियत्री नहीं हूँ, मेरे पास दृष्टि है, इच्छा है किन्तु वाणी नहीं है"[1] बुलबुले हिन्द सरोजिनी नायडू का नाम हमारे देश के इतिहास में हमेशा जीवित रहेगा। स्वतत्रता सग्राम में इन्होंने जमकर हिस्सा लिया तथा उसके बाद उत्तर प्रदेश की प्रथम महिला राज्यपाल की हैसियत से मुल्क की सेवा की। अग्रेजी की एक प्रसिद्ध कवियित्री के रूप में तो सुविख्यात हैं ही लेकिन ऊर्दू साहित्य में भी इन्होंने एक महत्वपूर्ण मुकाम हासिल किया था। सरोजिनी जी का दीवान 'दुर्रेसमीन' के नाम से प्रकाशित हुआ था जिसकी भूमिका में अख्तर देहलवी साहब ने लिखा था – 'यह किताब सरोजिनी नायडू की शायरी, उनके जज्बात और तर्जे-अदा की आइनादार है।' हुब्बे वतन, 'शफकते-मादरी', इसानी हमदर्दी, 'गरज' कोई भी काबिले-कदर जज्बा है ऐसा नहीं जिसका उनकी किसी न किसी नज्म में जलवा नजर न आता हो। हिन्दुस्तान की औरतों के बारे में कभी तज और कभी हसरत से कहा जाता था कि इनकी जिन्दगी सिर्फ तीन अहम वाकेयात पर मुश्तमिल होती हैं – यानी पैदा हुयी ब्याह हुआ और मर गई। क्या यह बात बजाते खुद ताज्जुब खेज नहीं कि ऐसे तबके में सरोजिनी नायडू जैसी मजमुआ-ए-कमालात खातून पैदा हुई।[2] कविता-कानन में इनका प्रवेश किस प्रकार और कब हुआ इस सम्बन्ध में स्वय लिखती हैं[3] –

"मैं यद्यपि बाल्यावस्था में ही बड़ी कल्पनाशील प्रकृति की थी, परन्तु मैं नहीं समझती कि उस बचपन में कविता लिखने की मेरी कोई प्रबल उत्कण्ठा थी। मेरे पिता ने अपनी देखरेख में मुझे एकदम वैज्ञानिक ढग की शिक्षा दिलायी थी उनकी दृढ इच्छा थी कि मैं या तो गणितज्ञ बनू या विज्ञानविद्। परन्तु मेरे भीतर कविता की जो स्वाभाविक बुद्धि मेरे पिता और माता की कवित्व शक्ति के कारण जन्म से ही विद्यमान थी उसने जोर मारा। ग्यारह वर्ष की अवस्था में एक दिन मैं बीजगणित का सवाल हल करने में लगी हुयी थी, और बहुत प्रयत्न करने पर भी वह ठीक नहीं निकलता था, एकाएक पूरी एक कविता ही मेरे हृदय में उपस्थित होगयी और मैंने

---

[1] सरोजिनी नायडू, उमा पाठक पेज 37
पत्रिका हिन्दुस्तान अकादमी।
[3] माता सेवक पाठक ।

उसे लिख डाला। उसी दिन से मेरी कविता का श्रीगणेश होता है। तेरह वर्ष की अवस्था में 6 दिनों में मैंने तेरह सौ पक्तियों की "लेडी ऑफ दी लेक" नाम की कविता लिख डाली। उसी अवस्था में मैं बीमार पड़ गई लेकिन उसी दशा में मैंने दो हजार पक्तियों का एक नाटक लिख डाला। जिस समय उसे लिखने बैठी उसके पहले उसके भाव मेरे हृदय में नहीं पैदा हुये थे। मैंने एक उपन्यास लिखा और डायरियों में अपने मन के उद्‌गार लिखे। उन दिनों मैं बडे गम्भीर भाव से लिखने में व्यस्थ थी।"[1]

इससे यह पता चलता है कि उनके अन्दर कवित्व शक्ति नैसर्गिक थी स्वय इनकी माता ने भी अपनी चढती उमर में बगला के कई मधुर गाने लिखे थे। एव उन्हें गाया करती थीं। सरोजिनी जन्म से कवियित्री कविता सीख कर कवि नहीं बनीं, इसी से इनकी कविताये भावपूर्ण होती थी।

कलकत्ता के राष्ट्रीय पुरालेखागार में उनकी प्रारम्भिक कविताओं का सकलन है, जो मोटे कागज पर छपा है। उसके मुख्य पृष्ठ पर हाथ से लिखा है –

कविताए सरोजिनी चट्टोपाध्याय, तिथि 3 अक्टूबर 1896,

इस सकलन में 1892 से 1896 तक की कवितायें हैं जिनमें वय सन्धि की बालिका के प्रौढ विचार व्यक्ति हुए हैं। तेरह वर्ष की आयु में लिखी (यात्री का गीत) "ट्रैवलर्स साग", में विदेशी प्राकृतिक सौन्दर्य का चित्रण है। किन्तु अन्तिम पक्तियों में घर की याद का वर्णन है।[2]

अपने चौदहवें जन्मदिन पर लिखी कविता में बालक का आनन्द व्यक्त हुआ है। दसवीं के बाद वे डॉ0 गोविन्द राजुलु नायडू से प्रेम करने लगी थीं इस समय की कवितायें अत्यन्त रोमाटिक हैं। नवम्बर 1894 में प्रेम से जुड़ी कई कवितायें लिखी जैसे (प्रेम) "लव", "प्रेम की दृष्टि", (लव विजन), "प्रेम से विदा" आदि। दिसम्बर में "प्रतीक्षा" पर एक कविता लिखी, किन्तु ये सम्भवत लोगों तक नहीं पहुँची इनमें एक लड़की के यौवन की यात्रा का प्रमाण है।

---

[1] सरोजिनी नायडू दि गोल्डन थ्रेशोल्ड (भूमिका) पे0 11-12

[2] पोएम्स सरोजिनी चट्टोपाध्याय, 3 अक्टूबर 1896 निजी प्रकाशक, अघोरनाथ चट्टोपाध्याय ।

सितम्बर 1895 में निजाम की छात्रवृत्ति पर इन्हें आगे पढाई के लिए विदेश भेजा गया, लन्दन के किंग्स कालेज में पढाई शुरु की फिर वे गिरटन कालेज, कैम्ब्रिज गयीं। पर उनका रोमाटिक मन पढाई से अधिक प्रकृति के सौन्दर्य की ओर आकर्षित होता था। प्राकृतिक परिवेश के प्रति आकर्षण उनकी कविता के मूल में था, इन्होंने इंग्लैण्ड का ग्राम्यजीवन, फूल, चिड़िया, उनके काव्य के मुख्य विषय थे।

एक बार सरोजिनी का एक सहपाठी उन्हें अग्रेजी के प्रसिद्ध आलोचक एडमड गॉस से मिलवाने ले गया। परिचय पाकर गॉस ने उनसे अपनी कविता दिखाने को कहा। उन्होंने झिझकते हुए अपनी हस्तलिखित कविताओं का पुलिन्दा थमा दिया। उन्हें देखकर वे निराश हो गए। स्वय उनके शब्दों में, "जो कविताएँ सरोजिनी ने मुझे दीं वे शिल्प की दृष्टि से अच्छी थीं, व्याकरण-सम्मत थीं, भाव की दृष्टि से उन पर कोई आरोप नहीं लगाया जा सकता था, पर उनमें लेखिका की वैयक्तिकता का अभाव था। भाव और बिम्ब की दृष्टि से उन पर पश्चिमी प्रभाव था। उनका आधार टेनीसन और शेली थे। मैंने निराश होकर उन्हें रख दिया।"[1] पर वे उन्हें हतोत्साहित करना नहीं चाहते थे। अत उन्होंने सलाह दी कि अपनी अग्रेजियत से प्रभावित सम्पूर्ण कविता को रद्दी की टोकरी में फेंक दें और भारत को सामने लाएँ। अपने देशीय भावों, पुरातन धर्म के सिद्धान्तों, उनकी रहस्यात्मकता को प्रस्तुत करना चाहिए क्योंकि पश्चिम बहुत पहले से ही पूर्व की ओर आकर्षित रहा है। उन्होंने सरोजिनी को समझाया कि अग्रेजी पक्षियों रोबिन और स्काईलार्क का वर्णन न करके, अपने देश के पर्वतों, बागों और मन्दिरों आदि का विवरण दें। भारत के जो प्रदेश अभी तक अपरिचित हैं उनका सजीव चित्रण करें।

सरोजिनी ने तत्काल उनकी सलाह मान ली और पूर्ण रूप से भारतीय पृष्ठभूमि पर कविताएँ लिखनी शुरु कर दीं। उनका मन बादलों, बसन्त और ग्रीष्म के साथ खिलवाड़ करने लगा, किन्तु अपने देश और घर की याद में वे बहुत उदास थीं। 1905 तक वे काफी कविताएँ लिख चुकी थीं, जो इग्लैंड तथा भारत की विभिन्न पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी थीं। वे कविता को प्रभु की कृपा का परिणाम मानती

---

[1] दि बर्ड आफ टाइम्स - भूमिका पे० 4

थीं। तभी तो लिखा कि क्या आप जानते हैं कि मेरे आसपास बहुत सुन्दर कविताएँ हवा में तैरती हैं। अगर प्रभु की कृपा हुई तो मैं अपनी आत्मा को एक जाल की तरह फेंककर उन्हें कैद कर लूँगी। भगवान दया कर मुझे स्वास्थ्य दें तो मेरा जीवन पूर्ण हो जायेगा।[1]

1905 में लन्दन से "दि गोल्डन थ्रेशोल्ड" छपी और खूब बिकीं। सर सी0पी0 रामास्वामी अय्यर के अनुसार पुस्तक का शीर्षक अर्थपूर्ण है, यह उनके प्रसन्न गृहस्थ जीवन से जुड़ा है। साथ ही सरोजिनी के गॉस के प्रति कृतज्ञता के भाव को व्यक्त करता है जिन्होंने उन्हें कविता के 'सुनहरी प्रवेशद्वार' की राह दिखाई। एक वर्ष पूरा होने से पहले प्रथम सस्करण बिक गया और जल्दी ही दूसरा सस्करण आ गया। एक ओर विदेश की पत्रिका 'भारत के पुरुष और स्त्री' में छपा कि प्राय दस वर्ष से अधिक समय से सरोजिनी की कविताएँ विभिन्न अग्रेजी और भारतीय पत्रिकाओं में प्रकाशित हो रही हैं तो दूसरी ओर मद्रास से प्रकाशित होने वाली भारतीय महिलाओं की पहली पत्रिका 'दि इडियन लेडीज मैगजीन' में उनकी कविताएँ छपीं।

लन्दन के अखबारों में इन कविताओं की बड़ी प्रशसा की गई। दि लन्दन टाइम्स में आर्थर सीमन्स द्वारा लिखी गई भूमिका के कुछ अश छापे गए, "उनकी कविता अपने आप गाती लगती है, मानो उनके द्रुत विचार और सशक्त भाव स्वय ही गीत बन जाते हैं इस मामले में पश्चिमी सस्कृति से पूर्व का विवाह बाँझ प्रमाणित नहीं हुआ उसने कवि को पुरानी चीजों को नई आँखों से देखने की क्षमता दी। परिणाम अभूतपूर्व रहा, जिसे कविता कहने में हमें सकोच नहीं होना चाहिए।"

दि मैनचेस्टर गार्जियन में लिखा गया है कि सरोजिनी नायडू के 'दि गोल्डन थ्रेशोल्ड' में सकलित शुद्ध कविता को पढ़ पाना एक खुशी की बात है। यह सगीतात्मक है, इसका पूर्वी रग ताजगी भरा है। अक्टूबर, 1905 में 'दि रिव्यू ऑफ रिव्यूज' में छपा कि पिछले महीने जैसी समृद्ध कविता सामने आई वैसी कुछ महीनों से नहीं आई थी। इनमें सबसे प्रमुख स्थान सरोजिनी नायडू के कविता-सकलन का

---

[1] सरोजिनी नायडू – ले0 उमा पाठक पे039

है, जो अत्यन्त सगीतात्मक हे। यह छोटी-सी प्रति उन आलोचकों को हमेशा के लिए चुप करा देगी, जिनके अनुसार स्त्रियाँ कविता नहीं लिख सकतीं। टी0पी0 की वीकली में बताया गया कि सरोजिनी नायडू की कृति एक खिड़की खोलती है जिससे यदि पश्चिम चाहे तो पूर्व को देख सकता है। दि मॉर्निंग पोस्ट में इन कविताओं की प्रशसा में कहा कि ये कुछ छोटी कविताएँ आश्चर्यजनक सजीवता से भारत के दैनदिन जीवन का विवरण देती हैं। उनमें दुर्लभ कलात्मकता है क्योंकि वे आँखों देखे दृश्यों का यथार्थपूर्ण चित्रण करती हैं।

1905 तक सरोजिनी देश-विदेश में कवियित्री के रूप में प्रतिष्ठित हो गई थीं। उनके काव्यग्रन्थ के प्रकाशन से भारत के इडो-इगलिश लेखन-जगत् में जबरदस्त हलचल मच गई। 1905 के सितम्बर-अक्टूबर के 'दि इडियन लेडीज मैगजीन' में छपा कि सरोजिनी को नकली भावों और निरर्थक बातों से घृणा है उनके गीतों के विचार सुन्दर हैं, भाषा मोहक है। किन्तु इतनी प्रशसा पाकर भी उन्हें अपने काव्य-कौशल पर सन्देश था। फरवरी 1906 में उन्होंने "दि गोल्डन थ्रेशोल्ड" पर रमेशचन्द्र दत्त के विचार माँगे और लिखा कि यद्यपि अग्रेजी पत्रिकाओं में बहुत प्रशसा की गई है और दूसरा सस्करण भी निकल गया है, फिर भी वे उनकी राय जानना चाहेंगी। इस सकलन के अगले ग्यारह वर्ष में पाँच सस्मरण और छपे।

यह काव्य-सग्रह तीन भागों में बँटा है लोकगीत - बारह कविताएँ, सगीत के लिए गीत - छ कविताएँ, कविताएँ-22 कविताएँ। इस सकलन में विषय की विविधता है। अधिकाश कविताएँ भारत के लोगों की दैनिक दिनचर्या से जुड़ी हैं जैसे मछेरे, सपेरे, बुनकर, किसान, फेरीवाला, पालकी ढोने वाले आदि। सरोजिनी को इन सामान्य परम्परागत जीवन जीनेवाले तथा काम करने वालों में शताब्दियों से चले आते भारतीय जीवन का अटूट स्रोत दिखता है। उदाहरण के लिए 'गली की आवाजें' कविता में छ-छ पक्तियों के तीन पद हैं। पहले पद में भोर के आगमन का मानव जीवन पर प्रभाव दिखाया है। जैसे ही सुबह के पहले मजीरे आकाश पर बजते हैं, लोग अपने-अपने काम में लग जाते हैं जैसे चरवाहा, किसान और फेरीवाला। दूसरे पद में दोपहर की तीव्र गरमी और उसका मानव तथा प्रकृति पर प्रभाव दर्शाया है। तीसरे पद में उसी स्थान की सन्ध्या का चित्रण है। जब साँझ बाजारों पर तारों का

चँदोवा तान देती है तब प्रेम और सुगन्ध से वातावरण भर उठता है। कुछ कविताएँ इस्लामी सस्कृति का चित्र प्रस्तुत करती हैं जैसे शहजादी जैबुन्निसा का गीत, गोलकुडा के शाही मकबरे, पर्दानशीन, हैदराबाद शहर में रात आदि। कुछ अन्य कविताएँ विचारोत्तेजक हैं, जैसे "अतीत और भविष्य, मृत्यु को, जीवन, यौवन के प्रति, अन्तिम कविता 'कमल पर विराजमान बुद्ध' को इग्लैंड से प्रकाशित 'दि आक्सफोर्ड बुक ऑफ मिस्टिक वर्स' में स्थान मिला। इस कविता में बुद्ध की शान्ति, मानव जीवन की परिवर्तनशीलता तथा दुख के विरोध को दिखाया है। बुद्ध से दो प्रश्न पूछे हैं, एक पहले पद में और दूसरा अन्तिम में। पहला प्रश्न है -

भगवान बुद्ध, अपने कमल सिहासन पर,
प्रार्थना में बन्द आँखे और जुडे हाथ लेकर,
तुम्हे कैसा रहस्यात्मक हर्षोन्माद मिलता है
जो निर्विकार और चरम है?"[1]

मनुष्य की स्थिति का वर्णन किया है। कल के अजन्मे दुख बीते कल के दुखों का स्थान ले लेते हैं। सघर्ष, टूटे स्वप्न और अन्त में मृत्यु जीवन के जाल को खोल देती है। बार-बार हमारा अहकार टूटता है, हमें हार का पाठ पढाया जाता है। खाली हाथों से हम उन इच्छाओं को पकडना चाहते हैं जो हमारी पकड़ में नहीं हैं, पर हमें वह शान्ति नहीं मिलती जो तुम्हें मिली। हमारी आत्मा स्वर्ग की ओर जाने की भूखी है, पर हम उसे तृप्त करना नहीं जानते। कहो ओ बुद्ध 'कैसे हम उस महान अज्ञेय तक पहुँचेंगे?' जेम्स0एच0 कजन्स का विचार है कि इस सकलन में ताजगी, स्वच्छन्दता और स्फूर्ति है।

1912 में उनका दूसरा सकलन 'दि बर्ड ऑफ टाइम' प्रकाशित हुआ। इसमें जीवन, मृत्यु तथा बसन्त के गीत हैं। यह पुस्तक उन्होंने अपने पिता तथा माता को समर्पित की है। इसकी भूमिका एडमड गॉस ने लिखी है। पहले ग्रन्थ के सात साल बाद उसी प्रकाशन ने इसे छापा। इसका शीर्षक फिट्जराल्ड द्वारा अनुवादित उमर खय्याम की रूबाई पर आधारित था, जो इस प्रकार है -

---

[1] सरोजिनी नायडू, दि गोल्डेन थ्रेशोल्ड - टू ए बुद्ध सीटेड आन ए लोटस ।

समय के पक्षी के पास थोड़ा-सा समय है

उडने को - और लो! पक्षी अपने पखो पर है[1]

भूमिका में गॉस ने लिखा है - "वे पीड़ा की नजदीकी साथिन रही हैं शायद अत्यधिक कष्ट ने उनके चमेली के फूलों को हल्का और उनके नीले आकाश को अन्धकारमय कर दिया है।" किन्तु उन्हें लगता है कि जीवन को दड द्वारा सुधारनेवाले अनुभव ने 'सरोजिनी की गीत-शक्ति को धीमा न करके तीव्र कर दिया है।' दि लन्दन टाइम्स ने इसे प्रकृति की भावों से समृद्ध सुन्दर अभिव्यक्ति बताया है।

इस पुस्तक का उपशीर्षक प्रेम तथा मृत्यु के गीत है। कवियित्री ने प्रेम को मानव जीवन तथा प्रकृति, दोनों में प्रमुखता दी है। कई गीतों में मृत्यु का दुख है, विशेषकर भारतीय विधवा का चित्राकन है। भारतीय त्योहारों - नागपचमी, बसन्त पचमी, दीपावली आदि पर कई गीत हैं। एक पूरा खड बसन्त के गीतों पर है। इसमें उनकी प्रकृति-परक कविताएँ सर्वोत्तम हैं। बसन्त में धरती के दृश्य, ध्वनि, सुगन्ध आदि को लेकर सरोजिनी में उत्तेजना भर जाती है, वही चित्रित है। दो सबसे सुन्दर कविताओ में से एक शुरु तथा एक अन्त में है। आरम्भ में शीर्षक से जुड़ी कविता है जिसमें समय की चिडिया असीम से असीम, ऐन्द्रिय से अनुभवातीत की ओर जाती है। अय्यर ने इस पुस्तक के शीर्षक को उनके विकासशील पक्ष का सूचक बताया है। उन दिनों वे मानवता के उच्चादर्शों से प्रभावित होकर स्त्री-मुक्ति के लिए काम कर रही थीं। 'समय की चिड़िया' की उड़ान मानो स्त्री की मुक्त होकर कार्यरत होने की इच्छा को व्यक्त करती है। अन्तिम कविता प्रेम का पुरस्कार है जो एक सच्चे भक्त की आशाओं को सुन्दरता से व्यक्त करती है। सम्पूर्ण सृष्टि में सभी की कुछ आशाएँ हैं पर भक्त केवल प्रेम के उल्लास का पुरस्कार चाहता है।

इस सकलन के तीसरे खड में भारतीय लोकगीत हैं। पहली कविता में गॉव का गीत है। 'सुनालिनी की लोरी' बगला छन्द में लिखी गई कविता है। 'चूड़ी बेचनेवाला' हर अवसर के उपयुक्त चूड़ियों के बारे में बताता है। इस कविता में केवल खुशी की चमक है। इनमें से 'ग्वालिन राधा का गीत' ने कई आलोचकों का ध्यान

---

[1] सरोजिनी नायडू - दि बर्ड आफ टाइम्स पृ०स०

आकर्षित किया। भारतीय अग्रेजी के उपन्यासकार मुल्खराज आनन्द ने लिखा, "यहाँ रोमाटिसिज्म की कविता, आलकारिक विशेषण, कोमल उपमा सबकुछ श्रेष्ठ अनुभव से भर उठा है। सरोजिनी ने प्रेम को वैयक्तिक कामना से ऊपर उठाकर देवी प्रेम में बदल दिया है, जिससे वह शाश्वत और समष्टिगत हो उठा है।[1] डॉ० जेम्स एच० कजन्स ने बताया कि "मेरा सरोजिनी की कविता से पहला परिचय भारत में ऑक्सफोर्ड के एक व्यक्ति के मुख से उनकी कविता 'ग्वालिन राधा का गीत' के माध्यम से हुआ। मथुरा के मन्दिर की ओर दही का मटका और उपहार लेकर जाती भक्तिन के गोविन्दा, गोविन्दा, गोविन्दा, गोविन्दा दुहराने का मान्त्रिक प्रभाव मैं कभी नहीं भूलूँगा।"[2]

प्रो० सी०डी० नरसिंहैय्या के अनुसार - "यह कविता वास्तविक तथ्य, सौन्दर्यपूर्ण अनुभूति और शिल्प-शक्ति, लयात्मकता और नएपन के साथ हम तक आती है।"[3] स्पष्ट है कि इस कविता ने सबको प्रभावित किया। इसमें समृद्ध प्रतीकात्मकता है। शाश्वत स्त्री राधा प्रकृति का रूप है जो गोविन्द या कृष्णरूपी पुरुष मे समा जाना चाहती है। मथुरा कृष्ण की रहस्यात्मक आराधना का मूल केन्द्र है।

अन्तिम खण्ड का आरम्भ 'मृत्यु और जीवन' से होता है। यह कविता देशप्रेम का सकेत देती है और सवादात्मक शैली में लिखी गई हैं। इसमें हुसैन सागर, बूढी औरत, आत्मा की प्रार्थना, शाम की प्रार्थना का बुलावा आदि कविताएँ हैं। 'अमर शान्ति को नमन' (इन सैल्यूटेशन टू दी इटर्नल पीस) कविता को 'ऑक्सफोर्ड बुक ऑफ इगलिश मिस्टिकल वर्स' में स्थान मिला।

1917 में तीसरा काव्य-सकलन 'दि ब्रोकेन विंग' उसी प्रकाशक द्वारा प्रकाशित किया गया। समर्पण में लिखा था, 'आज के स्वप्न और कल की आशा को'। भूमिका में सरोजिनी ने भारतीय नारी की जागरूकता का सकेत दिया है, "आज की भारतीय नारी फिर एक बार जाग्रत है। वह राष्ट्रीय जीवन की तिकोनी दृष्टि-प्रेम, विश्वास तथा देशभक्ति की सरक्षिका तथा अर्थ देने वाली के रूप में अपनी सुन्दर नियति के प्रति सजग हैं।"[4]

---

[1] आनन्द, मुल्खराज, दि गोल्डन ब्रेथ पे0119

[2] कजन्स, जेम्स एच0 दि रेनेसा इन इडिया पे0 259-260

[3] नरसिंहैय्या, सी0डी0 इडियन राइटर्स आफ इगलिश - सरोजिनी नायडू पे042

[4] सरोजिनी नायडू दि ब्रोकेन बिंग (भूमिका) पे0 9

दूसरा खड उन्होंने अपनी बेटियों के लिए लिखी कविता बसन्त का आह्वान से शुरु किया है। इस अश की बसन्त की कविताओं में जून का सूर्यास्त बेजोड़ है। इसमें समृद्ध कलात्मकता है।

तीसरे खड की नियति, कामना आदि कविताएँ सुन्दर हैं। रूपहले आँसू में कवयित्री दुख का स्वागत करती हैं।

अन्तिम खड में चौबीस कविताएँ हैं जो तीन भागों में बटी हैं खुशी का द्वार, आँसुओं की राह और देवालय तीनों में आठ-आठ कविताएँ हैं। उपशीर्षक प्रेम के मन्दिर तक की तीर्थयात्रा का सकेत देते हैं। मन्दिर कविता सरोजिनी के पवित्र प्रेम से छलकते युवा हृदय को व्यक्त करती है। इडो-एग्लियन प्रेम कविताओं में इसे ऊँचा स्थान दिया जाता है। स्त्री परम्परागत भक्त के समान प्रेम के लिए जीवन समर्पित कर देती है। उसके पास रूप अथवा यौवन कुछ नहीं है, न ही वह महान है, पर उसके पास प्रेम के उत्साह से भरा हृदय है। वह प्रिय के आमन्त्रण पर निर्भय होकर आने को प्रस्तुत है। परिणाम भले ही कुछ भी हो। दूसरे भाग की कातिल कविता व्यग्यात्मक है। इसमें सुबह की ओस, समुद्र की लहरों का ठडा ज्वार, बारिश की बूँदें-मृत्यु की बूँदें हैं, जो प्रेमी द्वारा मारी गई स्त्री की उदास आँखों से गिर रही हैं। धरती पर बिखरे रक्तरजित लाल पत्ते जीवन की बूँदें हैं जो मृत प्रिया के दिल से गिरी हैं। इस भाग की अन्तिम कविता रहस्य में प्रिया के मरने की जानकारी केवल प्रिय को है जबकि ससार के लोग उसे जीवित समझकर उसके लिए उपहार ला रहे हैं। तीसरे भाग में प्रेम के त्रासद नाटक का अन्त हो जाता है।

जाने-माने कवि तथा नाटककार निस्समी एजकील ने 'दि सडे स्टैन्डर्ड' में इसकी आलोचना में लिखा - "यह सरोजिनी का दुर्भाग्य था कि वे जिस समय लिख रही थीं, तब अग्रेजी कविता भावुकता और शिल्प की दृष्टि से बिलकुल नीचे जा चुकी थी।' किन्तु पद्मिनी सेन गुप्ता का विचार है कि यह उनका सौभाग्य था कि उन्होंने बीसवीं सदी के पहले दो दशकों में कविता लिखी अन्यथा युद्ध के बाद के गम्भीर वातावरण में वे फिट नहीं बैठती।

अन्तिम काव्य-सकलन 'दि फैदर ऑफ डॉन' उनकी मृत्यु के बाद उनकी बेटी पद्मजा ने निकाला। यह उनकी अप्रकाशित कविताओं का सकलन है जो 1961 में बम्बई से प्रकाशित हुआ था। इसमें 1927 के जुलाई-अगस्त में लिखी कविताएँ हैं जो यह प्रमाणित करती हैं कि राजनीतिक उथल-पुथल के बीच भी वे कविताएँ लिखती रही थीं। इस ग्रन्थ में तीस कविताएँ हैं जो दो भागों में बॅटी हुई हैं। पहली सत्ताईस कविताओं में विषय की विविधता है। इसका आरम्भ -गोखले का उद्यान' से होता है। यह कविता उनके प्रति श्रद्धाजलि है। अगली कविता लोकमान्य बाल गगाधर तिलक की स्मृति में लिखी गई हैं। आकार में छोटी होते हुए भी यह कवियित्री के उनके प्रति गहरे प्रेम की द्योतक है। 'शहीदी रात' मुहर्रम की नवीं रात को शिया मुसलमान अली, हसन और हुसैन की दुखपूर्ण शहीदी की याद कराती है। 'समुद्र का त्योहार' में समाज के उन विभिन्न वर्गों के लोगों का चित्रण है जो समुद्र की पूजा करते हैं जैसे मछुआरे, नाविक, व्यापारी आदि। 'खैबर पास का गीत' उत्तर पश्चिमी सीमान्त प्रदेश के वीर पख्तूनों के जीवन और चरित्र को साकार करती है। इसकी रचना के पीछे के0पी0एस0 मेनन द्वारा दी गई उस प्रदेश की जानकारी थी। कृष्ण सम्बन्धी तीन कविताएँ हैं, जिनमें उनके भिन्न रूपों का वर्णन है जैसे दैवी चरवाहा, दैवी सगीतज्ञ, दैवी प्रेमी। कन्हैया और घनश्याम उन्हीं के अनेक नामों में हैं। इन कविताओं के बाद 'राधा का गीत' है जो उपशीर्षकों में विभाजित है भोर, साँझ, खोज। पहले में राधा प्रिय को बताती हैं कि वे सारी रात उनके लिए रोती रहीं। दूसरे में वे कृष्ण मुरारी के लिए अपने को सजाती हैं, पर उनके आने में देर होने पर उदास हो जाती हैं। तीसरे में राधा कन्हैया को खोजती हैं और न पाने पर रोने लगती हैं, तभी कृष्ण की हॅसी सुनाई देती है। वे कहते हैं -

मैं तुम्हारा हूँ, जैसे तुम मेरी, एक अश
मुझे अपने हृदय के आइने मे देखो'

इसी रहस्यात्मकता पर कविता का अन्त हो जाता है।

सरोजिनी को अपने माता-पिता से वशानुक्रम में काव्य-सृजन की प्रतिभा मिली। हैदराबाद के सुन्दर रोमाटिक वातावरण तथा इग्लैंड प्रवास ने उनकी काव्य-दृष्टि को और तीव्र कर दिया। सौन्दर्य की कामना ने उन्हें इस दिशा में प्रेरित किया। वे

---

[1] सरोजिनी नायडू - दि ब्रोकेन विंग - पोयम्स आफ कृष्णा - दि क्वेस्ट ।

दार्शनिक की तरह जीवन की समस्याओं से सघर्ष नहीं करती थीं। उनके लिए केवल वे स्थितियाँ महत्वपूर्ण थीं जो नस-नस को उत्तेजित कर गीत-रचना के लिए विवश करती थीं। उनके लिए जीवन पहेली न होकर एक सुन्दर चमत्कार था। जीवन की विविधता उन्हें उत्तेजित करती थी। रग मोहते थे और सौन्दर्य आकर्षित करता था। इसके सकेत हमें बार-बार मिलत हैं। उन्होंने आर्थर सीमन्स को एक पत्र में लिखा था - "क्या यह सम्भव है कि मैंने 'सौन्दर्य से भरपूर' पत्र लिखे हैं मझे अपनी बेचारी छोटी कविताएँ सुन्दर नहीं लगतीं - मेरा मतलब जैसी मैं चाहती हूँ वैसी चिरन्तन सौन्दर्यपूर्ण नहीं लगतीं।" एक दूसरे पत्र में उन्होंनें लिखा - "मैं वास्तव में कवियित्री नहीं हूँ। मेरे पास दृष्टि और इच्छा है पर वाणी नहीं है। मैं यदि केवल एक कविता ऐसी लिख पाती जो सुन्दर तथा महान होती तो मैं सदा के लिए मौन हो जाती।" एडमस गॉस को एक पत्र में अपनी कामना के विषय में इस प्रकार लिखा था - "जब तक मैं जीवित हूँ, मेरी आत्मा की प्रमुख कामना होगी कि मैं कविता लिखूँ - एक कविता, भले ही एक सुन्दर पक्तिमात्र।" वे स्वय कुछ भी कहें, कविता-जगत् में उन्हें एक निश्चित स्थान मिला।

विवेचना की सुविधा के लिए उनकी कविता के पाँच भेद किए जाते हैं - (1) प्रकृतिपरक कविता, (2) प्रेम कविता, (3) देशभक्ति की कविता, (4) जीवन और मृत्यु की कविता, (5) भारतीय परिवेश की कविता।

प्रकृतिपरक कविताओं की एक विशेषता के विषय में कोई मतभेद नहीं हो सकता, वह यह कि वे प्रकृति से आनन्द पाती थीं और उसे अपनेपाठक और श्रोता तक पहुँचाती थीं। वे मनुष्य के प्रकृति से सम्बन्ध को भारतीय दृष्टि से समझती और स्वीकारती हैं। भारतीय साहित्य तथा धर्मग्रन्थों में वह दृष्टि वेद-मन्त्रों से लेकर आज तक की कविताओं में व्यक्त हुई। भारतीय दृष्टि प्रकृति को नियन्त्रण में लेने के स्थान पर उससे सामजस्य को महत्व देती हैं, क्योंकि उसके अनुसार-मनुष्य और प्रकृति एक-दूसरे के पूरक हैं, एक-दूसरे पर निर्भर करते हैं। जीवन का प्रवाह दोनों की शक्ति देता है। सरोजिनी के लिए नज पीसनेवाले (कॉर्न ग्राइन्डर्स) कविता में तीन पद हैं। प्रत्येक में नर की मृत्यु पर शोक करती मादा को दिखाया है, पहले में

चुहिया, दूसरे में हिरनी और तीसरे में युवती। इसमें कवियित्री का बल इस पर है कि दुख दुख है और तीनों को समान रूप से दुखी करता है। यही नहीं कवियित्री ने प्रकृति की सहायता से मनुष्य के जीवन को चिन्तारहित, शान्त और सुन्दर बनाने की कामना की है। मनुष्य अपनी बनाई चीजों के बनावटीपन को पहचानने पर उनसे मुँह मोडकर प्रकृति की गोद में शरण लेता है और तब जान पाता है कि प्रकृति की सुन्दरता मानव जीवन के समान पीड़ा से आतकित नहीं है।

'दि बर्ड ऑफ टाइम' सकलन की 'एकान्त' कविता में वे अपने हृदय को सम्बोधित करते हुए भीड़ से दूर एक ऐसे स्थान पर ले जाना चाहती हैं जहॉ सघर्ष से मुक्ति हो। 'वहाँ उस शान्त रात्रि के पास कल के गीत धरोहर हैं और नीरवता जीवन के गीत का समृद्ध विराम है।' 'दि ब्रोकेन विग' की कविता 'गर्मियों के जगल में' में नागरिक जीवन की सुख-सुविधा को छोड़कर प्रकृति द्वारा दी जाने वाली प्रसन्नता का चित्रण है। उसमें यह सन्देश है कि मानव हृदय प्राकृतिक सगीत में ही प्रेम की सन्तुष्टि और आनन्द पाएगा। इस कविता की नायिका रगीन छतों और जमीन से थक चुकी है। वह गुलमोहर के पेड़ द्वारा दी जानेवाले लाल छ्त के लिए तरस रही है। वह सघर्ष से ही नहीं, सगीत, उत्सव, प्रशसा आदि से भी थककर अपने साथी के साथ अमलतास के जगल में जाना चाहती हैं '

चलो हम अपनी सब चिन्ताएँ फेद दे
इमली, मौलश्री और नीम की उलझी डालो के नीचे
अकेले लेटकर सपने देखें।[1]

वे प्रकृति को मानव जीवन को शान्ति देने वाली दयालु मानती हैं। उसके नाशकारी अन्धकारपूर्ण रूप पर बल न देकर, सहारा देनेवाले रूप का चित्रण करती हैं। सरोजिनी दिन की कवियित्री हैं। सूर्य की चमक पर सुन्दर कविताएँ लिखीं हैं। प्रात काल के चित्रण में उदित होते सूर्य की आभा वर्णित है, तो सान्ध्यबेला के रूपाकन में अस्त होते सूर्य का सौन्दर्य है। कृषक दिन भर गरमाई और शक्ति देने वाले सूर्य को धन्यवाद देता है। उनके पत्रों तथा भाषणों में भी कई स्थानों पर सूर्य

---

[1] सरोजिनी नायडू - दि ब्रोकेन विंग - समरवुडस ।

का विवरण मिलता है। सूर्य को सम्बोधन करने वाले वेदमन्त्रों की विशेष चर्चा की है। अमरीका से गाधीजी को लिखे एक पत्र में वे ठडी सुबह में सूर्य की उष्णता की प्रशसा में लिखती हैं – "मैं विश्वासपूर्वक कह सकती हूँ कि मेरे वेदयुग के पूर्वजों की आत्मा ने भी कभी सूर्य देवता की स्तुति में ऐसा गायत्री पाठ नहीं पढा होगा वैसा मैं अपनी उष्णप्रदेशीय हड्डियों की पीड़ा और ठड से छुटकारे पर पढती हूँ।" उन्होंने अपने बडे बेटे का नाम 'जयसूर्य' रखा था। अस्त होते सूर्य का मोह भी कई कविताओं में चित्रित है।

चन्द्रमा का एक चित्र जेम्स कजन्स को इतना प्रभावित कर गया कि उन्होंने उसे अग्रेजी कविता में कल्पना की अपूर्व उपलब्धि माना –

स्वर्ग के नीले ललाट पर जातिचिह्न-सा

सुनहरी चाँद दहक रहा है, पवित्र, एकाकी, चमकीला[1]

नक्षत्रों के लिए भी उन्होंने सुन्दर उपमाएँ दी हैं।

उन्होंने हवा को अनुभवी यात्री के रूप में चित्रित किया है जो धरती और समुद्र पर यात्रा से बहुत जानकारी पाती है। यह हवा यात्रियों के तेज चलते पैरों के पीछे चलती है, प्रेम के रहस्यों पर जासूसी दृष्टि रखती है, लोगों की पीड़ा को पहचानती है। अदृश्य, अश्रव्य हवा प्रकृति के बहुमुखी जीवन के सब रहस्यों में प्रवेश करती है। वह बादल की सगिनी है। 'कोरोमडल के मछुआरे' कविता में आराम करती हवा के लिए सर्वथा नूतन उपमान प्रयुक्त किया है –

हवा सुबह की बाँहो मे सो रही है

उस बच्चे की तरह जो सारी रात रोया हो।[2]

सरोजिनी ने समुद्र के विषय में बहुत कम लिखा है। कुछ प्रारम्भिक कविताओं और पत्रों में, जो दक्षिणी यूरोप की यात्रा के समय लिखे थे, भूमध्य सागर का वर्णन है। बाद की कविताओं में भी समुद्र का महत्वपूर्ण स्थान नहीं है किन्तु कोरोमडल के मछुआरे में समुद्र, मछुआरों की उसके प्रति भावना, अपने को उसकी सन्तान मानना, समुद्र को माँ, बादलों को भाई और लहरों को साथी माना है।

---

[1] सरोजिनी नायडू – दि गोल्डेन थ्रेशोल्ड – लेले ।
सरोजिनी नायडू – दि गोल्डेन थ्रेशोल्ड ।

ऊपर फैले आकाश के विस्तार का रहस्य, उसके तारे, ग्रह-नक्षत्र हमारी कल्पना को जगा देते हैं। हममें से कुछ समुद्र की पुकार पर अनियत्रित हो उठते हैं पर धरती पर ही मानव जीवन का नाटक खेला जाता है। फसल के गीत में खेतिहर स्त्रियाँ धरती को धन्यवाद देती हैं –

प्यारी सर्वशक्तिमान माँ, ओ धरती!
तेरी भरी छाती हमे खिलाती है
तेरे गर्भ से हमारी समृद्धि जनमती है।[1]

सरोजिनी ने देश-विदेश की बहुत यात्राएँ की थीं। उनकी कविताओं में धरती के प्रति प्रेम व्यक्त होता है, पर कहीं भी पर्वत का चित्रण नहीं है। हिमालय तक का चित्रण एकाध स्थल पर है। उनके काव्य में झील, झरने, नदियाँ प्रमुख स्थान नहीं पाते, किन्तु एक कविता में झरने के सगीत को शादी और झूले के गीतों से भी सुन्दर मानकर चित्रित किया है। हैदराबाद की हुसैन सागर झील का सुन्दर चित्रण किया है। इसमें झील अपने प्रेमी पवन के प्रति पूरी तरह समर्पित है।

नदियों में यमुना का विशेष महत्व है क्योंकि वह राधा-कृष्ण के प्रेम को पृष्ठभूमि देती है। किन्तु उनकी कविताओं में गगा की चर्चा नहीं है। पत्रों और भाषणों में अवश्य गगा के प्रति आदर व्यक्त किया है। कवियित्री ने ऋतुओं के अनुसार आनेवाले परिवर्तनों का वर्णन किया है किन्तु वर्षा पर बहुत कम लिखा जबकि राधा-कृष्ण की प्रेमकथा में वर्षा का विशेष महत्व है। सम्भवत उनका बसन्त के प्रति अतिरिक्त मोह अन्य ऋतुओं की उपेक्षा करवा देता है। 'दि बर्ड ऑफ टाइम' में पूरा एक खड बसन्त के गीतों पर है।[2] पाँच कविताएँ बसन्त पर ही हैं जिनमें विविधता के साथ पुनरावृत्ति भी है। पहली कविता 'बसन्त' में रगों पर बल है, केले के पेड़ के हरे पत्ते, पीपल के लाल, सुनहरी खसखस, चाँदी जैसी केतकी की झाड़, मूँगे और सगमरमर जैसी सफेद लिली वर्णित है। दूसरी कविता में 'बसन्त में एक गीत' में ऋतु के गति-पक्ष को चित्रित किया है, जैसे मधुमक्खियों आम के बौर से रस ले रही हैं, पक्षी फलों की डालों से बसन्त का रस चूस रहें हैं, जुगनू हवा में नाच रहे

---

[1] सरोजिनी नायडू – दि गोल्डेन थ्रेशोल्ड – हार्वेस्ट हिम ।
सरोजिनी नायडू – दि बर्ड आफ टाइम्स ।

हैं, आदि। 'बसन्त पचमी' में बसन्त से उनकी गन्ध का रहस्य पूछा है और यह भी कि उसके आने की सूचना किससे मिलेगी, बुलबुल की तान से? गुलाब की हँसी से? चन्द्रमा की किरण पर पड़ी ओस की बूँद से? उत्तर के बिना कविता का अन्त हो जाता है। चौथी कविता 'बसन्त की खुशी' एक विधवा की कथा चित्रित करती है जिसे बसन्त की रगीनी और सुगन्ध विषबुझे बाण जैसी लगती है क्योंकि वह पति के जीवनकाल के सुखद दिनों को याद दिलाती है। अन्तिम कविता 'फूलों के समय में' एक लडकी अपने प्रिय को बसन्त के आने की याद दिलाती है। धरती एक पेड़ की तरह और बसन्त एक युवती के रूप में चित्रित है जिसके पैर के स्पर्श से पेड खिल उठता है। 'दि ब्रोकन विग' सकलन में 'दि फ्लावरिंग यीअर्स' उपशीर्षक के अन्तर्गत बसन्त और ग्रीष्म पर छ कविताएँ हैं। पहली कविता 'बसन्त का आमत्रण' अपनी बेटियों पद्मजा और लीलामणि के नाम है। वे कहती हैं – "फूलों जैसी और तेज कदमों वाली तुम जैसी लडकियों को बसन्त बुला रहा है ताकि वे अपने खेलने के समय की खुशी को बाँट सकें।" दूसरी कविता में वे कहती हैं कि "मैं दौड़कर तुम्हारा स्वागत नहीं कर सकती। मेरा थका हुआ हृदय हँसी भूल गया है। मैं जो गीत गाती थी, भूल गई हूँ।" 'बसन्त का जादू' में कवियित्री लिखती हैं कि "यद्यपि मैंने अपना हृदय दर्द की पहाड़ी के नीचे दफना दिया था, तथापि किशुक और सेमुल के खिलने पर और कोयल के कूकने पर मेरा हृदय कब्र में भी उछल पड़ा और बोला – बसन्त आ गया?"[1]

अपने पहले काव्य-सकलन 'दि गोल्डन थ्रेशोल्ड' की भूमिका में कवियित्री ने बसन्त की चर्चा की है। उन्हें बसन्त जीवन की साँस जैसा उत्तेजक, उत्साह जगानेवाला लगता था। बाईस वर्ष की आयु में उन्होंने आर्थर सीमन्स को एक पत्र में बसन्त के विषय में अपनी भावनाओं को इस प्रकार लिखा – "आओ और आकर मेरे साथ मार्च की अति सुन्दर सुबह का आनन्द लो यह सुनहरी और नीले आकाश की बढ़िया चमक क्या तुम जानते हो कि लाल लिली मेरे हृदय के रक्त से एक-एक पत्ता बुनती है, ये छोटी-छोटी चिड़ियाँ मेरी आत्मा के सगीत को साकार

---

[1] सरोजिनी नायडू – दि गोल्डेन थ्रेशोल्ड ।

बनाती हैं, ये गन्ध मेरी भावनाएँ हैं जो हवा में एकाकार हो गई हैं और यह दहकता सुनहरी और नीला आकाश मैं ही हूँ।''

भारतीय कविता, धर्मग्रन्थ, मूर्तिकला आदि सभी में कमल का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। उसके रगों की विविधता-सफेद, लाल, हल्का नीला, गहरा नीला आदि - सौन्दर्य, पवित्रता आदि का निरन्तर वर्णन होता रहा है। वह कीचड़ से जन्म लेकर भी विकाररहित है। उसके पत्तों पर पानी नहीं ठहरता, लक्ष्मी उससे पैदा होती हैं, सरस्वती उस पर विराजमान हैं। बौद्ध धर्म में भी उसका महत्व है। सरोजिनी ने कई कविताओं में कमल को आधार बनाया है। एक कविता में गाधी जी की तुलना पवित्र, उदात्त, पौराणिक कमल से की है। गाधी कमल के समान, अमरत्व के जल में, दुर्भाग्यपूर्ण तूफानो से अछूते, उद्धत शहद की मक्खियों के झुडों के आक्रमण से अप्रभावित और भूखी हवाओं से बिना डरे सबकुछ सहते हैं।

भारतीय फूलों में कमल के अतिरिक्त शिरीष, कदम्ब, चम्पक, किशुक और अशोक उन्हें विशेष प्रिय हैं। उनकी कविताओं में इन सबका वर्णन हुआ है। बसन्त पचमी कविता में शिरीष का सौन्दर्य विधवा स्त्री को कष्ट पहुँचाता है। कदम्ब कृष्ण-भक्तों का विशेष प्रिय है, अमलतास का सौन्दर्य भी चित्रित है।

उनके पद्य-सकलनों के नाम चिड़िया के प्रति मोह व्यक्त करते हैं। भारतीय कवियों को आकर्षित करने वाले सभी पक्षियों जैसे कोयल, तोता, मैना, पपीहा, गरुड, बत्तख, कबूतर, मोर आदि का वर्णन है पर कोयल से उन्हें विशेष प्रेम है। पशुओं में एक वीर के खूबसूरत घोडे के अतिरिक्त तालाब में पानी पी रहे तेंदुए, गोधूलि के समय गाँव लौटती शान्त गायों, बन्दरों की आवाज से घबराकर जगल में छिपते शरमीले मृगों का चित्रण है। हाथी के अतिरिक्त साँप पर दो सुन्दर कविताएँ हैं, जिनसे भारतीय दृष्टि का पता चलता है। पश्चिम में साँप को भयानक और जहरीला माना जाता है पर भारतीय दृष्टि से वह रक्षक है। मुच्छलिद सर्पराज सात दिन तक साधनारत बुद्ध को धूप और वर्षा से बचाने के लिए उनके सिर पर फन फैलाए रहे थे। भारत की प्रादेशिक रचनाओं में साँपों पर लोक-रचनाएँ मिलती हैं। सरोजिनी की कविताओं में भी साँपों के प्रति वही सकारात्मक दृष्टि मिलती है। सरोजिनी की

कविताओं में भी साँपों के प्रति वही सकारात्मक दृष्टि मिलती है। दि सेप्टर्ड फ्लूट में दो कविताएँ हैं, सपेरे (दि स्नेक चार्मर्स) और साँपों का त्योहार। दूसरी कविता नागपचमी के अवसर पर लिखी गई थी और नाग देवता को सम्बोधित करती हैं –

तुम नदी की तरह द्रुत और गिरती ओस की तरह नीरव

बिजली जैसी व्यापक और सूर्य के समान सुन्दर हो।[1]

किन्तु प्रकृति की कविताओं में केवल सुन्दर और कोमल पक्ष ही नहीं लिया है बल्कि भयावह, क्रूर रूप भी दिखाया है जो प्रचड समुद्र, ज्वालामुखी, झझा आदि में मूर्तिमान हुआ है। प्रकृति उनके लिए मानवीय भावों के चित्रण की पृष्ठभूमि है।

सरोजिनी की चारों काव्य-पुस्तकों में प्रेम-गीत मिलते हैं। उनके काव्य का एक तिहाई प्रेम को विषय रूप में लेकर चलता है। उनका प्रेम भारतीय आत्मबलिदान के आदर्श से प्रेरित है। उनकी कविता में विविध मन स्थितियों का चित्रण है – जैसे आशा, निराशा, चुनौती, अपेक्षा आदि, सयोग और वियोग, दोनों पक्षों का सुन्दर अकन है। उन्होंने मध्यकालीन भक्त कवियों के भजनों से भी प्रेरणा ली है। उनकी अधिकाश कविताएँ रगीन तथा रोमाटिक हैं जैसे भारतीय प्रेमगीत, जुबैदा, कवि का प्रेम-गीत, उत्तर का प्रेम-गीत, ग्वालिन राधा का गीत, मन्दिर, बाँसुरीवादक, राधा का गीत आदि।

उनकी कविता में देशप्रेम का स्पन्दन है। कुछ सुन्दर देशभक्ति की कविताएँ हैं – जैसे 'भारत को', 'भारत की भेंट' आदि। कुछ कविताओं की प्रेरणा उन लोगों से मिली है जो उनके समसामयिक थे पर जिनसे वे बहुत प्रभावित थीं – जैसे गोपालकृष्ण गोखले, बालगगाधर तिलक, उमर सोबानी आदि। किन्तु उन्होंने जीवन में जिस सक्रियता से देश के लिए काम किया, वह कविता में नहीं मिलता। सम्भवत इसका कारण यह रहा होगा कि जब वे राजनीति में सक्रिय हुई तो इतना समय ही नहीं बचता होगा कि काव्य-लेखन कर पातीं।

जीवन और मृत्यु की समस्या को लेकर कई कविताएँ लिखीं जैसे जीवन, दर्द के देवता को, मृत्यु के कवि, प्रेम और मृत्यु, मृत्यु और जीवन, भाग्य को चुनौती,

---

[1] सरोजिनी नायडू – द स्क्रप्ड फ्लूट, पे0110

अजेय आदि। सरोजिनी जीवन से प्रेम करती थीं और खुशी से गाती थीं। कभी-कभी भय और पीड़ा उन्हें घेर लेते थे पर फिर भी वे उससे छुटकारे के लिए मृत्यु को आमन्त्रित नहीं करती थीं। वे भाग्य और मृत्यु को चुनौती देती थीं।

उनकी कई कविताएँ परिदृश्य को केन्द्र में रखकर लिखी गई थीं जैसे पालकी वाहक, घूमते गायक, भारतीय बुनकर, कोरोमडल के मछेरे, सँपेरे, नाज पीसनेवाले, गाँव का गीत, फसल का गीत, गली की आवाजें, चूड़ी बेचनेवाला आदि कविताओं में भारतीय जीवन का सूक्ष्म चित्राकन है। लोकगीतों ने भी उन्हें प्रभावित किया। उन्होंने औद्योगिक जीवन को नहीं लिया। स्पष्ट है कि वे भारतीय जीवन और उसकी विविधता से प्रभावित रहीं।

एक सच्चा लयात्मक कवि सकुचित दृष्टि नहीं रखता। सरोजिनी की कविता भी विनय की विविधता का परिचय देती है। नाज पीसनेवाले अथवा पर्दानशीन में गरीबों और प्रतिदिन की प्रताडना सहनेवालों पर लिखा है तो 'सान्ध्य प्रार्थना के लिए आमत्रण' में सब धर्मो के प्रति सहानुभूतिपूर्ण दृष्टि का परिचय मिलता है। कुछ कविताओं में मुस्लिम सस्कृति की झलक है तो कुछ में हिन्दू जीवन का चित्रण। जीवन में कष्ट सहने के कारण वे दुखी लोगों से तादात्म्य स्थापित करने में समर्थ थीं। उनकी कविता मानवता को सन्देश देती है। उनका दर्शन प्रेम का दान है। उनके काव्यात्मक विचार एक क्रम में नहीं मिलते, पर प्राय प्रत्येक सकलन में सब प्रकार की कविताएँ मिलती हैं। रोमाटिक कविताएँ हैं तो रहस्यात्मक कविताएँ भी हैं। किन्तु विषय कुछ भी हो भारतीय मूल का और पूर्व की प्रेरणा से युक्त रहा है। वे अपने आसपास धड़कनेवाले समृद्ध भारतीय जीवन के प्रत्येक पक्ष को उत्सुक सवेदनशीलता से ग्रहण करने को तत्पर थीं। यही नहीं वे मनुष्य, भगवान तथा सृष्टि के पारस्परिक सम्बन्ध, जीवन तथा मृत्यु के विषय में भी जिज्ञासा रखती थीं। सामान्य दृश्य या ध्वनि, गली की तीखी आवाज आदि में एक रहस्यात्मक अर्थ पाती थीं। उन्होंने कविताओं के माध्यम से अपनी व्यक्तिगत भावनाओं को भी अभिव्यक्ति दी है। प्रेम, मृत्यु, आत्मा की प्रार्थना जैसी कविताएँ उनके भावों की सीधी अभिव्यक्ति है। कहीं-कहीं किसी के आत्मकथन या सवाद के द्वारा नाटकीयतापूर्ण अभिव्यजना की है

जैसे 'दि गोल्डन थ्रेशोल्ड' के अधिकाश लोकगीतों में, तो कहीं सीधा कथन अपनाया है जैसे – 'मेरे पिता की आत्मा के सम्मान में', 'हैदराबाद के महामना निजाम को श्रद्धाजलि', 'स्मृति में पद'।

कविता विशेषकर लयात्मक कविता, जीवन–दर्शन को व्यक्त करती हैं। दर्शन–जीवन की व्याख्या ही है जो सभी गीतकारों में मिलती है उनकी कुछ कविताओं में विचारों की गहनता मिलती है। वर्तमान के कल्याण के लिए उसे प्रेम और शक्ति देने के लिए वे तत्पर हैं और देकर प्रसन्न हैं –

ओ भाग्य, दर्द के पीसनेवाले पत्थरो के बीच
तूने मेरा जीवन टूटे नाज की तरह पीस दिया है
मैं इसे अपने आँसुओ से गीलाकर गूँधूँगी, बनाऊँगी
आशा की रोटी जो खिला सकूँ, सुख दे सकूँ,
उन करोडो दिलो को जिनके पास खेती नहीं है
केवल दुख की कड़वी जडी बूटियाँ हैं।[1]

उनमें अद्‌भुत वर्णन–क्षमता है। वे एक दृश्य या स्थिति को पूर्ण विस्तार से चित्रित करती हैं। उनके चित्रण सजीव और काव्यात्मक होते हैं। उनका वर्णन स्वाभाविक होता है। वर्णनात्मक कविता के उदाहरण हैं – भारतीय नर्तक, हैदराबाद शहर में रात। जून का सूर्यास्त जैसी कविता में वर्णन के साथ विचार मिले हुए हैं। उनका भाषा पर नियत्रण था। शब्दों की आश्चर्यजनक पकड़ थी। कहावतों का भी प्रयोग किया है।

सरोजिनी ने सुन्दर बिम्ब निर्माण किया है। उनके बिम्ब विविध और उदात्त हैं और अधिकतर प्रकृति, पौराणिक आख्यान, ग्रामीण दृश्यों और परीलोक से जुडे हैं। उनमें रगों की भरमार, गति का चित्रण, कोमल कल्पना मिलती है। जैसे –

शहर के पुल पर रात राजसी ठाठ से उतरती है
जैसे कोई रानी किसी शानदार उत्सव के लिए आ रही हो।[2]

---

[1] सरोजिनी नायडू – दि ब्रोकेन विंग – इविसबल पे036
सरोजिनी नायडू – ओवर द सिटी ब्रिज ।

कुछ कविताएँ प्रतीकात्मक है। जिनके प्रतीक सदा से साहित्य में प्रयुक्त होते रहे हैं। कहीं-कहीं उन्होंने नए और मनमाने प्रतीकों का प्रयोग किया है जिन्हें समझना पाठक के लिए कठिन सिद्ध हुआ।

उनका आलकारिक शैली की ओर झुकाव था किन्तु समृद्ध बिम्बों तथा रूपकों की प्रचुरता के साथ सादगी भरे काव्याश भी मिलते हैं। उपमा, रूपक के अतिरिक्त वक्रोक्ति, विरोधाभास और अतिश्योक्ति आदि अलकारों का भी प्रयोग किया है। मानवीकरण के आधार पर सुन्दर चित्राकन किया है।

उनकी कविता में छन्द विविधता है। कई तरह के छन्दों का प्रभावपूर्ण प्रयोग किया है किन्तु अतुकान्त कविता नहीं लिखी है। भारत की प्रादेशिक भाषाओं के लोकसगीत की धुन और छन्द प्रयुक्त हैं। 'घूमते गायक' में बाउल धुन है, 'सुनालिनी की लोरी' बगाली छन्द में है। 'हैदराबाद के बाजारों में' में उन्होंने अपने शहर के बाजार में अक्सर सुनी हुई धुन का आधार लिया है। 'हैदराबाद शहर में रात' भगण छन्द में लिखी गई है। यह छन्दात्मक उपलब्धि सरोजिनी की लयात्मकता का अग है। 'पालकी वाहक' कविता को यदि उसकी लय और छन्दात्मक सगीत से अलग कर देखा जाए तो कविता का आनन्द खडित हो जाएगा। 'याद का त्योहार' भी लय के सौन्दर्य से युक्त एक कविता है जिसमें ध्वनि, हिला सकने की क्षमता और जादू है।

विदेशी आलोचकों ने उनकी कविता की प्रशसा की है और लिखा कि 'भारत के जितने लोगों ने अग्रेजी में लिखा, उनमें वे सबसे सुन्दर, मौलिक और औचित्यपूर्ण हैं।' किन्तु भारतीय आलोचकों ने सरोजिनी की कविता की कड़ी आलोचना की है। उन्हें अस्पष्ट और दिशाहीन कहा। उनकी कविता में स्कूली छात्रा की सी भावुकता और यथार्थ से दूरी बताई। कुछ का विचार था कि उनकी कविता अपने युग के सघर्ष को व्यक्त करने में असमर्थ रही है, कुछ ने उसमें दार्शनिकता का अभाव बताया। आलोचकों को इस बात पर आपत्ति थी कि उन्होंने अग्रेजी भाषा में रचना और उसमें आने वाले परिवर्तनों से घबराकर रचना करना छोड़ दिया। उन्हें रोमाटिक कविता की कवियित्री माना। उन्हें शिल्प के प्रति लापरवाह बताया गया। पर ये आरोप उचित नहीं है।[1]

---

[1] सरोजिनी नायडू - ले0 उमा पाठक पे054

सरोजिनी की कविता में रोमाटिक भावुकता मिलती है किन्तु सवेदना और भावुकता में अन्तर करना कठिन है। आधुनिक युग में कविता में जीवन के प्रति आलोचनात्मक या व्यग्यात्मक दृष्टि आ गई, तब भी उसमें भावुकता के स्थान को नकारा नहीं जा सकता। अत कविता में भावुकता का स्थान निश्चित है। सरोजिनी की कविता में तीव्र सवेदनशीलता मिलती है। उनकी कविता में छिपी ईमानदारी पर सन्देह नहीं किया जा सकता, न ही यह कहा जा सकता है कि वे बढा-चढाकर लिखती हैं। वे अपने भावों को तीव्रता तथा उत्साह से रखती थीं।

उनकी प्रेमपरक कविताओं में दुख और आत्मबलिदान का महत्व अतिश्योक्तिपूर्ण अथवा यथार्थपूर्ण नहीं है। इन कविताओं में दर्द का विकृत आनन्द नहीं है। भारतीय काव्य-परम्परा पीड़ा को नकारात्मक अथवा आनन्द-विरोधी नहीं मानती। सरोजिनी पर ऊर्दू-फारसी की कविता का भी गहरा प्रभाव था। उर्दू शायरी में प्रेम की पीड़ा को आनन्दमयी माना गया। प्रेमी प्रिय के सितम उठाता है किन्तु प्रिय की अवहेलना से निर्ममता अधिक पसन्द करता है। प्रिय के लिए मर जाने में वह चरम सुख का अनुभव करता है। इन परम्पराओं को ध्यान में रखने से सरोजिनी की कविता पर आश्चर्य नहीं होगा।

इसी प्रकार भारतीय जीवन की गरीबी, भूख, उनके अज्ञान आदि का चित्रण न करना उन्हें युग से परे नहीं ले जाता। भारतीय स्वतत्रता के लिए अपने को समर्पित करने के बाद वे निरन्तर घूमती रहीं। उन्होंने बहुत-सा समय गाँवों में भी बिताया। भारतीय जीवन के प्रत्येक पक्ष में उन्होंने अपना सीधा सम्बन्ध स्थापित किया था। उनका राजनीतिक और सामाजिक कार्यक्रम स्पष्ट करता है कि वे भारतीय जनता और उसके जीवन की परेशानियों से भली भाति परिचित थीं। किन्तु वे निराशा के गर्त में डूबने के स्थान पर आशापूर्ण रहना पसन्द करती थीं। उन्हें लगता था कि भारतीय जीवन में शान्ति, सादगीपूर्ण सौन्दर्य, आत्मिक समृद्धि और आश्चर्यपूर्ण निरन्तरता तथा ग्रहणशक्ति है। अत वे सुन्दर तथा आकर्षक का चित्रण करती रहीं। उनकी कविता में चित्रित भारत की झलकियाँ कदापि यथार्थ से दूर नहीं है। भारत में सँपेरे, पेड़ पूजनेवाले, घूम-घूमकर गानेवाले साधु कहाँ नहीं हैं? आलोचक यदि उत्तर प्रदेश में

यात्रा करते समय कहीं पेड़ के नीचे विश्राम को रूकेंगे तो रग-बिरगे पर्देवाली पालकी उठाए कहार अवश्य दिख जाएँगे। भारतीय दृष्टि की सबसे बड़ी विशेषता यह रही है कि वह नए को अपनाने के साथ पुराने को छोड़ नहीं देती बल्कि अतीत को वर्तमान से जोडकर भविष्य तक ले जाने की चेष्टा करती है। वे इसी नैरन्तर्य का चित्रण करती हैं। उनकी कविता में वर्णित भारतीय उत्सवों का सौन्दर्य हो या गाँव अथवा शहर की स्त्री-पुरुष की दैनिक दिनचर्या-कुछ भी यथार्थ से परे नहीं लगता। सरोजिनी ग्रामीण दृश्यों से चमत्कृत थीं। उनकी तरह रात के गहरे अधेरे में हाथियों के घुँघरूओं की हल्की सी आवाज सुन सकनेवाले ही इस आकर्षण को समझ सकते हैं और तब उन्हें ये विवरण मध्ययुगीन या सत्य से दूर नहीं लगेंगे। क्योंकि हमारी दृष्टि या रुचि से परे भारतीय दृश्य सहसा अदृश्य नहीं हो सकते।

आलोचकों ने कहा कि सरोजिनी अग्रेजी कविता के क्षेत्र में आने वाले परिवर्तनों, नए रूपों आदि से सामजस्य नहीं कर पाई। अत उन्होंने कविता लिखना बन्द कर दिया। पर यह भी मिथ्या आरोप है। रचयिता कविता के शिल्प के बदलने से इतना कुठित नहीं हो सकता कि रचना करना ही छोड़ दे। इसके अतिरिक्त रचना सृष्टा की आत्माभिव्यक्ति है।। उस पर वाह्य अकुश अन्यायपूर्ण है। यह रचनाकार की इच्छा पर निर्भर करता है कि वह किस प्रकार अपने को व्यक्त करें। सरोजनी ने राजनीति में सक्रिय होने के बाद यदि परम्परागत कविता नहीं लिखी तो उन पर आक्षेप नहीं लगाया जा सकता, क्योंकि तीव्र अनुभूति किसी भी माध्यम से व्यक्त हो सकती है। सरोजिनी के कवि ने पत्रों, सवादों तथा भाषणों में अभिव्यक्ति पाई। उनके पत्रों में सवेदना, बिम्बों की सजीवता तथा रगीन विवरण है। उनके मित्रों और परिचितों के अनुसार उनकी बातचीत में सुन्दर चित्रात्मकता होती थी। उनके भाषण भी कभी-कभी पूरी तरह काव्यात्मक होते थे। स्पष्ट है कि वे राजनीतिक और सामाजिक विषयों में भी कविता करने की क्षमता रखती थीं। इसके अतिरिक्त उनके लिए कविता की रचना आत्मसाक्षात्कार थी, एक पेशा नहीं। अत बदलती धारा के साथ बदलना आवश्यक नहीं मानती होंगी।

आज भी लोग भारतीय सगीत में लोकतत्व को जैसे ठुमरी, दादरा, कजरी, टप्पा आदि को पसन्द करते हैं। सरोजिनी के गीत इनसे साम्य रखते थे। पपीहे की पुकार, पहले आम्रबौर से प्रसन्न कोयल की कूक, वर्षा के स्वागत में मोर का नृत्य, भारतीय जीवन और कथाओं से जुड़े जुगनू, सारस, चातक आदि पक्षी, मेंहदी, चूड़ी, चन्दन आदि हमारी प्रचलित कविता और सगीत से जितनी गहराई से जुड़े हैं उतने ही उनकी कविता से भी जुड़े थे।

आलोचकों ने उन्हें शिल्प के प्रति उदासीन माना और कहा कि उन्होने 19वीं सदी के अग्रेजी कवियों की भाषा का प्रयोग किया है जिसके कारण उसमें बनावटीपन लगता है। उनके बिम्ब और उपमान कल्पना-जगत् से जुड़े हैं। उनकी शैली तराशी हुई सजावटपूर्ण लगती है। उनकी कविता अतीत में जीती है जो आज स्वीकार्य नहीं है। किन्तु यह आलोचना निर्मम है। जिस समय वे रचना कर रही थीं सम्भवत पुरातनता को अपनाना उचित समझा जाता रहा होगा। उनकी प्रेम कविताएँ युवा वर्ग को सुन्दर लगती हैं। उनकी कविता की लयात्मकता का प्रवाह हमें बहाकर ले जाता है। उनकी तुकान्त कविता और लय आधुनिक अग्रेजी कवियों को मात कर देती है। एक आलोचक का विचार है कि "उनकी कविताओं में जीवन को लय है। वास्तविकता, कल्पना, भावना और सगीत बड़े मधुर रूप से जुड़कर एक कलात्मक आकार लेते हैं जिसमें जीवन की चमक है और सच्चे भावावेग की अग्नि है। वे एक महान कलाकार हैं जिनमें शब्द, बिम्ब और शैली है और उनका चित्रफलक पूरा राष्ट्र हैं। उनकी कलात्मकपूर्णता पर प्रश्न नहीं किया जा सकता।"

वास्तव में उनकी कविता में एक उठते हुए राष्ट्र का स्वप्न है जो विदेशी भाषा में व्यक्त हुआ है। इनमें पश्चिमी सभ्यता और पूर्वी आदर्शो का सुन्दर गठजोड़ है। वे जिस समय रचना कर रही थीं उस समय भारत का आत्मसम्मान और आत्मविश्वास बहुत नीचे जा चुका था। ऐसे समय में एक भारतीय और वह भी स्त्री का, शासकों की भाषा में देश की अन्तरतम की आकाक्षाओं को स्वर देना उनके लिए चुनौती और अपने देशवासियों के लिए प्रेरणा बन गया। सरोजिनी ने उनके जीवन में सगीत, आकार और रग भरा। भारतीयों द्वारा लिखी गई अग्रेजी कविता में उनका महत्वपूर्ण

स्थान रहा है। एक आलोचक के शब्दों में – "उनका एक आलकारिक सुन्दर कथन, उसमें उनकी काल्पनिकता का सूक्ष्म जादू एक विशेषण के द्वारा विचारों और भावनाओं की सुन्दर चमक भर देता है।"

अग्रेजी साहित्य परिप्रेक्ष्य के एक प्रमुख पात्र से मिलने का अवसर देने के लिए सरोजिनी के सहपाठियों में से एक ने इस युवा भारतीय कवयित्री का परिचय एडमण्ड गॉस से कराया था। और उसके बाद से, सरोजिनी को जो प्रोत्साहन मिला वह ऐसा था कि उन्होंने अपने जीवन के आगे आने वाले बीच वर्ष न केवल कविता लिखने को, बल्कि अग्रेजी में ही कविता लिखने को समर्पित कर दिये – अग्रेजी बोलने वाले ससार को विदेशी पूर्वी ससार का परिचय देने के लिए। यही उनका उत्साही मिशन प्रतीत होता है।

जब उन्होंने भारतीय गीत लिखने शुरु किये तब विषयात्मक हो गई। किन्तु 1896 में ही सरोजिनी ने अपने को कविता के लिए समर्पित कर दिया था और वे इस बात को समझती भी थीं इसीलिए आर्थर साइमन्स के सामने महान् कवियत्री होना अस्वीकार करने के बावजूद उन्होंने अपनी इस कविता का नाम 'कवि का प्रेमगीत' (दि पोएट्स लव सॉग) समझ-बूझकर रखा। इस प्रकार सत्रह वर्ष की यह बालिका 'बौद्धिक दिन के बड़े घूँटों को' भावातिरेक में पीती हुई यूरोप में रही।[1]

यह जादू बहुत कुछ उसके शब्दों के जाल में भरा था जो उसकी कविता में सर्वदा सुन्दर शब्दावलियों की अजस्र धाराओं में फूट पड़ते थे, क्योंकि लोगों के बीच में वह बहुत कम बोलती थीं, और इसी बात ने, उसके स्वय के अप्रतिम सौन्दर्य और अभिलाषा के गुप्त ससार के साथ अग्रेजी परिप्रेक्ष्य को मत्रमुग्ध कर दिया जिसने अग्रेजी लेखन के इतिहास में उसे समय से पूर्व ही विख्यात कर दिया।

सरोजिनी के मन्त्र-मुग्ध ओठों से फूलों के झरनों के समान शब्द बहते थे। वे उनके जादू में ही रहती थीं और वे सब लोग जो सरोजिनी के पद्यों को सुनते या पढते थे, उनकी सगीतमयी ध्वनि से रोमाचित हो उठते थे। यह मानना कुछ भी असामान्य नहीं है कि ये सभी शब्द अग्रेजी में थे, न कि उनकी बाल्यावस्था के घर की तीन भारतीय भाषाओं में से किसी भी एक में।

---

[1] सरोजिनी नायडू, पदिमनी सेन गुप्ता पे019, ।

सरोजिनी ने अग्रेजी को ही क्यों चुना? यदि कोई चाहे तो यह भी पूछ सकता है कि सरोजिनी ने कविता ही क्यों लिखी, और उन्होंने अपने कथनों को इतने सुन्दर श्ब्दों में लपेटकर ही क्यों प्रस्तुत किया। वे सुनने वालों को शब्दों के ऊपर अपने भव्य अधिकार से चमत्कृत कर देती थीं, और समझती थी कि वे गीतों की रचना के लिए अपने-आपको समर्पित कर चुकी हैं।

अपनी स्वय की मातृभाषा में किये गए लेखन का ही सर्वदा उचित मूल्याकन करने वाले साहित्य के विदेशी प्रतिभू और भारतीय पडितों का सकीर्ण दृष्टिकोण अवास्तविक और समय की बर्बादी ही प्रतीत होता है। भारतीय समीक्षक निश्चय ही इस अपराध के दोषी हैं, सम्भवत इसलिए भी कि उनके पास अच्छी या बुरी रचना का मूल्याकन करने के लिए दूसरी सामग्री की कमी है। आधुनिक भारत के उन कवियों में से एक जिन्होंने अग्रेजी में लिखना चुना है – और जिसे मैं एक 'इण्डो एग्लियन' लेखक का यह लोकप्रिय 'लेबिल' देने से इन्कार करती हूँ – कमला दास ने भारतीयों के द्वारा अग्रेजी में लिखे जाने का विरोध करने वालों के प्रति प्रतिरोध में यह आक्रोश व्यक्त किया है

''मैं एक भारतीय हूँ, श्याम-रग, पैदा हुई मलाबार में, मैं बोलती हूँ तीन भाषाएँ, लिखता हूँ दो में, एक में देखती हूँ सपना। अग्रेजी में मत लिखो, वे बोले, अग्रेजी तुम्हारी मातृभाषा नहीं है। क्यों नहीं छोड़ देते मुझे अकेला, समालोचकों। मित्रों। अभ्यागत भाई-बहनों। तुम लोगों में से हर कोई क्यों नहीं बोलने देता मुझे कोई भी भाषा, जिसे मैं पसन्द करूँ?''[1]

हाँ, समालोचक सरोजिनी को अकेला क्यों नहीं छोड़ देते? वे, तरूदत्त के समान, समय की कसौटी पर कसी जा चुकी है, और यह उनके प्रथम श्रेणी की लेखिका होने का निश्चित सकेत है। यदि कोई चाहे तो पूछ सकता है कि डायलन टॉमस ने वेल्श में क्यों नहीं लिखा, याजेम्स जॉयस ने अपनी आयरिश भाषा में? किस लिए वेस्ट इण्डियन नैपाल, रूसी नोवोकोव, पोलिश कानराड, चीनी लिनयूताग, हगेरियन कोएस्टलर और अग्रेजी के कई प्रेमियों ने स्वय को व्यक्त करने के लिए

---

[1] सरोजिनी नायडू, पदमनी सेन गुप्ता पेज 27, ।

इस 'लोकभाषा' को चुना? वास्तव में एक लेखक उसी भाषा में बोल सकता है जिससे वह सर्वाधिक परिचित है। कोई भी श्री अरविन्द घोष से एकमत हो सकता है जबकि उन्होंने उस समालोचक की समझ पर जोर दिए जाने को अधिक महत्व नहीं दिया जिसने अपनी मातृभाषा को छोडकर अग्रेजी में लिखने वाले भारतीयों पर दोषारोपण किया था "क्या उसकी समझ इतनी अधिक महत्व रखती है?"

यद्यपि सरोजिनी की अभिव्यक्ति का माध्यम इग्लिश भाषा थी, उनकी बिम्बावली पूर्णत भारतीय थी। उन्होंने निश्चय कर लिया था कि वे अग्रेजी फूलों और पछियों के विषय में आगे बिलकुल नहीं लिखेंगी और न ही अपने ऊपर यह दोष लेंगी कि वे अग्रेजी बिम्बावली का प्रयोग करती हैं, या शैले और कीट्स की नकल करने की कोशिश करती हैं। उनके सामने उनका अपना सम्पन्न देश था जिसकी विशाल और प्राचीन सस्कृति तथा परम्पराएँ, जिसका विविध जीवन और जिसके गुप्त दरवाजे खोले जाने थे तथा खजाने देखे-परखे जाने थे। पारम्परिक ज्ञान और पूर्वी रीति-रिवाजों का दूसरा कौन सा स्वर्ग सरोजिनी चाह सकती थीं? और इसीलिए उन्होंने अपनी पूर्णत भारतीय बिम्बावली के साथ लिखना शुरु कर दिया। उनके सभी विषय भारतीय हैं जिस प्रकार उनके रूपक और उपमाएँ, यद्यपि उन्होंने जब-तब फारसी और इस्लाम से भी उधार लिया है। उनकी विषय-वस्तु घरेलू और ग्रामीण थी, और उन्होंने अपनी बहुत-सी तर्जे उन लोकगीतों पर आधारित कीं जिन्हें उन्होंने मल्लाहों, जुलाहों और फसल काटने वालों से सुना था।

कोई भी कल्पना कर सकता है कि अपने प्रारम्भिक वर्षो में वे जहाँ रहीं उस 'शीशमहल' की खिड़की से सरोजिनी सिर निकालकर झाँक रही हैं और नीचे से जाने वाले गायक को सुन रही हैं - या फिर अपनी गाडी रोक रही हैं और इन सीधे-सादे लोगों से बातें कर रही हैं। मदिर की घटियों, मूजी की पुकार, पुजारियों और सभी धर्मो के पुरोहितों की पूजा से वे रोमाचित हो जाती थीं और हमेशा एकता का सपना देखने लगती थीं।

धर्मो में भिन्नता क्यों होनी चाहिए - क्यों नहीं सम्पूर्ण मानव जाति पूजा के सभी रूपों के लिए गभीर श्रद्धापूर्वक एक हो जाती? सरोजिनी ने अपने हैदराबाद

और उसके हिन्दू-मुस्लिम साझीदारी वाले विविध जीवन के वर्णनों से अपनी कविता का प्रारम्भ किया।

इडो-एग्लियन कविता, हेनरी लुई विवियन डेरोजियो (1809-1831) से शुरू होकर, अब लगभग 150 वर्ष पुरानी है। वास्तव में, राजा राममोहन राय (1772-1833) के दिनों से अग्रेजी भाषा भारत में बढती रही है, अपने उदार दृष्टिकोण, सम्पन्न साहित्य और सास्कृतिक सहिष्णुता से इस देश के बुद्धिजीवियों को अपनी ओर आकर्षित करने के कारण। हेनरी डेरोजियो की माँ भारतीय थीं और पिता पुर्तगाली। उनकी कविता-पुस्तक 'फकीर आफ जघीरा एण्ड अदर पोएम्स' ने ध्यान आकर्षित किया और शीघ्र ही भारतीयों में इस विदेशी भाषा में लिखने की चलन हो गई। दूसरे कवि जल्दी ही सामने आये। काशीप्रसाद घोष प्रथम बगाली-अग्रेजी कवि थे और शीघ्र ही पद्यकारों की बाढ आ गई, कुछ बिलकुल नगण्य तथा कुछ तरूदत्त के समान, आज भी प्रशसित और पठित। प्रमुख इडोएग्लियन, कवियों में थे मोहनलाल, हसन अली, पी0 राजगोपाल, राजनारायण दत्त और दत्त परिवार (तरू दत्त के पिता और चाचाओं सहित)। उन्होंने लागमैन्स, ग्रीन एण्ड कम्पनी द्वारा लन्दन में प्रकाशित 'दत्त फेमिली एल्बम' की रचना की थी।

इसी बीच में अग्रेजी भारतवर्ष में अधिक परिचित होने लगी थी। अधिकृत रूप से अग्रेजी भारत में सबसे महत्वपूर्ण भाषा तब बनी जब 1835 में लार्ड बेन्टिक ने 'मैकाले मिनिट' का नियम बनाया, जिसके द्वारा समस्त शैक्षिक कोष को अग्रेजी शिक्षा के लिए लगाया जाना था और अग्रेजी सीखना अनिवार्य कर दिया गया, किन्तु वास्तव में भारत में अग्रेजी गोवा के एक जेसूट मिशनरी टॉमस स्टीवेन्स (1549-1619) के साथ सोलहवीं सदी में आई थी।

धीरे-धीरे वर्ष-प्रतिवर्ष इडो-एग्लियन कविता बढती गई तथा इसका प्रारमी और अधिक ध्यान में आने लगा। कवि मनमोहन घोष की पुत्री लतिका घोष ने 1933 में भारतीय लेखकों पर अग्रेजी में एक पुस्तक लिखी तथा इसके पहले थियोडोर डगलस डन ने 'दि बेंगाली बुक ऑफ इग्लिश वर्स' सकलित की जिसे लागमेन्स ग्रीन ने 1918 में मद्रास से प्रकाशित किया।

पद्य-रचना के पारपरिक प्रकार लोकप्रिय थे, जैसे 'लिरिक,' 'सानेट', 'इलेजी', और 'ओड' एव जब रवीन्द्रनाथ टैगोर ने अपनी कविताओं का स्वच्छन्द अग्रेजी पद्य में अनुवाद करके 1913 में 'गीताजलि' के ऊपर नोबल पुरस्कार प्राप्त किया तब एक नया प्रकार सामने आया, कितु इनके अनुयायियों ने इसका बहुत कम अनुसरण किया। श्री अरविन्द, टैगोर और काफी हद तक, तरु दत्त और सरोजिनी नायडू ने अपनी-अपनी तकनीक तथा इडो-इग्लियन कविता की प्रति के निर्माण में सहायता की। "रूमानी भावात्मकता को अभिव्यक्त करने का एक विशिष्ठ शाब्दिक प्रकार, हो सकता है सरोजनी नायडू और उनकी पीढी के साथ समाप्त हो गया हो। "अग्रेजी-भाषी शिक्षा प्रणाली से निकली हुई सरोजिनी नायडू ने भी इ स बात का पश्चाताप किया था कि 'इसने अ-राष्ट्रीय भारतीय युवकों की कई पीढ़ियों को पश्चिम के अधे बौद्धिक बन्धन के हाथों में बेच दिया है।[1]

इडो-इग्लियन लेखकों की भी यही विशेषता थी। कवियों ने अग्रेजी भाषा को लिया और उसे एक प्राच्य ढाँचे में ढाल दिया। आयरिश, वेल्श, पोलिश, फ्रेच तथा किसी दूसरे अग्रेजी के लेखकों के समान, बिम्बावली तो उनके देश की थी किन्तु माध्यम अग्रेजी थी। किन्तु इडो-इग्लियन कविता के सम्बन्ध में एक आलोचना यह की जाती है कि " इसने वस्तुओं और जीवन के बाहरी पहलुओं या सतह का ही अधिकतर बिम्बन किया है। इडो-इग्लियन कवियों की विषय-वस्तु पौराणिक, आख्यानात्मक, ऐतिहासिक या केवल दैनिक अनुभूतियों पर आधारित होती थी। मुल्कराज आनन्द लिखते हैं, "यद्यपि सरोजिनी ने अपने को अभिव्यक्त करने के लिए एक पश्चिमी भाषा और पश्चिमी तकनीक अपनाई थी, मुझे तो मुख्य रूप से हिन्दुस्तानी ही लगती है, गालिब, जौक, मीर, हाली और इकबाल की परम्परा में आने वाली। फारसी कविता ने भी उन्हें काफी प्रभावित किया था। वे अपने दृष्टिकोण में अग्रेजियत भी रखतीं थीं।[2]

एक समालोचक का कहना है। किन्तु मेरा ख्याल है, सरोजिनी भारत में रही और यही रहकर आनन्दित थीं। निश्चय ही, यदि उन्होंने फेरी वाले की पुकारें और

---

[1] सरोजिनी नायडू पद्मिनी सेन गुप्ता पेज 27,
सरोजिनी नायडू पदमिनी सेन गुप्ता पेज 83,

चौडे दरिया में गिरते हुये नाविक का सीधा-सादा दर्शन न सुना होता, यदि उन्होंने सपेरे को अपनी बीन बजाते हुए और उसके सामने नाग को नाचते हुए या चूड़ी वालों या कहारों को न देखा होता, यदि वे सबसे अलग पर्दानशीन दुनिया की मोहक देशी-विदेशी सुन्दरियों के साथ न रही होतीं और अनन्त यदि जिनके विषय में उन्होंने लिखा उन समकालीन महापुरूषों के प्रति वे प्रेम और प्रशसा से भरी हुई न होतीं, तो वे कभी भी इतने भव्य गीत नहीं लिख सकतीं थीं। कविता उनके लिए सौनदर्य थी- न कि केवल जीवन की वास्तविक, कुरूप, निराशाजनक और निम्न प्रवृत्ति।

आर्यभाषा सस्कृत भी भारत में सबसे पहले आर्य आक्रमणकारियों द्वारा लाई गई थी और अब स्वय भारतीय बन गई है। ग्रीक, मुगल और दूसरे प्रभाव हमारे अन्दर मिले हुए हैं। इसमें भारत की महानता है, और हमने कभी भी स्वय के साथ अपना तादात्म्य नहीं खोया है, भारत द्वारा अपनाई हुई किसी भाषा में लिखकर या बोलकर हम कभी विदेशी नहीं हुए हैं। "इडो-इग्लिश साहित्य विविध अनेकता में एकता के भारतीय दार्शनिक दृष्टिकोण को प्रदर्शित करता है।[1] अनेक तथा कथित अग्रेज कवियों ने भी बुरे पद्य लिखे हैं। प्राय यह महसूस किया गया है कि अग्रेजी "स्वय अग्रेज के लिए एक साहस और चिन्ता का एक सतत स्त्रोत है।[2] दूसरी तरफ कई लोगों ने इशारा किया है कि कुछ भारतीय कई अग्रेजों की अपेक्षा अक्सर अधिक शुद्ध अग्रेजी बोलते हैं। पुराने कवि जैसे सरोजिनी नायडू, तरू दत्त, श्री अरविन्द और दूसरे भी अग्रेजी उन्माद से पीडित थे। "मातृभाषा की इस अग्राह्य हानि को किन परिस्थितियों ने उत्पन्न किया" किन्तु क्या आधुनिक इडो-इग्लियन कवि भी इसी उन्माद से (यदि अधिक नहीं तो) पीड़ित नहीं है?

अत में इस बात पर आश्चर्य होता है कि एक राष्ट्र और एक भाषा को मिलाकर उन पर जोर देते हुए इडो-इग्लियन कविता का लेबिल क्या जरूरी था? जबकि सम्पूर्ण कला स्वतन्त्र और निर्बाध होनी चाहिए। निश्चय ही, अपनी स्वतन्त्रता की रूकावटों को नापसन्द करने वाली गाने वाली चिड़िया सरोजिनी नायडू इडो-इग्लियन कवियों की श्रेणी में जमती नहीं हैं।[3]

---

[1] इडो-इग्लिश लिटरेचर इन दि नाइन्टीन सेंचुरी - ले0जान अलफोन्सो करकल पे01
दि स्वान एड दि ईगल पे02
[1] सरोजिनी नायडू ले0 पद्मिनी सेन गुप्ता पेज 85,

अपने देश के विषय में उस कलम से लिखती थीं जो एकब शुद्ध भारतीय की थी एक राष्ट्र भक्त बेटी की थी, जो अपने देश से प्रेम करती थी और अपने विशाल राष्ट्र का एक अन्तरग हिस्सा थीं। उनके द्वारा किये गए सत्य के मूल्याकन की, विशेषकर उनके कुछ रहस्यवादी और प्रतीकात्मक पद्यों की अत्यन्त शीघ्र प्रशसा हुई और 'आक्सफोर्ड बुक आफ इग्लिश मिस्टिक वर्स' में प्रतिष्ठित वे हमेशा जीवित रहेंगी। उनके कुछ गीतों की अपेक्षा छन्द अधिक सरल हैं। उनकी चतुष्पदीय पक्तियाँ और ज्यादा सबल हैं अपनी सरलता के कारण, तथा उनकी तुक अधिक स्वाभाविक है कुछ दूसरी कविताओं की अपेक्षा जहाँ वे अक्सर एक-दूसरे के ऊपर बहुत ज्यादा गिरी पड़ती है। 'आत्मा की प्रार्थना' का रहस्यवाद स्पष्ट है। उन्होंने वास्तव में ईश्वर की आवाज सुनी है। वे उन्हें अपनी शान्ति के रहस्य को बतलाने का वचन देते हैं। दर्शन स्पष्ट है। किन्तु वह सदा जीवन और मृत्यु के चारों ओर ही घूमता है।

'आक्सफोर्ड बुक आफ इग्लिश मिस्टिक वर्स, की अपनी दूसरी कविता में सरोजिनी पुन शाश्वत शान्ति की इच्छा करती हैं जो उन्हें ससार के कोलाहल बिम्ब अत्यन्त स्पष्ट है और कोई भी सरोजिनी को देख सकता है अपनी खिड़की से बाहर झाँकते हुए तथा 'अनन्तता के अतिघनिष्ठ सत्व' से निपीत और सान्द्र ससार में सुनहरे पछियों के साथ उड़ते हुए। यहाँ एक ऐसी गभीर और प्रामाणिक कविता है जो सरोजिनी को महान् अग्रेजी रहस्यवादी कवियों के दिल की गहराइयों में ले जाती है। हमें दु:ख इसी बात का है कि उन्होंने इस प्रकार बहुत कम लिखा। तीसरी और अन्तिम कविता दूसरे के अनुभव से सबधित है- स्वय बुद्ध के अनुभव से

'दि आक्सफोर्ड बुक ऑफ इगलिश मिस्टिक वर्स' में प्रकाशित और सरोजिनी के पहले के प्रकाशनों से सकलित केवल ये तीन कविताएँ ही सरोजिनी द्वारा लिखित प्रतीकात्मक या रहस्यवादी कविताएँ नहीं हैं। वास्तव में उनके तीन पहले सग्रह प्राय एक गम्भीर जीवन-दर्शन ओर परलोक के दर्शनों से जहाँ-जहाँ सिचित हैं। जब वे इग्लैण्ड में थीं तब न केवल साइमन, गॉस तथा तत्कालीन दूसरे कवियों और समालोचकों के साथ स्वतत्रतापूर्वक विचरण करती थीं बल्कि राइमर्स क्लब के कई सदस्यों के साथ, जहाँ शायद, उन्होंने शब्द-रचना में पूर्णता प्राप्त की, क्योंकि उन्होंने

निश्चय ही "शाब्दिक और तकनीकी उपलब्धि, पद्य-रचना और लय पर अधिकार अर्जित किया था जिनके बिना वे अपने दर्शन और अनुभूतियों को सुमधुर काव्य में परिवर्तित नहीं कर सकती थी"।[1] वस्तुत प्रेम, श्रद्धा, देश-भक्ति और स्वतत्रता के क्षेत्र में उनके कई सपने, तीर्थयात्राएँ और दर्शन थे। ये उस रहस्यात्मक क्षण में लिखी गई स्वयस्फूर्त और तीव्र भावात्मक अनुभूतियाँ थीं जब सरोजिनी स्वय-प्रवाहित शब्दों से अभिभूत हो गई थीं। जब उन्होंने कई दार्शनिक योजना बनाने की कोशिश की, उदाहारणार्थ 'दि ब्रोकन विंग' में 'मन्दिर' और 'प्रेम की तीर्थयात्रा' में जहाँ पूर्ण आत्मनिषेध से स्वय को समर्पित करने वाली स्त्री के मानवीय और दिव्य प्रेम को सम्मिश्र करने का प्रयास है, तभी वे पाठक का विश्वास नहीं पाती हैं। उनकी मानवीय भावनाएँ अत्यधिक तीव्र हो उठती हैं जैसा कि पहले बताया जा चुका है।

वे निरन्तर मृत्यु-कामना अभिव्यक्त करती हैं, किन्तु उसमें उतनी गहराई नहीं है जितनी कि, उदाहारणार्थ इलियट के जेरोण्टियन में।[2]

इलियट के शब्द सवादात्मक हैं। वे पाठक को अपने विश्वास में ले लेते हैं। ऐसे चित्र सरोजिनी मृत्यु के साथ अपने सवाद में चित्रित करने में असफल हो गई सी लगती है साथ ही उन्होंने अपने अतीत 'शून्य' में 'उद्देश्य' के बिना व्यतीत किया है, किन्तु वे हार मानने वाली नहीं हैं और अपने 'विहित-कार्य' को पूरा करने के लिए दृढ-निश्चय है। एक बार गोखले ने उनसे पूछा कि किसलिए उनकी कभी न छूटने वाली चमक के पीछे एक सतत उदासी छिपी है, " क्या वह इस कारण है कि वे "मौत के इतने पास आ गई थीं कि उसकी छाया अभी भी उनसे चिपकी है" सरोजिनी ने उत्तर दिया था, " नहीं मैं जीवन के इतने पास आ गई हूँ कि उसकी ज्वालाओं ने मुझे जला दिया है।" किन्तु मानवीय यथार्थ का वह विशद् चित्रण यहाँ नहीं है जो टी0 एस0 इलियट इतनी सरलता से खींचते हैं। सरोजिनी के गीत की उड़ाने,चाहे जिस कारण हों, हमेशा जीवन में कभी-भी बिलकुल यथार्थ नहीं है, यद्यपि जीवन की अनेक कठिनाइयों को जीतने की उनकी स्वय की इच्छा काफी सच्ची है।[3]

---

[1] इडियन राइटिंग्ज इन इगलिश पे0175

सरोजिनी नायडू, पद्मिनी सेन गुप्ता पेज 90,

[3] सरोजिनी नायडू, पद्मिनी सेन गुप्ता पेज 90,

'पद्य पर आसीन बुद्ध के प्रति' कविता इसी पुस्तक में से 'दि आक्सफोर्ड बुक आफ इग्लिश मिस्टिक वर्स' में ली गई थी, सरोजिनी को महानतम अग्रेजी कवियों की सूची में समाविष्ट करते हुए। युवा भारतीय कवयित्री को दूसरा आदर तब मिला जब 'दि माडर्न न्यूज' ने उपरोक्त कविता पुनर्मुद्रित की। 'दि गोल्डन थ्रैशोल्ड' की कविताओं को भी एक साथ 'नीम में नाचती हुई रूमानी जुगनु' कहकर विसर्जित नहीं कर दिया गया। उस समय के महान् कवि भी इस विचित्र स्वप्नदर्शी भारतीय कन्या के पद्यों की प्रशसा करने में हिचकिचाते नहीं थे। एक समालोचक ने कहा था, "चित्र पूर्व के हैं, यह सच है, किन्तु उनमें कुछ मूल रूप से मानवीय है, इससे यह सिद्ध होता-सा लगता है कि उत्तम कविताएँ न पूर्व की होती हैं न पश्चिम की।"

वह दुनिया जीवन के अनावृत्त यथार्थो की अपेक्षा रोमास की थी, यद्यपि उन्होंने कई दुखान्त रीति-रिवाजों और घटनाओं को अपना वर्ण्य-विषय बनाया, फिर भी उनके गीतों में हमेशा कुछ अयथार्थ रहता था। जे0बी0 यीट्स उन्हें 'पूर्ण रूमानी कहते थे। एडवर्ड टामस ने कहा था, " उनमें उनके गुण पूरी-पूरी मात्रा में है" और जब 1912 में 'दि बर्ड आफ टाईम' का प्रकाशन हुआ तब उन्होंने कहा कि सरोजिनी ने "असाधारण बाह्य छटा और आन्तरिक धवलता प्राप्त की है।" एक दूसरे समीक्षक ने कहा, "वे तारों के समान स्मरणीय शब्द पृष्ठ पर बिखेर देती हैं, फिर भी यह जानती हैं कि किस प्रकार कविता की समाप्ति के लिए सौन्दर्य बचाकर रखा जाय वे भारतीय एलिजावेथ बेंरिट ब्राऊनिग हैं।"[1]

बच्चे को भारतीय सूरज और चाद के नीचे रहना चाहिए। ऐसों के लिए सब कुछ स्पष्ट है। सरोजिनी किसी भी अवस्था में गूढ होने का प्रयत्न नहीं करतीं, और इसीलिए वे उस जार्जियन सम्प्रदाय में कीी जम नहीं सकीं जिसने अपने लेखन-स्वातत्रय में सभी प्रकार की तुक और लय को, यहाँ तक कि स्पष्ट अर्थचित्रों को भी, हौआ समझ लिया। जार्जिया लोग, जिन्होंने 1911-12 में अपने नये काव्य-सम्प्रदाय का आरम्भ किया, पुनर्जागरण या रूमानी युग के समान एक दूसरा प्रसिद्ध युग स्थापित करना चाहते थे। उनकी कविता काव्य तथा भाषा के विकास के

[1] इडियन राइटिंग्ज इन इग्लिश पे0176

लिए एक धरोहर थी। वह ताजगी देने वाली थी और अभी भी ताजगी देती है एक ऐसी दुनिया को जो कृतिम, कुरूप, रोमासविहीन और घोर यथार्थवादी है। एक अंग्रेज समालोचक उन्हें 'साड़ी में लिपटे हुए आधुनिक अर्नाल्ड' कहकर ही छोड़ देते हैं, जिस पर एक भारतीय समालोचक पूछता है," क्या फ्राक या स्कर्ट पहने हुए मैथ्यू अर्नाल्ड कुछ कम असगत है ?"

यीट्स उदाहरण के लिए, बहुत कुछ प्रतीकवादी थे और अंग्रेजी लेखकों पर अपना प्रबल प्रभाव डालने वाले फ्रासीसी प्रतीकवादियों की कृतियों का अनुसरण करते थे। किन्तु प्रतीकवाद के साथ-साथ विक्टोरियन कालोत्तर अवनति भी आई और सरोजिनी ने कभी भी जान-बूझकर इन विचार-पद्धतियों का अनुसरण नहीं किया और न ही लेखन-स्वातत्रययुक्त जार्जियन का या अन्तत एक आशाविहीन, यथार्थवादी, निरपेक्ष, आत्मसमर्पण की अवस्था में इस समय की अराजक त्रासदियों पर लिखने वाले आधुनिक सम्प्रदाय की नग्न वास्तविकता का।[1]

सरोजिनी नायडू के पास अपने काम के लिए प्राच्य आख्यानों और पौराणिक गाथाओं का एक समृद्ध क्षेत्र था, किन्तु उन्होंने कभी भी वर्णनात्मक पद्य लिखने की कोशिश नहीं की। उन्होंने अपने पाठकों को प्रसन्न और मुग्ध करने के लिए गीतों में अपनी स्वय की अनुपम पद्धति से ही भारत को प्रस्तुत किया उनके बारम्बार कविता-पाठ अक्सर उनके श्रोताओं को हर्षोन्मत्त कर देते थे, विशेष रूप से लोकगीतों पर आधारित उनके लोकप्रिय गीत, जैसे कि डोली ढोले वाले कहार।

कभी-कभी हम सुनते हैं आम्र या नारिकेल-कुजों के बीच स्थित गाँव की बस्ती में बजाये जाते हुए ढोल की ढम-ढम, या कि मृदगम् और तबले की अधिक कलापूर्ण थाप। मछुओं को अपने-अपने गाँवों में जगाया जा रहा है और समुद्र में जाने के लिए कहा जा रहा है। वे शायद किसी भोज में या विवाह में लगे हुए थे, और ढोल की ढम-ढम उनके जागरण के साथ स्पन्दित है उनकी अक्सर दुहराई जाने वाली उदासी के बावजूद बसत हमेशा ही विद्यमान है साथ ही फूल, रग, बसन्ती गन्ध या अभी-अभी बरसी हुई धरती। वे जब 'स्वय के सौन्दर्य की प्रशसा में शाहजादी जेबुन्निसा के गीत' गाती हैं, तब उनकी बिम्बावली भारत या फारस के अनुरूप है।

---

[1] दि गोल्डेन ट्रेजरी आफ इण्डो-इग्लियन पोयट्री ले0 वी0के0 गोकाक पे022

उमर खैयाम व उनके बिम्बों ने सरोजिनी पर प्रभाव डाला था, पर वे फारसी और उर्दू की विद्वान थीं और बार-बार इस्लामी दुनिया के बिम्ब प्रयुक्त करती हैं।[1]

किन्तु फारसी या उर्दू या हिन्दी के कवियों के समान एक गभीर दर्शन निर्मित करने की अपेक्षा सरोजिनी ने अपने विख्यात काव्यों-स्त्रोतों के खजाने के समृद्ध रूपकों और उपमाओं से ही अपने को सन्तुष्ट रखा। लैली के प्रति लिखी गई उनकी सुन्दर पक्तियाँ चन्द्रमा की तुलना वर्ण-चिन्ह से करती है तुक और लय के लिए सरोजिनी की क्षमता प्रचुर है, किन्तु वे निश्चय ही दोनों पर पूर्ण अधिकार रखती हैं। उनके छद अनेक हैं और उनकी छन्द रचना में दोष कम ही है। वे 'आइआम्बिक' चरणों के बीच 'अनापाइस्टिक' चरण रखना पसन्द करती हैं, और अपनी मधुर लय में वे शायद ही कभी चूकती हों। यदि केवल एक ही उदाहरण लें तो, यह देखिये

पुराने सम्प्रदाय के 'आत्मा', 'आत्मिक', 'सूक्ष्म-गहनता', या 'मत्युविहीन' जैसे अनावश्यक परिचित शब्दों की निदा की गई और हमें बताया गया कि ये कवि एक 'निजी पार्टी का मजा लेते हैं' और आधुनिक पद्य को इस 'लिटपिटी चीज' से उन्मुक्त रहना चाहिए इत्यादि। सरोजिनी का युग वह था जब उन्होंने यह महसूस किया कि पूर्व की छवि पर प्रकाश केंद्रित करना चाहिए। पुन हमें बताया गया कि "कविता अतरायमान भावावेग का अतरायमान स्फुरण नहीं है, किन्तु परिमार्जित अर्थपूर्णता में उत्पन्न सतुलित तनाव की अवस्था के अन्तर्गत एक मृदुल लयात्मक रचना है, कविता के लिए रमणीय विशेषणों की फड़फडाहट उसी प्रकार है जिस प्रकार मौजें इक के लिए भक्षक तेजाब, उन्मत्त त्याग से भाषा की जीवनी-शक्ति और लय का शोषण नहीं किया जा सकता अपितु उसका प्रयोग सही ढग से, उदात्ततापूर्वक और किसी उददेश्य की भावना से किया जाना चाहिए।"[2]

किन्तु जीवित लोग मृतकों को आदेश नहीं दे सकते और वास्तविकता तो यह है कि प्राचीन काव्य इन तथाकथित दोषों से ही उल्लसित था। प्राच्य कविता और ग्रीक कविता भी उपमाओं, रूपकों और विशेषणों से भरी हुई है।

कवियों के लिए तानाशाहीपूर्ण 'जरूरतों' के बाद, छह पुराने कवियों की सीधी आलोचना सरणीबद्ध की गई। श्री अरविन्द 'गौड़ी' पर चढ़े हुए रहस्यवादी हैं, सरोजिनी

---

[1] सरोजिनी नायडू ले0 पद्मिनी सेन गुप्ता पे0 93
पी0लाल द्वारा सम्पादित।

नायडू की 'जुगनुए' अति प्रसिद्ध है, आर0 सी0 दत्त के 'हेक्सामीटर' स्वीकारे और प्रतिष्ठित हुए, क्योंकि वे 'एवरीमेन्स साईबेरी एडीशन' में प्रकाशित हुए थे। किन्तु उनकी शैली अर्थपूर्णता से विहीन है और 'उलझी तथा ऊटपटाग है। इन सब कवियों का साधारणीकरण करते हुए हम यह सीखते हैं कि उनका उद्देश्य 'भारत में सफलतापूर्वक यूरोप को पुनरूत्पादित' करना था, इत्यादि। किन्तु 'आधुनिकों' के ऊपर भी अनेक दोष आरोपित किए जा सकते हैं यदि मृतक जीवित हो सकते और उन्हें 'तुलना और विरोधाभास' की अनुमति दी जा सकती। वे पूछेंगे, नई कविता है किसलिए? यह क्यों इतनी गूढ और अश्लील तक है? उनसे कहा जायेगा कि गूढता में शक्ति है और प्रत्येक शब्द में सत्य व अन्तरगता है। साथ ही, आधुनिक कवि अपनी कविताओं में अपना व्यक्तित्व और अपने युग की समस्याए रखते हैं। वे "काव्य और भाषा के आगामी विकास को प्रभावित करते हैं।" वे अराजग भय, अनिश्चितता और असुरक्षा के घोर यथार्थवादी युग में रहते हैं। 'माडर्न' इडियन पोएट्री इन इग्लिश' में विश्लेषित छह इडो-एग्लियन कवि पूर्ण रूप से भिन्न समय में रहते थे और हम उन्हें उनकी कविताओं के लिए धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकते जिन्होंने भारत पर एक स्थायी चिन्ह छोड़ दिया है।

सरोजिनी की सभी उपमाएँ एक सपनों का ससार की हैं-जो प्राय उदास है। अतीत और वर्तमान की अपनी आरम्भिक कविताओं में से एक में सरोजिनी अतीत की तुलना उस पहाडी गुफा से करती है जहाँ तपस्वी-स्मृतियाँ रहती है। उनके अतीत पर नजर डालने से हमें शीशमहल ही ज्यादा दिखाई देता है तपस्वी गुफा की अपेक्षा, क्योंकि जब उन्होंने यह पद्य लिखा तब वे लड़की ही थीं। वर्तमान एक आत्मा है जो अस्पष्ट सघन आशा और सशय की वेदना में खड़ी है, और भविष्य 'एक विचित्र भाग्य वाली वधु' के समान है। इसी प्रकार जब वि किशोरी ही थीं तभी वे मृत सपनों के विषय में गाती है- प्यारे सपनों को जला देना चाहिए, क्योंकि वे मर चुके हैं। जब वे पद्य लिखती हैं तब वे ऊबी हुई भी हैं। वे इस ससार से भागना चाहती हैं, किन्तु ससार का युद्ध' अपरिहार्य है अपने 'भीड़ के सघर्ष' के साथ। दु खों और मरे हुए सपनों के ये सारे सकेत हमें यह समझाते हैं कि सरोजिनी नायडू का दोहरा

व्यक्तित्व था। एक, ससार के आनदमय उपभोग का, क्योंकि वे खुशदिल थीं और कम-से-कम बाहरी रूप में जिन्दगी का पूरी तरह मजा लेती थीं, दूसरा, एक उदास रूमानी खोज का कुछ ऐसी चीज के लिए जो शायद वे कीर्ति नहीं पा सकीं और जो अन्तर्मुखी काल्पनिक विचार या आदर्शवादी सपनों में घुल गई।

वे हमेशा ''गीत के दु ख से जीवन के दु ख को'' जीतने के लिए समर्थ रहीं। 'इन दि फॉरेस्ट' इस आरम्भिक कविता की ओर इगित करते हुए 1902 में 'इडियन सोशल रिफार्मर' ने कहा कि वह काव्य-सौंदर्य से भरी हुई थीं और ऐसा लगता है कि कम-से-कम तरू दत्त की एक उत्तराधिकारिणी मिल गई है और वह भी ऐसी ''जिसकी कविता मुरझाई हुई कली की अपेक्षा अधिक ऊँची उड़ान भर सकती है। इन पक्तियों में मडराती हुई करूणा उसकी ही हो सकती है जिस प्रकृति ने दिव्य शक्ति और दर्शन प्रदान किया है।'' जबकि ये शब्द कवि के गुणों को अतिरजित करते हैं फिर भी सरोजिनी की कविताओं में एक अद्‌भुत समाधि समान गुण है, एक रहस्यवादी परलोकत्व और अलौकिक गुण- किन्तु ये सतत नहीं है।[1]

'कब्र के रहस्यमय ज्ञान' की उनकी खोज में कोई भी दु ख या सघर्ष नहीं छोडे जाने हैं। ईश्वर उनकी प्रार्थना का उत्तर देते हैं और उन्हें 'समग्र भावनामय उल्लास और निराशा' में दीक्षित करेंगे। वे हर्ष और यश, प्रेम और दु ख का अनुभव करेंगी। किन्तु आत्मा का यह दोहरापन हमेशा सरोजिनी को वास्तविक रहस्यवादी बनने से पीछे खींच लेता है-वे सपनों के क्षेत्रों में उडाने भरती हैं, वे चाहे दिव्य हों या नहीं, और फिर जीवन में वापिस आ जाती है उसके मर्त्य दु खों और उल्लासों का अनुभव करती हुई। यही दोहरापन सरोजिनी को या तो हमेशा उनके अन्दर मानो जलती रहने वाली अलौकिक ज्ञान हेतु कामना या प्यास की आग के कारण को खोजने योग्य अति गभीर व्यक्तित्व प्रदान करता है।

'शाश्वत शाति को प्रणाम' में यह दोरापन बना हुआ है, डर, नफरत और 'कठोर भाग्य' एक तरफ है और दूसरी तरफ सरोजिनी सोन्माद कह रही है। उनमें रहस्यवादी अथवा लोक-प्रसिद्ध कवि की एक लक्ष्य साधना नहीं है लेकिन फिर भी वे अनेक वर्षो से जीवित हैं।

---

[1] सरोजिनी नायडू लें0 पद्‌मिनी सेन गुप्ता पे097-98

स्वय यह समझकर कि वे अपनी पुरानी शैली से बाहर काव्य के नये सम्प्रदाय में कदम नहीं रख सकती हैं या फिर उनकी काव्यदेवी ने उन्हें त्याग दिया और उन्हें प्रेरणाविहीन छोड़ दिया। आगे उनका रुकना इस कारण भी हो सकता है कि उनकी कविताएँ हमेशा किशोरीत्व लिये हुए थीं और अब करीब 40 वर्ष की उम्र में उन्होंने यह महसूस किया कि अब उन्हें इन गीतात्मक उद्‌गारों को छोड देना चाहिए, जैसा कि उन्होंने सचमुच किया। सरोजिनी यह मानती है कि गॉस ने "सबसे पहले उन्हें काव्य की सुनहरी देहरी का रास्ता बतलाया" और तरु के विषय में गॉस ने कहा था, " जब हमारे देश के साहित्य का इतिहास लिया जायेगा तब उसमें निश्चय ही गीत की इस भजनशील विदेशी कुसुम-कली के लिए समर्पित एक पृष्ठ रहेगा।"[1]

तरु और सरोजिनी दोनों सरल हैं, किन्तु तरु अधिक स्वाभाविक और साथ ही अधिक पक्व है, सरोजिनी पारम्परिक ओर अत्यधिक गानमयी है। तरु ने इस ससार को अपना व्यक्तिगत दु ख और आनन्द बतलाने का प्रयास नहीं किया जो कि सरोजिनी ने किया अधिक विषयात्मक कवि होने के बावजूद भी। 'दि केसुआरीना ट्री' और अपने पिता के प्रति लिखित कविता में तरु ने अपनी आन्तरिक भवनाओं को अवश्य व्यक्त किया है किन्तु फिर भी उन्होंने शायद ही कभी अपने छोटे उदास जीवन की पीड़ा और त्रासदी का उल्लेख किया है।

दोनों लेखिकाओं का प्रकृति-निरीक्षण अलग-अलग है। उदाहरण के लिए, तरु का वृक्ष-वर्णन सरोजिनी से बिलकुल विपरीत है जो हमेशा यह सोचती-सी लगती है, शायद गॉस की सलाह के कारण कि उनके द्वारा वर्णित सब-कुछ भारतीय ही होना चाहिए। तरु के लिए वृक्ष अपने-आप भारतीय है-वे वृक्ष जिन्हें वे चाहती हैं। सरोजिनी के लिए वृक्षों का वर्णन प्राच्य पृष्ठभूमि में ही होना चाहिए।

एक समालोचक, जिनसे मेरा मतैक्य नहीं है, कहते हैं कि "सरोजिनी के लिए प्रकृति वैसी ही है जैसी ,कि टेनिसन के लिए थी- मानवीय भावों के चित्रण की पृष्ठभूमि। " मानव स्वभाव को समझने या व्यक्त करने में सरोजिनी ने कभी भी

---

[1] सरोजिनी नायडू, पद्‌मिनी सेन गुप्ता पेज 99

उत्तमता नहीं प्राप्त की। ये हमेशा फूल की कलियों और पछियों के गाने और धार्मिक प्रतीकों की सपनों-जैसी अस्पष्टता से आवृत्त है। ससार के सुखों और सघर्षो के बीच जन्मे हुए व्यक्ति के बहुविध पहलुओं से युक्त जीवित मनुष्य के रूप में मानवीय जीव प्रतिष्ठित नहीं है। वे अलकृत विशेषणों और उपमाओं से आच्छादित बुदबुदायमान कल्पना-चित्र है। और फिर भी ये क्षण-स्थायी पद्य सन्तोषजनक, उन्मादक, रहस्यवादी और आदर्शवादी हैं।

सरोजनी नायडू का दर्शन उनकी भाषाओं में अधिक स्पष्ट है, जो कभी न भूली जाने वाली भाषण-कला की श्रेष्ठ कृतियाँ हैं और जिन्हें हममें से वे हमेशा याद करेंगे जिनकी उन्हें सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। यद्यपि उन पर प्राय यह दोषारोपण किया जाता था कि उनकी भाषा सुमधुर, अलकृत, प्रवाहमयी थी और श्रोताओं को उन्माद के स्वप्न-जगत् में खींच ले जाती थी, मुझे तो हमेशा यही प्रतीत हुआ कि वास्तव में उनके शब्दों में काफी सार था और साथ ही उन्होंने हमेशा एक आदर्श हमारे अनुकरण के लिए सामने रखा। हमारे पहुचने के लिए चन्द्रमा था, आकाश हमारी सीमा थी, और हमें काम करना था एक अच्छे या सयुक्त राष्ट्र के लिए और, आगे बढकर, एक सयुक्त ससार के लिए। 'एकता' यही साकेतिक शब्द भारत के लिए होना चाहिए। साथ ही अनेक सुधार भी किये जाने थे, बुराइयों से सघर्ष करना था आजादी जीतनी थी, शान्ति पुनर्स्थापित करनी थी और अन्तत सभी जातियों, धर्मों और सम्प्रदायों पर प्रेम और दया की वर्षा की जानी थी। मुझे याद है, सरोजिनी नायडू के किसी भी भाषण को सुनकर हम कभी भी यह समझे बिना नहीं लौटे कि हमारे इहलौकिक जीवन में मानों पर निकल आए हैं जो हमारे उत्साह और कठिन श्रम के साथ-साथ बढते जायेंगे। यही अतिम उनका जीवनोद्देश्य था-कठिन श्रम करना बिना आराम या अन्तराल के, मानवता के कल्याण के लिए। आशा और आभा एक नया ससार बनाना ही प्रत्येक स्त्री और पुरूष का कर्तव्य था।[1]

इस प्रकार यह निर्भय स्त्री शालीन अकेलेपन में जीवित रही, काम करती रही और स्वर्ग चली गई, आखिर तक अपने सनातन स्वप्नों के स्वप्न को पूरा करने की

---

[1] सरोजिनी नायडू, पद्मिनी सेन गुप्ता पेज 101,

कोशिश करते हुए। हमें रहना चाहिए "हिसा में नहीं, क्रोध में नहीं प्रतिशोध में नहीं, बल्कि पूर्व की सच्ची सन्तान के समान, साहस में धीर, अन्त तक सहिष्णु, हम बनावें आत्मा की महान् सेना, और जिस प्रकार हरिश्चन्द्र की आत्मा ने दुर्दशा पर दुर्दशा के बाद, अपने काम की परीक्षा पर परीक्षा के बाद विजय प्राप्त की, उसी प्रकार अपनी पीढी में हम ससार के सामने यह सिद्ध कर देंगे कि आत्मा स्थायी है, आत्मा अमर है, और हम भावी पीढियों के योग्य पूर्वज हैं क्योंकि हम सत्य के सच्चे कारिन्दे और सरक्षक हैं।

श्रीमती सरोजिनी नायडू की प्रमुख गजलें

प्रस्तुत है उनकी कुछ गजलें-

"अन्दलीबे शाकिस्ता पर"

शबे-तवीले गम गई, मुसर्रतो की लौ हुई

उफक चमक उठी है और नमूदे सुबह नौ हुई

रगो मे खून फिर गया, हयाते गर्म रौ हुई

नमूदे सुबहे नौ हुई

नमूदे सुबह नौ हुई, उम्मीद जलवागर हुई

मुसर्रतो के गुल खिले, नसीमे बा समर हुई

बहार आ गई है फिर खुशी प्याम्बर हुई

उम्मीद जलवागर हुई

उम्मीद जलवागर हुई, नई जमीं नया वतन

मगर शकिस्ता पर है तू ऐ अन्दलीबे नगमा जन

ऐ अन्दलीबे नगमा जन उरूस बन गया चमन

मगर शकिस्ता पर है तू

1-लम्बीरातं 2-क्षितिज 3-उदय 4-फल

"सती"

ऐ शमए जिन्दगानी आखिर लबे अजल ने
इक बार जल बुझी तू इस तरह तुझ को फूँका
मुमकिन नहीं कि रोशन फिर हो शरार तेरा
इस तीरा खाक दाँ मे क्योंकर गुजर हो मेरा
ऐ नख्ले-जिन्दगानी पाए वफा न तुझको
अफसोस बखो-बुन से पामाल करके छोड़ा
मुमकिन नहीं कि फिर तू सरसब्ज बाखर हो
जो नख्ल सूख जाए दुशवार है कि तर हो
ऐ वजह जिन्दगानी तल्खिए मर्ग ने यो
हमको किया दो पारा ज्यो लफ़िज हो शकिस्ता
फिल-अस्ल एक थे हम जब हो चुकी जुदाई
बजान हो के कालिब बाकी नहीं रहेगा

1-काल का गाल 2-जीवन-तरू 3-जड़ 4-फलना-फूलना 5-पेड़ 6-टूटा हुआ

"ऐ मेरे प्यारे वतन"

क्या सुनाऊँ हाले दिल क्योकर नवा परवाज हूँ
ठस सदाओ से भरी दुनिया मे बे आवाज हूँ
ऐ मिरे प्यारे वतन
इस मिरे टूटे हुए दिल का बना ले इक रबाब
फिर मुहब्बत के तराने हैं जहाँ में इन्टरखाब
ऐ मिरे प्यारे वतन
मैं तुझे क्या दूँ कि बेबस हूँ और नादार हूँ
क्या सहारा दूँ तुझे मजबूर हूँ नाचार हूँ
ऐ मिरे प्यारे वतन
जिन्दगी मेरी कमल का फूल बन जाती अगर
मैं तो कदमो पर तिरे सौ बार रखता अपना सर
ऐ मिरे प्यारे वतन

श्रीमती रामेश्वरी नेहरू की गजल जो सरोजिनी के स्वागत में लिखी थीं

इनके उर्दू भाषण तथा लेख दिल्ली से निकलने वाले उर्दू रिसाला 'अस्मत्' में प्रकाशित हुए थे। उर्दू कविता से इन्हें विशेष लगाव था। इन्होंने महिलाओं के कल्याण के लिए इलाहाबाद में एक सस्था स्थापित की। श्रीमती नेहरू ने सार्वजनिक कार्यो में बढचढ कर हिस्सा लिया तथा हिन्द–सोवियत सघ दिल्ली कौंसिल की अध्यक्ष बनीं थीं। लेखन से साहित्य में एक विशेष जगह बनाई थी। हिन्दी में नारी विषयक एक पत्रिका 'स्त्री दपर्ण' इलाहाबाद से आप काफी अर्से तक प्रकाशित करती रहीं। हिन्दी और उर्दू दोनों भाषाओं के प्रति उनका लगाव उल्लेखनीय है। प्रस्तुत है कि उनके द्वारा लिखा गया एक कसीदा जो उन्होंने भारत कोकिला सरोजिनी नायडू के स्वागत में लिखा था। हिन्दी–उर्दू के खूबसूरत योग से उनकी साहित्यिक प्रतिभा को आँका जा सकता है–)

''स्वागत सरोजिनी नायडू बुमकाम इलाहाबाद''

चमन मे आज यह कैसी बहार आई है

कली कली को हँसी बेकरार आई है

गुलो का रग भी शबनम निखार आई है

नसीमे सुबह जहाँ मे पुकार आई है

नसीब जाग उठे निकली आरजू दिल की।

कमल के फूल से सरोजिनी हुई है महफिल की।

प्रयाग राज मे आई है सरोजिनी देवी

खुशआमदीद का है शोर हर जगह है खुशी

है सच तो यह कि हमारी कहाँ यह किस्मत थी

जबाने हाल से कहती है यह महिला समिती

खुदा की शान है जाहिर जिधर को देखते हैं।

कभी हम उनको कभी अपने घर को देखते हैं।

''श्रीमती रामेश्वरी नेहरू की गज़ल''

जहाँ में नाम का उनके गुलगुला हर जा

जबाँ से हो नहीं सकती कुछ उनकी मदह-सना

है उनके इल्म का दुनिया मे हर जगह चर्चा

कलाम जिससे किया उसको कर लिया अपना

छहन से वक्ते सुखन उनके फूल झड़ते हैं

यह वो अदा है कि जिस पर हजारो मरते हैं।

हैं शायरी व फिसाहत मे जिस्मो जाने सुखन

फिदा है नगमए रगीं यह बुलबुले गुलशन

सियासत मे मर्दों से बढ के माहिरे-फन

बुलन्द कर दिया यो औरतो की पोजीशन को

यह काग्रेस के लिए सदर इन्तखाब हुई

थी पहले माह तो अब फखे-महताब हुई।

हम उन पे नाज जहाँ तक करे वह सब कम है

यह जात हिन्द मे एक नेमते मुजस्सम है

हमारे दिल की यही आरजू ए पैहम है

जे और ऐसे ही कुछ दम हों फिर तो क्या गम है

जे दर्द दुख है तो सब जल के खाक हो जाए

हमारा मुल्क मुसीबत से पाक हो जाए।

हदाए शुक्र से उनकी जबान कासिर है

जे हम पे उनका है एहसाँ वह सब पे जाहिर है

यह जान उनकी मददगार और नासिर है

यह अपने सिन्फ की मजूर उनकी खातिर है

कि इतनी दूर से वह आई और जहमत की

मगर है रज हमे यह कि कुछ न खिदमत की।

श्रीमती सरोजिनी नायडू की महत्वपूर्ण कवितायें

(1) *मैं तुमसे प्यार करती हू उस ममत्व से*
जिसका रूप अपरिवर्तनीय है।
रात के सितारों की तरह।
मेरा प्रेम कहीं अधिक सशक्त है मृत्यु से,
मेरा प्रेम उषा की प्रभा जैसा निर्मल हो।
मैं यह जानने को उत्सुक नहीं हू
कि तुम मुझसे प्रेम करते हो या नहीं,
मेरे लिए इतना काफी है कि तुम हो श्रेष्ठतम, प्रियतम, सर्वोत्तम
तुम्हे सौंपती हू अपने हृदय की निधिया।

(1894 प्रेम (लव) शीर्षक से)

(2) *मेरे जीवन के मेघहीन निर्मल प्रभात मे*
उदय हुआ है स्वर्णिम सूर्य विजय का।

(1903 में जयसूर्य के लिए)

"पालकी के कहारों का गीत"

(3) *धीमे, ओ धीमे उसे ले जाते हैं हम*
हमारे गीतो के समीरण मे फूल सी झूलती वह
धारा के फेन पर चिड़िया सी फिसलती वह
स्वप्न के ओठो पर स्मृति सी तैरती वह
मस्ती से, ओ मस्ती से उडते जाते हैं गाते हैं हम
डोरी मे पिरोई मोती सी उसे ले जाते हैं हम।
कोमलता से, ओ कोमलता से उसे ले जाते हैं हम
हमारे गीत के ओसकण मे तारिका सी झूलती वह
ज्वार की लहर पर शहतीर सी उछलती वह
वधू की आखो से अश्रुकण सी ढलती वह
धीमे, ओ धीमे उड़ते जाते हैं, गाते हैं हम
डोरी में पिरोई मोती से उसे ले जाते हैं हम

(ह0 सरोजिनी नायडू, 7 अगस्त, 1903)

(4) *रूप के आकर्षण मे तल्लीन मुग्ध नयन,*
दिव्य अभीप्सा से उच्छवसित
ओह, कैसे अग्निशिखा से प्रज्ज्वलित कामोद्दीपक वक्ष
डूबे हैं सुरभि मे अतल नरगिसी अन्तरिक्ष की,
चमक रहा जो जगमग ज्योति-प्रपात मे चतुर्दिक उनके,
कैसी उन्मादक, उन्मेषक है उत्कट-सगीत की लहरी
कि वेध रही है तारागण को
वाछाओ की चीत्कार सी,
हूरो जैसी सुन्दर नर्तकिया
कामविद्ध कर देतीं रात्रि के पिपासु प्रहरों को।

(द गोल्डेन थ्रैशोल्ड (स्वर्णिम देहरी) 1905)

(5) *"तथापि, मुझे जाना होगा वहा जहा*
अशात विश्व करता है सकेत
और नियति के नगाड़ो की व्याकुल ध्वनिया बुलाती हैं मुझे,
तुम्हारे श्वेत गुम्बद की जगमगाती नींद से परे,
तुम्हारे वन-प्राचीरो के स्वप्नो से दूर,
घमासान भीड़ के सघर्ष और कोलाहल के बीच
जड़ता और अन्याय के विरुद्ध मधुरिमामय प्रेम के युद्ध मे ।"

(नीलाम्बुज से)

(6) *"जागो! हे माँ जागो।*
जीवित हो फिर से जाग उठो अवसाद त्याग अब,
और दूर-ग्रहो से सगमित भार्या सी
जनो नया गौरव अपनी अकाल कोख से।
भविष्य तुम्हारा तुम्हें पुकारता लय-सकुल स्वर मे
चन्द्र-सम गौरव, गरिमा, विस्तृत विजयो की ओर,
जागो! हे सुप्त मा जागो! और मुकुट स्वीकार करो-
तुम! प्रभुत्वमय अतीत की थीं साम्राज्ञी जो कभी।"

(भारत प्रशस्ति गीत से)

(7) *"हे शूरमना,*
हमारे युग के अन्तिम आशा-पुरुष,
मोहताज कहा तुम
हमारी प्रेम-प्रशसा के?
देखो,
उन शोकाकुल कोटि-कोटि जनों को
कर रहे जो परिक्रमा तुम्हारी चिता की
कर लेने दो प्रज्ज्वलित उन्हे
अपनी आत्माओ की उस होमाग्नि से
जल उठी हैं जो तुम्हारे हाथ से गिरी
बहादुर मशाल से
कि जिससे हो सके
हमारे वज्राहत राष्ट्र का
पोषण-सरक्षण,
और रहे उन्नत
उसकी एकता का मन्दिर
उस नित्योपासना मे
सिखाई है जो तुमने।"

(शीर्षक से (स्मृति में) 1915)

(8) *"जब द्वेष का आतक और हिसक विस्फोट जाएगे चुक*
और जीवन नव रूप धरेगा नए शाति की निहाई पर,
तुम्हारा प्रेम प्रकट करेगा धन्यवाद स्मृतिया मे -
उन सगियो की जो लडे तुम्हारी निर्भीक पाँतों में,
और तुम सम्मानित करोगे शौर्य को अमृत-पुत्रो के
उस समय रखना याद रक्त मेरे बलिदानी बेटों का।"

(द गिफ्ट ऑफ इण्डिया, कविता से)

(11) *पुरोहितो, धर्मगुरुओं के लिए*
उनके सिद्धान्तो का आनन्द,
राजाओ और सेनानियो के लिए
वीरकर्मी का यशोगान,
शान्ति, विजित के लिए,
और आशा बलवान हेतु–
मेरे लिए तो, मेरे स्वामी।
उल्लास ही हो गीत का।'

(दि बर्ड ऑफ टाइम्स से, 1912)

(12) *जहाँ बुलाती है हवा की आवाज हमारे घूमते पैरो को*
गूँजते जगल और गूँजती सड़क से होकर
लेकर वीणाएँ अपने हाथों मे हमेशा गाते हम घूमते,
सब लोग हैं हमारे सम्बन्धी सारी दुनिया हमारी ही अपनी है।

(दि गोल्डन थ्रैशोल्ड से)

(13) *अल्लाह हो अकबर। अल्लाह हो अकबर।*
मस्जिद औ' मीनार से मुल्ला बुला रहे हैं,
करो इबादत अपनी, ऐ इस्लाम के चुनिन्दो,
फैल रही तेजी से सूर्यास्त की छायाएँ,
अल्लाह ओ अकबर। अल्लाह ओ अकबर।
एक मेरिया। एव मेरिया।
श्रद्धानत पादरी हैं वेदी पर गा रहे,
कुमारी के बेटे को पूजने वालो
करो याचनाएँ, सान्ध्यप्रार्थना की बज रहीं घण्टियाँ,
एक मेरिया। एव मेरिया।

अहुर मज्द! अहुर मज्द!

कैसा प्रवाहित है गुरुगभीर अवेस्ता!

ज्वाला और प्रकाश को सिर नवाने वालो

सिर झुकाओ जहाँ कि जल रहीं अमर शिखाएँ,

अहुर मज्द! अहुर मज्द

नारायण! नारायण!

सुनो दिव्य सम्बोधन अनादि-अनन्त!

उठाओ हाथ जोड़ो तुम ब्रह्म की सन्तान!

उठाओ स्वर ऊँचे तुम भक्ति से भरे,

नारायण! नारायण!

(दि बर्ड ऑफ टाइम, से)

(14) जुलाहो, बड़े सबेरे बुनने वालो,

क्यो बुनते हो कपड़ा चमकीला?

हैल्क्यान-पख की हवा-सा नीला

बुनते नवजात शिशु का परिधान।

जुलाहो, सन्ध्या को बुनने वालो,

क्यो बुनते हो कपड़ा भड़कीला?

मोर-पख-सा हरा बैंगनी

बुनते रानी की शादी का घूँघट।

जुलाहो, शाति से बुनने वालो,

क्या बुन रहे हिम-चन्द्रिका मे?

श्वेत पख-सा, श्वेत मेघ-सा

हैं कफन बुनते मृतक का।

(दि गोल्डन थ्रैशोल्ड)

(15) *'मत लौटाओ मुझे मेरा बीता हुआ उल्लास,*
निषिद्ध आशा और अप्राप्त सपना
नष्ट उद्देश्य और टूटा अभिमान
स्वीकृत करो एक घण्टे की स्वल्प दया मे
दान आँसुओ का, बचाने मेरी दुखी आत्मा को।
लेना चाहो तो ले लो मेरा मास खिलाने अपने कुत्तो को,
चाहो तो ले लो मेरा खून सींचने अपनी बगिया के पौधो को,
कर दो मेरे दिल को राख और सपनो को धूल -
क्या मैं तुम्हारी नहीं हूँ, प्रिय, चाहने या मारने के लिए?
गला घोट दो मेरी आत्मा का औ' झोक दो उसे आग मे।
मेरा सच्चा प्रेम क्यो लडखड़ाए या डरे या करे विद्रोह,
प्रिय, मैं तुम्हारी हूँ फूल-सी रहने के लिए तुम्हारे हृदय मे
या जलने तुम्हारे लिए तुम्हारी ही ज्वाला मे काई समान।'

(दि ब्रोकेन विग)

(16) *प्रिय, तुम होगे जैसा कि लोग कहते हैं,*
केवल एक जाने वाली चमक
मिट्टी के दिये की बुझती लौ की-
मुझे परवाह नहीं क्योकि तुम उजागर कर देते हो मेरा सारा अधेरा
अमर आभाओ से दिन की।
जैसा कि सब लोग समझते हैं, प्रियतम, तुम होगे,
केवल एक साधारण पख
हवाओ द्वारा समुद्र से कभी उछाले गए-
मुझे परवाह नहीं, क्योकि तुम मुझे सुनवाते हो
अनन्त की सूक्ष्म मर्मर-ध्वनि।
और यद्यपि तुम हो, मर्त्य जाति के मानव समान,
केवल एक अभागी वस्तु
जिसे मौत मार दे या भाग्य मिटा दे-
मुझे परवाह नहीं क्योकि मेरे हृदय को तुम देते हो
हू-ब-हू दर्शन ईश के निवास का।'

(दि ब्रोकेन विग)

(17) *'क्या तुम माप सकते हो मेरे आँसुओ के दु ख की गहराई*
या नाप सकते हो मेरी पहरेदारी की व्यथा?
या वह गर्व जो मेरे हृदय की निराशा को रोमाचित करे
और वह आशा जो प्रार्थना की वेदना को दुलारती है?
और वह सुदूर, उदास, महिमामय दृश्य जो मैं देखती हूँ
विजय की फटी रक्त-ध्वजाओ का?'

(दि ब्रोकेन विग)

(18) *जब मैं अपने गालो से घूँघट उठाती हूँ*
तब गुलाब ईर्ष्या से पीले पड़ जाते हैं

(पर्दानशीन)

(19) *समय के पक्षी के पास थोडा-सा समय है*
उड़ने को-और लो! पक्षी अपने पखों पर है

(द बर्ड ऑफ टाइम)

(20) *देखो! मैं अपनी नियति के बसन्त से मिलने को ऊपर उठती हूँ*
और अपने टूटे पखो के सहारे तारो की ऊँचाई पर चढती हूँ।

(दि ब्रोकेन विग, 1917)

(21) *मैं तुम्हारा हूँ, जैसे तुम मेरी, एक अश*
मुझे अपने हृदय के आइने मे देखो

(राधा के गीत)

(22) *चलो हम अपनी सब चिन्ताएँ फेक दे*
इमली, मौलश्री और नीम की उलझी डालो के नीचे
अकेले लेटकर सपने देखे।

(दि ब्रोकेन विग)

(23) *प्यारी सर्वशक्तिमान माँ, ओ धरती।*

तेरी भरी छाती हमे खिलाती है

तेरे गर्भ से हमारी समृद्धि जनमती है।

(दि गोल्डेन थ्रेशोल्ड)

(24) *तुम नदी की तरह द्रुत और गिरती ओस की तरह नीरव*

बिजली जैसे व्यापक और सूर्य के समान सुन्दर हो।

(सरोजिनी नायडू, व स्कप्टूड फ्लूट)

(25) *ओ भाग्य, दर्द के पीसनेवाले पत्थरो के बीच*

तूने मेरा जीवन टूटे नाज की तरह पीस दिया है

मैं इसे अपने आँसुओ से गीलाकर गूँधूँगी, बनाऊँगी

आशा की रोटी जो खिला सकूँ, सुख दे सकूँ,

उन करोड़ो दिलो को जिनके पास खेती नहीं है

केवल दुख की कडवी जडी बूटियाँ हैं।

(दि ब्रोकेन विग)

(26) *बच्चो, मेरे बच्चो, सुबह हो रही है,*
सुबह के मजीरे तुम्हे जगा रहे हैं,
लम्बी रात शेष हुई, हमारे श्रम का अन्त हुआ
जिन खेतो की हमने सेवा और रक्षा की
उनकी खेती कटने को तैयार हैं
जब तुम सो रहे थे हमने बुवाई की थी
हमारे हाथ कमजोर थे पर मेल मे प्यार था
अँधेरो में हम तुम्हारे वैभव की सुबह से स्वप्न देखते रहे
कल की खुशी के लिए चुपचाप सघर्ष करते रहे
अपने दुख के कुँओ से तुम्हारे बीजो को सींचते रहे
जागने पर तुम्हारी खुशी के लिए मेहनत करते रहे
हमारी निगरानी पूरी हुई, लो। सुबह की रोशनी आ रही है।

(सरोजिनी नायडू, एट डाउन)

****

तृतीय अध्याय

श्रीमती सरोजिनी नायडू के सामाजिक विचार

सरोजिनी नायडू एक महान कवियित्री थीं उन्होंने कविताए, गजलें, नाटक एव उपन्यास लिखे, किन्तु वह मूलत अग्रेजी कवियित्री के रूप में ही देश एव विदेश में विख्यात हुयी।

जिस प्रकार एक लेखक के विचार उसकी लेखन शैली एव रचनाओं में, उपन्यासकार के विचार उसकी उपन्यासों, कहानीकार के विचार उसकी कहानियों में तथा कवि के विचार उसकी कविताओं एव काव्य कला के माध्यम से प्रस्फुटित होते हैं उसी तरह सरोजिनी की कविताओं में भी उनके विचार समय-समय पर जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में प्रकट होते रहे हैं, प्राकृतिक सौंदर्य से लेकर जीवन में प्रेम और देश के सूरमाओं से लेकर देशभक्ति, बच्चों एव अनेकों क्षेत्रों से सम्बन्धित अनेक कवितायें लिखी।

सामाजिक जीवन में उन्होंने बढ चढ कर हिस्सा लिया इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि यह विचार उन्हें उत्तराधिकार में अपने पूर्वजों से मिला चूकि उनके माता-पिता समाज सुधार के विभिन्न क्षेत्रों, बाल विवाह, महिला शिक्षा, विधवा विवाह, जाति-पात, भेदभाव, हिन्दू-मुस्लिम एकता के सम्बन्ध थे। बराबर जोर देते रहते एव चर्चा परिचर्चा करते रहते हैं। इसका प्रभाव भी देवी सरोजिनी के बालमन पर पडा और वह भी समाज सुधार के कार्यक्रमों में बढ-चढकर हिस्सा लेने लगी। एक समाज सुधार सेवा में अपना अधिक से अधिक समय देने लगी। बचपन से लेकर 13-14 वर्षो तक ये मुख्यत अग्रेजी कवियित्री थी, कविता करके एव समाज सेवा में लगी रहती थी। समाज सुधार के सम्बन्ध में इन्होंने भारत वर्ष से सभी महत्वपूर्ण नगरों का भ्रमण किया और व्याख्यानों तथा लेखों के माध्यम से समाज में व्याप्त कुरीतियों को मिटाने की आवश्यकताओं पर जोर देती रहती थीं।

चूकि सरोजिनी नायडू एक महिला थी तथा भारत की उन महान महिलाओं में से एक थीं जिन्होंने अपने महिला होने पर सदा गर्व किया है उनका विश्वास था कि किसी भी देश की उन्नति तभी हो सकती है जब उस देश की महिलायें पढी लिखी हों। जीवन में पुरुषों के समान महत्वपूर्ण स्थान की अधिकारी हैं। उन्हें पूरा सम्मान

और समानता मिलें सरोजिनी प्रारम्भ से ही सुधारवादी थीं, वह महिलाओं की समस्याओं में रूचि लेती थीं। महिला होने के नाते उन्होंने महिलाओं की स्थिति पर चिन्ता व्यक्त की तथा उनकी समानता के अधिकारों की जमकर वकालत की। स्त्रियों की दुर्दशा पर वह चिन्तित रहती थीं एव उन पर होने वाले अत्याचारों के प्रति हमेशा आक्रोशित रहती थीं। वह शिक्षा, पर विशेष जोर देतीं, स्वतत्रता आन्दोलन में बढ चढकर हिस्सा लेने की अपील करती रहती, स्त्रियों के बारे में वह पुरुषों के बीच भी अपने भाषणों में जोरदार तर्कों के साथ मानवमन को हिलाकर रख देती थीं। वह महिलाओं की उन्नति और उनके सर्वांगीण विकास की प्रबल पक्षधर थीं।

सन् 1902 में सरोजिनी केवल 23 वर्ष की थीं तब उन्होंने बाम्बे की एक विशाल जनसभा और अनेक महिला सभाओं में भाषण दिये, इन भाषणों में उन्होंने बहुत से विषयों को उठाया, जिनमें महिलाओं की कमजोर सामाजिक स्थिति, बाल विवाह, विधवा विवाह, पुरुषों की एक से अधिक शादी और नई शिक्षा महत्वपूर्ण थे।[1] उन्होंने बहुत ही भावुकतापूर्ण ढग से महिलाओं से कहा कि वे घरों से बाहर आयें, काम में जुट जायें, व्यवसाय आदि में भाग लें, परम्परा की जजीरों को तोड़ डालें, अपने चारों तरफ फैली गरीबी को देखें, अस्पताल में पड़े रोगियों की सेवा करें, बच्चों की शिक्षा की तरफ ध्यान दें, अनाथों और विकलागों की सहायता करें, यह भाषण सरोजिनी को बहुत चोट करने वाला था साथ मानवता और स्नेह से भरा हुआ था। सरोजिनी में अपनी बात कहने की अपार शक्ति थी कि सुनने वाला उनकी बात बहुत ध्यान से सुनता था उस पर विचार करता, नारी स्वतत्रता को आगे बढाने में उनकी भाषण कला का बहुत सहयोग दिया, चूकि वह समय ऐसा था जब नारी को घर से निकलने की मनाही थी। सिर्फ शादी व्याह या चाय पार्टियों में ही स्त्रिया अपने घरों से निकलकर सार्वजनिक स्थानों पर जा सकती थीं, महिला को घरों से न निकलने के कारण उनकी शिक्षा-दीक्षा की कोई आवश्यकता नहीं थी। वह कुलीन चन्द परिवार जो अपने घरों में अध्यापकों द्वारा भाषा आदि का अध्ययन ही अपने बच्चियों को करा पाते थे किन्तु ज्यादातर महिलायें शिक्षा से कोसों दूर थीं एव अशिक्षा से घिरी थीं,

---

[1] सरोजिनी नायडू, ले० ताराअली बेग पे०43

सरोजिनी नायडू कार्यकर्ता के बीच

जिसके कारण उन पर बराबर जुल्म और अत्याचार होते रहते थे और वह चुपचाप सहन करती रहती इसीलिए नारी को पीडा दायिनी कहा गया, अशिक्षा के कारण लड़कियों की बचपन में शादी हो जाती थी पढने एव खेलने की उम्र में लड़कियों की शादी से उन पर बुरा असर पड़ता था, एक पुरुष कई शादिया कर सकता था किन्तु एक विधवा पुर्नविवाह नहीं कर सकती थी। उसे घोर पाप माना जाता था। चूंकि महिलाओं की स्थिति उस समय में दयनीय थी।

सरोजिनी नायडू से पहले भी कई महिलाओं जैसे रमाबाई, डॉ0 श्रीमती मन्तुलक्ष्मी रेड्डी, रमाबाई रनाडे सहित आदि महिलाओं ने सावित्री फुले से लेकर तमाम महत्वपूर्ण महिलाओं ने अपने-अपने क्षेत्रों में नारी की दशा को सुधारने के लिए काम कर रही थीं, सरोजिनी की विशेषता यह थी कि वे अपने श्रोताओं के हृदय को स्पर्श करने की क्षमता रखती थीं। सुनने वाले उनकी बात सुनकर प्रभाव ग्रहण करते, मन्त्रमुग्ध हो जाते, दूसरों को काम करने की प्रेरणा देने की शक्ति उनके अन्दर थी। उन्होंने महिलाओ से सम्बन्धित सामाजिक बुराइयों का बहुत स्पष्टता और विस्तार से वर्णन किया और विरोध भी। उनके इस कार्य में एक ऐसे नेतृत्व को जन्म दिया जिससे महिला स्वतत्रता आन्दोलन आगे बढ़ा। उस आन्दोलन ने आगे चलकर अखिल भारतीय स्वरूप धारण कर लिया।[1]

1906 में कलकत्ता में भारतीय सामाजिक सम्मेलन के अवसर पर महिलाओं की शिक्षा से सम्बन्धित एक प्रस्ताव रखा गया। सरोजिनी नायडू ने इस प्रस्ताव में सशोधन करने के लिए कहा। उन्होंने कहा "हिन्दू महिलाओं की अपेक्षा भारतीय महिला शब्द प्रयोग करना चाहिए" वे भारतीय महिलाओं के बीच से भेदभाव दूर करना चाहती थीं, महिलाओं की समस्याओं के बीच में जाति-पाति एव धर्म तथा मत को नहीं लाना चाहती थीं।[2]

महिला शिक्षा के सम्बन्ध में उन्होंने कहा "ससार में भारत एक ऐसा देश है जो प्रथम शताब्दी के आरम्भ में एक महान सभ्यता के रूप में विकसित था, जिसने ससार की प्रगति में महान योगदान दिया है। यहाँ विदुषी और प्रतिभा सम्पन्न

---

[1] सरोजिनी नायडू ले0 माजदा असद पे052
[2] सरोजिनी नायडू, ले0 ताराअली बेग पे047

महिलाओं के उदाहरण मिलते हैं। आज महिलाओं की स्थिति खराब हो गई है। अब समय आ गया है कि इस दिशा में हम कोई ठोस कदम उठायें। फलदायक परिणाम प्राप्त करें।[1]

सरोजिनी ऐसा अनुभव करती थी कि राष्ट्रीय आदर्श को पाने के लिए आन्दोलन 'महिला प्रश्न' के चारों ओर केन्द्रित किया जाए। उन्हें इस बात पर खेद था कि महिला शिक्षा की अनिवार्यता को सर्वसम्मति से स्वीकृति तक नहीं मिली। वे इस बात से बहुत दुखी थी कि क्या किसी व्यक्ति को यह अधिकार है कि वह दूसरे को स्वच्छ वायु के सेवन के अधिकार से वचित कर दे। भारतीय नारी के मामले में पुरुषों ने यही किया है। यही कारण है कि आज भारतीय पुरुष की यह दुर्दशा हो गई है। उन्होंने पुरुषों को यह जिम्मेदारी सौंपी कि वे महिलाओं को उनके पुराने अधिकार लौटा दे। राष्ट्र की सच्ची निर्माता महिलाएँ है, पुरुष नहीं। महिलाओं के सक्रिय सहयोग के बिना प्रगति के समस्त प्रयास एकदम बेकार रहेंगे। सन् 1916 में सरोजिनी नायडू ने मुस्लिम महिला अधिकार की बात उठाई। वह लखनऊ में मुस्लिम लीग के सम्मेलन में भाग ले रही थीं। मुस्लिम लीग के सम्मेलन में उन्होंने कहा, 'मैं नई मुस्लिम पीढी को वफादार मित्र मानती हूँ। मुस्लिम महिलाओं के अधिकारों की समर्थक हूँ। मैं उनके अधिकारों के लिए मुस्लिम पुरुषों से लड़ी हूँ। इस्लाम ने तो बहुत पहले से ही महिलाओं को अधिकार दे दिये थे। आपने उन्हें इन अधिकारों से वचित कर रखा है।

उन्होंने हमेशा महिला शिक्षा पर बहुत बल दिया। महिला शिक्षा के सबध में उनका विचार था कि सकीर्ण मस्तिष्क वाले लोग कहते हैं कि शिक्षा महिलाओं को साहसिक बना देती हैं। अत यह निदनीय है। भारत को इस बात का गर्व है कि महिलाएँ पुरुषों की अपेक्षा अधिक साहसी और वीर रही हैं। किसी भी देश के उत्थान के लिए स्त्री–पुरुष के बीच सहयोग आवश्यक है। एक पहिये की गाड़ी ठीक से नहीं चल पाती, पर्दा प्रथा का यह मतलब नहीं कि मस्तिष्क एव आत्मा पर भी पर्दा डाल दिया जाये। रूढ़ियों को समाप्त कर देना चाहिए। भारत की आत्मा तभी मुक्त होगी जब नारी मुक्त होगी।

---

[1] सरोजिनी नायडू , ले0 माजदा असद पे054

विदेशों में भारतीयों पर होने वाले अत्याचारों से वे बहुत दु खी थीं। विदेशों में गिरमिटिया श्रमिकों पर बहुत अत्याचार हो रहे थे। उनमें महिलाएँ भी थीं उनके सबध में उन्होंने कहा – "महिलाओं ने विदेशों में जो कष्ट भोगे हैं उसकी लज्जा को अपने हृदय के रक्त से धो डालो। आपने जो शब्द यहा सुने हैं उन्होंने आपके भीतर आग सुलगा दी होगी। हे भारत के पुरुषों इस आग को गिरमिटिया प्रथा की चिता बना डालो। आज मैं रोऊँगी नहीं हालाकि मैं एक स्त्री हूँ और यद्यपि अपनी माताओं और बहनों के अपमान को आप महसूस कर रहे होंगे तथापि इस अपमान को मैं नारी जाति का अपमान मानती हूँ।[1]

उन्होंनें बार–बार महिलाओं के सुधार के लिए आवाज उठाई, अनेक प्रयत्न किये। वह जानती थीं कि भारत में महिलाओं की गौरवशाली परपरा रही है। सीता अपने सतीत्व को दी गई चुनौती को सहन न कर सकीं। उन्होंने धरती माता से विनती की कि वह उन्हें अपने भीतर समा ले। सरोजिनी ने इस उदाहरण को भी पेश किया।

मार्च 1918 में जलधर में 'महिलाओं की स्वतत्रता' के विषय पर उन्होंने बहुत जोरदार भाषण दिया। 'भारत की भावी महिलाओं की कल्पना' विषय पर भी अपने विचार प्रकट किये। अप्रैल 1918 में लाहौर में 'महिलाओं की राष्ट्रीय शिक्षा' के बारे में भी भाषण दिया। वे जानती थीं कि पुरुष नारी प्राचीन आदर्श को महत्व देते हैं। सावित्री अपने पति के प्राणों को वापस प्राप्त करने के लिए यमराज के पास गई यह बात पुरुष मानते हैं। फिर आधुनिक सावित्री को उस शक्ति से वचित रखते हैं, जिसके द्वारा वह राष्ट्रीय जीवन को मृत्यु के गर्त से उबार सकती हैं।[2]

सरोजिनी नायडू ने महिला शिष्ट मण्डल का नेतृत्व भी किया। वह स्त्रियों के लिए पुरुषों के समान मताधिकार की माँग कर रही थी। ब्रिटेन की महिलाओं ने इस समान मताधिकार को प्राप्त कर लिया था। यद्यपि इसकी बहुत तीव्र आलोचना और विरोध पुरुष वर्ग में हुआ। भारत में पुरुषों के बीच सरोजिनी को समान हैसियत प्राप्त थी। वे उच्चतम परिषदों में भाग लेती थीं। स्वतत्रता सग्राम में हजारों महिलाएँ

---

[1] सरोजिनी नायडू, ले0 ताराअली बेग पे063

[2] सरोजिनी नायडू, ले0 माजदा असद, पे055, 56

भाग ले रही थीं। उसमें उन्हें सफलता भी मिली। 15 दिसम्बर को सरोजिनी और उनके नेतृत्व में चौदह प्रतिनिधि महिलाएँ माटेग्यू और वायसराय से एक शिष्ट मडल के रूप में मिली। उन्हें एक ज्ञापन दिया। इस ज्ञापन में स्वशासन की माग की गई। इस बात पर बल दिया गया कि महिलाओं को नागरिक के रूप में मान्यता मिले। लिग के आधार पर भेदभाव समाप्त हो। लड़कियों को शिक्षा की पूरी सुविधा हो। उनके लिए मेडिकल कालेज खोले जाए बाद में जो सुधार योजनाएँ सामने आई उनमें महिला मताधिकार की सिफारिश नहीं थी। उन्होंने कहा था कि जब तक महिलाओं को पर्दे में ढिलाई नहीं आती तब तक महिला मताधिकार को कोई लाभ नहीं होगा। 1919 में एक और शिष्ट मण्डल महिला मताधिकार के सबध में साउथ बरो कमीशन से मिला। जुलाई 1919 में सरोजिनी अखिल भारतीय होमरूल लीग की सदस्या के रूप में इग्लैण्ड गई। माटेग्यू चेम्सफोर्ड प्रस्ताव उस समय वहाँ विचाराधीन था। उसमें महिला मताधिकार की बात भी थी। सरोजिनी इग्लैण्ड पहुँचकर विभिन्न भारतीय राजनीतिक सगठनों को एकजुट किया। उन्होंने एक सयुक्त शिष्ट मडल बनाया। यह मडल इस सम्बन्ध में माटेग्यू से मिला। 6 अगस्त 1919 को वे भारतीय सुधारों पर विचार करने के लिए बनाई गई सयुक्त समिति से मिली। अपने प्रतिवेदन में उन्होंने महिला मताधिकार के पक्ष में तर्क दिये थे। उन तर्कों का प्रभाव पड़ा। समिति भी उनसे बहुत प्रभावित हुई।[1]

सरोजिनी यह बात मानती थीं कि जहाँ तक नागरिकों के राजनीतिक तथा दूसरे अधिकारों का प्रश्न है मनुष्य शब्द में महिलाओं का भी समावेश माना जाना चाहिए। उनके अनुसार महान राष्ट्रीय सकटों में पुरुष ही बाहर जाता है। नारी की आशावादिता और प्रार्थना से ही पुरुष को शक्ति मिलती है। नारी की प्रेरणा से ही वह एक सफल योद्धा बनता है।

1925 में जब सरोजिनी नायडू काग्रेस की अध्यक्ष बनीं तो उसको उन्होंने भारत की प्राचीन परम्परा के अनुसार नारी को दिया जाने वाला सम्मान माना। उसके लिए आस्था की उस चिगारी को सुलगाने की बात की जिसने सीता एव सावित्री का

---

[1] सरोजिनी नायडू , ले0 माजदा असद पे056, 57

मार्ग प्रकाशित किया उन्होंने कहा, 'भारतीय माता के रूप में मैंने पालने में झुलाये हैं और लोरिया गाई हैं। अब मैं स्वतत्रता की ज्योति जगाऊगी।' उन्होंने अपने इस काम को घरेलू कार्यक्रम माना जिसका उद्देश्य भारत माँ को उसका सही स्थान दिलाना है। जिसमें वह अपने घर की स्वामिनी और सरक्षिका बन सके। भारत माँ की आस्थावान बेटी के रूप में माँ के घर को व्यवस्थित करने की बात कही। विभिन्न सम्प्रदायों और धर्मो को जोड़ कर सयुक्त परिवार का आदर्श रूप बनाने का सपना देखा। दीन-हीन सतान को समर्थ बनाने का सकल्प लिया। अतिथि सत्कार को अपनी परम्परा माना। सारे कार्यक्रम को परिश्रम और साहस से पूरा करने की ठानी।

कानपुर में होने वाले काग्रेस के अधिवेशन में सरोजिनी नायडू के इस सुझाव से महिलाएँ बहुत उत्साहित हुई। उन्होंने राष्ट्रीय गतिविधियों में खुलकर भाग लेना शुरू कर दिया। अक्टूबर 1926 में अनेक महिला सगठनों ने मिलकर एक अखिल भारतीय महिला सम्मेलन की स्थापना की। इस सम्मेलन का उद्देश्य था महिलाओं को स्वतत्रता दिलाना, बाल कल्याण, शिक्षा और उन सारे कार्यो में रूचि लेना जो महिलाओं के स्तर को ऊँचा उठा सके। महिलाओं में यह जागरण सरोजिनी नायडू के वजह से आया। उन्होंने महिलाओं के उत्साह को बहुत बढ़ाया, उन्हें आगे बढने की प्रेरणा दी।

1928 में अखिल भारतीय महिला सम्मेलन ने सरोजिनी नायडू को अखिल प्रशात क्षेत्रीय महिला सम्मेलन में भाग लेने के लिए अपना प्रतिनिधि चुनकर होनोलूलु में होने वाले सम्मेलन में भेजा। सम्मेलन में हिस्सा लेने के लिए वे अमेरिका गई। सरोजिनी ने घोषणा की 'वह समय अब आ गया है जब भारतीय नारी जाति के विचार आकाश में अग्नि अक्षरों में उभरेंगे। उनकी लपटों को कोई बुझाएगा नहीं।'

सन् 1930 में सरोजिनी अखिल भारतीय महिला शिक्षा सम्मेलन की अध्यक्ष चुनी गई। उन्होंने भारत की महिलाओं से कहा, कि वे नारी जाति की एकता की आवश्यकता को महसूस करें। राष्ट्र की सच्ची आधारशिला बनें। सरोजिनी ने भारत की महिलाओं के लिए आवाज उठाई। इससे भारत की महिला में नई चेतना पैदा हुई।

उन सगठनों के नेताओं ने एक सम्मिलित सम्मेलन बुलाने की योजना बनाई। अखिल भारतीय महिला सम्मेलन, भारतीय महिला सघ और भारतीय राष्ट्रीय महिला परिषद आदि सगठनों ने अपनी आवाज को प्रभावशाली बनाने का सकल्प लिया। एक सम्मिलित सम्मेलन बुलाया। लिग भेदभाव से दूर रहकर वयस्क मताधिकार की माग की गई। यह प्रस्ताव सभी सम्बन्धित अधिकारियों के पास भेजा गया। बबई के अखिल भारतीय महिला अधिवेशन में सरोजिनी ने कहा था, 'वह केवल नारी आन्दोलनकारी नहीं है। उन्होंने नारी के लिए विशेष अधिकारों की माग नहीं की। यह माग उन्हें हीन ठहरा सकती थी। भारत में ऐसा कभी हुआ भी नहीं। नारी हमेशा राजनीतिक परिषदों और युद्ध क्षेत्र में पुरुष के साथ कधा मिलाकर चली हैं।

1935 में ब्रिटिश सरकार ने इडिया बिल पेश किया। ब्रिटिश ससद में भी यह बिल पारित हुआ। आने वाले आम चुनाव में इसने महिला उम्मीदवारों के लिए रास्त खोल दिया। सरोजिनी ने हमेशा महिलाओं का नेतृत्व किया, दिल्ली में नेडी इरविन कालेज की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। 1934 में उन्होंने मद्रास में महिला भारतीय सघ में भाषण दिया। उन्होंने इस सभा में महिलाओं के सामने बहुत से प्रश्न रखे। वह महिलाओं को वास्तविक स्थिति का सामना करने के लिए तैयार करना चाहती थीं। वे चाहती थीं कि महिलाएँ काम करें। अनाथ बच्चों की चीत्कार को सुनें। विधवाओं की दशा भी सुधारें। अन्याय का डटकर मुकाबता करें। दासता से अपने आप को मुक्त करें। देश को दूर करें। गाँवों की स्थिति में सुधार लाए। वे चाहती थीं कि महिलाएँ स्वदेशी आन्दोलन को तीव्र और सफल बनाएँ। उनमें किसी प्रकार के भय की भावना न हो।[1]

कराची के अखिल भारतीय महिला सम्मेलन के अधिवेशन में उन्होंने एक बार फिर नारी को जगाया। एकता और समन्वय की बात की। वह चाहती थीं कि भारतवासी सब एक होकर रहे चाहे वह किसी भी जाति और धर्म के हों। मनुष्य को सबसे पहले वे मनुष्य के रूप में देखना चाहती थीं। उनके विचार में नारी-नारी से अलग नहीं हो सकती। उसमें सत्य का वह तत्व है जिस पर मानव जाति की सभ्यता टिकी है।

---

[1] सरोजिनी नायडू, ले0 माजदा असद, पे0 59-60

सरोजिनी नायडू का अप्रैल 1944 में भारत के सौ महिला सगठनों की ओर से अभिनन्दन किया गया। उन्होंने बगाल के अकाल से बचाए गए बच्चों के लिए बनाए गए बाल सुरक्षा कोष की बैठक की अध्यक्षता की। यही सगठन आगे चलकर 'भारतीय बाल कल्याण परिषद' बना।[1]

सरोजिनी नायडू जीवन भर स्त्रियों की आजादी के लिए कोशिश करती रहीं। उन्होंने स्त्रियों की दशा सुधारने के लिए बहुत कोशिश की। वह स्वय उनकी प्रेरणा स्रोत बनीं। उनको उदार दृष्टि दी। खुले प्रागण में रहने की सीख दी उनमें सेवा त्याग और ममता के भाव जगाए। यही कारण है कि सरोजिनी नायडू का जन्म दिवस तेरह फरवरी देश में 'नारी दिवस' के रूप में मनाया जाता है।

1918 में जालन्धर में कन्या महाविद्यालय की छात्राओं को सम्बोधित करते हुए उन्होंने महिला - शिक्षा पर बल दिया और कहा कि, "हमारे गुरु गाँधी जी ने हमें आदेश दिया है कि हम सभाओं में हिन्दुस्तानी भाषा में भाषण दें।" मैं आपसे प्रार्थना करती हूँ कि आप मुझे टूटी-फूटी उर्दू में भाषण देने के लिए क्षमा करेगी। आपकी उप प्राचार्या ने महिला शिक्षा का समर्थन जोरदार और मन को मथ डालने वाले शब्दों में किया है तथा यह बताया है कि पजाब में आज तक महिलाओं की शिक्षा के मामले में पक्षपात और पाखडपूर्ण रवैया अपनाया जाता है। सकीर्ण मस्तिष्क वाले लोग कहते हैं कि शिक्षा महिलाओं को साहसिक बना देती है। अत वह निदनीय है। क्या हमारे भाई अपनी जन्म भूमि की वीरगाथाओं और उसके शास्त्रों को भूल गये? भारत को इस बात का गर्व है कि उसकी महिलाए अपने भाइयों की अपेक्षा अधिक साहसिक और वीर रही हैं। किसी भी देश के उत्थान के लिए स्त्री पुरुष के बीच सहयोग आवश्यक है। आप राजनीतिक अधिकारों की माँग करती हैं। कृपा करके यह मत भूलिएगा कि लगड़ा व्यक्ति धीमी गति से ही चल सकता है, एक आख वाला एक ही पक्ष देख सकता है, और एक पहिये की गाड़ी ठीक से नहीं चल पाती। तथा मुस्लिम महिलाओं की समस्याओं का उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि, "पर्दा प्रथा का यह अर्थ नहीं है कि, "मस्तिष्क और आत्मा पर भी पर्दा डाल दिया जाए।

---

[1] सरोजिनी नायडू ले0 माजदा असद पे061

उन्होंने अन्त में कहा कि, "रूढिवादिता के पिजड़े को तोड़ डालो – भारत की नारी तभी मुक्त हो पायेगी जब नारी मुक्त हो जाएगी।"

सन् 1917 में उन्होंने दो महत्वपूर्ण कार्य किए सम्पूर्ण देश का भ्रमण और 'महिला मताधिकार आन्दोलन' का नेतृत्व। 18 दिसम्बर 1917 को श्रीमती मारग्रेट कजिस की प्रेरणा से महिला मताधिकार की माग लेकर 18 महिलाओं का जो शिष्ट मडल लार्ड चेम्सफोर्ड और श्री माटेग्यू से मिला था, उसका नेतृत्व श्रीमती नायडू ने ही किया था। प्रतिनिधि मडल ने माग की कि स्त्रियों को भी पुरुषों के समान मत देने का अधिकार प्रदान किया जाए। यह माग इसके पाच वर्ष के बाद फलीभूत हो गई। 1917 से 1947 तक के भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के इतिहास में कोई भी ऐसी महत्वपूर्ण घटना न थी, जिसमें श्रीमती नायडू ने आगे बढकर भाग न लिया हो। 1917 में श्रीमती एनी बेसेन्ट की अध्यक्षता में हुए काग्रेस अधिवेशन में दिया गया उनका भाषण देश को सदा याद रहेगा, उन्होंने कहा था, 'मैं एक नारी हूँ। इस नाते आपसे कहना चाहती हूँ कि जब कभी भी आप सकट में होंगे या अधेरे में रास्ता टटोलते होंगे, जब कभी अपने भीतर आत्म-विश्वास की कमी पाएगे, हम भारतीय स्त्रिया आपकी शक्ति को अक्षुण्ण रखने के लिए और आपको अपने महान उद्देश्य से विचलित न होने देने के लिए आपके साथ होंगी।' इसी प्रकार अपने स्वतत्रता-सग्राम में कूदने के बारे में वह कहती थीं, 'अक्सर लोग पूछते हैं कि मैं काव्य के स्वप्न लोक को छोड़कर राजनीति के शुष्क धरातल पर क्यों उतरीं? मेरे पास यही उत्तर है कि कवि समाज से अलग नहीं है। उसका भाग्य भी राष्ट्र की, जनता की कठिनाइयों और परेशानियों से जुडा है। वह कर्तव्य से मुह नहीं मोड़ सकता।' आज भी उनके ये शब्द कितने सार्थक और प्रेरक हैं। सन 1918 में श्रीमती नायडू ने जिनेवा में स्त्री मताधिकार परिषद के सम्मुख हृदयग्राही भाषण देकर भारतीय महिलाओं का पक्ष रखा।

भारतीय स्त्रियों के लिए भी उन्होंने बहुत कुछ किया। शिक्षा जागृति, मताधिकार, स्वतत्रता, समानाधिकार की प्राप्ति और पर्दा प्रथा, अशिक्षा दहेज, धार्मिक बधन आदि बाधाओं के खिलाफ वह जीवनपर्यन्त लड़ती रहीं। डॉ0 ऐनी बेसेन्ट द्वारा

स्थापित 'होम रूल लीग' और श्रीमती मारग्रेट कजिस द्वारा स्थापित 'इडियन वूमेंस एसोसिऐशन' तथा ' अखिल भारतीय महिला सम्मेलन' से उनका घनिष्ठ सबध रहा। राजनैतिक कार्य क्षेत्र हो या महिला सस्थाओं का मच, श्रीमती नायडू से सभी जगह महत्वपूर्ण विषयों पर सलाह ली जाती थी। वह अखिल भारतीय महिला सम्मेलन की 1930 में अध्यक्षा भी रहीं। बहुर्मुखी व्यक्तित्व की धनी यह लोकप्रिय नारी 2 मार्च 1959 को इस ससार से विदा हो गई, पर अपने पीछे सुकीर्ति का ऐसा दीप जला गई जो सदियों तक देशवासियों को प्रकाश देता रहेगा। सरोजिनी नायडू को भारतीय नारी होने का गर्व था और भारतीय नारी का मस्तक अपने बीच ऐसा नारी-रत्न पाकर गर्वोन्नत था। इसलिए उनकी स्मृति में 13 फरवरी का दिन (उनका जन्म दिन) भारत में 'महिला दिवस' के रूप में मनाया जाने लगा है।

मार्च 1918 में वह जालधर में 'महिलाओं की स्वतत्रता' के बारे में बोलीं, तथा अगले दिन 'भारत की भावी महिलाओं की कल्पना' विषय पर। अप्रैल में उन्होंने लाहौर में महिलाओं की राष्ट्रीय शिक्षा के बारे में भाषण दिया। पुरुषों को सम्बोधित करते हुए उन्होंने पूरी शक्ति के साथ कहा, "आप भारतीय नारीत्व की चर्चा करते हैं, आप उस साहस एव शक्ति की चर्चा करते हैं जिसके आधार पर सावित्री अपने पति की आत्मा वापस प्राप्त करने के लिए मृत्यु के साम्राज्य तक गई, तथापि आप आधुनिक सावित्रियों को उस शक्ति से वचित रखते हैं जिसके द्वारा वे राष्ट्रीय जीवन को मृत्यु के गर्त से उबर सकती हैं।"

मई में श्रीमती नायडू भारत गयीं जहा उन्होंने काचीपुरम में मद्रास के मायलापुर में राष्ट्रीय बालिका विद्यालय के अवसर पर बोलीं। सितबर में उन्होंने काग्रेस की एक विशेष सभा में 'स्त्री पुरुषों के बीच सम्बन्ध योग्यता' नामक प्रस्ताव भेजा। प्रस्ताव इस प्रकार था - "योद्धा के किसी भी अग में पुरुषों के लिए जो योग्यताए निर्धारित की गई हैं उन योग्यताओं से सम्पन्न महिलाओं को लिग के आधार पर अयोग्य घोषित नहीं किया जायेगा।" बीजपुर के प्रादेशिक सम्मेलन में उन्होंने 'महिला मताधिकार' सबधी प्रस्ताव पेश किया। इसके बाद वे दिसबर में पुन

उत्तर भारत को लौटीं और उन्होंने अखिल भारतीय सामाजिक सम्मेलन में भाषण दिया।

वस्तुत महिलाए अपनी आवाज में शक्ति पैदा करने की चेष्टा कर रही थी और शीघ्र ही वे इसमें सफल हो गयीं। 15 दिसबर 1917 को सरोजिनी के नेतृत्व में महिला सगठनों की चौदह प्रतिनिधि महिलाए माटेग्यू और वायसराय से एक शिष्टमडल के रूप में मिली और प्रथा के अनुसार उन्होंने उन्हें एक ज्ञापन दिया। ज्ञापन में स्वशासन की माग की गई थी और इस बात पर बल दिया गया था कि महिलाओं को नागरिक के रूप में मान्यता दी जानी चाहिए। एव लिग के आधार पर भेदभाव समाप्त किया जाना चाहिए, किन्तु उन्हें अन्ततोगत्वा निराशा ही मिली क्योंकि कालान्तर में जो सुधार योजना सामने आई उसमें महिला मताधिकार से कोई सिफारिशें नहीं थीं। उसमें कहा गया था कि, "जब तक महिलाओं को पर्दा में रखने की प्रथा में ढिलाई नहीं आती तब तक महिला मताधिकार को कोई वास्तविक लाभ नहीं होगा।" 1919 में एक अन्य महिला शिष्ट मडल ने मताधिकार सुधार से सम्बन्धित साउथ बरो कमीशन से भेंट की लेकिन उसका भी कोई अधिक अच्छा परिणाम नहीं निकला। माटेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधारों में महिलाओं का उल्लेख तक नहीं किया गया।

भारत की महिला ने सम्भवत यह बात पूरी तरह नहीं समझ पायी कि ब्रिटेन में महिलाओं ने मताधिकार प्राप्त करने के लिए जो उग्र आन्दोलन किया था, उसकी वहा गहरी-गहरी प्रतिक्रिया हुई। यह बात और है कि दबाव के कारण महिलाओं को मताधिकार दे दिया गया। लेकिन वस्तुत इग्लैण्ड और पश्चिमी जगत में मताधिकार के लिए महिलाओं के सघर्ष में पुरुषवर्ग में उनके प्रति विरोधभाव उत्पन्न हो गया था, भारत में पुरुषों को दुनिया और उनकी उच्चतम परिषदों में सरोजिनी को जो समान हैसियत प्राप्त थी, उसने तथा स्वतत्रता सग्राम में सहस्रों महिलाओं के पदार्पण ने सार्वजनिक जीवन के भीतर भारतीय महिलाओं के समान साझेदारी के सुगम सक्रमण में महत्वपूर्ण योगदान किया, भारत में स्त्री पुरुष स्पर्धा अथवा ईर्ष्या कभी रही ही नहीं, लेकिन इग्लैण्ड अथवा माटेग्यू के मामले में ऐसा नहीं था। मानव

जीवन मे ऐसी ही उपचेतना ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर अनेक निर्णयात्मक घटनाए घटित हो जाती हैं। महिलाओं के शिष्टमडल के प्रति माटेग्यू की प्रतिक्रिया से यह बात सिद्ध हो जाती है। माटेग्यू ने बाद में अपनी डायरी में लिखा है - ''महिलाओं का एक दिलचस्प शिष्टमडल हमसे मिलने आया और उसने हमसे लड़कियों के लिए शिक्षा, और मेडिकल कालेजों की माग की, शिष्टमडल का नेतृत्व श्रीमती नायडू कर रही थीं। वह एक कवियित्री और एक बहुत ही आकर्षक तथा चतुर महिला हैं किन्तु उनके बारे में मेरा मत है कि वह हृदय से ही क्रान्तिकारी हैं।'' उनके इस स्वर से यह बात स्पष्टत झलकती है कि उन्होंने महिलाओं के शिष्टमडल को पुरुषों की उन समस्याओं की अपेक्षा महत्वहीन मानकर उसकी उपेक्षा कर दी गई। जिनके बारे में छानबीन करने के लिए उन्हें भारत भेजा गया था।

उनकी अन्तरात्मा में एक ओर जीवन के इन विशुद्ध नारी सुलभ पक्षों, सुविधापूर्ण जीवन, सुरक्षा और उल्लासप्रियता तथा दूसरी ओर उन्मेषकारी ऊर्जा के बीच एक सघर्ष भी रहता था जो उन्हें कभी भी शान्ति के साथ जीने नहीं देता था। जहा एक ओर वह लोगों से मिलने, गपशप करने, इसका उस व्यक्ति के बारे में विस्तारपूर्वक कहानिया सुनाने और बीच-बीच में कहकहे लगाने तथा हसने हसाने (इस स्वभाव को उन्होंने जीवन के अन्त तक बनाये रखा था) में असीम तृप्ति अनुभव करती थीं, वही उनके जीवन का सुधारक पक्ष भी था जो पूरी तरह घर के बाहर काम करने के लिए प्रतिबद्ध था।

आरम्भ से सुधारवादी प्रकृति के कारण वह महिलाओं की समस्याओं पर रूचि लेने लगी थीं। पी0ई0 दस्तूर ने सरोजिनी के बारे में लिखा है ''वह हर प्रकार से एक पूर्ण महिला थीं और उन्होंने राष्ट्र के जीवन में जो भूमिका अदा की वह कम पुरुष अदा कर सकते थे। कोमल गीतों की लड़ियों को पिरोने वाली वह मालिन भीषण राष्ट्रीय सघर्ष के केन्द्र में खिचती चली गयी।''

सरोजिनी 1 मार्च 1930 को भारतीय महिला शिक्षा सम्मेलन की अध्यक्षा चुनी गयी उसमें उन्होंने कहा, ''मुझे आशा है कि भारत की महिलायें नारी जाति की एकता की आवश्यकता को महसूस करेंगी, क्योंकि देश में राष्ट्रीय प्रगति की सच्ची

आधारशिला उसे ही बनना है। अब समय आ गया है कि धर्म, सम्प्रदाय, पद और प्रजाति की सीमाओं को लाघकर भारत की समस्त महिलाओं को सर्वप्रथम और सबसे अधिक महत्वपूर्ण मानकर समस्त सम्प्रदायों के बीच एकता की स्थापना द्वारा अपनी शक्ति और प्रतिभा भारत की सेवा में समर्पित करनी चाहिए। इस सम्मेलन में महिला शिक्षा की ओर ध्यानाकर्षित करने के लिए महिला दिवस मनाया गया। "मैंने जिसने झूला हिलाया, मैं जिसने मीठी लोरिया गायीं – मैं भारत माता की प्रतीक – अब आजादी की लौ जलाऊँगी – भारत माता की सच्ची बेटी होने के नाते मुझे अपनी माँ का घर व्यवस्थित करना है। उसके विभिन्न धर्म और सम्प्रदायों से बने प्राचीन सयुक्त परिवार की एकता को डराने वाले दुखदायी झगड़ों से दूरकर परस्पर समझौता करवाना है।" "अपनी स्त्रियों को शिक्षित करो और देश अपनी चिन्ता स्वय करेगा" सरोजिनी नायडू।

भारत में स्वाधीनता सग्राम के साथ-साथ स्त्रियों का आन्दोलन भी बढ रहा था। एनी बेसेन्ट और होमरूल लीग के निर्देशानुसार मार्गरेट ई0 कजन्स ने भारत के लिए पहले महिला सगठन का आरम्भ किया जो पूरी तरह भारतीय आधार पर था। उसका नाम "स्त्रियों का भारतीय सगठन था" सरोजिनी ने आरम्भ से ही इस सगठन को बढावा दिया। उन्होंने स्त्रियों को गदूर सेवा में आगे आने की प्रेरणा दी। भारतीय महिला सगठन ने स्त्रियों को एक मच दिया जिस पर वे अपनी शिकायतें रख सकती थीं और अपने अधिकारों की माग कर सकती थीं। स्त्री-पुरुष के बराबरी के अधिकारों की लड़ाई में सरोजिनी का मुख्य रोल था। यह एक लम्बी और कठिन लडाई थी पर भारत की स्त्रिया इसमें शान्तिपूर्ण साधनों का ही प्रयोग कर रही थीं। इस आन्दोलन के अन्तर्गत पहला कार्यक्रम एक महिला दल को माटेग्यू के पास भेजना था ताकि आने वाले सुधारों के बारे में बात कर सके। इस दल में भारत के जनजीवन से जुड़ी और अत्यन्त जानी-मानी बीस महिलायें रखी गयीं। 18 दिसम्बर 1917 को मद्रास में चौदह महिलायें वायसराय और माटेग्यू से मिलने के लिए गयीं जिनमें सरोजिनी प्रमुख वक्ता थीं, माटेग्यू केवल राजनीतिक विषय पर बात करने वाले थे, अत इस महिला सगठन को "राजनैतिक कार्य के अवसर" जैसे विषय को

भी जोड़ना पडा। ब्रिटिश शासन के दौरान अधिकारों के लिए यह अहिंसक लड़ाई चलती रही। इसमें सरोजिनी ने प्रमुख रूप से भाग लिया। उन्होंने मागपत्र में स्त्रियों को पूर्ण मताधिकार दिलवाने चाहे। लिग भेद को अयोग्यता नहीं मानने को कहा गया और यह भी कहा कि स्त्रियों को लोगों में गिना जाये। जनतात्रिक नागरिकता के लिए स्त्रियों को योग्य बनाना था। उसके लिए शिक्षा में सुधार आवश्यक था। उस समय सौ में से केवल तेरह लड़के और एक लडकी शिक्षित थी। गोखले ने बताया था कि छह गावों में केवल एक गाव में स्कूल था लड़के-लडकियों के लिए मुफ्त प्रारम्भिक शिक्षा का आवश्यक किया जाना जरूरी था। बल्कि माध्यमिक शिक्षा भी जरूरी की जानी चाहिए। स्त्रियों के लिए शिक्षा सस्थान बनाने और आर्थिक सहायता दी जानी चाहिए, विधवाओं के लिए आश्रम बनवाये जाने चाहिए, स्त्रियों के लिए मेडिकल कालेज, छोटे समय के प्रसूति प्रशिक्षण कार्यक्रम और स्वास्थ्य सुविधायें दी जानी चाहिए। सरोजिनी द्वारा ले जाये गये दल की सफलता भारत में सब जगह जानी गयी।

जनसभाओं तथा राजनीतिक गोष्ठियों में इन मागों का समर्थन किया गया। इस प्रतिक्रिया से सरोजिनी बहुत प्रसन्न थीं। स्त्री आन्दोलन पूरी तरह जनतात्रिक ढग से चल रहा था। फ्रैंक मोरेस ने इस पूरे सघर्ष का विवरण देते हुए कहा – "उस समय की महिलाओं में सरोजिनी को सर्वश्रेष्ठ माना गया। उन्होंने गर्व से अपनी बहनों में विश्वास व्यक्त किया। ऐसा लगता है कि जैसे उन्हें आने वाले समय का पूर्वानुमान हो रहा था, जब वे अन्य स्त्रियों के साथ सारी कठिनाइयों तथा त्रासद स्थितियों के बावजूद झडा उठाने वाली थीं"।

उन्होंने 1918 में बम्बई प्रादेशिक काग्रेस काउसिल के आठवें सेसन में बीजापुर में यह प्रस्ताव रखा कि काग्रेस को स्त्रियों का मताधिकार की माग का समर्थन करना चाहिए। इससे पहले कलकत्ता में काग्रेस की कमेटी मीटिंग में मताधिकार के स्थान पर आशिक मताधिकार की माग की गई किन्तु सरोजिनी ने उसे लौटा दिया। उन्होंने स्त्रियों से अपने अधिकारों की माग का दायित्व स्वय उठाने को कहा। उन्हें याद दिलाया कि जब वे दायित्व सभालती हैं तो अधिकार भी मागने

चाहिए। वे सारा जीवन नवजागरण के लिए कार्य करती रहीं पर उस जागरण में स्त्री का बराबर हिस्सा चाहती थीं। तभी उन्होंने कहा, "आज की भारतीय नारी, किसी भी जाति या वर्ण की हो, अपने पुराने स्थान और उद्देश्य, अधिकार और दायित्व की एक गहरी चेतना से प्रेरित हो गयी है। ताकि वह राष्ट्रीय विकास तथा अन्तर्राष्ट्रीय मैत्री भाव के लिए सहिष्णु परिस्थिति बना सके।" वे स्त्रियों के मताधिकार को राजनीतिक लड़ाई के बराबर ही महत्व देती थीं। उनके व्यक्तित्व के माध्यम से राजनीतिक शतरज की विसात पर हर खेल में हर चाल पर स्त्री का निश्चित योग रहा।

माटेग्यू चेम्सफोर्ड द्वारा प्रस्तुत सुधारों के सुझाव पर विचार करने को कमेटी बनी थी, जिसने कहा कि स्त्रियों को मताधिकार देना व्यवहारिक नहीं है। मारग्रेट कजिस ने अखिल भारतीय महिला दल की सचिव की हैसियत से माटेग्यू को पत्र लिखा जिसमें उन्हें याद दिलाया कि भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के विशेष सत्र में आने वाले सुधारों में स्त्री के राजनीतिक स्थान पर प्रस्ताव पास किया गया था। उन्होंने कहा कि "आपने श्रीमती सरोजिनी नायडू सहित दल के तीन सदस्यों से भेंट में यह प्रश्न किया था कि क्या राजनीतिक दल महिलाओं के मताधिकार की माग को समर्थन देंगे। हमने इसके पक्ष में पारित प्रस्ताव के बारे में सूचित कर दिया है। यदि स्त्रियों में पुरुषों से अपेक्षित गुण मौजूद हों तो उन्हें केवल लिग के आधार पर अयोग्य नहीं मानना चाहिए। हमारे सदस्य आपसे यह अनुरोध करते हैं कि यह सिद्धान्त उस बिल से जोड दिया जाए जिसे आप बना रहे हैं और ऐसे ही उसे सदन में प्रस्तुत कर दें। इस प्रकार भारत के आधे नागरिकों के भाग्य को निचली मताधिकार कमेटी पर नहीं छोड़ें।"[1] यह भी कहा गया कि स्त्रियों को आस्ट्रेलिया की तरह घर से मत देने का मौका दिया जाये जिससे पर्दे में रहने वाली स्त्रिया भी अपना मत डाल सकें।

किन्तु कमेटी की रिपोर्ट में इन सब मागों को पूरी तरह उपेक्षित किया गया। चार सौ पृष्ठों की रिपोर्ट थी पर स्त्रियों की माग का उत्तर केवल चार पृष्ठों में देते हुए कहा गया था कि भारत की सामाजिक स्थिति स्त्रियों को मताधिकार देने के

---

[1] सरोजिनी नायडू, ले0 उमा पाठक पे084

उपयुक्त नहीं है। जब तक पर्दा प्रथा नहीं हटती तब तक स्त्रियों के मताधिकार का कोई महत्व नहीं है। सरोजिनी नायडू हीराबाई टाटा, एनी बेसेन्ट आदि ने कमेटी के सामने धरना दिया। अन्तत कमेटी को लगा कि स्त्रियों के मताधिकार का मामला घरेलू है अत उसे भारतीय प्रादेशिक विधान सभाओं को सौंप दिया जाना चाहिए।[1]

इस प्रकार यह लड़ाई वर्षों तक चलती रही, किन्तु ब्रिटिश राज्य में बहुत कम विकास हुआ। बाद में साइमन कमीशन ने स्त्रियों की प्रशसा की और उन्हें जायदाद में हकदार बनाया। लोथियन कमेटी ने एक कदम आगे बढाया और स्त्री शिक्षा को जोडा, हलाकि 4 5 पुरुषों के मुकाबले एक महिला को शिक्षित करने की योजना थी। ये सारी विदेशी कमेटियाँ इस देश के बारे में अपनी जानकारी केवल कुछ राजभक्त भारतीयों से ही जुटा रही थीं। यही कारण है कि वे स्त्रियों को अपने आप कुछ करने का अवसर नहीं दे रहे थे, सरोजिनी जैसी स्त्रिया इस बात पर अड़ी रहीं कि यदि स्त्रियों को पूरा दायित्व दिया जाए ते वे कभी असफल नहीं होंगी। पर उन पर विश्वास नहीं किया गया।

1926 में स्त्रियों को सरकारी नामजदगी के आधार पर विधान परिषद की सदस्यता का अधिकार मिला। डॉ0 मुथ्थुलक्ष्मी रेड्डी पहली भारतीय प्रादेशिक विधान सभा सदस्य थीं। उन्हें सर्वमत से मद्रास विधान सभा का उपाध्यक्ष चुना गया। स्त्रियों ने नगर पालिका परिषद के चुनाव लड़ने शुरु कर दिये थे। बम्बई शहर में चार भिन्न क्षेत्रों में स्त्रिया चुनी गई, जिनमें एक सरोजिनी थीं।

1933 में राजकुमारी अमृतकौर वह प्रमुख सदस्य थीं जिन्होंने भारतीय सवैधानिक सुधारों की सयुक्त ससद समिति के सामने बोलती हुए कहा कि स्त्रियों के लिए सीट आरक्षण की आवश्यकता नहीं, न ही उन्हें सम्प्रदाय के आधार पर बाँटना चाहिए। उन्हें सीधे चुनाव लड़ने देना चाहिए। यह एक साहसी कदम था। सरोजिनी ने कहा – ''सम्पूर्ण विश्व में एक बात अपरिवर्तनीय है और वह है स्त्रीत्व की अविभाजनीयता, सीमाएँ, युद्ध, जातियाँ बहुत कुछ हैं जो बँटवारा करवाते हैं पर नारी जोड़ती हैं भले ही वह रानी हो या कृषक बाला, अब समय आ गया है जब प्रत्येक स्त्री को अपनी योग्यता समझनी चाहिए।''

---

[1] काग्रेस का इतिहास पे0 294

धीरे-धीरे स्त्रियों को लगने लगा कि पूरे भारत में जो बहुत से सगठन थे, उन सबको जोडने की आवश्यकता थी, जैसे स्वास्थ्य सेवाएँ जिनकी पूरी भारत में जरूरत थी। दिल्ली में लेडी रीडिंग स्वास्थ्य केन्द्र खोला गया। गर्ल गाइड तेजी से बढ रही थी। स्त्रियों में सामाजिक जागृत इतनी बढ गई थी कि वे सब जगह समाज सेवा, शिक्षा तथा अन्य कार्यो के लिए आगे आ रही थीं। प्राय लोगों का विचार था कि राजनीति में स्त्रियों का प्रवेश गाधी के कारण हुआ, किन्तु यह सरोजिनी जैसी महिला के महत्वपूर्ण कार्यो का परिणाम था, कि उनके साथ की अन्य महिलाओं ने उनके समान राजनीतिक आन्दोलन में पुरुषों के साथ खड़ा होना सीखा। उनका विचार था कि किसी भी देश का मापदड उसकी स्त्रियों से होता है। वे पहली महिला थी जिन्होंने स्त्रियों के अधिकारों की लडाई को स्वतत्रता सघर्ष से जोड़ा था। क्योंकि उनके अनुसार एक की प्राप्ति से दूसरे का मिलाना था। 1928 में दिल्ली में अखिल भारतीय महिला परिषद की दूसरी बैठक को सरोजिनी और मारग्रेट कजिस के प्रयासों ने सफल किया। एक प्रतिनिधि ने तो यहा तक कहा कि कोई पुरुष भी पूरे कार्य को उनसे अधिक योग्यता से नहीं कर सकता था। इस सभा में प्रारम्भिक शिक्षा के आवश्यक किए जाने के महत्व, बाल-विवाह निषेध और सामाजिक सुधार के अन्य पक्षों पर विचार किया गया। गाधी जी आन्दोलन के बढने से प्रसन्न थे। उनका मानना था कि हमें बेटियों को बेटों के बराबर स्तर पर रखना चाहिए। कई महिलाए इस दिशा में कार्यरत थीं। परिणाम यह हुआ कि फरवरी, 1937 के आम चुनाव में अस्सी के ऊपर महिलायें विधानसभा में प्रवेश पा गईं। बहुत सी महिलाए महत्वपूर्ण पदों पर आईं। सरोजिनी की चेष्टा औरों को खड़ा करने की थी अत उन्होंने स्वय किसी पद पर आने की कोशिश नहीं की। अब स्त्रियों को अर्तराष्ट्रीय सगठनों में प्रतिनिधि के रूप में भेजा जा सकता था। 1928 में सरोजिनी को पैनपैसीफिक कार्फ्रेंस में भाग लेने के लिए होनोलूलु भेजा गया। मई 28 में उन्हें अमरीका भेजा गया।

सरोजिनी के काग्रेस अध्यक्ष बनने के बाद से स्त्रियों के आगे बढने के द्वार खुल गये। सरोजिनी ने हिन्दू परम्परा के कट्टरपथियों के विरोध के बावजूद कुशलता

के साथ स्त्री मुक्ति के सघर्ष को आगे बढाया। उनका लक्ष्य स्त्रियों को न केवल राजनीति और आर्थिक क्षेत्र में बल्कि सामाजिक क्षेत्र में पूर्ण स्वतत्रता और समानता प्राप्त कराना था। वे स्त्रियों का महत्वपूर्ण स्थान मानती थीं और यह भी कि उन्हें पुरुषों के साथ खड़े होना है।

11 अगस्त 1934 को मद्रास में भारतीय महिला सगठन की अध्यक्षता करते हुए बताया कि बहुत काम करने की आवश्यकता है। क्या आपके आसपास काम नहीं है? क्या अनाथ बच्चे सहानुभूति सहायता के लिए नहीं रो रहे? क्या समय के गलियारे से विधवाओ का विलाप आज भी द्वार नहीं खटखटा रहा? क्या वे सब युगों से नहीं कह रहे कि हमारे साथ अन्याय हुआ है, आपकी पीढ़ी को हमे दासता से मुक्त करवाना चाहिए। क्या, आपके देश की अनपढ स्त्रियाँ चुपचाप आतुरता से आपको नहीं पुकार रही? क्या गॉव आपकी सलाह आपकी चिन्ता, आपका निर्देश नहीं माग रहे, ताकि उनकी स्थिति में सुधार आये और कम से कम उनकी जरूरतें पूरी हो?'' उन्होंने कहा कि प्रत्येक औरत को अपने विश्वास के प्रति ईमानदार होना चाहिए क्योंकि वह केवल पुराने आदर्शों की सरक्षक न होकर कल के आदर्शो की निर्मात्री भी है।

1934 में दिल्ली में हुई एशियन रिलेशन्स कार्फ्रेंस के अध्यक्षीय भाषण में उन्होंने इस विषय पर विस्तार से कहा। समय के साथ एशिया में स्त्रियों की स्थिति बिगडती गई। स्त्रियों को बहुत अत्याचार सहने पड़े। पुरुष ने उसे बहुत सताया, पर इस दुर्भाग्य से उबरने के लिए स्त्रियों की स्वय प्रयास करना होगा। वे निरन्तर इस दिशा में प्रयास करती रही। वे इस तथ्य को सामने लाना चाहती थी कि एशिया में उनकी स्थिति अत्यन्त निराशाजनक है।

सरोजिनी सीता, सावित्री, दमयन्ती आदि की बहुत प्रशसक थी, क्योंकि वे सत्य के लिए अपने मान के लिए लडी थीं। एक बार ब्रम्बई में उन्होंने कहा था कि जब से औरतों ने आत्मसम्मान खो दिया तब से उनकी हार शुरु हो गयी। हमारे शास्त्रों में कहा गया है कि जहाँ स्त्रियों को सम्मान मिलता है वहाँ देविया प्रसन्न होती हैं। ऐसे में एक सन्त की उक्ति है कि एक शहर को बनाने वाले से आत्मा को

जीतने वाला महान होता है। स्त्रिया निर्माण करती हैं अत उनसे महान कोई नहीं है। जैसे दुखी मानव सहायता और सहयोग से देश को आगे बढाता है वैसे ही स्त्रियों में बहनाया देश निर्माण का काम करता है।" उनका मानना है कि प्रेम से दिलों को जीता जा सकता है। पहले गाधी को लगता था कि स्त्रियों के लिए राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेना उचित नहीं होगा क्योंकि इस राह में बहुत कठिनाइयाँ हैं। किन्तु सरोजिनी ने नमक आन्दोलन के समय इसे एक भ्रान्ति प्रमाणित कर दिया। असह्य कठिनाइयाँ होते हुए भी वे सत्याग्रहियों का नेतृत्व करती रहीं। उनके व्यक्तिगत से प्रभावित होकर गाधी ने कहा कि मैं अपनी भविष्य की सेना में पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की अधिकता से प्रसन्न रहूगा। वे पुरुषों की हिंसात्मकता के विरुद्ध स्त्रियों को गारन्टी मानते थे। यही कारण है कि सरोजिनी शुरु से अन्त तक उनकी सेना की जनरल रहीं।

कलकत्ता से वे हैदराबाद गयी जहा उन्होंने हिन्दू समाज सुधार सगठन के सभा की अध्यक्षता की जो सिकन्दराबाद के महबूब कालेज में हुयी थी, सभा मे हर सम्प्रदाय की उपस्थिति थी। सरोजिनी निर्भय होकर उस समय की कुप्रथाओं जैसे बाल विवाह वरशुल्क, कन्याशुल्क, सामाजिक और धार्मिक अवसरों पर की जाने वाली फिजूलखर्ची, अनमेल विवाह आदि की निन्दा की। 1908 में बम्बई में स्त्री बोध नामक पत्रिका की जयन्ती के अवसर पर भी वे वक्ता थीं इन्होंने कहा कि स्त्री शिक्षा से ही समाज में बदलाव आ सकेगा पर्दा प्रथा इन सुधारों के रास्ते की एक बड़ी बाधा थी।

आध्र की यात्रा के समय में पीठापुर के एक छोटे से कस्बे के क्लब में गई जहा कट्टर परम्परावादी स्त्रियों से बात की उन्होंने इस पर बल दिया कि अब समय आ गया है कि जब देश के भाग्य निर्माण में पुरुष नहीं स्वय स्त्रिया अपने पवित्र तथा अलग न हो सकने वले विश्वास तथा दायित्व को पहचानना सीखेगी।

1916 में बम्बई में एक भाषण में उन्होंने हिन्दू स्त्रियों से कहा था सीता सावित्री और दमयन्ती के नम इतने पवित्र और घर-घर में प्रचलित तथा प्रेरणा के स्त्रोत क्यों रहे हैं? वे क्या गुण थे जिन्होंने उन्हें इतना महान क्यों बनाया? उनमें

कोई बेवकूफी, लड़कपन बेकार बैठना, भयभीत रहना आदि नहीं था। आध्यात्मिक समक्ष और बौद्धिक विकास ने उन्हें महान बनाया। राष्ट्र को स्त्रियों की जरूरत है। स्त्रियों को भारत में पुन वही गरिमा वही स्वतत्रता, बुराई से छुटकारा, समाज के बुरे नियमों से स्वतत्रता लानी होगी। जो शिक्षा से ही आ सकती है।

3 दिसम्बर 1908 को सरोजिनी ने भारतीय राष्ट्रीय सामाजिक कान्फ्रेंस की सभा में भाग लिया यह सभा मद्रास में हुयी और विशाल जनसमूह उपस्थित था। इस सभा में उन्होंने भारतीय विधवाओं के लिए एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया जो इस प्रकार था "यह अधिवेशन सभी सम्बद्ध जातियों के लोगों से हिन्दू विधवा को प्रथानुसार दी जाने वाली बदसूरती से बचाने के लिए, शिक्षा की सुविधा प्रदान कर उनकी स्थिति सुधारने के लिए आमत्रित करता है। ताकि वे अपनी उपयोगिता सिद्धकर सकें और यह भी कि उनके पुर्नविवाह में कोई बाधा न डाली जाए। प्रो0 कर्वे के आदर्शो के अनुसार एक विधवाश्रम खोला जाये जिससे वे योग्य बनकर समाज में आदर की पात्र बने।" सरोजिनी को लग रहा था कि यह राष्ट्र के लिए लज्जा की बात है कि ऐसा प्रस्ताव रखना पड़ रहा है। तीन दिन पहले प्रतिनिधि मिलकर यही विचार करते रहे कि देश की राजनैतिक स्वतत्रता कैसे मिले जबकि सामाजिक सगठन मे कैंसर छिपा है। किसी भी बुद्धिमान व्यक्ति के लिए यह समझना असम्भव है कि जिस देश में मनु जैसे कानून बनाने वाले हुए जिन्होंने आदर्श रखे जिस देश में महात्मा बुद्ध जैसे प्रेम का आदर्श रखने वाले हुये। उसी देश की सतान इस हद तक गिर गयो है या भूल गई है कि हिन्दू विधवा के भी अधिकार हैं। वे पुरुष से दुर्बल और प्रताड़ित स्त्री की रक्षा करना भूल गये हैं। पूरा पडाल तालियों से गूजता रहा। उन्होंने कहा कि राष्ट्र के विकास में स्त्री का महत्वपूर्ण स्थान है किन्तु पुरुष विकास कर रहे हैं और स्त्रिया पिछड़ रही हैं।

भारत के राजनीतिक मच पर श्रीमती सरोजिनी नायडू का आविर्भाव एक नवीन युग का प्रारम्भ था, ऐसे युग का प्रारम्भ जिसमें भारत ने सदियों के बाद पुन अपने को एक अनुभव किया। इस एक में न केवल भारत की विशाल जनता, जिसमें स्त्री-पुरुष सभी धर्मों, जातियों तथा वर्णो के लोग हैं वरन सदियों की पद्दलित नारी

भी सम्मिलित है इस एकता की अनुभूति कराने वाली सरोजिनी थी। भारत के राष्ट्रीय जागरण, स्वतत्रता सग्राम तक अतत भारत को स्वतत्र कराने में नारियों का योगदान भी सराहनीय है। नारियों के इस सक्रिय योगदान का श्रेय श्रीमती सरोजिनी नायडू को जाता है।

सरोजिनी नायडू का आविर्भाव एक ऐसे समय में हुआ जब भारत पश्चिमी सभ्यता के सम्पर्क में आ चुका था। इस सम्पर्क के फलस्वरूप जो नवीन परिवर्तन दृष्टिगोचर हुये उससे सरोजिनी अछूती नहीं रही। भारतीय परम्परा व हिन्दू धर्म में जन्मी, अग्रेजी शिक्षा व पश्चात् दर्शन के कारण धार्मिकता तथा बौद्धिकता की अपूर्व सम्मिश्रण थीं। एक ओर तो वह अन्त करण की पुकार को सभी कृत्यों का स्त्रोत मानती थीं साथ ही दूसरी ओर उनका कहना था कि हमें ऐसी प्रत्येक वस्तु को तर्क की कसौटी पर परखना चाहिए, जो उसके द्वारा नापी जाने के योग्य हो, तथा उसका बहिष्कार कर देना चाहिए जो उस पर खरी न उतरती हो[1] अपने इन्हीं विचारों के कारण वह स्त्री और पुरुष के समानाधिकारों के प्रति प्रजातन्त्रात्मक तथा समानता पूर्व दृष्टिकोण अपना सकी।

नारी को पुरुष की 'अर्द्धांगनी' कहा गया है परन्तु सरोजिनी स्त्री पुरुष का आधा भाग नहीं बल्कि स्त्री पुरुष की जननी, निर्माता तथा मूक मार्गदर्शक है। तथा ईश्वरीय सृष्टि की सबसे अनुपम रचना है। जहा तक स्त्री पुरुष के समानता का प्रश्न है सरोजिनी क्रान्तिकारी विचारों से सहमत हैं कि प्रकृति ने स्त्री और पुरुषों को भिन्न उद्देश्यों के लिए बनाया है तथा उसके लिए भिन्न प्रकार की शक्तिया व क्षमताओं से विभूषित किया है।

स्त्री को पुरुष की सभी गतिविधियों में भाग लेने का अधिकार है तथा उसे स्वतत्रता का समान अधिकार है।

सक्षेप में सरोजिनी स्त्री और पुरुष में केवल मात्र लिग भेद के आधार पर भेदभाव नहीं करती थीं उनके अनुसार स्त्री के उपर ऐसा कोई बधन नहीं होना चाहिए जो पुरुषों पर भी लागू न हों नारी के समानाधिकार की सरोजिनी सबसे पक्षधर थीं

---

[1] "विश्वज्योति" – महात्मा गाधी, अक अप्रैल 1969 पृ0 62

इस मूल्य पर वह किसी भी तरह समझौता करने के लिए तैयार नहीं थी। वह नारी को मानवता की जननी मानती थीं।

सरोजिनी नायडू का आर्विभाव एक ऐसे समय में हुआ जब भारत प्राचीन भारत के महान आदर्श, और अतुलनीय सभ्यता को भूलकर पतन के गर्त में गिर चुका था, आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक तथा शैक्षिक समाज का लगभग प्रत्येक पहले इस सर्वव्यापी विनाश का शिकार था। परन्तु समाज का कोई भी अग इस पतन से इतना प्रभावित नहीं था। जितना कि नारी वर्ग। पुरुष की सहधर्मिणी सहयोगी, तथा अर्द्धांगनी के पवित्र स्थान से गिरकर नारी उसकी अधीनस्थ हो गयी थीं। एक चल सम्पत्ति जिसका उपभोग इच्छा से किया जा सकता था और जिसकी अपनी कोई पृथक इच्छा व अधिकार नहीं है। परम्पराओं और प्रभाओं ने नारी के साथ घोर अन्याय किया था। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नारी मन की इस उक्ति को 'पिता रक्षित को मारे, भर्ता रक्षित यौवने।' रक्षन्ति स्वविरे पुत्रा न स्त्री स्वतन्त्र्यर्महीता'[1] चरितार्थ कर रही थीं।

मानवता की असीम प्रेमी, तथा अन्याय, चाहे वह किसी भी क्षेत्र में किसी भी रूप में हो की प्रबल शत्रु थीं उनका ध्यान तत्कालीन नारी वर्ग सहज ही आकर्षित कर रहा था। अपनी लेखनी के माध्यम से तथा अनेक पदों को सुशोभित करते हुए अपने वृहद देश सेवा काल में सरोजिनी सदैव नारियों के उपर कानून, प्रथाओं और धर्म की ओर से लादे गये कठोर अन्याय के लिए सघर्ष करती रहीं। उन्होंने निर्भीकता पूर्वक पर्दाप्रथा, बाल विवाह, विधवा विवाह, देवदासी, वेश्यावृत्ति तथा आर्थिक परतन्त्रता आदि नारी जाति से सम्बन्धित समस्याओं के विरुद्ध आवाज उठायी।

पटना में पर्दा प्रथा को हटाने के लिए सम्मेलन हुआ। सम्मेलन में अन्य स्थानों की महिलाओं से पर्दे का त्याग करने की अपील की गयी इसके साथ ही इस सम्मेलन में एक प्राचीन कमेटी की रचना भी की गयी। जिसका उद्देश्य पर्दे के विरुद्ध प्रचार करना तथा बिहार में नारी शिक्षा की प्रगति की व्यवस्था करना था। एक अन्य विज्ञप्ति द्वारा प्रत्येक नगर व गाव में महिलाओं के लिए महिला समिति के सुझाव

---

[1] मनु - 913

का प्रस्ताव भी रखा गया, महिला आश्रम खोलकर महिलाओं को प्रशिक्षित करने का विचार रखा गया।

बाल विवाह हिन्दू समाज की एक प्रमुख प्रथा रही है परन्तु उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में इसका सर्वत्र बोलबाला था प्रत्येक सुधारवादी आन्दोलनों तथा शैक्षिक प्रगति के होते हुए भी यह प्रथा बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ तक अपना एक विशेष स्थान रखती थीं, सही अर्थो में आज भी भारत इससे अछूता नहीं है। बाल विवाह के दुष्परिणाम अनेक दृष्टि से समाज के लिए हानिकर है। सरोजिनी के अनुसार सर्वप्रथम यह प्रथा बालिका से शारीरिक तथा मानसिक विकास में बाधक है। बाल-माता के रूप मे तो इसकी इतिश्री ही हो जाती है। अल्पायु में मातृत्व प्राप्त करने वाली बालिकाओ की मृत्यु शिशु के जन्म के समय ही होती है। इस सम्बन्ध में जान मीणा भी लिखते हैं कि 1000 माताओं में 100 मातायें शिशु के जन्म के समय ही मरती हैं जबकि स्वय वे शैशव नहीं छोड़ पाई होती हैं।[1]

बाल विवाह को धर्म का आवरण देना अथवा धर्म का भग मान लेना एक दम मूर्खता है। सरोजिनी ने इस प्रथा को स्वराज्य प्राप्ति के प्रश्न से सम्बन्धित कर उसे तत्कालीन राजनीति का अग भी बना दिया ताकि इस सम्बन्ध में शीघ्र कदम उठाये जा सके। उन्होंने कहा कि बाल विवाह नैतिक तथा शारीरिक दोनों दृष्टियों से दोषयुक्त है। क्योंकि यह हमें नैतिकता से दूर करती है तथा शारीरिक पतन का कारण बनती है। उन्होंने कहा कि नारियों के बिना स्वतत्रता की लड़ाई जीती भी गयी तो उसे अक्षुण रखने के योग्य नहीं है स्वराज्य के लिए लडने में केवल राजनीतिक जागरण ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि पूर्ण जागरण-सामाजिक, शैक्षणिक, नैतिक, आर्थिक तथा राजनीतिक की आवश्यकता है।[2] इस प्रथा को स्वराज प्राप्ति में बाधा मानती थीं। सरोजिनी ने बालिका की विवाह योग्य उचित आयु कम से कम 18 वर्ष होनी चाहिए। "अखिल भारतीय महिला" सम्मेलन के प्रयास की महात्मा गाधी ने भी सराहना की थी।

---

[1] हरिजन - 6 11, 1935
[2] यग इण्डिया - 26 6, 1926

बाल विवाह की कुरीति का परिणाम बाल-विधवा के रूप में दृष्टिगोचर होता है। बालिकायें उस उम्र में वैधक को प्राप्त करती हैं जबकि उन्हें यह भी नहीं मालूम होता था कि विवाह क्या है? "बाल विवाह की बढ़ती प्रवृत्ति बाल विधवाओं की सख्या बढाने के लिए उत्तरदायी है। 1921 में सैसस रिपोर्ट के आकड़े विधवाओं की सख्या में वृद्धि को चित्रित करते हैं जो इस प्रकार है -

0 से 5 वर्ष की आयु की विधवाओं की सख्या			- 11,892
5 से 10 वर्ष	"	"	- 85,037
10 से 15 वर्ष	"	"	- 232147
			328,078

सरोजिनी बाल विवाह को हिन्दू जाति का अत्याचार मानती थीं। बाल विधवा तो उनके लिए समाज एव देश के उपर एक कलक है। एक ऐसा कलक जो समाज के साथ-साथ हिन्दू धर्म और जाति को भी समाप्त कर रहा है। इस सम्बन्ध में महात्मा गाधी लिखते हैं कि "यदि हमारा अन्त करण पूर्ण जागृत हो तो 15 वर्ष के नीचे विवाह सम्पादित नहीं होना चाहिए[1] गाधी जी के लिए हिन्दू धर्म में विधवा शब्द का अर्थ अत्यन्त पुनीत है और सच्ची विधवा का महत्व भी महान है।

सरोजिनी इन बाल-विधवाओं के पुर्नविवाह की समर्थक थीं चूकि इन विधवाओं को विवाह के बारे में कुछ जानकारी नहीं थी, अत इनका पुर्नविवाह उसी भाति होना चाहिए जैसे वे एक अविवाहित कन्या हों। गाधी जी के लिए बाल-विवाह पाप है और पुर्नविवाह इस महापाप का प्रायश्चित स्वरूप है, बल्कि पाप से मुक्ति पाने का साधन है।[2] गाधी जी के अनुसार यदि एक 50 वर्ष का व्यक्ति पुर्नविवाह कर सकता है तो उसी आयु की स्त्री को भी यही अधिकार होना चाहिए।[3]

विद्यार्थी वर्ग भी इससे अछूता नहीं है जाफना में रामनाथन महिला विद्यालय की छात्राओं को सम्बोधित करते हुये उन्होंने छात्राओं से प्रतिदिन अतिरिक्त समय में आधा घटा चर्खी कातने की अपील की थी।[4]

---

[1] Ibid p 397
[2] यग इण्डिया - 14 10, 1926
[3] Ibid
[4] गाधी - टू द वोमेन पेज 118

अहिंसा आधुनिक युग की गाधीवाद की एक महान देन है स्वय गाधी के चरित्र का सबसे महान पहलू सबसे शक्तिशाली गुण यही अहिसा थी। श्रीमती सरोजिनी नायडू, श्रीमती रामाबाई रानाडे, कु0 कानीलिया सोराबजी, श्रीमती अबाला बोस आदि महिलाओं के रूप में भारतीय नारियों ने अपना सच्चा प्रतिनिधित्व प्राप्त किया। प्रथम व द्वितीय विश्वयुद्धों ने नारियों के लिए आर्थिक स्वतत्रता को भी बल दिया इसी तरह भारतीय राजनीतिक आन्दोलनों ने भी नारियों को सगठित होने और नागरिक अधिकारों के प्रति सजग कराने का अवसर प्रदान किया।

1929 की रिपोर्ट के अनुसार भारत में नारियों के साक्षरता का प्रतिशत मात्र दो प्रतिशत थी[1] इग्लैण्ड और अमेरिका के महिला आन्दोलनों ने भारत में भी नारियों को उदबोधन के लिए प्रेरित किया । यह कहना अनुचित न होगा कि भारतीय नारियों के सामान्य अधिकारों के सघर्ष का अर्द्धभाग इग्लैण्ड तथा अमेरिका में विधित किया जा चुका था।

1919 में माटेग्यू चेम्सफोर्ड के संवैधानिक सुधारों के फलस्वरूप शिक्षा विभिन्न राज्यों के भारतीय मत्रियों के हाथों में आ गयी थी। भारतीय मत्रीगण शिक्षा को अनिवार्य तथा निशुल्क बनाना चाहते थे। इसके लिए विभिन्न राज्यों की व्यवस्थापिकाओं द्वारा अधिनियम पारित किए गये। परन्तु एक कठिनाई थी ये मत्री वित्त को नियन्त्रित नहीं करते थे। अत स्थानीय अधिकारी धनराशि के आभाव में इस योजना को कार्यरूप में परिणत नहीं कर सकते थे।

1927 तक सम्पूर्ण ब्रिटिश भारत में बालकों की सख्या प्राइमरी स्कूलों में 4 गुनी, मिडिल स्कूलों में 18 गुनी तथा हाईस्कूलों में 34 गुनी अधिक थी कलात्मक कालेजों में 64,000 पुरुष तथा 1,900 महिलायें थीं।[2]

इस काल में भारतीय सुधारकों ने नारियों की सामाजिक अयोग्यता को दूर करने में महत्वपूर्ण सहयोग दिया। शिक्षित भारतीयों के मध्य लड़कियों की विवाह की आयु बढ गयी थी। शारदा एक्ट ने बालिकाओं के विवाह की न्यूनतम आयु 14 वर्ष नियत की। इसके अतिरिक्त उत्साही सुधारकों द्वारा स्थापित विभिन्न व्यक्तिगत सघों

---

1 Ibid, P 145, 1929, P 45, Interim Report at the India Statutory Commission
2 Interim Report at the India Statutory Commission, 1929 147, 148

ने विधवा विवाह का प्रचार किया तथा नारियों के प्रति उचित सामाजिक व्यवहार की माग रखी। इन सब तत्वों ने नारी शिक्षा की प्रगति में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

1927 में "प्रथम" अखिल भारतीय महिला सम्मेलन पूना में सगठित किया गया उसी समय से वार्षिक सम्मेलनों का श्री गणेश हुआ जिसमें महत्वपूर्ण विषयों जैसे, सामाजिक सुधार, शैक्षिक प्रगति, महिलाओं का राजकीय तथा केन्द्रीय व्यवस्थापिकाओं में प्रतिनिधित्व तथा विभिन्न नौकरियों में नारियों की नियुक्ति के सम्बन्ध में विचार सरोजिनी नायडू ने प्रकट किये। इस सम्मेलन के विभिन्न विभागों में अपने नियत कार्यो को उत्साहपूर्वक सम्पादित किया।

1917 में राज्य सचिव की मान्टेग्यू भारत के लिए नवीन सविधान निर्माण हेतु तत्कालीन परिस्थिति का अध्ययन करके भारत आये। श्रीमती कजिन्स ने, श्रीमती सरोजिनी नायडू के नेतृत्व में महिलाओं के एक प्रतिनिधि मडल का आयोजन किया यह मडल 1 दिसम्बर 1917 को मान्टेग्यू से मिला।[1] तथा नारी मताधिकार की माग को उनके सामने रखा। श्री माटेग्यू ने उनकी माग को स्वीकार करने का आश्वासन दिया। परन्तु माटेग्यू चेम्सफोर्ड सुझाव के प्रकाशित होने पर नारी मताधिकार की पूर्ण अवहेलना की गयी थी माटेग्यू ने अपने तर्क में कहा कि जब तक प्रत्येक वर्ग की महिलायें पर्दा के कारण बाहर निकलने में असमर्थ रहें, नारी मताधिकार व्यवहारिक नहीं हो सकेगा। इस प्रतिनिधि मडल की सदस्यों में श्रीमती सरोजिनी नायडू, श्रीमती एनी बेसेन्ट, श्रीमती कजिस, श्रीमती श्रीरग्गप्पा लेडी सदाशिव अय्यर, श्रीमती चन्द्रशेखर अय्यर, श्रीमती हीराबाई टाटा, बेगम हजरत मोहनी, श्रीमती गुरुस्वामी चैती आदि थीं।

माटेग्यू चेम्सफोर्ड योजना 1919 को निर्मित हुयी परन्तु व्यवहारिक रूप से 1920 में ही हो सकी थी। इस योजना के अन्तर्गत नारियों के प्रतिनिधि मडल की अपील को कोई स्थान नहीं दिया गया था। भारतीय महिलायें केवल दर्शन बनकर देखने वाली नहीं थी, उन्होंने सघर्ष जारी रखा 1919 में यह बिल ससद के समक्ष विचारार्थ रखा गया। सरकार ने नारियों की माग के औचित्य के प्रमाण प्रस्तुत करने के लिए ससद के दोनों सदनों की एक समिति का निर्माण किया। श्रीमती एनी

---

[1] Theosophical Publishing House – Dr Annie Besent and her work for Swaraj page 16-

बेसेन्ट, श्रीमती सरोजिनी नायडू तथा हीराबाई ने एक समिति के रूप में दोनों सदनों की बैठक में नारी मताधिकार की माग के औचित्य को सिद्ध किया। ससद ने यह विषय निर्वाचित असेम्बली के सदस्यों के उपर छोड दिया।

अथक प्रयास का फल सरोजिनी नायडू को प्राप्त हुआ, नारी मताधिकार प्राप्त करने वाला प्रथम राज्य था ट्रावनकौर, उसके बाद 1921 में मद्रास, 1925 में बगाल, 1926 में पजाब, 1927 में सेन्ट्रल प्राविन्स तथा 1929 मे बिहार में इसकी मान्यता प्राप्त हो सकी।

मताधिकार के अधिकार को निर्वाचित होने के अधिकार के साथ नहीं मिलाया जा सकता। चूकि यह विषय भारतीय प्रतिनिधियों के उपर छोड़ दिया गया था, इसलिए शीघ्र ही उन्हें यह भी अधिकार प्राप्त हो गया था 1926 के चुनाव में मद्रास ने महिला उम्मीदवार खड़े किये। श्रीमती कमलादेवी चट्टोपाध्याय तथा श्रीमती हन्नान एन्जिलो प्रथम महिला उम्मीदवार थी। दोनों ही पराजित हुयीं। मद्रास सरकार ने मुन्तुलक्ष्मी रेड्डी को विधान सभा के लिए मनोनीत किया। नारी मताधिकार की प्राप्ति सरोजिनी नायडू के लिए सबसे बड़ी उपलब्धि थीं।

1919 में श्रीमती सरोजिनी नायडू, श्रीमती हीराबाई टाटा तथा श्रीमती एनी बेसेन्ट ने एक दल के रूप में भारतीय नारियों का प्रतिनिधित्व कर इग्लैण्ड में सयुक्त ससदीय समिति के समक्ष साक्ष्य प्रस्तुत किये। बम्बई में महिलाओं ने सभा करके साउथ वर्ग समिति की, जो भारतीय परिस्थितियों के अध्ययन हेतु निर्मित की गयी थी तथा जिसमें 800 महिलाओं के हस्ताक्षर युक्त विनय ठुकरा दी गयी थी, की भर्त्सना की।

1902 में सरोजिनी ने कलकत्ता में सार्वजनिक सभाओं में भाग लिया और बम्बई में एक विराट जनसभा तथा महिलाओं की सभाओं में भाषण दिये। इन भाषणों में उन्होंने महिलाओं की कमजोर सामाजिक स्थिति, बाल विवाह, विधवा विवाह, बहु विवाह (पुरुषों में) और महिलाओं के शिक्षा आदि विषयों को स्पर्श किया। उन्होंने भावुकता पूर्व स्वर में महिलाओं का आह्वान किया कि वे घरों से बाहर आये, काम में जुट जायें और व्यवसायिक क्षेत्रो में प्रवेश करें। उन्होंने महिलाओं से शिकायत की

कि वे परम्परा की जजीरों से जकड़ी हुयी हैं। और अपने चारों ओर फैली हुयी दरिद्रता और पीडा, अस्पतालों में पड़े हुए रोगियों, बच्चों की उपेक्षा तथा अनाथों और विकलागों की व्यवस्था की ओर से आख मूद कर बैठ गयी हैं। इन्होंने इस वास्तविकता का परिपूर्ण दर्शन प्राप्त कर लिया था कि धार्मिक मतों के अलगाव ने दूसरे धर्मो के अस्तित्व की तो अनुमति दे दी है लेकिन दूसरों के दुख दर्द के प्रति सामान्य मानवीय चिन्ता और सवेदना के तत्वों का समावेश नहीं किया है। भारत में नारी स्वातेन्त्रय आन्दोलन को जन्म देने में उनकी सफलता में इस तत्व का बहुत योगदान रहा है।

वह कमी महिला मताधिकार, कभी महिला शिक्षा, महिला की स्वतत्रता, भारत की भावी महिलाओ की कल्पना, महिलाओं की राष्ट्रीय शिक्षा, महिलाओं की स्थिति, विधवा, बाल विवाह, स्त्री पुरुषों की बीच समान योग्यता इत्यादि समस्याओं पर अपने विचार जनता तक पहुँचाती रही।

12 अप्रैल 1917 को महिला शिष्ट मडल वायसराय से मिलने के बाद पुरुषों की एक सभा में बोलते हुए कहा कि "सज्जनों मैं आज रात आप तक पहुँचने के लिए बहुत दूर से चलकर आयी हूँ कि मैं पुरुषों के लिए नहीं महिलाओं के लिए आवाज उठा सकूँ उन महिलाओं के लिए जिनकी गौरवशाली परम्परा यह रही है कि सीता अपने सतीत्व की दी गयी चुनौती सहन नहीं कर पायी और उन्होंने धरती माता से विनती की कि मुझे अपने भीतर सजोकर मेरी प्रमाणिकता सिद्ध करो। इस समय सरोजिनी अपनी शक्ति की 'चरम शिखर' पर थीं। और देश भर में उनकी माग निरन्तर बनी हुयी थी। 1917 के बाद उनका जीवन सतत् राजनीतिक गतिविधि में फसा रहा। उन्हें विश्राम तभी मिलता जब विदेशी सरकार उन्हें जेल में डाल देती।

श्रीमती सरोजिनी नायडू ने मद्रास के प्रेसीडेंसी एसोसिएशन के वार्षिक अधिवेशन में श्रीमती नायडू ने यह प्रस्ताव प्रस्तुत किया था "यह कार्फ्रेस दक्षिण भारत की भिन्न-भिन्न जातियों से अपील करती है कि भारत के ऐसे सकटकाल में स्थानिक, जातिय मतभेदों को दूर करे और सब मिलकर अपनी मातृभूमि के उद्धार के लिए सघर्ष करे।

इस सम्मेलन में विचार व्यक्त करते हुए कहा कि हिन्दू जातियों का सच्चा अर्थ इन अर्थो में बताया – "मातृभूमि की कीर्ति के लिए काम बाट लेने के सिवा इन जातियों का और कोई उद्देश्य ही क्या है? काम इसलिए बाट लिये गये हैं जिससे अपने जिम्मे का काम प्रत्येक जाति पूर्ण रूप से करके मातृभूमि को सम्पन्न बनाने में सहायक हो। यह कामों का विभाग राष्ट्रीय सभ्यता और राष्ट्रीय ज्ञान के बनाने और उसकी वृद्धि करने के लिए है। क्या हम अपने विकास के वास्तविक अभिप्राय को इस तरह भूल गये हैं कि जो बात अधिक सम्पन्नता युक्त एकता के लिए थी वही आज अनेकता फूट और पतन का कारण हो रही है। जिसका बुरा प्रभाव मातृभूमि की प्रतिष्ठा और उन्नति पर इतना पड़ रहा है।[1]

श्रीमती सरोजिनी नायडू जाति, वर्ग, सम्प्रदाय, धार्मिक अनेकता एव क्षेत्रीय विचारधारा की सकुचित सीमा से बहुत उपर थी तभी सरोजिनी के सम्बन्ध में प0 जवाहर लाल नेहरू ने कहा था कि सरोजिनी हमारे स्वाधीनता सघर्ष को उच्चतर स्तरों पर ले गयी। उनका यह चमत्कार बहुत ही रहस्यमय है कि सरोजिनी नायडू ने जाति और सकुचित सीमाओं से उपर उठकर कार्य किया इसीलिए वह राष्ट्रीय नहीं बल्कि अर्न्तराष्ट्रीय महिला थी। वह पूरे विश्व के मानवता के कल्याण की बात करती थी। उनका यह चमत्कार बहुत ही रहस्यमय है शब्द तो आखिर शब्द होते हैं। वकतृत्व कला एक बात है और भाषा पर अधिकार बिल्कुल दूसरी, कवि शब्दों का बिम्बजाल बुन सकते हैं और विचारक उसमें गहन चिन्तन भर सकते हैं। किन्तु श्रोताओं की चेतना को उन्नत स्तर तक ले जाना किसी किमिलागार के वश की ही बात है।

श्रीमती सरोजिनी नायडू हिन्दू मुस्लिम एकता तथा विभिन्न हिन्दू जातियों के एकता की आवश्यकता इतने जोरों से प्रतिपादित करती रहती थी, इसीलिए इस एकता पर भाषण देने कें लिए अक्सर वही चुनी जाती थीं। स्वय महात्मा गाधी जी का श्रीमती सरोजिनी नायडू पर पूर्ण विश्वास है और जिनकी आखे हैं वे किस प्रकार असहयोग आन्दोलन में प्रारम्भ से ही महात्मा जी के साथ ही साथ बड़े उत्साह के साथ श्रीमती नायडू काम कर रही हैं। सन् 1922 ई0 को 18वीं मार्च को जब

---

[1] सरोजिनी नायडू ले0 मातासेवक पाठ्क, पेज 35,

गरीबों और मजदूरों पर होने वाले अत्याचारों के खिलाफ सरोजिनी हमेशा चिन्तित रहती थीं। और उनके उन्नति एव विकास की बात करती थीं। कुछ ही वर्षो पहले किस प्रकार आरकाटी लोग हमारे गरीब भाइयों और बहनों को तरह-तरह के प्रलोभन देकर बहकाते और फिर उन्हें चुराकर फिजी आदि देशों को कुली बनाकर बेच देते थे और किस प्रकार मारीशस या मिर्च के टापू, फिजी आदि में उन गरीबों, मजदूरों पर राक्षसी अत्याचार वहा के गोरे किया करते थे यह सब सभी को मालूम है। आश्चर्य तो यह कि यह सब अत्याचार और शर्तबन्द कुलीप्रथा यद्यपि एक प्रकार की गुलामी के पट्टे के समान ही थीं, तो भी बहुत वर्षो तक उस अग्रेजी राज्य के भीतर भारत में वह प्रचलित रही जो ससार से गुलामी का अन्त करने का दावा करती रहती हैं। जानने वाले जानते हैं कि किस प्रकार शर्तबन्द कुलिया (गिरमिटिया मजदूरों) के उपर मिर्च के टापू आदि उपनिवेशों में गोरों के जघन्य राक्षसी अत्याचार होते थे। और किस प्रकार वहा बहकाकर पहुँचायी हुई भारतीय स्त्रियों के सतीत्व का नाश किया जाता था। श्रीमती नायडू भला अपनी स्त्री जाति पर किये जाने वाले उन राक्षसी अत्याचारों को कैसे सहन कर सकती थीं? इसी से हम देखते हैं कि जिस समय शर्तबन्द कुली प्रथा मिटाने के लिए भारत में और इग्लैण्ड में नेताओं ने घोर आन्दोलन किया था उस समय श्रीमती नायडू ने भी अपनी सारी शक्ति इस ओर लगा दी थी। लखनऊ 1916 की काग्रेस के बाद ही श्रीमती नायडू ने इलाहाबाद में शर्तबन्द कुली प्रथा के विरुद्ध जोरदार भाषण किया था। उसमें उन्होंने कहा था कि "तुम्हें उस अपमान को जल्दी मिटा देना चाहिए जो तुम्हारी ललनाओं को विदेशों में सहने पड़ते हैं। आज उनके सम्बन्ध की जो बातें तुमने सुनी हैं उनसे अवश्य ही तुम्हारी हृदयागति धधक उठी होगी। भारत के पुरुषों! उस भाग को शर्तबन्द कुली प्रथा की चिताग्नि बना दो। जो शब्द आज मेरे मुह से निकल रहे हैं वे शब्द नहीं मेरे नेत्रों के आँसू हैं। क्योंकि मैं एक स्त्री हूँ और यद्यपि आप लोगों को भी अपनी माताओं और बहनों की बेइज्जती अखरती है।

किन्तु मेरी स्त्री जाति की जो बेइज्जती की जाती है उसे मैं अपनी बेइज्जती समझती हूँ।"[1]अपने इस व्याख्यान में सती सीता और रानी पद्मावती से लेकर कस्तूरबा गाधी तक का दृष्टान्त देते हुए श्रीमती नायडू ने अन्त में कहा कि जब

---

[1] मातासेवक पाठक पेज - 37, 38

भारत का पुरुष चुपचाप बैठकर ऐसे पाप कर्म देख रहे हैं तब राष्ट्रीय सदाचार कैसे सम्भव है।

दक्षिण अफ्रीका के ट्रासवाल, नेटाल आदि तथा अन्य उपनिवेशों में भारतीयों के साथ जो अन्याय किये जाते थे और उन्हें वहा के निवासियों के समान अधिकार नहीं दिये जाते हैं इन बातों से सरोजिनी नायडू को महान खेद होता है।

अगस्त 1934 में वह महिला भारतीय सघ के समक्ष भाषण देने के लिए मद्रास गयीं। तनिक भी ढील के लिए वह किसी को क्षमा नहीं कर सकती थीं उन्होंने महिलाओं के सामने निम्न प्रश्न पेश करके उन्हें यथार्थ का सामना करने के लिए विवश कर दिया।" क्या आपके लिए कोई काम नहीं है? क्या अनाथ बच्चे दयापूर्ण सहायता के लिए नहीं चीख रहे हैं, क्या शताब्दियों से विधवा का चीत्कार यह कहता हुआ काल के गलियारे के पार ही नहीं, वरन आज के द्वार पर दस्तक देते हुए कि हमारे साथ अन्याय हुआ है। आपकी पीढी हमें हमारी दासता की स्थिति से मुक्त कराने के लिए आगे आये? क्या देश की अशिक्षित महिलायें मौनरूप में किन्तु साथ ही तत्परतापूर्वक आपको आवाज नहीं दे रही हैं? क्या यहा गाव नहीं है जिन्हें अपनी स्थिति के सुधार और अपनी मात्र बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आपके परामर्श आपके सहारे, आपके वात्सल्य और आपके मार्गदर्शन की आवश्यकता हो? बाद में उन्होंने अपने श्रोताओं में जो फैशनेबुल महिलायें थीं कहा कि अब वे स्वदेशी आन्दोलन में सक्रिय भाग लेकर प्रतिदिन थोड़ा सूत कातने के लिये कहा।

1903 में मद्रास में विद्यार्थियों की सभा में "अपनी यात्राओं, अपनी धारणाओं, अपनी आशाओं, अपनी आकाक्षाओं, अपनी स्नेह और अपनी सहानुभूतियों के विस्तार तथा विभिन्न प्रजातियों, जातियों धर्मों और सभ्यताओं के साथ अपने सम्पर्क के द्वारा मैंने एक स्पष्ट दृष्टि प्राप्ति कर ली है। मेरे मन में प्रजाति, धर्म अथवा रग के आधार पर किसी प्रकार का भेदभाव नहीं रहा है जब तक विद्यार्थी बन्धुत्व की वह भावना, प्राप्त नहीं कर लेते और उसके स्वामी नहीं बन जाते तब तक आपको यह आशा नहीं करना चाहता कि आप सम्प्रदायवादी नहीं रहेंगे। और

यदि मैं इस शब्द का प्रयोग करूँ तो कहा जा सकता है कि उस स्थिति में आप का राष्ट्रवादी बनना कभी भी सम्भव नहीं होगा।''[1]

मद्रास में सामाजिक सम्मेलन के समक्ष एक अन्य भाषण में मानवीय बन्धुत्व और सामाजिक एकीकरण के बारे में प्रस्ताव पारित किये जा रहे हैं उनकी आवश्यकता ही नहीं रहेगी और समूचा देश एक इकाई के रूप में सगठित हो जायेगा। इस सम्मेलन में चर्चा का मूल विषय ऐकता ही था। युवाओं के लिए इनके इस परामर्श के पीछे गहरी दूर दृष्टि छिपी थी कि उन्हें यात्रायें करनी चाहिए और पुस्तकों तथा अन्य प्रकाशित साहित्य पर निर्भर रहने के बजाय व्यक्तियों और विद्वानों से सम्पर्क स्थापित करना चाहिए।

2 अगस्त 1913 उन्होंने कैक्स्टन हाल मे एक विराट और उत्साही छात्र समुदाय के समक्ष शानदार उद्घाटन भाषण दिया तथा उनके सामने देश भक्ति और आत्मोत्सर्ग के उन्नापक पाठ रखे उनकी पीढी के लोगों में एक अकेले उनमें ही ये पाठ साधिकार और गरिमापूर्वक प्रस्तुत करने की क्षमता थीं विद्यार्थियों के सम्मेलन में सरोजिनी की उपस्थिति युवकों पर बहुत गहरा प्रभाव डालती थीं। सरोजिनी वाराणसी, इलाहाबाद, कलकत्ता और बिहार में विद्यार्थियों की अनेक सभाओं में बोलीं आरम्भ से ही उन्होंने इन सार्वजनिक सभाओं में सर फिरोजशाह मेहता, पडित मदनमोहन मालवीय, गोपाल कृष्ण गोखले, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, मुहम्मद अली जिन्ना, दादाभाई नवरोजी, लाला लाजपत राय और बाल गगाधर सरीखे महान समकालीन नेताओं के साथ भाषण दिये।

दिसम्बर 1917 में उन्होंने मद्रास विद्यार्थी सम्मेलन में भाषण दिया और कुछ दिनों बाद तरूण मुस्लिम सघ की सभा में शिक्षक महाविद्यालय सईद पेट में ''भविष्य की आशा'' विषय पर विद्यार्थियों के सम्मुख थीं। उन्होंने मद्रास विधि महाविद्यालय के विद्यार्थियों को भी सम्बोधित किये। उन्होंने अपने हर भाषणों में युवाओं को देश सेवा में आगे आने को प्रेरित किया।

एक युवा ही इस ससार को बचाने का नुक्सा खोज सकता है और पुरानी पीढी के उन आत्म सतुष्ट राजनीतिज्ञों से लोहा ले सकता है। जो विश्व के हितों के

---

[1] सरोजिनी नायडू, ले0 ताराअली बेग पे041

विरुद्ध केवल अपने और अपने देश की सुरक्षा सत्ता और प्रतिष्ठा की चिन्ता में निमग्न है युवा मस्तिष्क और उसके शौर्य जिसमें समूचे विश्व को बचा लेने की शक्ति है वह मानव जाति को ऊपर उठा सकता है।

हरिजनों के सनोमान्यता में गॉधी उपवास को एक राजनीतिक चकमा कहा था तथापि गॉधी जी की मृत्यु की आशका के कारण वे तथा कुछ हिन्दू नेता हरिजनों के राजनीतिक प्रतिनिधित्व के लिए नई योजना तैयार करने को विवश हो गये जब गाँधी जी ने अपने क्षीण स्वर से उनके कान में कहा "मेरा जीवन तुम्हारे जेब में पडा है तब अम्बेदकर ने हथियार डाल दिये।[1] यह योजना पुना पैक्ट के नाम से प्रसिद्ध हुई ब्रिटिश प्रधानमत्री ने भी इसे स्वीकार कर लिया जब उनको प्रयोजन सिद्ध हो गया तो गाधी जी ने कस्तूरबा सरोजिनी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर और कुछ अन्य साथियों की उपस्थिति में थोडा सतरे का रस पीकर उपवास तोड़ा। छुआछूत के पाप के विरुद्ध आत्मशुद्धी में सरोजिनी गाधी जी के साथ थीं।

सरोजिनी हैदराबाद की बेटी थीं और हैदराबाद एक ऐसा नगर है जिसमें हिन्दू और मुस्लिम सस्कृतियों का सगम हुआ और जहा दोनों सस्कृतिया पुष्पित-पल्लवित हुई। इसी कारण यह बात तनिक भी आश्चर्यजनक नहीं लगती कि सरोजिनी के मन में साम्प्रदायिक एकता की कामना का स्थान स्वतत्रता के बाद दूसरा था। जहा तक स्वतत्रता का प्रश्न है वह तो उनके जीवन की महान अभिप्रेरणा ही थी वह सच्चे अर्थो में एकीकरण वादी थीं। इस मामले में वह अपने गुरु महात्मा गाधी से भी भिन्न थीं। गाधी जी विभिन्न सम्प्रदायों के निकटतम तथा अधिकतम बन्धुत्वपूर्ण सह अस्तित्व में विश्वास करते थे किन्तु सरोजिनी को सर्वाधिक सुख समन्वय और एकता की साधना में मिलता और सम्भवत यही उनके जीवन का महानतम कार्य माना जा सकता है।[2]

सरोजिनी नायडू बचपन से ही विभिन्न सस्कृतियों एव भाषा में पली बढी तथा जाति-पाति एव धार्मिक वैमनस्य से दूर रही वह आजीवन हिन्दू मुस्लिम एकता पर बल देती रहीं उन्होंने 1916 में लखनऊ के ऐतिहासिक नगर में जिसकी तुलना हिन्दू

---

[1] सरोजिनी नायडू, ले० ताराअली बेग, पे०163
[2] सरोजिनी नायडू ले० ताराअली बेग, पे० 63

और मुस्लिम सस्कृतियों के समन्वय की दृष्टि से केवल हैदराबाद से की जा सकती है। मुस्लिम लीग के सम्मेलन में नम्रतापूर्ण किन्तु निर्भीकतापूर्ण भाषण दिया उन्होंने कहा "मैं केवल एक कारण से अपने आपको यहा आपके सामने बोलने की अधिकारिणी मानती हूँ और वह कारण यह है कि मैं अनेक वर्षो तक नई मुस्लिम पीढी को एक वफादार मित्र तथा मुस्लिम महिलाओं के अधिकारों की समर्थक रही हूँ तथा मैं उनके उन अधिकारों के लिए उनके पुरुषों से लड़ी हूँ जिन्हें इस्लाम ने तो बहुत पहले ही दे दिये थे। किन्तु आपने उन्हें जिनसे वचित रखा है।"[1]

मुस्लिम राजनीतिक नेता सरोजिनी के सिवाय सम्भवत अन्य किसी हिन्दू के मुह से ऐसी निदा सुनने के लिए तैयार नहीं हो सकते थे इसका कारण यह था कि वह उन्हें अपनी बहन की तरह मानते थे।

जिस समय खिलाफत डेपुटेशन इगलैण्ड गया था श्रीमती सरोजिनी नायडू ने उसके साथ वहा खिलाफत के सम्बन्ध में किए हुए अन्यायों के विरुद्ध घोर आन्दोलन किया था। हिन्दू-मुस्लिम एकता की आवश्यकता पर तो वह राजनीतिक क्षेत्र में प्रवेश करने से पहले ही बराबर जोर देती रहती थीं। ये इस सम्बन्ध में अन्य नेताओं की अपेक्षा कहने का कुछ विशेष अधिकार भी रखती हैं। कारण यह है कि ये जिस प्रकार हिन्दू सभ्यता को बड़ी उच्च दृष्टि से देखती थीं वैसे ही इस्लाम के आदर्शो की भी प्रशसक हैं। हिन्दू मुस्लिम एक्ट को ये बिल्कुल ही स्वाभाविक समझती हैं।

13 अक्टूबर 1917 को पटना में छात्रों को सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा "अध्यक्ष महोदय तथा हिन्दू और मुसलमान भाइयों आज मैं ऐसे दायित्व बोध से अभिभूत हूँ जैसा मैंने इससे पहले कभी महसूस नहीं किया इसका कारण यह है कि मैं आजतक एक ऐसे विषय पर चर्चा आपके सामने करने जा रही हूँ जो मेरे जीवन डोर के साथ इतनी घनिष्ठतापूर्वक जुड़ा हुआ है कि मैं इस अवसर के लिए उपयुक्त सबल और बुद्धिमतापूर्ण शब्द नहीं टटोल पा रही हूँ आगे उन्होंने भावनापूर्ण शब्दों में गगा से प्रेरणा की विनती की तथा एक भविष्यवक्ता की तर यह आशा प्रकट करते हुए कहा कि वर्तमान राजनीतिक गतिविधि दोनों सम्प्रदायों के बीच दरार नहीं

---

[1] सरोजिनी नायडू पेज 62, ले० तारा अलीबेग।

डालेगी।[1] आगे उन्होंने अपने व्याख्यान में कहा था कि "इस देश में मुसलमान टिक जाने के लिए आये थे। यहा आने का उनका उद्देश्य यह नहीं था कि लूट खसोट कर माल लेकर फिर अपने घरों को वापस लौट जायें बल्कि उद्देश्य यह था कि यहा पर ही बस जायें और मातृभूमि को समृद्ध बनाने के लिए एक नयी जाति बनावें।" वे भारतवासियों से पृथक कैसे रह सकते हैं। क्या इतिहास से पता चलता है कि भूतकाल में वे यहा के निवासियों से पृथक रहते थे? बल्कि इतिहास तो यह बात बता रहा है कि एक बार वे इस देश में निवास करने का निश्चय करके इसी देश के निवासी बन गये और हममें अच्छी तरह मिल गये।[2]

सरोजिनी देवी का पक्का विश्वास है कि इस्लाम धर्म ने ही राजनीतिक साम्राज्यों की रचना की जैसा कि उन्होंने 1917 के दिसम्बर में मद्रास की मुस्लिम एसोशिएशन में अपने भाषण में कहा था। उसमें इन्होंने कहा था कि "सबसे पहले इस्लाम धर्म ने ही जनसत्ता की शिक्षा दी और उसे कार्य रूप दिया क्योंकि जब मसजिद में नमाज पढने वाले इकट्ठे होते हैं और बादशाह से लेकर गरीब किसान तक एक साथ ही घुटने टेककर अपनी नमाजों के समय घोषणा करते हैं कि एक परमात्मा ही महान है तब दिन भर में। (पाच नमाजों के समय में) पाच बार इस्लाम की जनसत्ता सजीव दिखायी पड़ती है। इस अभेद्य एकता को देखकर मुझे हमेशा चकित हो जाना पड़ता है। जो स्वभाव से ही मनुष्य को भाई बना देता है। लदन में जिस समय एक भारतीय एक मिश्रवासी एक अलजीरियावासी और एक तुर्क मुसलमान एकत्र होते हैं तो उनके मातृभाव में इससे कुछ भी अन्तर नहीं आता कि एक तो मिश्रवासी है दूसरा मुसलमान है भारत का रहने वाला। मातृभाव का यही महान भाव और मानवीय न्याय का यही उच्चज्ञान अकबर के शासन ने भारत को प्रदान किया था।"[3]

श्रीमती नायडू का इस्लाम धर्म और उसके अनुयायियों से इतना प्रेम क्यों है यह उन्हीं के शब्दों में "वे कहती हैं कि भारत के मुख्य मुसलमान शहर (हैदराबाद)

---

[1] सरोजिनी नायडू, Page 63 – तारा अलीबेग।
[2] सरोजिनी नायडू, Page 31 – मातासेवक पाठक।
[3] सरोजिनी नायडू, मातासेवक पाठक 32, 33

में मेरा निवास स्थान है। भारत के प्रधान मुसलमान राज्य की उस शहर पर हुकूमत है वहा पर दो सौ वर्षो से मुसलमानी सभ्यता विराज रही है। वह मुसलमानी सभ्यता जो जानती है कि किस प्रकार अपनी शासन व्यवस्था के भीतर अपने अधीन सभी जातियों को समान अधिकार और समान अवसर देने होते हैं। बचपन से ही मैं अपने शहर के मुसलमान पुरुषों और स्त्रियों के साथ-साथ रही हूँ और बाल्यावस्था में मुसलमान बच्चों के साथ खेलती रही हूँ"।[1]

1918 में जालन्धर में कन्या महाविद्यालय की छात्राओं को सम्बोधित करते हुए उन्होंने महिला शिक्षा पर बल दिया और कहा कि "हमारे गुरु गाधीजी ने हमें आदेश दिया है कि हम सभाओं में हिन्दुस्तानी भाषा में भाषण दें। मैं आपसे प्रार्थना करती हूँ कि आप मुझे टूटी फूटी ऊर्दू में भाषण करने के लिए क्षमा करेगी। आपकी उपप्राचार्य में महिला शिक्षा का जोरदार और मन को मथ डालने वाले शब्दों में किया है।

एकता का प्रयोजन उनको इतना अधिक प्रिय था कि वह पग-पग पर अभिव्यक्ति हो उठता था, गोखले के साथ उनकी बातचीत का उल्लेख यहा करना आवश्यक है। जब गोखले के इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कि "तुरत जो समय आ रहा है उसके बारे में तुम क्या कल्पना करती हो?" उन्होंने उत्तर दिया था, "पाच वर्ष से भी कम समय में हिन्दू-मुस्लिम एकता" इस पर गोखले ने कहा था कि "तुम बहुत अधिक आशावादी हो, तुम्हारे या मेरे जीवन में यह नहीं हो पायेगा।"

सरोजिनी गोखले के इस दृष्टिकोण से निरुत्साहित नहीं हुयी तथा अपने अनुरूप एक आत्मीय और जुझारू व्यक्ति की तलाश में लगी रही। वह व्यक्तित्व उन्हें 1913 में युवा और क्रियाशील मुहम्मद अली जिन्ना में दिखाई पड़ा, उस समय के महानतम जीवित भारतीय नेता गोपाल कृष्ण गोखले से आशीर्वाद लेकर एक मुस्लिम तरूण और एक ब्राह्मण तरूणों ने एक श्रेष्ठतम प्रयोजन की सिद्धि के लिए साथ-साथ एक ऐसी यात्रा आरम्भ की जो यद्यपि आगे जाकर दिशाओं में मुड़ गई तथापि उसने उन दोनों को पृथक किन्तु सर्वोच्च सिखरों तक पहुँचा दिया।

---

[1] सरोजिनी नायडू, तारा अलीबेग – 62,67

जहा चार पुरुषों ने सरोजिनी के जीवन को आकार दिया वहीं चार प्रभावों ने उनके सम्पूर्ण धर्मनिरपेक्ष लौकिकवादी दृष्टिकोण का रूप निर्धारित किया वे चार प्रभाव हैं लौकिकतापरायण, मानवतावादी विद्वान पिता, सही अर्थों में हिन्दू मुस्लिम नगर हैदराबाद अवसानोन्मुख वरिष्ठ उदारवादी नेता गोपालकृष्ण गोखले तथा भविष्योन्नमुख उदारवादी तरूण जिन्ना। सम्भवत गोखले ने सरोजिनी पर सबसे अधिक प्रभाव डाला। इसका कारण यह रहा होगा कि वह अपने जीवन के निर्माण काल में ही गोखले के सम्पर्क में आ गयी थीं, किन्तु सम्पर्क के काफी समय बाद सरोजिनी ने उन्हें अपना राजनैतिक गुरु मानना शुरु किया।[1]

सरोजिनी अपने मित्रों के प्रति बहुत वफादार रहती थीं इसका सबसे बड़ा प्रमाण जिन्ना के प्रति उनका आजीवन आदरभाव है। वह जिन्ना के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध तो बनाये नहीं रख सकी लेकिन यह आदरभाव कभी कम नहीं हुआ। वह उनके साथ अनेक बार सार्वजनिक मच पर गयीं लेकिन उनके बीच व्यक्तिगत सम्बधों का निर्माण उस समय हुआ जब उन्होंने लन्दन में जिन्ना के साथ छात्रों के बीच काम किया उस समय से ही उन्होंने जिन्ना की गतिविधि को प्रोत्साहन दिया तथा यद्यपि हिन्दु-मुस्लिम एकता के सम्मिलित स्वप्न की दुखातकारी विफलता ने उनकी राहों को सदा के लिए पृथक कर दिया, फिर भी आलोचकों से उन्होंने जिन्ना की रक्षा की "उनकी जीवनीकार पद्मनीसेन गुप्ता ने एक आकर्षक सस्मरण में लिखा है कि "1946 में एक बार मैं श्रीमती नायडू के पास गयी और मैंने उन्हें बताया कि मैंने कुछ महान नेताओं पर एक पुस्तक लिखी है तो उन्होंने मुझसे पूछा कि तुमने क्या उसमें जिन्ना को सम्मिलित किया है। मैंने यना में सिर हिलाया तो वह मुझसे नाराज हो गयी और तुरन्त बोली लेकिन जिन्ना तो महान व्यक्ति हैं। तुम्हें उनको अपनी पुस्तक में सम्मिलित करना चाहिए था। सरोजिनी ने गद्य एव पद्य दोनों में जिन्ना के प्रति अपना आदरभाव प्रकट किया है। उन्होंने 1915 में काग्रेस अधिवेशन में उन्होंने जिन्ना के सम्मान में जागो (अवेक) शीर्षक से कविता पाठ किया था।

उनके एक अन्य मुस्लिम मित्र उमर सोभानी थे। वह बम्बई के एक प्रमुख और सम्पन्न व्यवसायी थे। वह उन लोगों में से थे जिन्होंने गाधी जी को आरम्भ में

---

[1] सरोजिनी नायडू, Page 64 तारा अलीबेग ।

सहायता दी थी और उनके यज्ञ कार्य में अपनी समूची सम्पति को होम कर दिया और अन्तत अपने जीवन को भी बलिदान कर दिया। 1926 में उनके आकस्मिक देहावसान से श्रीमती नायडू को गहरा आघात लगा और इस अवसर पर उन्होंने एक अत्यन्त मार्मिक कविता लिखी।

श्रीमती नायडू को मि0 जिन्ना आदि से अधिक घनिष्ठता रखते देखकर कितने ही अवसरों पर कितने ही लोगों को आश्चर्य होने लगता है, हमें आशा है कि श्रीमती नायडू के उपर के कथन से वह दूर हो जायेगा। निजाम के हैदराबाद में जन्म लेने वाली और बाल्यावस्था में मुसलमान बच्चों के साथ खेलने वाली सरोजिनी देवी यदि इसलाम सभ्यता को इतनी उच्च दृष्टि से देखें तो आश्चर्य ही क्या? परन्तु जहाँ वे इसलाम की इतनी प्रशसक हैं, वहा अपने हिन्दू धर्म का पूरा अभिमान है। 1917 ई0 में मद्रास के विद्यार्थियों की एक सभा में भारतीय सभ्यता के विषय में जो प्रभावपूर्ण भाषण किया था उसमें उन्होंने कहा था कि –"भारत को महान बनाने वाली वस्तु क्या थी? वह कौन सी वस्तु थी जिसने भिन्न-भिन्न ज्ञानों का प्रकाश करने के अवसर उसे प्रदान किये? वह बात यह थी कि भारत अपने प्रति सच्चा था। भारत का विश्वास था कि राष्ट्र को आत्मा के भीतर से ही राष्ट्र का सच्चा भाव प्रकट होता है और यद्यपि एक राष्ट्र को उन सब बातों को ग्रहण कर लेना चाहिए जो अन्य सभ्यताओं तथा अन्य युगों में अच्छी पायी जाय, परन्तु विदेशी सभ्यता के द्वारा यह सम्पन्न नहीं किया जा सकता है। इस पर विदेशी बातों का अधिकार नहीं हो सकता। हजारों वर्षो के बाद भी हम देखते हैं कि बुद्धि और अध्यात्म विद्या का यह खजाना सुन्दर और अक्षय्य बना हुआ है और जो हमारा है किन्तु हमें स्मरण नहीं रहा कि यह हमारा ही है। हमारे दर्शनशास्त्र आज जीते जागते हैं और इनकी रचना के बाद कितने ही युग बीत चुके हैं तो भी वे इसलिये विद्यमान हैं कि वे भारत के सिद्ध विचारों के विवरण हैं भारत का धर्म आज भी जीवित है। और जैसे पाच हजार वर्ष पहले गगा तट पर प्राचीन वेदों के मत्रों का उच्चारण होता था वैसे ही आज भी जब हम राष्ट्रीयता के भावों से घिरे हुए यात्री, गगा तट पर जाते हैं, वहा वेदों के

मत्रगान सुनते हैं। और वहा गगा जल से हमारे मानसिक पाप ही नहीं कटते बल्कि हमारे सभी आध्यात्मिक अपराध भी स्वभावत दूर हो जाते हैं।"

जिन सरोजिनी देवी के इसलाम और हिन्दू दोनों ही सभ्यताओं के विषय में ऐसे उच्च विचार हैं। वे यदि हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य के सम्बन्धों में अनेक काग्रेसों कान्फ्रेन्सों में भाषण करती तथा ऐक्य स्थापन के लिए इतना अधिक उद्योग करती देखती जाती हैं तो इसमें आश्चर्य क्या है। जिस सभा में श्रीमती नायडू उपस्थित रहती वहाँ प्राय एक्य का प्रस्ताव उपस्थित करने का भार आप ही पर छोडा जाता है।

कई वर्ष पहले मद्रास प्रेसीडेंसी एसोसिएशन के वार्षिक अधिवेशन में श्रीमती नायडू ने यह प्रस्ताव उपस्थित किया था- "यह कान्फ्रेन्स दक्षिण भारत की भिन्न भिन्न जातियों से अपील है कि भारत के ऐसे सकटकाल में स्थानिक मतभेदों को दूरकर और सब मिलकर मातृभूमि के उद्धार का उद्योग करें।"

इस पर भाषण कहते हुए उन्होंने हिन्दू जातियों का सच्चा अर्थ इन शब्दों में बताया - "मातृभूमि की कीर्ति के लिए काम बाट लेने के सिवा इन जातियों का और उद्देश्य ही क्या है? काम इसलिये बाँट लिये गये हैं जिससे अपने जिम्मे का काम प्रत्येक जाति पूर्ण रूप से करके मातृभूमि को सम्पन्न बनाने में सहायक हो। यह कामों का विभाग राष्ट्रीय सभ्यता और राष्ट्रीय ज्ञान के बनाने और उसकी वृद्धि करने के लिए है। क्या हम अपने विकास के वास्तविक अभिप्राय को इस तरह भूल गये हैं कि जो बात अधिक सम्पन्नता युक्त ऐक्य के लिये थी वही आज अनैक्य, फूट और पतन का कारण हो रही है और जिसका बुरा प्रभाव मातृभूमि की प्रतिष्ठा और उन्नति पर इतना पड़ रहा है।"

श्रीमती सरोजिनी नायडू हिन्दू-मुस्लिम एकता तथा विभिन्न हिन्दू जातियों के ऐक्य की आवश्यकता इतने जोरों से प्रतिपादित करती रहती है, इसी से इस ऐक्य पर भाषण करने के लिए प्राय वे ही चुनी जाती हैं। स्वय महात्मा गाधी जी का श्रीमती नायडू पर पूर्ण विश्वास है और जिनकी आखें हैं वे देख ही रहे हैं कि किस प्रकार असहयोग आदोलन के प्रारम्भ से ही महात्मा गाधी जी के साथ ही साथ बड़े उत्साह के साथ श्रीमती जी काम कर रही हैं। सन् 1922 ई0 की 18वीं मार्च को जब

भारत के अनन्यतम कर्मयोगी महात्मा गाधी को जज ने छ वर्ष की सजा सुनाई थी तब वैसे तो भारत के भिन्न-भिन्न स्थानों के प्रसिद्ध-प्रसिद्ध पुरुष उस समय हैदराबाद में उपस्थित थे। और सरकार ने भी उन लोगों को महात्मा गाधी जी का दर्शन करने की आज्ञा दे रखी थी, परन्तु महात्मा जी को जेल तक पहुँचाने की आज्ञा दो तीन ही मनुष्यों को मिली थी। उनमें से एक श्रीमती सरोजिनी नायडू भी थीं। जेल के भीतर पाच बजे शाम तक वे लोग महात्मा जी के पास थे। पाच बजे साथ में आये हुए लोगों को बाहर जाने की आज्ञा हुई तब श्रीमती नायडू ने महात्मा जी से विदा मागी। उस समय महात्मा जी ने इनसे यही कहा था कि – ''भारत की एकता का भार मैं तुम्हारे हाथों सौंपता हूँ।''

यह घटना स्वय श्रीमती नायडू ने मद्रास के त्रिचूर स्थान पर अपने व्याख्यान में बतायी थी। श्रीमती नायडू की हिन्दु मुस्लिम ऐक्य स्थानीय योग्यता और सदिच्छा का इससे बढ़िया प्रमाण और क्या हो सकता है। इतिहास प्रेम का परिचय देते हुए सरोजिनी ने कहा कि ''शताब्दियों पहले जब पहली मुसलमान सेना भारत आई तो उसने अपने खेमे पवित्र गगा के तट पर गाड़े और उसके पवित्र जल में अपनी तलवारों को बुझाया। गगा के जलाभिषेक ने उन मुसलमान आक्रमणकारियों का प्रथम स्वागत किया जो कालातर में भारत की सतान बन गये। इन शब्दों में वे हिन्दुओं से कहना चाहती थी कि वे इस तथ्य को पहचाने कि सभी आक्रमणकारी कालातर में धरती की सतान बन जाते हैं तथा मुसलमानों के प्रारम्भिक आक्रमण और मूर्तिभजन की वृत्ति अतत मानवीय बधुत्व और समान इतिहास में परिणत हो गयी है।

जब ''इस्लाम की युवा पीढी'' ने स्वराज्य प्राप्ति के लिए हिन्दुओं और मुसलमानों को एक दूसरे के समीप आने का ऐतिहासिक प्रस्ताव पास किया उस समय सरोजिनी ने अपने विचारों में कहा ''आज मुझे अपने मित्र जिन्ना का आभाव तीव्रता और गहराई से महसूस हो रहा है और मु0 अली जिन्ना के पिछले प्रस्तावों का समर्थन करते हुए उन्होंने कहा ''सम्माननीय जिन्ना के रूप में आपको ऐसा अध्ययन मिला है जो हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच केन्द्रबिन्दु की तरह खड़ा है। इसका कारण यह है कि उन्हें मुस्लिम लीग का सदस्य बनने के लिए मुहम्मद अली जिन्ना ने तैयार किया था।

1927 के दौरान हिन्दू मुस्लिम एकता के प्रश्न पर बराबर चर्चा में चलती रहती थी इसी समय बम्बई प्रेसीडेंसी के सिध के पृथक्करण की माग की विवादास्पद प्रश्न खड़ा हुआ। यह माग मुस्लिम नेता कर रहे थे तथा लाला लाजपत राय सरीखे आर्यसमाजी नेताओं के मार्ग दर्शन से हिन्दू इस माग का विरोध कर रहे थे। इस प्रकार साम्प्रदायिक सघर्ष में सरोजिनी किस प्रकार निष्पक्ष बनी रहती थीं इसका प्रमाण पजाब प्रातीय मुस्लिम लीग की उस बैठक की कार्यवाही से मिलता है जो लाहौर में पहली मई को हुयी थी। इस बैठक की अध्यक्षता मु0सफी ने की थी इसके अनुसार दिल्ली में मुस्लिम नेताओं के इस प्रस्ताव को एक भी हिन्दू समाचार पत्र ने स्वीकार नहीं किया था।[1]

9 अक्टूबर को उन्होंने चार हजार के जनसमूह को "इस्लाम के नये ससार" पर भाषण दिया। 16 मई 1927 को बम्बई के ताजमहल होटल के उनके कमरे में काग्रेस कार्य समिति की बैठक हुयी। चर्चा हिन्दू-मुस्लिम एकता के प्रश्न पर केन्द्रित थी कार्यसमिति के प्रस्ताव महासमिति के सामने रखे गये और उन्हें सामान्यत स्वीकार कर लिया गया। निष्कर्षत यह काम सरोजिनी को सौंपा गया कि वह दिसम्बर के अत में मद्रास में होने वाले काग्रेस अधिवेशन में हिन्दू मुस्लिम एकता के प्रश्न पर एक प्रस्ताव पेश करें।

"प्रस्ताव क्या कहता है?" उन्होंने हाथ उठाते हुए सम्बोधन किया।

हिन्दुओं और मुसलमानों। यह आपसे अर्थात् उन लोगों से जो लज्जाजनक और दुर्भाग्यपूर्ण सघर्ष में लगे हैं, तथा कटुता पर कटुता, दगों और शवों का ढेर लगाते चले जा रहे हैं अपनी स्थिति पर विचार करने के लिए कहता है। मैं उन लोगों में से हूँ जिनके मन में साम्प्रदायिक भावना की छाया भी ढूढ़ने को न मिलेगी। मेरी सम्पूर्ण मानसिक सरचना में ऐसी भावनाओं के लिए कोई स्थान ही नहीं है। अपमान की इस घड़ी में भी मुझे यह कहने में गर्व होता है कि मैं ऐसे लोगों में से हूँ मुझे मालूम नहीं कि मैं भातीय के अतिरिक्त और क्या हूँ। मेरा धर्म मेरी आस्था यह है कि समस्त सिद्धान्तों, जातियों और प्रजातियों से परे है और मेरी आस्था यह है कि भारत के लिए एकमात्र धर्म दासता से मुक्ति का धर्म है। क्या

---

[1] इण्डियन क्वार्टरली रिव्यू महाराष्ट्र खण्ड तृतीय, 1927

हम गौरवशाली अर्थ में हिन्दू और मुसलमान बनेंगे जिस अर्थ में हमारी प्राचीन सस्कृतियों की सकल्पना हुयी और वे चरम शिखर पर पहुँची? जब तक हम उस स्थिति को स्वीकार नहीं करते तब तक हम दासों के सिवाय और कुछ नहीं हैं और हम अपने आपको और भी गहरी दासता की ओर ले जा रहे हैं। एव अपनी इस चेतना में परिबद्ध होकर कि हम हिन्दू और मुसलमान हैं, तथा अपने लिए ऐसे अधिकारों की माग द्वारा जिनके हमारे अन्य साथी सम्प्रदायों को हानि पहुँचती है। और उनका हनन होता हो हम अपने आपको दासता की ओर और भी अधिक मजबूत रस्सियों से जकड़ते जा रहे हैं।[1]

17 दिसम्बर 1917 को इस्लाम के आदर्शो पर कहा कि हिन्दू शिक्षक के सैकड़ों मुसलमान छात्र हो सकते हैं इसी प्रकार सैकड़ों हिन्दू छात्र मुसलमान शिक्षक से पढे तो वे खराब नहीं हो सकते शिक्षक उस कलाकार के समान होता है जो नींव रखता है बाद में खडी होने वाली उस इमारत की प्रशसा होती है। शिक्षक बच्चे के चरित्र की नींव रखता है। प्रशसा की चिन्ता नहीं करनी चाहिए बल्कि अपने काम के महत्व को समझना चाहिए।

1906 में सरोजिनी ने कलकत्ता में आयोजित आस्तिकता सम्मेलन में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा जिसमें धर्म और दर्शन आध्यात्मिक जीवन में वैयक्तिता के तत्व पर बल दिया था उन्होंने वहा उपस्थिति जनसमुदाय को बताया कि भारत की मुक्ति आध्यात्मिकता में निहित है, भारत उसी के कारण आज तक जीवित रह पाया है जब कि यूनान और रोम सरीखी महान सभ्यताओं का अन्त हो गया। उनके इन विचारों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण बात यह थी कि उन्होंने समूची महान भारतीय धरोहर में एकता के तत्व पर बल दिया। यह वह मूल तत्व है जिसे एक राष्ट्रीय नेता के रूप में उनके जीवन और कर्म की प्रमुख देने माना जा सकता है। सरोजिनी की सराहना गोपाल कृष्ण गोखले बहुत करते थे। सरोजिनी उनको आध्यात्मिक गुरु मानती थीं। तथा उन्होंने सरोजिनी को प्रमाणित कर उनके पिता का स्थान ले लिया था। गाधी जी की प्रबल आध्यात्मिक शक्ति के कारण थोड़े सघर्ष के बाद सरोजिनी ने उन्हें पूरी तरह आत्मसमर्पण दिया।[2]

---

[1] सरोजिनी नायडू, ले0 ताराअली बेग, पे0132-133
[2] सरोजिनी नायडू, ले0 ताराअली बेग पे0 46-47

सरोजिनी ने कहा हमारे दर्शन शास्त्र आज जीते जागते हैं और इनकी रचना के बाद कितने युग बीत चुके तो भी वे इसलिए विद्यमान हैं कि भारत के सिद्ध विचारों के विवरण हैं। आज भी भारत का धर्म जीवित हैं और जैसे पाच हजार वर्ष पहले जहा जहा पर जाते थे तो वहा पर वेदों के मत्रगान सुनते थे गरीबों असहायों को दान देने की परम्परा की वह आज भी विद्यमान है वहा अभी गगाजल से हमारे मानसिक पाप ही नहीं अध्यात्मिक अपराध भी अपने आप दूर हो जाते हैं।

आदर्श नागरिक जीवन पर 5 जुलाई 1915 को गुन्टूर में युवकों की साहित्यिक सभा में "नागरिक जीवन के आदर्श" पर अपने विचारों में कहा कि "आज भारत में युवापीढी के हृदय को एक नई दृष्टि की जागृति से आनन्द मिल रहा है। यह दृष्टि नयी नहीं है, वरन अतीत में सिखाये जाने वाले विचारों, स्वप्नों और सिद्धान्तों का पुर्नजागरण है। इसके द्वारा यह सिखाया जाता है कि तुम देशसेवा में लगकर अपना जीवन सार्थक करो। उसके लिए व्यक्ति का यह महत्व था, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष। और इस बात को बार-बार कहती थी "मैं चाहती हूँ कि आप सब याद रखें कि एक देश की महानता उसके महान लोगों से नहीं बल्कि औसत अच्छे आदमियों में है जो प्रतिदिन के जीवन में सच्चाई और पवित्रता का पालन करते हैं जो हर जाति, वर्ग के लोगों को समान अवसर देते हैं तथा किसी भी स्त्री पुरुष को भगवान द्वारा दिये गये अधिकारों का लाभ उठाने से नहीं रोकते। सामाजिक सुधार का यही अर्थ होता है।

****

चतुर्थ अध्याय

श्रीमती सरोजिनी नायडू के राजनीतिक विचार

"जो लोग दो या तीन लोगों के समर्थन के आधार पर सही होने का दावा करते हैं वे मूर्ख होते हैं।" बचपन में कही गयी नेताओं की तरह उक्त बात से पता चलता है कि सरोजिनी प्रारम्भ से ही लोकतन्त्र का समर्थन करती थी।[1]

1902 ई0 में गोपालकृष्ण गोखले ने सरोजिनी को देश सेवा में आने की प्रेरणा दी और 1902 से ही सार्वजनिक सभाओं में भाषण देना शुरू कर दिया। बम्बई की विशाल जनसभा तथा महिलाओं की सभाओं में भाषण दिये। 1903 में विद्यार्थियों को सम्बोधित करते हुए कहा मेरे मन में जाति धर्म और रग के आधार पर किसी प्रकार का भेद भाव नहीं रहा है।

सरोजिनी में देश प्रेम की भावना जाग्रत करने का श्रेय गोपालकृष्ण गोखले को है जो 1902 से 1915 अपनी मृत्यु तक उन्हें प्रेरणा देते रहे। उन्होंने कल्पनालोक से बाहर निकाला।

सरोजिनी राजनीतिक की अपेक्षा कवि अधिक हैं। तो वे आज अपने राजनीतिज्ञ कार्यो के कारण ही वे भारत भर में इतनी विख्यात हैं। बल्कि दुनिया के दूसरे मुल्कों में भी इनका नाम आदर के साथ लिया जाता है। उस समय राजनीतिक क्षेत्र में जितने भी नेता कार्य कर रहे थे सरोजिनी नायडू उनकी मुख्य श्रेणी की नेताओं में है। 12-13 वर्ष की अवस्था तक उन्होंने कविताओं लिखने और समाज सुधार के कार्यो में अपना समय व्यतीत किया।

राजनीतिक क्षेत्र में इनका प्रवेश 1913 ई0 में हुआ जब इन्होंने मुस्लिम लीग के हिन्दु-मुस्लिम एकता के विषय में बड़ा प्रभावशाली भाषण दिया। कि दोनों जातियों का वैमनस्य कुछ समय तक के लिए कम हो गया।

बालिका सरोजिनी बचपनसे ही बहुत गम्भीर और समझदार थी अपने पिता से बहुत चीजें उन्हें विरासत में मिली उनमें से राजनीतिक वातावरण भी था। सरोजिनी में राजनीतिक चेतना बचपन से ही थी।

---

[1] सरोजिनी नायडू – लें0 माजदा असद पे029

गोखने ने जिस निष्काम उत्साह से भारत सेवक समिति (सर्वेट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी) के नि स्वार्थ भावना का सगठन किया था उसने इस उत्साही तरूण महिला में राष्ट्रीय सेवा की भावना उत्पन्न कर दी जिसके कारण वह सार्वजनिक जीवन में प्रवृष्ट होने का कठिन निर्णय ले सकीं। उनका वाक्तव्य कौशल स्रोताओं को प्रभावित करने में तत्काल सफल रहता था इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि गोखले ने पल भर में ही सरोजिनी की इस शक्ति को पहचान लिया था तथा उन्होंने उनकी जो सराहना उस समय की थी उससे सरोजिनी पर गहरा प्रभाव हुआ गोखले मूल्यत आत्यमिक गुरू थे तथा उन्होंने सरोजिनी के जीवन को प्रभावित करने के मामले में उनके पिता का स्थान ले लिया था। उनके जीवन पर पहला महत्व पूर्ण प्रभाव उनके पिता का था। दूसरा प्रभाव गोखले की सेवा की पुकार का था तीसरा प्रभाव जिन्ना का था। जिनकी राष्ट्रीयता के कारण उन्हें हिन्दु मुस्लिम एकता की वास्तविकता पर विश्वास हो गया था अन्तत वह गाधी जी के आवाहन के सम्मुख पूरी तरह समर्पित हो गयी तथा उन्होंने उनके प्रति तथा उनके आदर्शो के प्रति पूरी आस्था के साथ आत्मदान कर डाला।

यह आत्मदान इस सीमा तक आगे चला गया कि उन्होंने अपनी बहुमूल्य साड़ियों तथा अपने आभूषणों को परित्याग कर के खादी वस्त्र धारण कर लिये तथा इस व्रत का पालन जीवन के अन्तिम क्षण तक किया गाधी जी की आध्यात्मिक शक्ति इतनी प्रबल थी कि थोड़े से सघर्ष के बाद उन्होंने (सरोजिनी) उन्हें पूरी तरह आत्मसमर्पण कर दिया गाधी जी को वह जितना चिढ़ाती थी उतना और कोई नहीं लेकिन साथ ही वह उनके नेतृत्व को सर्वोपरि मानती थी।[1]

सरोजिनी के भाई हरीन्द्रनाथ की पत्नी कमला देवी चट्टोपाध्याय ने गाधी जी के बारे में कहा है कि "वह अत्यन्त निष्कपट अपनत्वपूर्ण थे यही वह चुम्बकीय शक्ति थी जो सबाके इनकी ओर खींचती थी वह निर्विवाद रूप से अपनी अन्त दृष्ट पर विश्वास करते थे वह न बहस कर सकते थे न वह इतने वाक्यपटु ही थे कि लोगों को निरोत्तर कर सकते लेकिन वह ऐसी महान आस्था के स्वामी थे जो उनके

---

[1] पी0सी0 राय चौधरी, अमृत बाजार पत्रिका

समीप जाने वाले प्रत्येक व्यक्ति को प्रभावित करती थी वह केवल प्रेरित ही नहीं करते थें वरन ऐसी अनुभूति जगा देते थे कि उन पर पूरी तरह विश्वास किया जा सकता था सरोजनी पर उनका यह प्रभाव इतना गहरा था कि उन्होंने एक बार भी ऐसा अवसर नहीं आने दिया कि गाधी जी उनकी निष्ठा पर सदेह कर पाते उन्होंने बाद में स्वतन्त्रता सग्राम के चरमोत्कर्ष काल में उनके कन्धों पर महानतम राष्ट्रीय दायित्व सौंपे।

यह बात बहुत आश्चर्यजनक है कि गाधी जी ने गोखले और सरोजनी दोनों के बारे में यह कहा है कि उनकी पवित्रता गगा के समान थी गोखले से पहली भेंट के बाद ही उन्होंने कहा था उन्होंने मुझे स्नेहसिक्त स्वागत प्रदान किया और उनके व्यवहार ने तुरन्त मेरा हृदय जीत लिया फिरोजशाह मेहता मुझे हिमालय जैसे जगे। लोकमान्य तिलक महासागर के समान किन्तु गोखले गगा सरीखे थे हिमालय अनुल्लघीय है और सागर को भी आसानी से पार नहीं किया जा सकता लेकिन गगा हमें पवित्र स्नान का निमत्रण देती है। गोखले ने लार्ड कर्जन की नीतियों की कठोर आलोचनायें की थी लेकिन उनके निधर पर कर्जन ने ही उनको महानतम श्रद्धाजलि समर्पित की कर्जन ने ब्रिटेन के लार्ड सभा में कहा कि गोखले से अधिक ससदीव क्षमता मैंने अपने जीवन काल में किसी भी राष्ट्र के किसी अन्य पुरूष में नहीं पाई गोखले ससार की चाहे किसी भी ससद में होते उन्हें सम्मान पूर्ण पद मिला होता गोखले की राजनीति दादा भाई नौरोजी उमेश चन्द्र बनर्जी ह्यूम वेडरवर्न, बदरूद्दीन तैयब्जी दिनशा वाचा, और सुरेन्द्र नाथ बनर्जी की राजनीति थी भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के इन प्रवर्तकों में बाद की पीढ़ियों द्वारा आकी गयी माता से कहीं अधिक महत्तर दृष्टि साहस शीलता और राजनीतिक मेघा थी निश्चय ही सरोजिनी नायडू की गणना भी स्वभावत आदर्शवादियों के उसी समूह में की जा सकत है बाद के राजनीतिज्ञों के समुदाय में नहीं क्यों कि गोखले की तरह वह मूल्यत उदारवादी और मानवता वादी थें।

सरोजिनी नायडू के मन में आत्म विश्वास भरा और उन्हें अपना विश्वास पात्र बनाया तथा उन्हें राजनीतिक चेतना प्रदान की इसके बिना सरोजनी के राजनीतिक

जीवन में कभी भी उस प्रकार की पूर्णता नहीं आ सकती थी गोखले ने अन्य किसी भी व्यक्ति की तुलना में इस बात का सर्वाधिक श्रेय प्राप्त किया कि सरोजिनी नायडू को महात्मा गाधी के सम्पर्क में लाये।

सन 1914 में सरोजनी लदन से भारत के लिए रवाना हुई उन्हें विदाई देते समय गोखले के अन्तिम शब्द थे मेरे विचार में अब हम कभी नहीं मिलेंगे फिर भी तुम यदि जीवित रहो तो यह सदैव स्मरण रखना कि तुम्हारा जीवन देश की सेवा के लिए समर्पित है।[1]

सरोजिनी उस अवसर का जो विवरण दिया है वह अपेक्षा के अनुसार ही अधिक सतरगी है और कुछ-कुछ भिन्न भी। उन्होंने लिखा है कि, "महात्मा गाधी के साथ मेरी पहली भेंट एक विस्मयकारी वातावरण में 1914 ई0 को यूरोपीय महायुद्ध शुरू होने से ठीक पहले लदन में हुई। यह उस समय की बात है जब वह दक्षिण अफ्रीका में अपनी सफलताओं के उपरान्त लदन आए ही थे। दक्षिण अफ्रीका में उन्होंने सत्याग्रह के सिद्धान्तों का पहली बार प्रयोग किया था तथा अपने देशवासियों के लिए जो उस समय मुख्यतया गिरमिटिया (करारबद्ध कुली) थे।[2] दृढ प्रशासक जनरल स्मट्स पर विजय प्राप्त की थी। मैं उनके लदन आगमन के समय जहाज पर नहीं पहुच सकी थी, लेकिन अगले दिन तीसरे पहर केन्सिगटन के एक अनजाने हिस्से में उनके निवास की तलाश करती एक पुराने ढग के मकान की सीधी खड़ी सीढिया चढकर ऊपर पहुची तो मेरे सामने खुले द्वार की चौखट एक घुटे सिर छोटे से आदमी के सजीव चित्र पर फ्रेम की तरह मढ़ी हुई सी लग रही थी, जो जेलन का काला कबल फर्श पर बिछाये बैठा था और जेल के लकड़ी के कटोरे में से मथे हुए टमाटरों और जेतून के तेल का एक घोल-मठ्ठा सा भोजन कर रहा था। एक प्रख्यात नेता के इस अनपेक्षित दर्शन पर मेरे मुह से अनायास हसी फूट पड़ी। उन्होंने आखें उठायीं और यह कहते हुए मुझ पर हसने लगे कि, "अच्छा, तुम निश्चय ही श्रीमती नायडू हो, इतना अवज्ञाशील होने का साहस और कौन कर सकता है। आओ मेरे साथ खाना खाओ।" मैंने नाक से सूघते हुए उत्तर दिया, "कितना घिनौना

---

[1] ले0 ताराअली बेग, सरोजिनी नायडू

[2] 'गोखले द मैन' लेखिका - सरोजिनी नायडू बाम्बे क्रानिकल ।

घोल-मठ्ठा है यह।''[1] इस प्रकार और उसी क्षण हमारी मित्रता का सूत्रपात हो गया जो वास्तविक सहकर्म में पुष्पित-पल्लवित तथा एक दीर्घ निष्ठापूर्ण शिष्यत्व में फलित हुई, और जो भारत की स्वाधीनता के सघर्ष म साथ मिलकर कार्य करने की तीस वर्षो से भी अधिक की अवधि में कभी एक घटे के लिए भी खडित नहीं हुई।[2]

सभवत सरोजिनी ने यह पहचान लिया था कि गाधी जी अन्य नेताओं की अपेक्षा अधिक महान हैं, तभी वह 10 अक्टूबर 1914 को भारत के लिए रवाना होने के समय तक उनके अधिकतम समीप रहीं। बाद में उन्होंने लिखा कि उनके निवास पर पौर्वात्य और पाश्चात्य सभी राष्ट्रों के लोग एकत्र होते थे। यह देखकर मैं रोमाचित हो उठी थी। लोगों का इस प्रकार एकत्र होना इस बात का प्रमाण था कि महानता सार्वभोमिक भाषा में बोलती है और सार्वभौमिक सम्मान प्राप्त करती है। सरोजिनी के भीतर का नारीत्व कस्तूरबा की पतिभक्ति के प्रति आकर्षित हुआ। वह सरोजिनी के ही शब्दों में एक दयालु और सहृदय महिला थीं। उनके भीतर एक शहीद की-सी अपराजेय आत्मा निवास करती थी। वह बलिवेदी पर आरूढ वीरागना की तरह नहीं साधारण महिलाओं की तरह सैकड़ों घरेलू धधों में व्यस्त रहती थीं।[3]

सरोजिनी अपनी भारत वापसी पर प्रसन्न थीं, लेकिन शीघ्र ही उन्हें गहरे आघात लगे। पहले तो कलकत्ता में उनके प्रिय पिता का देहावसान हो गया और कुछ ही दिनों के बाद उनके राजनैतिक 'पिता' गोखले नहीं रहे। सरोजिनी नायडू को अपने पिता की स्थिति के बारे में कुछ पता न था। वह हैदराबाद में थीं, अचानक उनके पिता का स्वर्गवास हुआ और उसी समय एक बूढी भिखारिन उनके द्वार पर आयी और चीख-चीख कर रोने लगी। ''मैं तुम से भीख नहीं माग रही हू। जो उदारतापूर्वक दिया करता था वह चला गया, चला गया, चला गया।'' थोड़ी देर बाद ही सरोजिनी को पिता के निधन पर तार मिला। वह तुरन्त कलकत्ता पहुचीं। वहा उन्होंने देखा कि मा असाधारण रूप से निस्तब्ध हैं। मा ने उन्हें देखकर कहा, ''लो तुम्हारे पिता तो जीवित हैं, तुम्हारी मा मर गयी है।''

---

[1] सरोजिनी नायडू ले0 पदमिनी सेन गुप्ता पे046

[2] महात्मा गाधी - सरोजिनी नायडू द्वारा लिखित भूमिका सहित, ओल्ड होम्स प्रेस लि0 लदन ।

[3] सरोजिनी नायडू - पदमिनी सेन गुप्ता, 47 एशिया पब्लिशिग हाउस, 1961

किन्तु गाधी जी पिता और गुरू दोनों के निधन से उत्पन्न शून्य को भरने के लिए भारत लौट आए थे। उन्होंने शीघ्र ही अहमदाबाद के समीप आश्रम की स्थापना की और श्रीमती नायडू ने तुरन्त अपनी सेवाए उन्हें समर्पित कर दीं। उसके थोड़े समय बाद ही उन्होंने आध्र की एक सभा में कहा

"पिछले अनेक वर्षो से मेरा यह सौभाग्य रहा है कि मैं तरूण पीढ़ी के साथ तद्रूप हू। प्रत्येक महान नगर से मैं उन तरूणों के आनददायी और घनिष्ट सम्पर्क में आयी हू जो कल के भारत के इतिहास का निर्माण करेंगे। भारत के विभिन्न नगरों में मैं उस नयी भारतीय भावना के भी निकट सपर्क में आयी हू जिसको प्राय भारतीय पुनर्जागरण कहा जाता है।"[1]

लेकिन उनकी दृष्टि पुनर्जागरण बुद्धिवादी वर्ग तक ही सीमित न था। एक अन्य अवसर पर पुरस्कार वितरण करते हुए उन्होंने कहा था कि मुझे "उन लोगों को पुरस्कार देते हुए प्रसन्नता हो रही है जो अपने हाथों से काम करना और शारीरिक श्रम की प्रतिष्ठा का महत्व सीख रहे हैं। शारीरिक श्रम की प्रतिष्ठा को विद्वता की प्रतिष्ठा के समान ही स्थान मिलना चाहिए।" उन्होंने आगे कहा कि, "जब मैं यह बात कहती हू तो इसको महत्वपूर्ण माना जाना चाहिए क्योंकि मेरे पीछे विद्वता की परपरा है, और क्योंकि इसका अर्थ यह है कि जो लोग अतीत में ऐसा मानते थे कि आत्माभिव्यक्ति पर बुद्धिवादी महारथियों का ही एकाधिकार है वे अब यह महसूस करने लगे हैं कि आत्माभिव्यक्ति के अन्य तथा विविध प्रकार हैं। अधिकाधिक युवा यह महसूस करते जा रहे हैं कि भारत की प्रतिष्ठा आक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज की डिग्रिया प्राप्त करने अथवा वकील, डाक्टर या सरकारी कर्मचारी बनने मात्र में निहित नहीं है वरन् वह कलाओं, विज्ञान तथा उद्योगों से सबधित उनके ज्ञान पर भी अवलबित है क्यसोंकि उसी के आधार पर भारत को मानव सभ्यता में उसका केन्द्रिय स्थान फिर से प्राप्त हो सकता है।" उन्होंने ऐसी बुद्धिमत्तापूर्ण बातें कहीं जो उनके वर्षो बाद तक विहित रहीं। वह यह जानती थीं कि युवा वर्ग के पास सही आदर्श और दृढ विचार होने चाहिए, तथा युवा श्रोताओं के समक्ष अपने भाषणों में वह अपनी

---

[1] सरोजिनी नायडू – ले0 ताराअली बेग पे071

भावनाओं को इस प्रकार समेटती थीं "यदि भाग्य की कोई देवी अप्सरा मुझसे यह पूछे कि मुझे इस जगत में किस वस्तु की कामना है तो मैं कहूगी कि मुझे युवा पीढी के मस्तिष्क को ढालने की शक्ति दो।"[1]

श्रीमती नायडू ने भारत के लोगों को उदासीनता और निष्क्रियता के दुष्चक्र से उभारने की बार–बार चेष्टा की। गुन्टूर में उन्होंने कहा

"समूचे भारत में एक नयी भावना का जागरण हो रहा है जो युवा पीढी के हृदय को इस छोर से उस छोर- उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक रोमाचित कर रही है। वह भावना पुनर्जागरण के नाम से पुकारी जाती है। वह कोई नयी भावना नहीं है उसको केवल पुनर्जन्म और पुनर्जीवन मिला है। अतीत में ठीक ऐसे ही विचार और आदर्श विद्यमान थे जो उपदेश और आचरण के माध्यम से उन्हीं सिद्धान्तों का प्रतिपादन करते थे जिन्हें हम अपने जीवन में अपने देश की सेवा के लिए सिद्ध करना चाहते हैं। चाहे आप बगाल जाए और वहा आदर्शों की उत्कट भावना से अभिप्रेरित युवकों से बात करें अथवा महाराष्ट्र हजाए तथा उन बुद्धिवादी युवकों से मिलें जो बलिदान की भावना से ओतप्रोत हैं तथा उसके लिए सन्नद्ध भी, अथवा दक्षिण भारत जाए सर्वत्र आपको युवा–भावना एक–समान ही दिखाई देगी, यद्यपि यह सही है कि वह भावना विभिन्न भारतीय भाषाओं में व्यक्त होती है।[2]

1915 से 1917 का काल तो प्राय पूरा का पूरा ऐनी बेसेन्ट और सी0पी0 रामास्वामी अय्यर के साथ यात्राए करने और भाषण देने में ही व्यतीत हो गया। ऐनी बेसेंट भी समान रूप से ओजस्वी वक्ता थी। सरोजिनी ने अब अपनी वाक्शक्ति को पूरी तरह पहचान लिया था तथा उन्होंने उस शक्ति को देश सेवा के लिए प्रयोग करने का कोई भी अवसर हाथ से नहीं खोया। ऐनी बेसेंट एक ब्रिटिश सुधारक और उत्कृष्ट थियोसोफिस्ट थी। वह उस समय अपने जीवन के चरमोत्कर्ष पर पहुच गई थीं। उन्होंने 1916 में भारत में होमरूल लीग (स्वराज्य सधा) की स्थापना की तथा भारत को ब्रिटिश दासता से मुक्त कराने के कार्य में समर्पित हो गयीं। वह इग्लैण्ड के उन विरले मानवतावादियों में से थीं जिनमें इडियन नेशनल काग्रेस के सस्थापक

[1] मृणालिनी चट्टोपाध्याय - हैदराबाद 1968
[2] अ0अमीर अली की डायरी, विश्वभारती, 1945

हृयूम और एक अन्य समाज सेवी दीनबधु सी0एफ0 एड्रयूज की गणना की जा सकती है। इन दोनों नेताओं ने अपने देशवासियों द्वारा लगभग दो शताब्दियों तक शामिल और शोषित भारत-भूमि की स्वतत्रता के प्रति अपने आप को सपूर्ण हृदय और आत्मा से समर्पित कर दिया था।

अन्य किसी भी राष्ट्रीय नेता की अपेक्षा सरोजिनी इस बात को अच्छी तरह समझती थीं कि जब तक समूचे भारत के नागरिक भारतीयों की तरह साथ काम करने और साथ रहने को तैयार न हों तब तक न भारत राष्ट्र बन सकता है और न स्वतत्र ही हो सकता है। एनी बेसेंट तब तक एक स्वातत्र्य सेनानी के रूप में प्रतिष्ठित हो चुकीं थीं। वह एक अनथक कार्यकर्ता थीं, उन्होंने 'न्यू इडिया' नामक दैनिक समाचारपत्र और 'कामनवैल्थ' नामक साप्ताहिक की नींव डाली। इन पत्रिकाओं तथा सरोजिनी और सी0पी0 रामास्वामी अय्यर के भाषणों के साथ-साथ स्वतत्रता के लिए एनी बेसेंट की सिगर्जना लोकमान्य तिलक की होमरूल लीग और उनके उस राजनीतिक सघर्ष के पीछे-पीछे दृढतापूर्वक गूज उठी जिसके परिणामस्वरूप तिलक को लबी जेल की सजाए भुगतनी पड़ी और उन्हें राष्ट्रनायक का सम्मान प्राप्त हुआ। गाधी जी जो दक्षिणी आफ्रीका में सफल सत्याग्रह के बाद अब भारत में थे किन्हीं कारणों से गोखले को यह वचन दे चुके थे कि वे इग्लैंड से लौटने पर राजनीति में प्रवेश नहीं करेंगे। शायद गोखले यह बात समझ गए थे कि गाधीजी अपनी धुन के पक्के हैं। और उस मामले में किसी प्रकार का समझौता नहीं करेंगे अत उनके राजनीति में प्रवेश करने से भारत ब्रिटिश शासन के विरूद्ध भद्र मुठभेड़ की उदारवादी नीति का परित्याग करके सीधे-सीधे स्वतत्रता की माग पर उतारू हो जाएगा। ऐसा ही हुआ।[1]

कितु गोखले 1916 में दिवगत हो गए। भारत में नयी हवाए बह रही थीं। इस समय तक सरोजिनी भाषणों के एक अखिल भारतीय अभियान में पूरी तरह जुट चुकीं थीं। वह बहुत बार युवाओं और महिलाओं की सभाओं में भाषाण देतीं तथा उन्हें

---

[1] सरोजिनी नायडू ले0 पदमिनी सेन गुप्ता ।

सामाजिक बुराईयों को दूर करने एव स्वाधीनता सघर्ष में हाथ बटाने की प्रेरणा देती थीं।[1]

1916 की लखनऊ काग्रेस में सरोजिनी को एक वक्ता तथा प्रथम कोटि के राष्ट्रीय नेता के रूप में मान्यता प्राप्त हो गई। वहा उन्हें भारत के लिए स्वशासन की माग से सम्बन्धित प्रस्ताव का समर्थन करने के लिए कहा गया।[2] उन्होंने अपने भाषण से श्रोताओं को रोमाचित और चमत्कृत कर दिया। उन्होंने कहा

"मैं तो स्वप्नों की मीनार पर खडी द्रष्टा मात्र हू, और मैंने तीव्रगामी तथा विपदाग्रस्त एव यदा-कदा अवरूद्ध किन्तु इस सबके बावजूद अपराजेय कलात्मा को वाछित लक्ष्य की दिशा में विजययात्रा पर कूच करते देख लिया है। "हम एक हैं और हम ऐसे दृढतापूर्वक एक हो गए हैं कि बाहर की कोई भी शक्ति-औपनिवेशिक आधिपत्य का अत्याचार भी-हमारे अध्किारों और सुविधाओं से वचित निहीं रख सकता, हमारी उन स्वतन्त्रताओं से वचित निहीं रख सकता जिनका अधिकार हमें प्राप्त हो गया है"[3] तथा जिनकी माग हम अपनी एक आवाज से कर रहे हैं। शताब्दिया बीत गयी हैं, पुरानी दरारें भर गयी हैं, पुराने घाव भर गए हैं। हम में से प्रत्येक में यह सजीव चेतना आ गई है कि भविष्य की उच्चतम आशा मातृभूमि की सेवा का आनन्द समस्त व्यक्तिगत सुखों से बढकर है। हमारे निजी दुखों को सबसे अधिक राहत तब मिलती है जब हम देश के लिए कष्ट उठाते हैं। उसकी पूजा से पाप-मुक्ति होती है, उसके लिए जीना जीवन की सर्वोच्च विजय है तथा उसके लिए मरना अमरत्व का अमूल्य मुकुट प्राप्त करना है।"[4]

स्वशासन सम्बन्धी प्रस्ताव महान नेता सुरेन्द्रनाथ बनर्जी ने प्रस्तुत किया था और उसका अनुमोदन एनी बेसेंट ने किया था।

1916 के लखनऊ काग्रेस-अधिवेशन में एक किसान नेता राजकुमार शुक्ल ने गाधीजी को निलहे गोरों के प्रति किसानों की शिकायतें दूर कराने में सहायता देने के

---

[1] सरोजिनी नायडू ले0 ताराअली बेग पे074
[2] सरोजिनी नायडू ले0 मातासेवक पाठ्क पे020
[3] सरोजिनी नायडू - ले0 मातासेवक पाठ्क पे020
[4] सरोजिनी नायडू ले0 पदमिनी सेन गुप्ता।

लिए चपारन जाने को तैयार कर लिया। यह एक सयोग की बात थी जिसके बहुत दूरगामी परिणाम हुए। इसी सभा में जवाहरलाल नेहरू पहली बार गाधीजी के सम्पर्क में आए, उस समय वह पूर्ण युवा थे। नेहरूजी ने बाद में लिखा, "हम सब दक्षिण आफ्रीका में उनके वीरतापूर्ण सघर्ष के कारण उनकी सराहना करते थे।, किन्तु वह हममें से अनेक युवाओं को बहुत दूर के, बहुत भिन्न और अराजनीतिक पुरूष प्रतीत होते थे। उस समय वह काग्रेस अथवा राष्ट्र की राजनीति में भाग लेने से इकार करते थे और अपने-आपको दक्षिण आफ्रीका के भारतीयों की समस्याओं तक ही सीमित रखते थे। लेकिन उसके बाद शीघ्र ही चपारन में निलहे गोरों के विरूद्ध उनके साहसिक सघर्ष और उनकी विजय ने हम सब में उत्साह भर दिया। हमने देखा कि वह अपनी रीतियों का प्रयोग भारत में भी करने के लिए तैयार हो गये हैं और उनको सफलता की आशा दिखाई देती है।"[1]

सरोजिनी ने बहुत बार दक्षिण अफ्रीका, फिजी तथा अन्य देशों में भारतीय गिरमिटिया श्रमिकों के प्रति किए जाने वाले दासों जैसे व्यवहार के विरोध में गोखले के दृष्टिकोण और कार्य का समर्थन किया था। लखनऊ काग्रेस में गिरमिटिया श्रमिकों के बारे में उन्होंने कहा

"हमारी महिलाओं ने विदेशों में जो कष्ट भोगे हैं उसकी लज्जा को अपने हृदय के रक्त से धो डालो। आज रात आपने जो शब्द यहा सुने हैं उन्होंने आपके भीतर दावानल सुलगा दी होगी। हे भारत के पुरूषों, उस दावानल को गिरमिटिया प्रथा की चिता बना डालो। आज रात मैं रोऊँगी नहीं हालाकि मैं एक स्त्री हू और यद्यपि अपनी माताओं और बहिनों के अपमान को आप महसूस कर रहे होंगे तथापि अपने प्रति हुए अपमान को मैं नारी जाति का अपमान समझती हू।"[2]

चपारन में गाधीजी ने सत्याग्रह के द्वारा नील की खेती करने वाले श्रमिकों की दशा सुधारने के लिए पुरानी तिनकठिया प्रणाली समाप्त करके जो प्रयास किया उसकी सरोजिनी म तत्काल प्रतिक्रिया हुई। तिनकठिया श्प्रणाली के अनुसार प्रत्येक किसान को अपनी भूमि के पद्रह प्रतिशत क्षेत्रफल में नील की अनिवार्य खेती करनी

---

[1] सरोजिनी नायडू - ले० मातासेवक पाठक पे०21
[2] सरोजिनी नायडू ले० मातासेवक पाठक पे० 36

जवाहर लाल नेहरू एव सरोजिनी नायडू

होती थी। गाधी जी की सत्याग्रह पद्धति सरोजिनी की चेतना पर हावी हो गई। इसका कारण केवल यह नहीं था कि सत्याग्रह की पद्धति सर्वथा नयी थी और वह उस उच्च नैतिकता पर आधारित थी जिसके अनुशीलन के लिए अडिग नैतिक साहस और मनोबल की आवश्यकता होती है वरन् शायद एक कारण यह भी था कि वह पद्धति सफल हुई थी। चपारन कृषि अधिनियम मानव के शोषण के विरूद्ध सत्याग्रह के सिद्धान्त की सभवत प्रथम परिपूर्ण सफलता का प्रतीय है, तथा गाधीजी की राजनीति ने इस सफलता के माध्यम से स्वतत्रता के सघर्ष में एक नई क्रातिकारी विधि को प्रभावशाली ढग से प्रविष्ट करा दिया।

1916 के लखनऊ काग्रेस अधिवेशन में जवाहरलाल नेहरू सरोजिनी नायडू से भी पहली बार मिले। जवाहरलाल एक आदर्शवादी और जुझार व्यक्ति थे। इस साहसिक युवती ने अपनी स्पष्ट वक्तृता, सवेदनशील मानवतावाद और आग्नेय व्यक्तित्व के द्वारा उनकी चेतना को स्पर्श किया। नेहरूजी ने आत्मकथा में लिखा है, "मुझे याद है उन दिनों सरोजिनी नायडू के अनेक वक्तृतापूर्ण भाषणों का भी मुझ गहरा प्रभाव पड़ा। उनके भाषण राष्ट्रीयता और देशभक्ति से ओतप्रोत होते थे। और मैं एक शुद्ध राष्ट्रवादी था। अपने अध्ययनकाल में मेरे मस्तिष्क में जो अस्पष्ट-से समाजवादी विचार बन गये थे वे अब गौण हो गए।"

यद्यपि 1916 में तिलक और एनी बेसेंट दोनों ने अपनी-अपनी प्राय प्रतिद्वदी होमरूल लीग बना ली थी और दोनों सरोजिनी के सहयोग की माग करते थे, लेकिन चपारन की सफलता के कारण सरोजिनी ने अपने राजनीतिक अस्तित्व को निर्णायक तौर पर गाधी जी के प्रति समर्पित कर दिया। यद्यपि वे अत्यधिक व्यक्तिवादी होने के कारण पूर्ण अनुचरी अथवा अधनिष्ठावान शिष्य तो नहीं बन सकती थीं तथापि यह सच है कि उन्होंने गाधीजी का वरण गुरू के रूप में कर लिया था।[1]

वह इग्लैण्ड से कवि की अपेक्षा अधिक मात्रा में राजनीतिज्ञ बनकर लौटीं थीं। अब उनका गद्य श्रोताओं को सम्मोहित करता था तथा उन्हें भाषणों के लिए निरतर बुलाया जाता था। यद्यपि आगे जाकर तो उन्होंने हितों का समर्थन किया तथापि उस

---

[1] काग्रेस का इतिहास - ले0 पट्टाभि सीतारम्मैया पे0105 भाग-2

समय काग्रेस ही उनका मच था और यह स्थिति तो उनके जीवनभर बनी रही। उनकी वक्तृत्वशक्ति और उनके व्यक्तित्व ने जवाहरलाल नेहरू को रोमाचित कर दिया और उसी समय से दोनों के बीच एक ऐसा सबध विकसित हुआ जिसे केवल मृत्यु विलक कर राकी। उनके लिए वह सहज ही 'भाई' बन गये थे और सरोजिनी स्वय 'कामरेड' बन गई थीं। उनका सारा परिवार सरोजिनी का परिवार बन गया।

काग्रेस के इस अधिवेशन में सरोजिनी नायडू एक ऐसे विषय पर बोली जिसे एक महिला के लिए थोड़ा विलक्षण माना जा सकता है। जब काग्रेस अध्यक्ष ने उनसे शस्त्र अधिनियम पर एक प्रस्ताव रखने के लिए कहा तो उन्होंने श्रोतोओं के समक्ष एक भाषण दिया। सभ में लेफिटनेन्ट गवर्नर जेम्स मेस्टन और श्रीमती मेस्टन भी उपस्थित थे। सरोजिनी ने श्रोताओं को "भारत के निहत्थे नागरिको" कहकर सम्बोधित किया। उन्होंने आगे कहा कि, "यह एक प्रकार का विरोधाभास सही प्रतीत होता है कि मैं एक महिला हू फिर भी मुझसे कहा गया है कि मैं देश के अधिकार-वचित पुरूषवर्ग की ओर से आवाज उठाऊँ किन्तु यह नितात उपयुक्त है कि मैं पुरूषों की माताओं की प्रतिनिधि के नाते भारत की भावी माताओं की ओर से यह माग करने के लिए आवाज बुलद करू कि उनके पुत्रों को उनका जन्मसिद्ध अधिकार लौटाया जाय जिससे कि भविष्य का भारत एक बार फिर से अपने अतीत का योग्य उत्तराधिकारी सिद्ध हो सके। माताए चाहती हैं कि उनके बेटे निस्तेज और यत्रवत बनने के बजाय सच्चे अर्थो में पुरूष बनें आपके लिए एक महिला के सिवाय और कोन आवाज ऊँची कर सकता है क्योंकि आप इस समस्त अवधि में अपने लिए स्वय प्रभावशाली रीति से आवाज नहीं उठा सके? मुसलमान, राजपूत और सिख गर्वपूर्वक शास्त्र धारण करने का अधिकार विरासत में प्राप्त करते थे, इस अधिकार से वचित हो जाना उनके लिए अपमान की बात है। अपने इस भाषण क अत में उन्होंने अपनी उस कविता का निम्न अश सुनाया जो उन्हाने युद्ध की समाप्ति पर फ्लैडर्स, गैलीपोली और मैसोपोटामिया में रक्त गिराने वाले भारतीय सैनिकों की प्रशसा में

लिखी थी। उन्होंने गर्जना की "स्मरण करो अपने बलिदानी बेटों का स्मरण करो भारत की सेनाओं का और उसे लोटा दो उसका खोया पौरूष।[1]

यह अधिवेशन भारत के राजनीतिक जीवन में एक काल-विभाजक रेखा बन गया। इसके थोड़े ही समय बाद सरोजिनी ने अखिल भारतीय मुस्लिम लीग के एक महत्वपूर्ण अधिवेशन में भाग लिया। वह अधिवेशन भी लखनऊ में ही हुआ। एक बार फिर उन्होंने एक ऐसे समूह में एक प्रमुख भूमिका अदा की जो पूर्णतया पुरूष-समूह था और जिसमें उनके अपने धर्म के लोग न थे, किन्तु जिस समय 'इस्लाम की युवा पीढी' ने स्वराज्य-प्राप्त के लिए हिंदुओं और मुसलमानों को एक दूसरे के समीप आने का ऐतिहासिक प्रस्ताव पास किया उस समय सरोजिनी ने उस समूह को पिछले काग्रेस अधिवेशन का स्मरण कराया। उस प्रस्ताव का समर्थन करते हुए उन्होंने कहा "आज मुझे अपने मित्र और आपके महान नेता मुहम्मद अली जिन्ना का समर्थन करते हुए उन्होंने कहा, "सम्मानीय जिन्ना के रूप में आपको एक ऐसा अध्यक्ष मिला है[2] जो हिदुओं और मुसलमानों के बीच केन्द्र बिन्दु की तरह खड़ा है, और इसका कारण यह है कि उन्हें मुस्लिम लीग का सदस्य बनने के लिए मुहम्मद अली ने तैयार किया था"[3]

यह तथ्य बहुत महत्वपूर्ण है कि उस समय तक जिन्ना काग्रेस के सदस्य और एक उत्कृष्ट राष्ट्रवादी नेता थे। उस अनूठे रूप से महत्वपूर्ण वर्ष की यह एक और निर्णायक घटना थी कि उन्हें मुस्लिम लीग का नेतृत्व करने के लिए तैयार कर लिया गया था। इण्डियन नेशनल काग्रेस भारत के लिए स्वतत्रता प्राप्त कर सकती थी लेकिन महान नेताओं को अनेक दुखद भूलों तथा कालचयन और निर्णयों की अनेक चूकों ने राष्ट्रवादी जिन्ना का ऐसा रूपातरण कर दिया कि उन्होंने दो राष्ट्रों के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया, वह इस कटु निष्कर्ष पर पहुच गये कि हिन्दु और मुसलमान कभी साथ नहीं रह सकते और उन्होंने अत में पाकिस्तान का एक पृथक् राज्य का निर्माण किया।

---

1 सरोजिनी नायडू - ले0 पद्मिनी सेन गुप्ता।
2 सरोजिनी नायडू ले0मातासेवक पाठक पे033
3 सरोजिनी नायडू - ले0 ताराअली बेग पे078

सरोजिनी नायडू सर्वोच्च मानवीयता से सपन्न थीं। उन्होंने यह 'मधुर निष्ठा और सहानुभूति' अपने समस्त मित्रों पर बरसाई और इसने उन्हें जीवन का सामना करने की शक्ति दी। इसने उन्हें कोमलता तथा करूणा की गहनता और अपने प्रियजनों के प्रति चितनशीलता भी प्रदान की जो अतस्तल की गहराइयों से फूटकर बहती थीं।[1]

यह वह युग था जब गाधी जी और काग्रेस के अन्य नेता दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के प्रति किए जाने वाले अमानवीय व्यवहार के कारण बहुत क्षुब्ध थे। गाधीजी उनकी ओर से सत्याग्रह कर चुके थे और उन्हें उनकी स्थिति का सही बोध था। श्रीमती नायडू की रूचि और उनका रोष इस विषय में तब जागृत हुए जब उन्होंने भारत सरकार की एक रिपोर्ट में यह पढा कि महिला अप्रवासियों को प्राय अनैतिक जीवन जीना पडता है जिसमें उनका शरीर मुक्त रूप से सह-अप्रवासियों तथा निम्न श्रेणी के प्रबध-कर्मचारियों के उपभोग के लिए इस्तेमाल होता है।"[2]

काचीपुरम में सरोजिनी द्वारा मद्रास प्रातीय सम्मेलन की अध्यक्षता का वर्णन बाद में भारत की महान अग्रेज मित्र श्रीमती कजिन्स ने इन शब्दों में किया, "उन्होंने स्वय को और उस सभा में अपने उच्च पद को आदर्शवादिता के एक उन्नत स्तर पर प्रतिष्ठित कर लिया था, तथा छोटी-छोटी बातों पर ध्यान देने के बजाय उन्होंने सम्मेलन में उसी आदर्शवादिता के बल पर न्याय और माधुर्यपूर्वक सतुलन बनाये रखा। मुझे उनके बारे में ऐसा लगा कि वह शुद्धतम स्वर्ण से भली प्रकार गला-तपाकर बनाई गई एक जड़ाऊ क्लिप हैं जिसने भारत माता की देशभक्ति के विभाजित सिरों को साथ मिलाकर पकड़ रखा है।"

वह सचमुच अनेक सस्कृतियों और युगों के बीच एक पुल की भाति थीं। भारत की आत्मा' नामक अपने भाषण में उन्होंने विभिन्न ऐतिहासिक युगों में पिरोये हुए सातत्य के सूत्र की चर्चा की। उन्होंने घोषणा की कि "भारत का स्थान ऐतिहासिक अस्तित्व के आश्चर्यो के मध्य सर्वोच्च और ऐतिहासिग स्वर्ग के चमत्कारों के बीच अनूठा है।" अकबर के मानवतावादी शासन पर बल देते हुए उन्होंने कहा

---

[1] सरोजिनी नायडू – ले० ताराअली बेग पे०81
[2] सरोजिनी नायडू – ले० पद्मिनी सेन गुप्ता ।

कि, "अकबर ने अत्यत भिन्न नस्लों, धर्मो और जातियों के लोगों के बीच एकता स्थापित की।" आगे उन्होंने कहा कि अग्रेज "एक साहसिक और शक्तिशाली प्रजाति है। वे एक शानदार साहित्य और स्वतत्रता की एक शानदार विरासत के स्वामी हैं, लेकिन भारत में उन्होंने राष्ट्रीय सस्कृति के अध पतन का लाभ उठाया। किन्तु, भारत फिर से उठेगा तथा वैयक्तिक और राष्ट्रीय-स्वाधीनता के अपने जन्मसिद्ध अधिकार प्राप्त करेगा क्योंकि जीवन-श्वास हैं। जब धरती के जिज्ञासु राष्ट्र अतीत की भाति जीवन की उपलब्धि के दिव्यतम सुमन अर्थात् कालातीत शान्ति के लिए सार्वभौमिक प्रार्थनाओं में भागीदार होने के लिए भारत की यात्रा करेंगे तब भारत की आत्मदीप्त और विजयी आत्मा पुन मानवतावाद का एक चमत्कारी उदाहरण बन जाएगी।"

उनके भाषणों में जो उत्कट देशभक्ति गूजती थी उसके बावजूद सरोजिनी हृदय से एक उदारवादी महिला थीं। वह सच्चे अर्थ में मानवतावादी थीं और उनके मन में इग्लैण्ड तथा उन मूल्यों के प्रति गहरा प्रेम था जो अग्रेजों की परपराओं और अग्रेजी साहित्य में अभिव्यक्त हुआ था। दुर्भाग्यवश अग्रेजों की राजनीतिक हठधर्मिता ने उन्हें हमेशा के लिए अपनी ओर से विमुख कर दया। 1917 में ब्रिटिश सरकार ने "ब्रिटिश साम्राज्य के एक अभिन्न अग के रूप में भारत को उत्तरदायी शासन की उत्तरोत्तर प्राप्त कराने की दृष्टि से स्वशासी सस्थाओं की स्थापना करके राजनीतिक सुधारों को एक नयी योजना के निर्माण का इरादा प्रकट किया। इस सकल्प को क्रियान्वित करने की दृष्टि से तत्कालीन भारतमत्री एडविन माटेग्यू भारत की स्थिति का स्वय पता लगाने के लिए एक छोटा-सा शिष्टमडल लेकर भारत आए, जिसमें अधिकाशत ब्रिटिश ससद सदस्य थे। उनके भारत पहुचने से कुछ समय पूर्व ही होमरूल लीग की सस्थापिका श्रीमती एनी बेसेंट को गिरफ्तार कर लिया गया था। इससे उनके मार्ग में बाधायें आ गई। लेकिन, उन्हें शीघ्र ही रिहा कर दिया गया और इसके फौरन बाद वह इडियन नेशनल काग्रेस की प्रथम महिला अध्यक्ष बनीं। उनके चुनाव को इस बात का सकेत भी माना जा सकता है कि देश महिलाओं को राष्ट्रीय नेता के रूप में स्वीकार करने के लिए तैयार हो चुका था। जिस समय एनी बेसेंट

अध्यक्ष की कुरसी पर बैठीं तो सरोजिनी को उनके दाहिनी ओर बिठलाया गया। सभवत यह एक पूर्वसकेत था। 1925 में वह स्वय अध्यक्ष की कुरसी पर बैठीं।

श्रीमती नायडू कितनी क्रातिकारी होती जा रही थीं, इस बात का स्पष्टीकरण उन्होने शीघ्र ही कर दिया। थोड़े ही समय बाद ही काग्रेस का वार्षिक अधिवेशन कलकत्ता में हुआ। यह बहुत स्वाभाविक था कि जिस समय देश में ब्रिटिश ससदीय प्रतिनिधि मडल मौजूद था उस समय हो रहे इस अधिवेशन को असाधारण महत्व प्राप्त होता। सरोजिनी ने 1916 की लखनऊ काग्रेस में स्वशासन के विषय पर भाषण दिया था अत इस विषय पर रखे गए प्रस्ताव पर बोलने के लिए उन्हें कलकत्ता काग्रेस में भी आमत्रित किया गया। उन्होंने अवसर के अनुरूप अपने भाषण में कहा [1]

"कई वर्ष पहले हमारे आधुनिक राष्ट्र-निर्माता दादाभाई नौरोजी की इसी ऐतिहासिक नगर में स्वराज्य के अमर सदेश की घोषणा आपके कानों में गूजी थी। मैं ऐसा सोचती हू कि आपमें से एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं होगा जिसके हृदय में अपने उस जन्मसिद्ध अधिकार के आह्वाहन की प्रतिक्रिया न हुई हो जिससे आपको एक दीर्घकाल तक वचित रखा गया है। हम आज यहा उनके सदेश को दोहराने और उनके द्वारा उद्घोषित सत्य की पुष्टि करने के लिए इकट्ठे हुए हैं, और हम उस कल्पना की पूर्ति की माग करते हैं जो उन्होंने उस स्मरणीय अवसर पर हमारे लिए की थी। मैं आपके सम्मुख सयुक्त भारत की निर्वाचित प्रतिनिधि की हैसियत से केवल इसलिए खड़ी हो सकी हू क्योंकि राष्ट्र की स्त्रीशक्ति आज आपके साथ खड़ी है, और आपको यह प्रमाणित करने के लिए कि आप उत्तरदायी और पूर्ण स्वशासन के अधिकारी हैं इससे बढकर और कोई अधिक उपयुक्त तथा अधिक तर्कसगत प्रमाण खोजने की आवश्यकता नहीं है कि आपने भारत की नारी के स्वर को मुखरित होने का अवसर दिया है तथा उसे भारतीय पुरूषवर्ग की कल्पना, माग, उसके प्रयास तथा उसकी आकाक्षाओं की पुष्टि करने का अवसर देकर सहज और मौलिक न्याय-भावना का परिचय दिया है। याद रखिये कि, प्रस्ताव का ब्यौरा चाहे कुछ भी हो तथा आपकी

---

[1] **सरोजिनी नायडू - ले0 ताराअली बेग पे086**

धारणा के अनुसार व्यवहारिक राजनीति के तथ्य और तत्व चाहे जो भी हों उनकी स्थायी प्रेरणा उस भावना में निहित है जिसके आधार पर आज इन मागों और आकाक्षाओं की कल्पना उदय हुई है तथा जो आज चरम शिखर पर जा पहुची है। हम क्या माग कर रहे हैं? कुछ भी नया नहीं, कुछ भी चौंकाने वाला नहीं। हम केवल एक ऐसी वस्तु माग रहे हैं जो जीवन और मानवीय चेतना ही सनातन है, तथा जो ससार में प्रत्येक आत्मा का जन्मसिद्ध अधिकार है। याद रखिये कि अनेक प्रात में, अपने क्षेत्रों में आपको सजीव अवसर मिलने चाहिए तथा आपको अपने ही देश में अपनी विरासत से वचित होकर देश-निकाले की स्थिति में गूगे- बहरों की तरह जीने के लिए विवश नहीं किया जाना चाहिए जिनका उपभोग दूसरे राष्ट्र कर रहे हैं। वह समय अब बीत गया है जब हम बौद्धिक और राजनीतिक बेड़ियों से जकड़े हुए दासता में सतुष्ट थे, क्योंकि फूट के दिन समाप्त हो गए हैं। आज इस महान देश में कोई भी जाति दूसरी जाति से अलग नहीं रखी जा सकती। अब यह हिन्दुओं या मुसलमानों का भारत नहीं रहा है, यह एक सयुक्त भारत बन गया है।"[1]

माटेग्यू-चेम्पसफोर्ड सुधार प्रकाशित कर दिये गये और उनको दिसबर 1919 के भारत सरकार के एक अधिनियम द्वारा विधि का रूप दे दिया गया। लोकतात्रिक सिद्धान्त का विस्तार भले ही कितना भी सीमित हो, समाज में हलचल पैदा किये बिना नहीं रह सकता। सारे सविधानिक सरक्षणों के बावजूद केन्द्र में एक विधानसभा और एक राज्यपरिषद् तथा प्रत्येक प्रात में विधान परिषदें बन गई थीं। तथा काग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों उनमें मनोनीत सरकारी अधिकारियों के गुटों तथा वायसराय और राज्यों के गवर्नरों द्वारा अपने पास रखी गई सविधानिक शक्तियों का विरोध करने लगीं। भीतर ही भीतर पनप रहे इस असतोष को दो तत्वों ने पूरी तरह उभार दिया- रौलट बिल और खिलाफत आदोलन। भारत सुरक्षा अधिनियम की अवधि युद्ध समाप्त होने के बाद स्वत समाप्त हो गई अत भारत सरकार को ऐसा लगा कि वह जिन राजनीतिक कार्यवाहियों को राजद्रोहात्मक समझती है उन पर नियत्रण लगाने के लिए उसे नई शक्तियों की आवश्यकता हैं इस बारे में जाच पड़ताल करने के लिए

---

[1] सरोजिनी नायडू – ले0 मातासेवक पाठक पे035

न्यायमूर्ति रौलट की अध्यक्षता में एक समिति नियुक्त की गई तथा उसकी सिफारिशों के अधिकार पर सरकार द्वारा अधिनियत्रित विधानसभा ने कुछ अधिनियम पारित कर दिए जिन्हें रौलट बिल कहा जाता है। उनमें यह व्यवस्था की गई थी कि न्यायाधीश राजनीतिक मुकदमों की सुनवाई जूरी के बिना ही कर सकते हैं, इसके अतिरिक्त 'राजद्रोहात्मक' दस्तावेज अपने पास रखना भी दण्ड सहिता की दृष्टि से अपराध घोषित कर दिया गया।[1]

गाधीजी तथा काग्रेस के कुछ नेताओं ने इन कानूनों को 'काले कानून' कहा और साबरमती आश्रम में बैठक कर प्रख्यात सत्याग्रह प्रतिज्ञापत्र का प्रारूप तैयार किया। उस प्रतिज्ञापत्र पर सरोजिनी नायडू और छह सौ से अधिक काग्रेसजनों ने हस्ताक्षर किये। गाधीजी ने वायसराय से प्रार्थना की कि उन कानूनों को वापस ले लिया जाए। यह प्रार्थना अस्वीकृत हो जाने के बाद गाधीजी ने सत्याग्रह छेडने का सकल्प कर लिया तथा अपने अनुयायियों को उन कानूनों का उल्लधान करके जेल जाने का आदेश दिया। सरोजिनी नायडू की शक्तिशाली वक्तृता ने आदोलन के लिए स्वयसेवकों को आकर्षित करना शुरू कर दिया। उन्होंने घोषणा की कि ये कानून "आतककारी कानूनों का आदर्श नमूना है जो किसी भी प्रलयकारी दिन समूचे भारतीय राष्ट्र को मिटा सकते हैं।" और उन्होंने अपने स्वभाव के अनुसार इमाम हुसैन के बलिदान तथा मौलाना मोहम्मद अली की हाल की नजरबदी का उल्लेख करके अपने उद्बोधनों में मुसलमानों को भी शामिल कर लिया। उन्होंने कहा

'जब-जब सत्य पर शहीद होने वाला सत्य की खातिर अपने प्राणों का बलिदान करता है तब तब उसका धर्म अमरत्व प्राप्त कर लेता है। मित्रों यदि हमारे भीतर सत्य है, हम शास्त्रों की सतान हैं, कुरान की औलाद हैं, यदि हमारे पास सत्य है, यदि हम आध्यात्मिक दृष्टि से हरिश्चन्द्र और इमाम हुसैन के वशज हैं तो हम भी इस खातिर बलिदान हो जायेंगे कि सत्य जीवित रह सके।"

---

[1] सरोजिनी नायडू - ले0 मालासेवक पाठक पे025

रौलट कानून लागू होने से एक दिन पहले 17 मार्च, 1919 को श्रीमिती नायडू ने मद्रास में समुद्रतट पर एक विराट सभा में प्रभावशाली भाषण दिया और निम्न प्रस्ताव रखा

"मद्रास के नागरिकों की यह सार्वजनिक सभा महामहिम वायसराय और भारत सरकार से एक बार पुन हार्दिक विनती करती है कि रौलट विधेयकों के कम से कम उन अशों को निकाल दिया जाये जो अन्यायपूर्ण हैं, स्वतत्रता और न्याय के सिद्धान्तों के प्रतिकूल हैं तथा व्यक्ति के उन बुनियादी अधिकारों के लिए घातक हैं जिन पर समूचे राष्ट्र और स्वय राज्य की सुरक्षा अवलबित होती है।

"यह सार्वजनिक सभा कल महात्मा गाधी के आगमन के आनददायी समाचार का कृतज्ञतापूर्वक स्वागत करती है तथा एक बार पुन महात्मा गाधी के सत्याग्रह आदोलन के प्रति पूर्ण निष्ठा व्यक्त करती है, और उसके समर्थन के लिए सब लोगों का आह्वान करती है।"

अपने भाषण में श्रीमती नायडू ने तेज स्वर में कहा, "मद्रास के नागरिकों, आपको अचरज हो रहा होगा कि आज शाम को इस सभा के अध्यक्ष ने जो प्रस्ताव अभी आपके सामने पढकर सुनाये हैं उनको प्रस्तुत करने तथा मेरे आदरणीय गुरू महात्मा गाधी ने आपसे जो कुछ कहा है उसके अर्थ, अभिप्राय और प्रयोजन की व्याख्या के लिए मैं किस हैसियत से और किस अधिकार के आधार पर आपके सामने खड़ी हुई हू। जब सुदूर अहमदाबाद में, उस फूस के छप्पर वाली झोंपड़ी में जिस में निस्वार्थ महात्मा रहता है और स्वेच्छा से अपनाई गई दरिद्रता का जीवन व्यतीत करता है, हमारे उस छोटे से गुरू ने यह निश्चय किया कि आतकित और अत्याचार से पीड़ित भारत के शस्त्रागार में एक ही उपयुक्त शस्त्र बचा है जो मशीनगन और तलवारों का शस्त्र नहीं वरन् सपूर्ण आध्यात्मिक विद्रोह और उस आध्यात्मिक शक्ति का बुनियादी और अपराजेय अस्त्र है जो भौतिक अस्त्र और अन्य राष्ट्रों की भौतिक शक्ति के विरुद्ध है, उसी क्षण हमने अपने जीवन और व्यक्तिगत

स्वतत्रता के रूप में अपने समस्त जीवन-मूल्यों एव जागतिक मानदडों के अनुसार अपने निजी सुखों को समर्पित कर दिया।[1]

सहज ही अपेक्षित था कि सत्याग्रह आदोलन का विरोध उठ खड़ा हो। देश में ऐसे बहुत से लोग निकल आए जिन्होंने गाधीजी के सत्याग्रह आदोलन का कड़ा विरोध किया क्योंकि उनकी दृष्टि में वह रचनात्मक होने के बजाय विनाशकारी अधिक था। इस सदर्भ में भारत सरकार के गृह विभाग (राजनीतिक), शिमला का 6 नवबर, 1920 का प्रस्ताव दिलचस्प है। उस पर सरकार के सचिव मैकफर्सन के हस्ताक्षर हैं और जिसे उसी समय जारी कर दिया गया था

"तत्कालीन घटनाओं को देखते हुए सपरिषद् गवर्नर-जनरल स्थानीय सरकारों और प्रशासन के मार्गदर्शन की दृष्टि से ही नहीं वरन् भारत की जनता की सूचना के लिए भी असहयोग आदोलन के प्रति भारत सरकार के रवैये और उसकी नीति की घोषणा कर देना आवश्यक समझते हैं। पहली बात तो यह है कि भारत सरकार ऐसे समय में जबकि भारत साम्राज्य-के-भीतर स्वशासन के आदर्श की प्राप्ति की ओर महान प्रगति की ड्योढि पर खड़ा है तथा पहले आम चुनाव निगाह के सामने हैं, भाषण और प्रशासन स्वतत्रता में हस्तक्षेप नहीं करना चाहती। दूसरी बात यह कि सरकार उन व्यक्तियों के विरूद्ध कार्यवाही करने से सदा हिचकिचाती रही है जिनमें से कुछ प्रामाणिकतापूर्वक किन्तु पथभ्रष्ट प्रयोजनों से प्रेरित होकर कार्य कर रहे हैं। तीसरी और मुख्य बात यह है कि भारत सरकार को भारत की साधारण सूझबूझ पर आस्था है और उसको विश्वास है कि भारत के विशिष्ट और आम लोग स्वस्थ मस्तिष्क से काम लेंगे तथा असहयोग को एक महज काल्पनिक और अवास्तविक योजना मानकर अस्वीकार कर देंगे, क्योंकि यदि वह सफल होती है तो उसका परिणाम व्यापक, अव्यवस्था, राजनीतिक अराजकता तथा उन सब लोगों के सर्वनाश के रूप में सामने आएगा जिनके कोई भी वास्तविक हित के भीतर दाव पर लगे हैं। इस आस्था और विश्वास ने भारत सरकार की नीति को प्रभावित किया है। असहयोग, द्वेष और अज्ञान पर अवलबित है और उसका सिद्धान्त रचनात्मक-प्रतिभा

---

[1] सरोजिनी नायडू – ले0 ताराअली बेग पे090

से रहित है। भारत को असहयोग की पूर्ववर्ती सत्याग्रह-परम्परा का कटु अनुभव है, तथा सपरिषद गवर्नर-जनरल को अभी तक आशा है कि भारत प्रत्यक्ष घटित शोकपूर्ण चेतावनी से पाठ ग्रहण करेगा और असहयोग के उससे भी कहीं बड़े खतरे को स्वीकार करने से इकार कर देगा। इसके प्रतिपादकों ने अतिम रूप से यह प्रतिज्ञा कर ली है कि वे वर्तमान शासन को नष्ट करेंगे, ब्रिटिश शासन की जड़ें खोद देंगे, और उन्होंने अपने अनुयायियों को यह आशा दिलाई है कि यदि उनके मत्र को आम तौर पर स्वीकार कर लिया गया तो भारत एक वर्ष में स्वशासी और स्वतत्र हो जाएगा। भारत सरकार की आस्था इस तथ्य से बहुत बड़ी सीमा तक सही सिद्ध हो गई है कि भारत के सर्वश्रेष्ठ मस्तिष्कों ने असहयोग की मूर्खता की एक स्वर से निदा की है। शिक्षित लोकमत के सबसे अधिक महत्वपूर्ण अश ने इस नये सिद्धान्त को भारत के लिए अत्यधिक दुस्सभावनायुक्त मानकर अस्वीकार कर दिया है। इस आदोलन के नेता शिक्षित भारत से मनोनुकूल निर्णय प्राप्त करने में असफल हो जाने पर जनसाधारण को उग्र भाषा द्वारा भड़काने तथा असहयोग के झडे के नीचे स्कूलों और कालेजों के अपरिपक्व छात्रों की सहानुभूति और सहायता प्राप्त करने की कोशिश के लिए विवश हो गए हैं। यह स्थिति भारत के लिए बहुत खतरनाक है। इस कारण ही भारत सरकार सारे मामले को देश के सामने खुले-आम पेश करने के लिए विवश हुई है। असहयोग आदोलन ने हाल में ही जो दो नए रूप ग्रहण किये हैं उनमें असदिग्ध रूप से सबसे अधिक अनैतिक देश के नवयुवकों पर किया जाने वाला आक्रमण है, उन्हें राजनीतिक आदोलन की वेदी पर बलिदान करने की योजना बनाई गई है। आदोलन के नेताओं को इस बात की तनिक भी परवाह नहीं है कि उनके कार्यो से परिवारिक जीवन की नींव उखड़ जाएगी, बच्चे अपने माता-पिता की अवज्ञा करेंगे, साथ ही अशिक्षित लोगों का आह्वान भी गभीर खतरों से भरा हुआ है। उसका एक निदनीय परिणाम तो सामने आ ही गया है और यह निश्चित है कि एक नगर से दूसरे नगर तक भाग-दौड़ करके उत्तेजनात्मक भाषणों तथा निरतन खडन के बावजूद गलत वक्तव्यों की पुरावृत्ति के द्वारा जनसाधारण में उत्तेजना पैदा करने वाले नेताओं की अथक गतिविधि गभीर विप्लव और अव्यवस्था को जन्म दे सकती है।

हम सदा के लिए समाप्त हो जायेंगे।[1] कांग्रेस-लीग योजना का क्या हुआ? वे माटेग्यू-चेम्सफोर्ड प्रस्ताव ताक पर रख दिये गये हैं। और उनके बदले रौलट कानून हम पर थोपे जा रहे हैं।"

आगे उन्होंने भावुकतापूर्ण स्वर में रोटी के बदले विष का प्याला दिये जाने की उपमा देते हुए कहा "विष अर्थात् बलप्रयोग के विरूद्ध एक ही उपचार बचा है वह है सत्याग्रह।"[2] उन्होंने श्रोताओं से गाधीजी के नेतृत्व का समर्थन करने के लिए पुन प्रार्थना की। पाच दिन बाद 30 मार्च, 1919 को गाधीजी ने देशव्यापी हड़ताल से अपना आदोलन शुरू किया। विभिन्न कारणों से उसे 6 अप्रैल के लिए स्थगित कर दिया गया तथा सभी जातियों के लोगों ने हड़ताल में भाग लिया। आदोलन के स्थगन के बारे में सरोजिनी नायडू की बड़ी बेटी पद्यजा ने एक दिलचस्प कारण बताया गाधीजी सविनय अवज्ञा आदोलन 30 मार्च को शुरू करना चाहते थे। अस्वस्थता के बावजूद वह सत्याग्रह के बारे में एक सार्वजनिक सभा में भाषण करने के लिए मद्रास गए। सरोजिनी भी अस्वस्थ थीं, यह बात अहमदाबाद के उनके भाषण से स्पष्ट हो गई थी। वह गाधी जी के साथ नहीं जा सकीं। ऐसा लगता है कि गाधीजी ने तब तक सत्याग्रह आरभ करने से इकार कर दिया जब तक कि सरोजिनी, शकरलाल बैंकर, उमर सोभानी और जमनादास द्वारकादास खादी को सिद्धान्तत स्वीकार करने और उनके साथ आदोलन आरभ करने के लिए तैयार न हों। जब वे लोग बबई पहुचे तो उन्हें मालूम हुआ कि दिल्ली में 30 मार्च को हड़ताल हुई और वहा आदोलन शुरू हो गया है। स्वामी श्रद्धानद ने जामा मस्जिद में एक विराट जनसमूह के समक्ष भाषण दिया और सरकार ने सभा को बलपूर्वक भक करने का निश्चय कर लिया। गोलीबारी में कुछ लोग मारे गए जिसके कारण चारों ओर उत्तेजना फैल गई। 6 अप्रैल को गाधीजी ने जो सदा की भाति इस बार भी बिठ्ठलभाई जवेरी के घर पर ठहरे हुए थे (बबई का मणिभवन जो अब गाधी सग्राहलय के रूप में राष्ट्र को समर्पित कर दिया गया है) एक प्याला बकरी का दूध पिया, चरखा चलाया और प्रार्थना की। उनके साथ उनके साथी थे जिन्होंने खादी

---

[1] सरोजिनी नायडू ले0 मातासेवक पाठक पे022

[2] सरोजिनी नायडू - लै0 मातासेवक पाठक पे023

पहनने का व्रत लिया क्योंकि खादी ब्रिटिश शोषण के माध्यम से चल रहे औद्योगीकरण के दमनचक्र से मुक्ति की ही प्रतीक नहीं थी वरन् जैसा कि गाधीजी द्वारा खादी के प्रयोजन को समझने के बाद एनी बेसेन्ट ने कहा था वह "चक्र के प्रत्येक प्रवर्तन में भारत निर्धन, एकाकी और खोये हुए लोगों का स्मरण भी कराती है।"[1]

निश्चित समय पर ये थोड़े से लोग चौपाटी जा पहुचे। वहा उन्होंने एक विराट सभा में भाषण दिये। वहा से वे पायधोनी गए जहा सरोजिनी ने एक मस्जिद में एक मार्मिक भाषण दिया। यह भाषण दिल्ली की जामा मस्जिद में हुए पुलिस के दमन के बाद दिया गया था अत उन्होंने सत्याग्रह के माध्यम से एकता की स्थापना के लिए विभिन्न सप्रदायों के लोगों का जो आह्वान किया उसकी तीव्र प्रतिक्रिया हुई। उन्होंने सत्याग्रहियों के जुलूस को 'राष्ट्रीय हीनता का प्रतीक' बताते हुए कहा कि "तब दूर तक फैले हुए प्रदेशों से भेजी गई सयुक्त प्रार्थनाए ईश्वर तक पहुचेगी और उससे विनती करेंगी कि ईश्वर उन्हें जीवनघाती काले कानूनों और इन कानूनों द्वारा स्वतत्रता को दी गई चुनौतियों के खतरे से मुक्त करे।"

सरोजिनी फिर से भीड़ को सबोधित करने के लिए कार में खड़ी हो गयीं। यह बात महत्वपूर्ण है कि गाधीजी के नए सत्याग्रह आदोलन के प्रथम चरण में सरोजिनी उनके साथ भाषण देती थीं। वह इस प्रयोग में उनकी सर्वाधिक विश्वसनीय सगी थीं। यह बात इस कारण और भी अधिक महत्वपूर्ण मानी जा सकती है कि बाद में जब गाधीजी ने आदोलन वापस ले लिया तब उन्होंने सत्याग्रह का सचालन उन लोगों को ही सौंपा जो पर्याप्त मात्रा में विकसित और उसके उपयोग की दृष्टि से उच्चमना थे, तथा यह कहा कि दोषपूर्ण नेतृत्व कों सत्याग्रह के दुरूपयोग का अधिकार नहीं है क्योंकि वह भीड़ को हिसा के लिए उत्तेजित कर देता है।

दुर्भाग्यवश 6 अप्रैल का आदोलन जो इतनी गरिमा के साथ आरभ हुआ था शीघ्र ही भयकर रक्तपात में बदल गया जिसकी शुरूआत पहले-पहल अमृतसर में हुई। सरोजिनी ने पुलिस की सतर्कता और दमन के बावजूद गाधीजी की दो पुस्तकों

---

[1] सरोजिनी नायडू ले0 ताराअली बेग पे094

हिन्द स्वराज्य और सर्वोदय (रस्किन की पुस्तक अन्टू दिस लास्ट का गुजराती रूपातर) बेचने का काम हाथ में लेकर आदोलन को गति प्रदान की। ये पुस्तकें सरकार द्वारा जब्त कर ली गई थीं। गाधीजी अमृतसर जाने के लिए निकले कि उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया जिसके कारण हिंसा, दगे और यूरोपीय नागरिकों की हत्या का दौर शुरू हो गया। फलत जलियावला बाग का भीषण नरमेध हुआ। जलियावाला बाग में आने-जाने का एक ही रास्ता था और उसकी दीवारें ऊँची थीं। 13 अप्रैल को उसके भीतर बीस हजार लोग सभा के लिए एकत्र हुए। सभाओं पर सरकार ने प्रतिबध लगा दिया था, किन्तु घटना-चक्र इतनी तेजी से चल रहा था कि अधिकाश लोगों को उस प्रतिबध के बारे में कुछ मालूम न था। कानून और व्यवस्था के भग हो जाने, अग्रेज महिलाओं पर आक्रमण और यूरोपीय नागरिकों की हत्याओं ने जनरल डायर को मानसिक रूप से असतुलित कर दिया और उन्होंने भीड़ पर तब तक गोली चलाते रहे जब तक कि उनकी गोलिया समाप्त नहीं हो गई।[1] सारे देश की चेतना को इससे गहरा आघात लगा, मानो प्रत्येक नागरिक के सीने को जलियावाला बाग में चली गोलियो ने बेध डाला हो। उस समय तक राजनीतिक खेल प्राय भद्रपुरूषों के नियमों के अनुसार खेला जाता रहा था। जनरल डायर के इस कार्य ने देश के अन्त करण को उस कठोर यथार्थ का पहला आघात पहुचाया जिसने देश को यह तथ्य स्वीकार करने के लिए बाध्य कर दिया कि स्वतत्रता और स्वाधीनता सौदेबाजी की चीजें नहीं हैं, उनके लिए प्राणों का उत्सर्ग करना पड़ता है।[2]

गाधीजी ने जब यह देखा कि शान्तिपूर्ण हड़ताल की उनकी धारणा का यह परिणाम निकला तो पहले वह घबरा गए। शान्ति की स्थापना के लिए उन्होंने सत्याग्रह वापस ले लिया, अपने अनुयायियों द्वारा की गई हिंसा का सारा दायित्व अपने ऊपर ले लिया, अपने कार्यो को 'हिमालय सरीखी भूल' कहा तथा प्रायश्चित के तौर पर तीन दिन का उपवास किया। गाधीजी को लगा कि अहिंसा की आध्यात्मिक शक्ति जिसका मूल प्रयोजन हिंसा का निराकरण करना था विफल हो गई है। सत्याग्रह में सत्याग्रही से यह अपेक्षित था कि वह हिंसा पर क्रुद्ध होने के बजाय

---

[1] सरोजिनी नायडू - ले0 उमापाठक पे0111
[2] सरोजिनी नायडू - ले0 इन्दू जैन पे013

मरने के लिए तैयार रहेगा, किन्तु वैसा हुआ ही नहीं। इस कठोर काल में सरोजिनी गाधीजी के लिए शक्ति का स्रोत बन गयीं और 18 अप्रैल को जब गाधीजी की आस्था किसी सीमा तक पुनर्स्थापित हो गई तो उन्होंने बम्बई में स्वयसेवकों की एक बैठक बुलाई तथा विशेष रूप से विश्वसनीय कार्यकर्ताओं को अहिंसक असहयोग का कार्य चालू रखने के लिए व्यक्तिगत सत्याग्रह का दायित्व सौंपा।

1907 में ही एनी बेसेंट शायद भावी को पढ़ लिया था और आग्रह किया था कि स्वराज्य सावेधानिक रीतियों से ही प्राप्त किया जाना चाहिए। वह स्वराज्य प्राप्ति के लिए एक साधन के रूप में सत्याग्रह के विरूद्ध तो न थीं किन्तु उन्हें यह विश्वास था कि अशिक्षित लोगों की भीड़ों को उत्तेजित करने से भीड़ की हिंसा जन्म लेगी।

गाधीजी द्वारा 4 मई, 1918 को वायसराय के नाम लिखे गये पत्र के अलावा शायद दूसरा कोई भी अभिलेख सरोजिनी के मस्तिष्क पर उनके सिद्धान्तों के प्रभाव को इतनी भली प्रकार व्यक्त नहीं कर पाता। उस पत्र में गाधीजी ने लिखा था

"जनता को इस बात पर विश्वास करने का अधिकार है कि अपने अपने भाषण में जिन सभावित सुधारों का परोक्ष रीति से उल्लेख किया है उनमें काग्रेस-लीग योजना के प्रमुख सामान्य सिद्धान्तों का समावेश किया जायेगा। यहा मैं एक बात का उल्लेख करना चाहता हू। आपने हमसे अपील की है कि हम आपसी मतभेदों को भुलाए। यदि इस अपील का अर्थ यह है कि हम अधिकारियों द्वारा कि द्वारा किये जाने वाले दमन और गलत कार्यो को सहन करते जाए तब तो मैं इस अपील को स्वीकार करने में असमर्थ हू। मैं सगठित दमन का प्रतिरोध समूची शक्ति लगाकर करूगा। चपारन में एक युग पुराने दमन का प्रतिरोध करके मैंने ब्रिटिश न्याय की चरम प्रभुता का प्रदर्शन किया है। कटरा में जो जनता सरकार को कोस रही थी वही अब यह महसूस करती है कि शक्ति उसके अपने भीतर है सरकार में नहीं, लेकिन यह तभी हो सकता है जब वह उस सत्य के लिए कष्ट सहने को तैयार हुई जिसका प्रतिनिधित्व वह स्वय करती है।

"यदि मैं पाशविक शक्ति के स्थान पर आध्यात्मिक शक्ति को जो प्रेमशक्ति का ही दूसरा नाम है– लोकप्रिय बना सका तो मुझे विश्वास है कि मैं आपके समक्ष एक ऐसा भारत पेश कर सकूगा जो आत्म–विनाश पर उतारू समूचे ससार का सामना कर सकेगा। अत मैं सदा–सर्वदा अपने आपको इस प्रकार अनुशासित करता रहूगा कि मेरे जीवन में सहनशीलता का यह शाश्वत नियम अभिव्यक्त होता रहे और दूसरे जो भी लोग इसे सीखना चाहें उनके सामने मैं यह आदर्श पेश कर सकू।"

एनी बेसेंट को होमरूल लीग आदोलन और उसके घोषित लक्ष्यों के प्रति सदा निष्ठावान बने रहने वाले जमनादास द्वारकादास ने लिखा है कि 1919 में जब गाधीजी का सत्याग्रह देश को होमरूल की सविधानिक रीतियों से दूर प्रत्यक्ष क्राति के मार्ग पर ले जाने लगा तब बबई में एक महत्वपूर्ण घटना हुई। सरोजिनी और सी0पी0 रामास्वामी अय्यर ने जमनादास से एक ऐसे वक्तव्य पर हस्ताक्षर करने के लिए कहा जिसमें कहा गया था कि स्वतत्रता प्राप्ति के मामले में ऐनी बेसेंट का दृष्टिकोण गलत था। सरोजिनी ताजमहल होटल में ठहरीं थीं। गाधीजी उनसे मिलने वहा पहुचे और बोले कि जमनादास को उस वक्तव्य पर हस्ताक्षर करने के बजाय अपना दाहिना हाथ काट डालना चाहिए। यह बात बहुत महत्वपूर्ण है कि गाधीजी के लिए अपने अनुयायियों के प्रभाव अथवा अपने राजनीतिक लक्ष्यों की अपेक्षा निर्धारित आदर्शों के प्रति आस्था का महत्व अपने राजनीतिक लक्ष्यों की अपेक्षा निर्धारित आदर्शों के प्रति आस्था का महत्व अधिक था, और इससे यह सकेत भी मिलता है कि उनकी 'अतर्वाणी' उस समय तक स्वय के सही होने के बारे में पूरी तरह आश्वस्त नहीं थीं। गाधीजी ने प्रथम सत्याग्रह आदोलन को 'हिमालय सरीखी भूल' माना था। यह सभव है कि इस मूल्याकन के पीछे ऐनी बेसेंट की इस आस्था का प्रभाव रहा हो कि उन्होंने जिन सविधानिक रीतियों का आश्रय लिया था वे सही हैं। जहा तक इतिहास का सबध है 1919 राष्ट्र की नियति में अगली काल–विभाजक रेखा का प्रतीक हे। ऐनी बेसेंट पृष्ठभूमि में चली गयीं तथा गाधीजी भारतीय क्राति के सर्वसम्मान्य नेता के रूप में उभर कर सामने आ गये।

जुलाई 1919 में सरोजिनी अखिल भारतीय होमरूल लीग की सदस्य के रूप में इग्लैण्ड गई। उन्हें ऐसा लगा कि यदि प्रभावशाली रीति से प्रचार न किया गया तो माटेग्यू-चेम्सफोर्ड प्रस्ताव जो उस समय विचाराधीन थे महिला मताधिकार के प्रश्न की पूर्णतया उपेक्षा ही कर देंगे। इग्लैण्ड पहुचकर उन्होंने समस्त विभिन्न भारतीय राजनीतिक सगठनों को एकजुट करके भारतीय महिलाओं के लिए मताधिकार की माग करने के लिए एक सयुक्त शिष्टमडल का गठन किया जिसका नेतृत्व स्वय उन्होंने किया।[1] यद्यपि सभवत वह नारी-मुक्ति आदोलन की नेता नहीं थीं। (वह हमेशा अपने-आपको 'मात्र-महिला' कहती थीं) तथापि उनकी न्याय भावना उन्हें अनिवार्यत महिलाओं के आदोलन में खींच लाई थी। यही कारण है कि शुरू से ही उन्होंने महिला सगठनों के महान कार्य में कजिस का समर्थन किया था। सभवत उन्होंने अपने यौवनकाल में इग्लैण्ड में महिलाओं का जो मताधिकार आदोलन अपनी आखों से देखा था उसकी प्रेरणा से उनक मन में यह आस्था पूरी तरह घर कर गई थी कि महिलाओं को राजनीतिक जीवन में पूरी तरह भाग लेना चाहिए। 1918 में बबई प्रातीय परिषद् के आठवे अधिवेशन के अवसर पर बीजापुर में इसी प्रयोजन से उन्होंने एक प्रस्ताव रखा था-" बबई की महिलाओं ने इस सम्मेलन ने भारत में महिला-मताधिकार का समर्थन करने की जो माग की है उसका यह सम्मेलन स्वागत करता है, तथा यह मत प्रकट करता है कि महिलाओं को यह अधिकार दिया जाये, लेकिन अनुकूल परिस्थितियों के अतर्गत "। सरोजिनी ने जोर देकर कहा कि, "जहा तक नागरिकों के राजनीतिक तथा अन्य अधिकारों का प्रश्न है मनुष्य शब्द में महिलाओं का समावेश माना जाना चाहिए। यह याद रखिये कि समस्त महान राष्ट्रीय सकटों में पुरूष ही बाहर जाता है, लेकिन उसको नारी की आशावादिता और उसकी प्रार्थना से ही शक्ति मिलती है, इनसे ही उसकी भुजाओं को वह बल मिलता है जिसके आधार पर वह एक सफल योद्धा बन सकता है।"

इब इग्लैंड में उन्होंने उस कार्य का बीड़ा उठाया। 6 अगस्त, 1919 को वह भारतीय सुधारों पर विचार करने के लिए नियुक्त सयुक्त समिति के समक्ष उपस्थित

---

[1] सरोजिनी नायडू ले0 मातासेवक पाठक पे050

हुई तथा उन्होंने उसके सामने एक प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जिसमें महिलाओं के लिए मताधिकार के पक्ष में तर्क दिये गये। उनके भाषण का सदर्भ देते हुए समिति के अध्यक्ष ने कहा था "यदि मुझे यह कहने की अनुमति दी जाए तो मैं कहूगा कि उस भाषण ने हमारे गद्य-साहित्य को काव्यात्मक सस्पर्श प्रदान किया है।" इतना ही नहीं उनके शब्द निशाने पर ठीक बैठे। यह बात स्वीकार की जाती है कि उनके उस भाषण ने समिति को बहुत सीमा तक प्रभावित किया।

जिस समय मित्रराष्ट्रों ने तुर्की के साथ वह सधि की जिसके अतर्गत विश्व भर के मुसलमानों के खलीफा तुर्की के सुल्तान की आध्यात्मिक और लौकिक स्थिति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा और उससे भारत के मुसलमान उत्तेजित हो गये, उस समय सरोजिनी इग्लैण्ड में थीं, यद्यपि इस प्रश्न का भारत के साथ कोई सबध न था और साथ ही औपनिवेशिक शासन के दौरान तुर्की के लोगों के कारनामे भी कोई ऐसे न थे कि उनके साथ औपनिवेशिक शासन के अधीन जी रहे अन्य देशों के लोगों को किसी प्रकार की सहानुभूति होती, तथापि गाधीजी ने हिन्दु-मुस्लिम एकता की स्थापना की दृष्टि से तथा सरोजिनी ने इस्लाम के प्रति गहरे भावनात्मक लगाव के कारण आदोलन को अपनी ओर से पूर्ण समर्थन प्रदान किया। वस्तुत सरोजिनी के हृदय में इस्लाम का स्थान अपने विश्वासों के बाद दूसरा था। मौलाना मोहम्मद अली के नेतृत्व में एक खिलाफत-शिष्टमडल इग्लैंड गया। उसने 22 अप्रैल को लदन के किग्सवे हॉल में एक सभा का आयोजन किया जिसमें सरोजिनी ने भी भाषण दिया। उन्होंने ब्रिटिश श्रोताओं से कहा कि, "मौलाना मोहम्मद अली ने स्वतत्र जनता के अपराजेय निर्णय और अपनी राष्ट्रीय भावनाओं के लिए प्राणोत्सर्ग के सकल्प के बारे में आपसे कहा है। लेकिन मैं तो मरने को तैयार नहीं हू क्योंकि मैं ऐसा सोचती हू कि जीवित रहने के लिए कहीं अधिक उच्चकोटि के और अपरिमित साहस की आवश्यकता होती है।"[1]

---

[1] सरोजिनी नायडू - ले० ताराअली बेग पे०९९

कुछ समय तक तो खिलाफत आदोलन बहुत उग्रतापूर्वक चला, किन्तु अन्तत वह अपनी ही मौत मर गया क्योंकि कमाल अतातुर्क ने खलीफा का पद ही समाप्त कर दिया और अपने देश का आधुनिकीकरण एव पश्चिमीकरण कर डाला।

खिलाफत आदोलन के साथ-साथ पजाब की घटनाओं और उनके बाद की स्थिति तथा सरकारी हटर समिति एव गैरसरकारी काग्रेसी समिति द्वारा उन घटनाओं के बारे में जाच के बाद प्रस्तुत प्रतिवेदनों के प्रकाशन से भारत बहुत क्षुब्ध हो गया था। उस स्थिति में भी उन अत्याचारों का परिचय ब्रिटिश श्रोताओं को देने का भी अवसर सरोजिनी ने हाथ से नहीं जाने दिया। 3 जून 1920 को 'पजाब की व्यथा और लज्जा' विषय पर बोलते हुए उन्होंने कहा [1]

"मेरे देशवासियों, आज इस रात मैं आपको सबोधित नहीं कर रही हू, लेकिन अग्रेज पुरूषों और महिलाओं, आज मैं अपने देश में नरमेध करने वालों के रक्तरजित अपराधों के कारण आप सबको न्यायालय के कटघरे में खड़ा करके आपसे बात कर रही हू। मैं उन अकल्पनीय अत्याचारों के ब्यौरे में नहीं जाना चाहती जो मेरे देश पर किये गये हैं और जो इतने अमानवीय हैं कि सहसा विश्वास नहीं होता कि ऐसा भी किया जा सकता है। मेरे मित्रों-श्री पटेल और श्री हॉर्नमैन ने उस भयकर, अत्यत भयकर, तिगुने भयकर जुल्म की प्रकृति मोटे तौर पर और सार रूप में आपके सामने रखी है जो ब्रिटिश न्याय के नाम पर ढाया गया है। किन्तु मैं आपके सामने एक महिला के रूप में उस अन्याय के बारे में चर्चा करना चाहती हू जो मेरी बहिनों के प्रति किया गया है। अग्रेज पुरूषों, आप जो अपनी वीरता पर गर्व करते हैं और अपनी स्त्रियों की प्रतिष्ठा और उनके सतीत्व को शाही खजाने से भी ज्यादा बेशकीमती समझते हैं, क्या आप शात बैठे रहेंगे और घूघट में लिपटी पजाब की कुलवधुओं की प्रतिष्ठा, उनके अपमान तथा उन पर ढाये गये जुल्मों का बदला लेने के लिए कुछ नहीं करेंगे?"

पजाब में अग्रेजों द्वारा किए गए अत्याचारों के इस रहस्योद्घाटन से ब्रिटेन के उदारवादी लोकमत को गहरा आघात पहुचा वहा उसके अत्याचार विस्तारपूर्वक प्रकाशित

---

[1] सरोजिनी नायडू - ले0 ताराअली बेग, पे0100

किए गए, लोकसभा में चर्चाए हुई तथा बात यहा तक बढी की भारतमत्री श्री माटेग्यू ने श्रीमती नायडू के आरोपों को लिखित चुनौती दी। लेकिन जिन तथ्यों का उद्घाटन उन्होंने किया था उनसे कोई इकार नहीं कर सकता था।[1]

हरीन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय ने कई वर्ष बाद अपनी बहिन के बारे में एक लेख में लिखा था

"सरोजिनी को बुलबुल-ए-हिन्द (भारत कोकिला) कहा जाता था। मझे पक्का विश्वास है कि यह पदवी उन्हें उनकी कविता के कारण नहीं वरन् उनकी उस असाधारण वक्तृता के कारण दी गई थी जो उनके भीतर से सगीत की धारा-सी फूटकर बहती थी, स्वर्णमडित रजत-धारा सी, जो विशुद्ध प्रेरणा के शिखरों से प्रपात-सी झरती थी।[2] सरोजिनी के भाषण राष्ट्रीय जीवन पर जादू और प्रभाव दोनों डालते थे, और यद्यपि वे स्वभाव से, तथा काव्य अथवा भाषण दोनों विधाओं में अभिव्यक्ति के मामले में गीतकार थीं तथापि वे हमेशा ही गेयात्मकता के कोमल बिन्दु पर नहीं थमी रहती थीं। ऐसे भी अवसर आए जब उनके पछी का स्वर दावानल के चीत्कार में रूपान्तरित हो जाता था और उनकी सतरगी वक्तृता उस तीखी तलवार का रूप ले लेती थी जिनमें निश्चय ही घातक प्रहार की क्षमता होती थी। 1920 में लज्जाजनक अमृतसर नरसहार के पश्चात् मैंने सरोजिनी को खचाखच भरे लदन के अल्बर्ट सभागार (लदन में) बोलते हुए सुना था।[3] वह घृणापूर्वक बोलीं, वह प्रतिशोध की भावना से अभिभूत होकर बोलीं, वह पूर्णतया प्रमाणिकता से बोलीं। उस अपराहत समूचे श्रोतामडल पर यह बात स्पष्ट रूप से प्रकट हो गई कि वह पूर्ण तथा प्रमाणिक है, वह बातों को घुमाफिराकर नहीं कह रही थीं, और वह किसी तरह के समझौते के लिए भी तैयार न थीं। उनके भीतर और बाहर भारत बिजली की तरह कौंध रहा था। वह बिजली उन लोगों को अधा किए डाल रही थी जो सरोजिनी के देशवासियों का नरमेध करने वालों के अपने थे। भारत उनके माध्यम से मुखर हो उठा था। भारत, टूटा फूटा भारत जिसकी काया से रक्त रिस रहा था और जिसका

---

[1] सरोजिनी नायडू – ले0 मातासेवक पाठक, पे029
[2] लाइफ एण्ड माइसेल्फ – ले0 हरीन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय ।
[3] लाइफ एण्ड माइसेल्फ – ले0 हरीन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय ।

भारी अपमान हुआ था। और, जिस समय दीर्घा में वह झुड उठकर खड़ा हुआ जिसे विशेष तौर पर सभा में व्यवधान डालने के लिए वहा तैनात किया गया था, और उसने सरोजिनी पर व्यग्य करने की कोशिश की तो वह चीख उठी "जुबाद बद करो, " और परिणाम यह हुआ कि सभागार में पूर्ण शान्ति छा गई, बर्बर मुह ऐसे खामोश हो गए मानो किसी अपराजेय वीरागना के हाथ के वज्र ने उन्हें मूक कर दिया हो।"

सरोजिनी स्वीडन और स्विट्जरलैंड का दौरा करके एव फ्रास में भव्य स्वागत और सम्मान पाकर 1921 में इग्लैंड से भारत लौटीं। उनकी अनुपस्थिति में भारत में बहुत कुछ हो चुका था। नए राजनीतिक सुधारों ने काग्रेस की पक्तियों में फूट बो दी थी। गाधी जी अपने इस मत पर डटे थे कि सुधार बहुत सीमित है और उन्हें स्वीकार नहीं किया जा सकता, और उन्होंने विधानसभाओं, न्यायालयों, विदेशी वस्त्र तथा सरकारी विद्यालयों के बहिष्कार पर आधारित असहयोग आदोलन का एक प्रस्ताव तैयार किया था। बगाल के सर्वमान्य नेता चितरजन दास के नेतृत्व में काग्रेस का एक शक्तिशाली वर्ग इस प्रस्ताव का विरोध कर रहा था। सितबर 1920 में कलकत्ता काग्रेस अधिवेशन में दोनों पक्षों के बीच मुठभेड़ हुई और गाधीजी की नीति बहुत थोड़े बहुमत से स्वीकार कर ली गई। जिस समय श्रीमती नायडू भारत लौटीं तब तक आदोलन व्यापक रूप ले चुका था और उसने उन्हें उद्बोधन करने के अनेक अवसर प्रदान किए। उन्होंने युवकों के एक समूह को सबोधित करते हुए कहा कि, "अधिकारियों के साथ सहयोग मत करो, भीतर ही रुके रहो, इसके सिवाय कुछ मत करो।" तदुपरात जब्त साहित्य की ओर सकेत करते हुए उन्होंने कहा "यदि तुम इन पुस्तकों को खरीदो या बेचोगे तो तुम्हें गिरफ्तार किया जा सकता है।" इसका परिणाम यह हुआ कि श्रोताओं ने तत्काल इस चुनौती को स्वीकार कर लिया और उनसे पुस्तकें खरीद लीं।

सरोजिनी अग्रेजों की ओर से इस सीमा तक निराश हो चुकी थीं कि जब उनके श्रद्धेय मित्र रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने 'सर' की उपाधि लौटाई तो उन्होंने भी कैसर-ए-हिन्द का वह सोने का तमगा लौटा दिया जो सरकार ने उन्हें 1908 में

हैदराबाद नगर के जीवन को अस्त-व्यस्त करने वाली बाढ के दौरान सेवाकार्य के लिए प्रदान किया था।[1]

4 अक्तूबर, 1921 को गाधी जी, सरोजिनी तथा अन्य नेताओं ने राष्ट्र के नाम एक घोषणापत्र जारी किया जिसमें उन्होंने असहयोग के प्रयोजन और अनुसरण के लिए कार्यक्रम की ओर सकेत किया था। यह भारत में गाधीवादी युग का वास्तविक सूत्रपात था। यह घोषणापत्र भारत की जनता ने इतने महान उत्साह के साथ अपनाया कि जब "17 नवबर को प्रिस ऑफ वेल्स (ब्रिटेन के राजकुमार) भारत आए तो उपद्रव हो गए। उस समय अनेक प्रेक्षकों ने लार्ड कैनिग के ये दूरदर्शितापूर्ण शब्द याद किए" नीले और शात भारतीय गगन के नीचे मनुष्य के अगूठे जितना बादल क्षितिज पर प्रकट हो सकता है, किन्तु वह किसी भी समय ऐसे आयाम ग्रहण कर सकता है जिनकी किसी को कल्पना भी न रही हो, और कोई भी यह नहीं कह सकता कि उसका कहा विस्फोट हो जाएगा।"[2] इस बार अपूर्व हिंसा और रक्तपात हुआ। भीड़ों को शात करने के लिए सरोजिनी तत्काल उपद्रव-स्थलों पर जा पहुचीं, और गाधीजी को उस हिंसा से इतना गहरा आघात पहुचा कि उन्होंने कहा कि, स्वराज्य की दुर्गन्ध मेरे नथुनों में भरी जा रही है। और उन्होंने प्रायश्चित के लिए पाच दिन का उपवास शुरू किया। किन्तु, दगे तत्काल नहीं रूके। सरोजिनी ने उन दिनों जिस प्रकार कार्य किया उसका वर्णन उनके एक साथी ने इन शब्दों में किया है[3]-

"श्रीमती सरोजिनी नायडू के साहस के बारे में मैं क्या कहू? वह बार-बार विभिन्न उपद्रवग्रस्त क्षेत्रों में उपद्रवियों के बीच जातीं, और हर बाद वहा से लौटकर उपयुक्त हावभाव तथा मुखमुद्राओं द्वारा अपने निजी कार्यो का विवरण गाधीजी को सुनातीं। दूसरे लोग उन अवसरों पर जो कायरता दिखाते उसका भी नाटकीय शब्दचित्र खींचने से वह कभी नहीं चूकती थीं। इस प्रकार, उस सब व्यथा और चिता के बीच

---

1 सरोजिनी नायडू - ले0 उमापाठ्क पे0112
2 यग इण्डिया 4 7 1922
3 श्रीमती सरोजिनी नायडू ले0 उमा पाठ्क पे0114

महात्मा गाधी जी के साथ सरोजिनी नायडू

भी उन सबमें अकेली वही ऐसी थीं जो महात्माजी के ओंठों पर स्मितरेखा खींच देती थीं।

उसके बाद से बबई ही सरोजिनी का असली घर बन गया। वह गाधीजी के आदोलन में प्रधानत उनके असामान्य व्यक्तित्व और चरित्र से प्रभावित होकर आई थीं। किन्तु उन्होने उनके विचारों को बिना सघर्ष के यों ही स्वीकार नहीं कर लिया। वह गाधीजी से कहा करती थीं– "मैं बहुत मूर्ख हू कि आप जैसे प्रतिकूल बूढे आदमी का अनुसरण करती हू" किन्तु उन्होंने गाधीजी का अनुसरण जीवनभर पूर्ण हार्दिक निष्ठा के साथ किया।

गाधीजी के इस आह्वान की बहुत आलोचना हुई कि विद्यार्थी सरकारी विद्यालय छोड़ दें। यह स्वाभाविक ही था, किन्तु सरोजिनी ने उनकी नीति के औचित्य में शका प्रकट नहीं की। उन्हाने पूर्ण अलकार और बिबयुक्त भाषा में उनके आह्वान का अनुमोदन किया। दिसबर 1921 में उन्होंने अहमदाबाद में एक विद्यार्थी सम्मेलन की अध्यक्षता की। उन्होंने कहा कि 1914 के महायुद्ध में सहस्रों ब्रिटिश विद्यार्थी विश्वविद्यालय छोड़कर अपने देश के लिए युद्ध करने गए। यह सचमुच उत्सर्ग है कि "वे अपने–आपको उस ज्ञान से वचित कर लेते हैं जिसकी आवश्यकता उन्हें भविष्य में पड़ेगी, किन्तु स्वतत्रता है ही इतने बहुमूल्य उत्सर्ग की भी पात्र है।" उन्होंने उनका उद्‌बोधन करते हुए कहा, "तुम नए सैनिक हो आओ, मेरे साथ स्वतत्रता के मदिर तक कूच में शामिल हो जाओ। मैं झडा अपने हाथ में उठाये हू। साथियों, मेरे साथ तब तक कदम से कदम मिलाकर बढ्ते रहो जब तक कि हम लक्ष्य तक न पहुच जाए।"

इस प्रकार के भावनापूर्ण आह्वान की कौन उपेक्षा कर सकता था, वह लोगों के अस्तित्वों के प्रत्येक ततु का स्पर्श कर लेता था। सहस्रों युवकों ने अपने आपको गिरफ्तारी के लिए पेश कर दिया और वे जेल गए। इस काल में नेहरू परिवार के लोगों सहित 39,000 लोग जेलों में गए। गाधीजी ने समस्त सरकारी कानूनों और सविधानों के प्रति सविनय अवज्ञा का आह्वान किया। विद्यार्थियों से कहा गया कि आप शिक्षा और कैरियर का बलिदान कर दें। बाद में सरदार वल्लभ भाई पटेल ने

चुनौती को स्वीकार करके बारदोली में 'करबदी आदोलन' चलाया। उधर सरोजिनी और सी० एफ० एन्ड्रयूज ने मद्रास प्रेसीडेंसी खिलाफत समिति द्वारा आयोजित एक जनसभा में भाषण दिया।

1922 में अखिल भारतीय काग्रेस महासमिति की 37वीं बैठक में गया में सरोजिनी ने यह प्रस्ताव पेश किया[1]

"कमाल पाशा और तुर्की राष्ट्र को उनकी हाल की सफलताओं पर काग्रेस बधाई देती है तथा भारत की जनता के इस सकल्प की घोषणा करती है कि जब तक ब्रिटिश सरकार तुर्की राष्ट्र को मुक्त और स्वतत्र स्तर प्रदान करने तथा अबाध राष्ट्रीय जीवन एव हर प्रकार के गैर-मुस्लिम नियत्रण से मुक्त इस्लाम के प्रभावशाली सरक्षत्व की अनिवार्य दशाओं के निर्माण के लिए अपनी शक्तिभर प्रयास नहीं करती तथा उन बाधाओं का निवारण नहीं करती जो उसने इस कार्य में स्वय डाली हैं तब तक हम सघर्ष करते रहेंगे।"

प्रस्ताव पेश करने के बाद उन्होंने अपने भाषण में कहा कि, "इस विराट श्रोता मडली में मैं अपने सहधर्मी हिन्दुओं अपने अकाली भाइयों तथा इसी तरह आर्यसमाज और सनातन धर्म के अपने बधुओं से यह कहना चाहती हू कि हम भारत के हिन्दुजन इस्लाम की प्रतिष्ठा बनाए रखने के लिए दोहरे सूत्र में बधे हैं क्योंकि हमारे देश में हमारे मुसलमान भाई अल्पसख्या में हैं और क्योंकि वीरता और प्रेम दोनों की यह माग है कि प्रत्येक हिन्दु नर और नारी यह प्रतिज्ञा ले कि जब तक मुस्तफा कमाल पाशा की तलवार ऊँची न हो जाए और जब तक ईसाई राष्ट्रों की चुनौती उसके सामने से समाप्त न हो जाए तब तक वह इस्लाम की स्वतत्रता के लक्ष्य के प्रति समर्पित रहेगा। मैं अपने बीच उपस्थित मुसलमानों को, भले ही वे शिया हों या सुन्नी अथवा वे लोग जिनके लिए खलीफा ही सर्वस्व है, यह आश्वासन देती हू कि जब तक इस्लाम की मृत्यु नहीं होगी, और यदि इस्लाम की स्वतत्रता के लिए रक्त की नदी का बहना ही आवश्यक हुआ तो उसमें हिन्दुओं और मुसलमानों के रक्त का समान रूप से सगम होगा।"

---

[1] सरोजिनी नायडू - ले० मातासेवक पाठक पे०60

1922 फरवरी में आदोलन फिर काबू से बाहर हो गया। चौरी चौरा में एक भीषण दुर्घटना हुई और गाधीजी ने निराश होकर एक बार पुन आदोलन स्थगित कर दिया। उन्होंने भारत के लोगों से कहा कि अब आप आदोलन के बजाय चरखा चलायें, नशीली चीजें का परित्याग करें, हिन्दु-मुस्लिम एकता के लिए कार्य करें, और अपनी शक्ति समाजिक सुधार एव शिक्षा के प्रसार पर केन्द्रित करें। फरवरी 1922 में गाधीजी के साथी काग्रेसजनों ने आदोलन वापस लेने पर गाधीजी की कड़ी आलोचना की और सरकार ने इस अवसर का लाभ उठाकर उन्हें गिरफ्तार कर लिया। मार्च में अपनी गिरफ्तारी से पहले दिन उन्होंने अपने पत्र 'यग इडिया' में लिखा था "यदि मुझे गिरफ्तार कर लिया गया तो सरकार द्वारा बहाई गई रक्त की नदिया भी मुझे डरा नहीं पाएगी, किन्तु यदि जनता ने मेरे लिए अथवा मेरे नाम पर सरकार को एक गाली भी दी तो मुझे गहरी व्यथा होगी।"[1] यद्यपि उनकी गिरफ्तारी 'यग इडिया' में उनके राजद्रोहात्मक लेखों के नाम पर हुई थी तथापि उन्होंने जो कुछ लिखा था उसका ही स्वर अहमदाबाद में 18 मार्च,1922 को उनके महान मुकदमे की सुनवाई के समय व्याप्त रहा। जिस समय सैशन्स न्यायधीश श्री न्यायमूर्ति ब्रूमफील्ड के न्यायालय में मुकदमें की कार्यवाही आरम्भ हुई उस समय श्रीमती नायडू न्यायालय में मौजूद थीं। उन्हें वहा देखकर गाधीजी ने उनसे कहा अच्छा तो तुम इसलिए मेरे पास आकर बैठ गयीं जिससे कि यदि मेरा मनोबल टूट जाए तो तुम मुझे सहारा दे सको। यह न्यायालय की अपेक्षा पारिवारिक सम्मेलन प्रतीत होता है।" श्रीमती नायडू वहा अभिनीत नाटक से बहुत आदोलित थीं और 'द बाबे क्रॉनिकल' में उन्होंने अपनी भावनाओं को इस प्रकार व्यक्त किया[2]

"कानून की दृष्टि में वे एक बदी और अपराधी थे, तथापि जिस समय महात्मा गाधी अपनी दुबली-पतली गभीर अपराजेय काया लिए मोटी, घुटनों तक की धोती पहने अपने निष्ठावान शिष्यों और साथी-बदी शकरलाल बैंकर के साथ न्यायालय में घुसे तो समूचा न्यायालय उनके प्रति अनायास सम्मान प्रकट करने के लिए खड़ा हो गया। जिस समय न्यायधीश अपनी कुरसी पर बैठे तो वहा उपस्थित भीड़ आशका,

---

[1] इडियन रिव्यू - 1922 पे0 24

[2] यग इडिया - मार्च 1922

स्वाभिमान और आशा की मिश्रत भावना से रोमाचित हो उठी। एक प्रशसनीय न्यायधीश जो अपनी साहसपूर्ण और दृढ कर्तव्य-भावना, अपने अचूक सौजन्य, एक अनुपम अवसर की अपनी प्रतीति और एक अनूठे व्यक्तित्व के प्रति अपने उत्तम समादरपूर्ण शब्दों के लिए समान रूप से हमारी प्रशसा के पात्र हैं। वह विलक्षण मुकदमा आगे बढा और जैसे ही मैंने अपने प्रिय गुरू के होठों से मसीहाई उन्मेष से उद्दीप्त अमर शब्द सुने त्योंही मेरे विचार शताब्दियों पार एक भिन्न देश और एक भिन्न काल तक दौड़ गए। जब ठीक ऐसा ही नाटक अभिनीत हुआ था तथा एक अन्य दैवी और भद्र गुरू को समान साहसपूर्वक समान सदेश फैलाने के कारण क्रॉस पर लटकाया गया था। मैंने उस समय यह अनुभव किया कि नाद के पालने में पले नजारथ के निम्नवशी ईसा ही इतिहास में एकमात्र ऐसे महापुरूष हुए हैं जिनकी तुलना भारतीय स्वतत्रता के इस अपराजेय मसीहा से की जा सकती है जो निस्सीम करूणा के साथ मानवता को प्यार करता था और उसके ही सुन्दर शब्दों में कहा जाए तो 'गरीब बनकर ही गरीबों तक पहुचता था।''

सरोजिनी ने अग्रेज न्यायधीश की जो सराहना की थी वह उसके पात्र थे। मुकदमे की निष्पक्ष कार्यवाही के पश्चात् न्यायमूर्ति ब्रूमफील्ड ने एक गरिमामय निर्णय के द्वारा गाधीजी को छह वर्ष का कठोर कारावास का दड दिया। सरोजिनी से विदा लेते समय गाधीजी ने कहा, ''मैं भारत का भाग्य तुम्हारे हाथों में सौंपता हू।''

सरोजिनी का समूचा चितन और कर्म गाधीजी के चारों केन्द्रित हो गया था, उनकी गिरफ्तारी से सरोजिनी के जीवन में एक प्रकार की पराकाष्ठा उत्पन्न हो गई। लेकिन उसी समय मलाबार में उपद्रव खड़ा हो गया और उसने उनका ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लिया। एक छोटा-सा- मुस्लिम सप्रदाय-मोपला अनेक कारणों से उत्तेजित हो गया और उसने अपने हिन्दु पड़ोसियों के विरूद्ध कार्य किए। उससे एक गभीर परिस्थिति उत्पन्न हो गई और सरकारी अधिकारियों ने उस उपद्रव को घोर दमनपूर्वक दबा दिया। सरोजिनी इस स्थिति से विचलित हो गयीं और उन्होंने सैनिक कार्यवाही का विरोध करने के लिए कालीकट की एक सभा में अधिकारियों की निदा

की।[1] उन्होनें मालाबार पर टूटे भीषण प्रकोप, आतक और दुर्भाग्य को अपनी आखों से देखा था। वह उन्माद, प्रतिशोध और सैनिक शासन के उन निम्नस्तरीय अधिकारियों द्वारा की गई अकूत बर्बरता की साक्षी थीं। जिन्होंने न तो स्त्रियों के सतीत्व की चिता की न बच्चों के भोलेपन की। मलाबार में उन्होंने एक युवती के शरीर पर रिच के नौ हरे घाव अपनी आखों से देखे थे तथा एक छोटे से बच्चे का चित्र देखा था जिसके साथ सैनिकों ने बर्बर व्यवहार किया था, उसकी बाइ बाह काट डाली गई थी और गर्दन पर खरोंचे थीं। और, इस विभीषिका, से भागकर मोपला केन्द्र में जो शरणार्थी, एकत्र हुए थे उनमें ऐसी अनेक महिलाए थीं जो अपने ऊपर किए गए अत्याचारों को लज्जा और उसके परिणामों का सामना करने में असमर्थ थीं।[2]

सरोजिनी ने व्यग्यपूर्वक उस 'पितृवत् सरकार' की कठोर आलोचना की जिसने कानून और सुव्यवस्था के नाम पर मोपला लोगों पर ये बर्बर अत्याचार किए थे, और सरकार के विरूद्ध क्रोध के आवेश में वह यह कहना नहीं भूलीं कि कानून और व्यवस्था को उस नैतिक बल के द्वारा लागू नहीं किया जाता जिसका उपदेश देते हैं वरन् "उस पाशविक बल के द्वारा लागू किया जाता है जिसके पास अपने द्वारा उत्पन्न उत्पीड़न के प्रति लेशमात्र की करूणा या सवेदना नहीं है।"

मद्रास सरकार सरोजिनी द्वारा उद्घाटित तथ्यों से बहुत अप्रसन्न हुई और उसने एक आदेश जारी किया कि यदि सरोजिनी ने क्षमा न मागी तो उन्हें सजा दी जाएगी, लेकिन केरल काग्रेस की सहायता से उन्होंने अपने आरोपों के पक्ष में पूरी तरह प्रमाण प्रस्तुत कर दिये और अपनी ओर से सरकार को चुनौती दी कि या तो वह अपना आदेश वापस ले लें अन्यथा धमकी के अनुसार कार्य करे।[3] इस पर गाधीजी ने एक महत्वपूर्ण टिप्पणी की

"मेरे विचार से यह श्रीमती सरोजिनी नायडू का सौभाग्य है कि उन्हें सजा धमकी दी गई है क्योंकि इससे उन्हें यह अवसर मिलेगा कि सरकार उनके वक्तव्य

---

1 सरोजिनी नायडू - ले0 पद्मिनी सैन गुप्ता पे045
2 सरोजिनी नायडू - ले0 मातासेवक पाठक पे044
3 हरिजन - 4 10 1922

का खडन करे। आशा है कि यह बात स्मरण रखी जाएगी कि सैनिक शासन के दौरान सरकारी कुकृत्यों के आरोपों का खडन श्री माटेग्यू ने किया था। उस समय भी सरोजिनी ने उस चुनौती को स्वीकार किया था और आरोपों को प्रमाणित करने के लिए काग्रेस जाच समिति के प्रतिवेदन से अध्याय के अध्याय पेश किए गए थे। यदि प्रमाण गलत रहे हों तो यह तो काग्रेस के जाच-आयुक्तों का दोष माना जाएगा जिन्होंने इस मामले में उनका गलत मार्गदर्शन किया। उन्होंने यह प्रमाणित कर दिया कि भारत कार्यालय उस प्रतिवेदन से पूरी तरह परिचित तक न था। इस अवसर पर मद्रास सरकार ने वस्तुत सजा की धमकी दी है। मेरी इच्छा है कि वह अपने प्रयास को पूरा करे। तब भारत को अपनी एक असुरक्षित कवयित्री का वक्तव्य सुनने का अवसर मिलेगा-परिणाम यह होगा कि न्यायालयों में असहयोग के सिद्धान्तों को सुनने के लिए इतनी भीड़ उमड़ पड़ेगी कि या तो मुकदमा खुले मैदान में चलाया जाएगा। (यह कोई बुरी बात नहीं है), या फिर जेल की चारदीवारी के भीतर। सारे भारत में एक भी सभागार इतना बड़ा नहीं है जिसमें वह भीड़ समा सके जो ब्रिटिश पिजड़े में कैद बुलबुल का दर्शन करने को आतुर हो जाएगी।[1]

''मुझे इस बात की खुशी है कि उन्होंने आरोपों को दोहराने में देर नहीं की। बहादुर केशव मेनन और दूसरे लोग उनके वक्तव्य का समर्थन करने के लिए आगे आ गए। श्री प्रकाशम ने उस लड़के की तस्वीर प्रकाशित की है जिसकी बाहें बर्बरतापूर्वक काट डाली गई थीं। सरोजिनी ने सरकार से कहा है कि वह उन पर मुकदमा चलाये अथवा बिना शर्त क्षमा मागे, अथवा वैसा करने से पहले आरोपों की जाच के लिए गैर-सरकारी लोगों का एक निष्पक्ष जाच-आयोग नियुक्त करे। मुझे इस बात पर आश्चर्य है कि लार्ड विलिग्डन ने श्रीमती नायडू को निजी तौर पर यह तक नही लिखा कि क्या आपने ये आरोप आवेश के क्षणों में लगा दिये हैं और यदि ऐसा नहीं है तो क्या आप उन्हें सिद्ध करने में सरकार की सहायता कर सकेंगी। क्या अग्रेज भद्र पुरूष क्रोध के आवेश में वीरता की अपनी परपराओं को भूल गए हैं? क्या उन्हें भारत की योग्यतम बेटियों में से एक का केवल इसलिए अपमान करना

---

[1] सरोजिनी नायडू - ले0 मातासेवक पाठक पे045

चाहिए कि उसने एक सार्वजनिक हित का प्रश्न उठाने का साहस दिखाया है? मुझे आशा है कि लार्ड विलिंग्डन सम्मानपूर्वक और खूबसूरत तरीके से अब भी अपनी भूल सुधार लेंगे। मैं उन्हें विश्वास दिलाता हू कि इस प्रकार के गरिमामय कार्य से वे सरकार को उसकी खोई हुई प्रतिष्ठा का एक अश पुन प्राप्त करा सकेंगे। इससे सघर्ष पर तो कोई अनुकूल या प्रतिकूल प्रभाव पड़ने वाला नहीं है, लेकिन सरकार का एक गरिमामय कदम तपी हुई धरती पर वर्षा की एक बूद की तरह काम कर सकता है।''

सरोजिनी को विश्राम की बहुत अधिक आवश्यकता थी, अत उन्होंने राजनीतिक गतिविधि के विराम का लाभ उठाने का निश्चय किया और वह श्रीलका चलीं गई, किन्तु वहा भी उनको विश्राम नहीं मिल सका और कोलबो, जाफिना तथा अन्य केन्द्रों से भाषणों की माग को अस्वीकार करना उनके लिए असभव हो गया।[1]

इधर भारत में गाधीजी का सयमकारी हाथ अनुपस्थित होने के कारण काग्रेस सगठन में सुधारों को क्रियान्वित करने के प्रश्न पर मतभेदों का दो गुटों में ध्रुवीकरण हो गया। गाधीजी के अनुयायियों ने सुधारों की पूर्ण अस्वीकृति के पक्ष का समर्थन किया और कहा कि हमें असहयोग आदोलन फिर से शुरू करना चाहिए। इसके विरोधी लोगों का कहना था कि हमें विधान सभाओं में जाना चाहिए जिसमें सुधारों का राजनीतिक लाभ उठाया जा सके। सरोजिनी विशुद्ध गाधीवादी असहयोग के पक्ष में और परिषदों में जाने के विरुद्ध थीं।[2] उनका विचार था कि परिषदों में किसी भी प्रकार से प्रवेश करना सरकार की सफलता और हमारी विफलता का प्रमाण होगा। नवबर में अखिल भारतीय काग्रेस महासमिति की कलकत्ता की सभा में उन्होंने परिषद-प्रवेश सबधी प्रस्ताव का विरोध किया और बलपूर्वक कहा कि मैं उस विभक्त बहुमत में शामिल होने के बजाय जो अपनी बौद्धिक और नैतिक आस्थाओं के बारे में ही आश्वस्त नहीं है उस अपराजेय अल्पमत में रह जाना पसद नहीं करूगी जो इतिहास का निर्माण करता है। उन्होंने कहा, ''इडियन नेशनल काग्रेस'' का प्रयोजन

---

[1] सरोजिनी नायडू - ले0 मातासेवक पाठक पेज 43
[2] सरोजिनी नायडू - ले0 मातासेवक पाठक पेज 47

स्वराज्य की सिद्धि अर्थात् भारत की जनता द्वारा वैधानिक और शान्तिपूर्ण उपायों द्वारा पूर्ण स्वाधीनता की प्राप्ति है।"[1] सरोजिनी ने आगे कहा

"मित्रों मैं जब कभी स्वतत्रता के लिए किसी दास की करूण और सत्रस्त चीख पुकार सुनती हू तो विश्व के इतिहास में अपनी दासता की गहराई का बोध होने लगता है। स्वराज्य क्या है? स्वराज्य का अभिप्राय पूर्ण राष्ट्रीय एकता में से समुत्पन्न वह शक्ति है और साहस है जिसके बल पर हम शेष ससार के साथ समानता के स्तर पर स्वतत्रता के दायित्व की सहकारिता में भागीदार होने की तैयारी प्रकट कर सकते हैं। लेकिन आप और मैं प्रतिदिन और प्रति वर्ष आपस में सघर्ष करते जाते हैं, एक दूसरे पर शका करते हैं, द्वेष करते हैं और कटुता उत्पन्न करते हैं। क्या ऐसी स्थिति में हम उस स्वतत्रता की चर्चा कर सकते हैं जो केवल एक अनुशासित राष्ट्रीय एकता का परिणाम होती है तथा जो व्यक्तिगत, वर्गीय अथवा साप्रदायिक हितों और लाभों और लोभों को सर्वनिष्ठ हितों के अधीन रखना चाहती है। आइये हम उस महत्तर आदर्श की सिद्धि करें जो विभाजित लोगों की आतरिक दासता को सदा के लिए समाप्त कर देता है, और तब वे सयुक्त होकर शेष जगत से कहते हैं हम सर्वनिष्ठ मानवीय दायित्वों के उस स्वतत्र राष्ट्रकुल में आपके साथ सम्मिलित हो गए हैं जिसमें सयुक्ति भारत आपके साथ खड़ा होने का साहस कर रहा है वह एकाकी नहीं है, उसके चारों ओर वृत्त नहीं खिचा है, वह उस स्वतत्रता के कारण आपसे पृथक नहीं हो गया है जिसकी आड़ कमजोर लोग लेते हैं। वरन् वह उस सर्वनिष्ठ स्वप्न आपके साथ भागीदार है जो मानवजाति की प्रगति की सर्वनिष्ठ स्वप्न में आपके साथ भागीदार है जो मानवजाति की प्रगति की सर्वनिष्ठ देन द्वारा साकार हो सकता है।"[2]

गाधीवादी गुट 'नो-चेंजर्स' के नाम से प्रसिद्ध हुआ तथा दूसरा गुट जो काउन्सिल-प्रवेश का समर्थक था तथा जिसके नेता चितरजन दास थे 'प्रोचेंजर्स' कहलाया। 1922 के गया काग्रेस अधिवेशन क अवसर पर जब चितरजनदास ने काग्रेस के अध्यक्ष पद से त्यागपत्र देकर स्वराज्य पार्टी का गठन किया तब यह

---

[1] सरोजिनी नायडू - ले0 ताराअली बेग पे0110
[2] सरोजिनी नायडू ले0 उमा पाठक पेज 118

मतभेद खुलकर सामने आ गया। सरोजिनी जैसा कि अपेक्षित था, 'नौ-चेंजर्स' गुट की सक्रिय सदस्य थीं किन्तु उनका वक्तृत्व-कौशल एव चितरजनदास पर उनका व्यक्तिगत प्रभाव उस खाई को पाट नहीं पाया।

कठोर प्रयास के पश्चात आखिरकार समझौता हो गया और 1923 में दोनों गुट काकीनाडा के काग्रेस-अधिवेशन में शामिल हुए।

काग्रेस में योगदान

1885 में बम्बई में भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस की पहली बैठक हुयी थी। कुछ सदस्यों का विश्वास था कि अग्रेज शासक धीरे-धीरे भारत में एक प्रतिनिधि सरकार बना देंगे जो भारतीयों के हितों की बात सोचेगी। 1923 में सरोजिनी की गतिविधि में एक नया मोड़ आया। अफ्रीका में बसने वाले भारतीयों के प्रश्न ने पुन व्यापक रूप से ध्यान आकर्षित किया। श्रीमती नायडू को कीनिया इडियन काग्रेस के अधिवेशन में भारत का प्रतिनिधित्व करने के लिए भेजा गया। वह दक्षिणी और पूर्वी आफ्रीका के भारतीयों की समस्याओं में 1917 से ही रुचि ले रही थीं और उनके मन में उनके लिए कुछ ठोस कार्य करने की प्रबल कामना थी। भारतीयों को गोरों से अलग रखने और उनको साधारण मानवीय अधिकारों से वचित करने के लिए कठोर कानून बनाए गए थे। इस अन्याय ने उनका उत्साह पूरी तरह जगा दिया।

जनवरी 1924 में सरोजिनी दक्षिण अफ्रीका में महात्मा गाधी की दूत बनकर पूर्वी अफ्रीकी भारतीय काग्रेस' की अध्यक्षता करने के लिए मोम्बासा गई। वह जहा कहीं भी गई उनके स्वागत को भारी भीड़ उमड़ पड़ी और ऐसा उत्साह प्रदर्शित किया गया कि मोम्बासा, जोहान्सबर्ग, ट्रासवाल, डरबन, नेटाल और रोडेशिया की उनकी तीन महीने की यात्रा ने राजसी धूमधाम का रूप ले लिया।

मोम्बासा में जब वह बोलने के लिए खड़ी हुई तो सभागार तालियों की गड़गड़ाहट से गूज उठा। उन्होंने कहा

''किसी देश में किसी व्यक्ति का हित न पैमाने से नापा जा सकता है न फीते से। प्रत्येक भारतीय का वास्तविक हित उसकी प्रतिष्ठा है भारतीय राष्ट्र का वह आत्मसम्मान जिसे कीनिया के गोरे उपनिवेशवादियों ने चुनौती दी है। समूची बसी हुई

धरती पर एक भी ऐसा भारतीय नहीं है जिसके बारे में यह कहा जा सके कि उसका कुछ भी दाव पर नहीं लगा है। कोई भी व्यक्ति चाहे अमीर हो या गरीब, शिक्षित हो या अशिक्षित जब अपने देश से बाहर जाता है तो वह अपने देश के हितों का दूत और सरक्षक होता है।"[1]

जोहान्सबर्ग में स्वागत के पश्चात् उन्हें एक जुलूस के साथ ट्रासवाल भारतीय सघ की सभा में ले जाया गया। रास्ते की सड़क पर लोगों की भारी भीड़ लगी थी और बहुत से लोग भारत के इस विशिष्ट दूत के दर्शन करने के लिए छज्जों पर खडे थे और खिड़कियों में से झाक रहे थे। जब उन्होंने महात्मा गाधी के अडिग साहस का उल्लेख किया तो बहुत जोर से ताली बजी। अपने भाषण में वह 'प्रजाति-क्षेत्र अधिनियम' के प्रश्न पर दृढ़ता से डटी रहीं और उन्होंने प्रजातीय आधारों पर पृथक बस्तिया बनाने और सामाजिक सचार पर रोक लगाने तथा भारतीयों और काले आफ्रीकियों के प्रति अमानवीय व्यवहार की घोर निदा की।[2]

एक के बाद दूसरी विराट सभा में बोलते हुए उन्होंने बार-बार यह बात दोहराई कि मैं भारत की स्थिति को भली प्रकार स्पष्ट करने के लिए यहा आई हू। लेकिन, उससे भी अधिक उन्होंने मानवता और न्याय की अपील की।

उन्होंने कहा-

"हम लोग कलकित लोगों की तरह नहीं जी सकते। मैं भारत के लिए दक्षिण आफ्रीका की सहानूभूति प्राप्त करना और आपके सामने एक भिन्न दृष्टिकोण प्रस्तुत करना चाहती हू।"

दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के हितों के प्रख्यात हिमायती एल0 डबलू0 रिच ने 'स्टार ऑफ जोहान्सबर्ग' नामक पत्र में लिखा कि समाचारपत्रों में सरोजिनी की यात्रा के बारे में द्वेषपूर्ण और असत्य विवरण छापे गए हैं और आगे उन्होंने प्रश्न किया कि,"क्या आपके सवाददाता को मालूम है कि 1885 में एशियाई मूल के लोग कानून द्वारा उन बस्तियों और बाजारों में रहने तथा व्यवसाय करने के लिए विवश कर दिए गये हैं जो उनके लिए अलग से निर्धारित की गई हैं, जैसे मलय बस्ती।

---

[1] इडियन रिव्यू 1924 पेज 196
[2] "नैटाल विटनैस" के कर्मचारियों द्वारा श्रीमती नायडू को भेंट किया गया प्रेस रिपोर्ट सग्रह।

इतना ही नहीं जेप्पे और फोर्ड्सबर्ग जैसी निजी बस्तियों में जमीनों के पट्टों में यह शर्त लिख दी गई हैं कि उन पर एशियाई अथवा अश्वेत अफ्रीकी लोग नहीं बस सकेंगे।" एल0 डबलू0 रिच ने आगे लिखा कि "यह आश्चर्य की बात है कि अच्छी सड़कों और रहने के अच्छे मकानों के बिना हर प्रकार के स्तर और शक्ति से वचित, प्रत्येक अवसर पर अपमानित और अछूत तथा अवाछनीय माने जाने पर भी "उनमें स्वाभिमान की चिनगारी विद्यमान है।" इसके बाद वे कहते हैं, "श्रीमती नायडू की यात्रा का प्रयोजन हमारे दृष्टिकोण को व्यापकता प्रदान करना है कि हम अपने, भारत और साम्राज्य के बीच उत्पन्न इस समस्या को उस भीषण द्वेषमूलक स्तर से ऊपर उठाए जिस पर की वह इस समय अधिष्ठित है। उन्होंने हमें यह समझने में मदद देने की चेष्टा की है कि दुनिया धीरे-धीरे किस तरह सोचने लगी है कि मानवजाति एक सयुक्त इकाई है, कि इसके अग यद्यपि स्वतत्र है तथापि कोई भी अग जब किसी दूसरे अग को हानि पहुचाता है तो मानवजाति को दूसरे समस्त अगों को हानि पहुचती है।"[1]

जोहान्सबर्ग में सरोजिनी ने कहा "मैं इस समय यहा आपके सामने भारत राष्ट्र का एक सदेश लेकर आई हू, वह एक ऐसा राष्ट्र है जो अब न सुषुप्त है न विभक्त तथा अपनी सीमाओं के भीतर और समुद्र पार अपनी नियति के बारे में न शकित है न किकर्त्तव्यविमूढ। अपने राष्ट्र की ओर से मैं आपके लिए यह आश्वासन लाई हू कि कोई भी राष्ट्र अथवा सरकार, कोई भी सत्ता, चाहे वह कितनी भी सशक्त क्यों न हो समान स्तर प्राप्त करने में आपके जन्मसिद्ध अधिकार को कुचलने का साहस करेगी तो वह उसके परिणामों से बचकर नहीं निकल पाएगा।"[2]

डरबन नगर के टाउन हाल में चार हजार से अधिक लोगों की सभा को सबोधित करते हुए उन्होंने कहा कि जो भारतीय पीढ़ी-दर-पीढी भूमि जोतने और अफ्रीका में बसने आए थे उनके साथ यहा दासों सरीखा व्यवहार किया जाता है और वे अछूतों और कोढियों की तरह रहते हैं। उनके इस भाषण पर वहा के स्थानीय गोरे समाचारपत्रों ने प्रतिरोध का तूफान उठा डाला। वहा बसने वाले प्रथम भारतीय गरीब

---

[1] कुमारी पदमजा नायडू द्वारा सकलित समाचार पत्रों की कतरने।
[2] सरोजिनी नायडू – ले0तारा‌अली बेग पे0 115

गिरमिटिया श्रमिक थे जो खेतों में मजदूरी करने के लिए वहा ले जाए गए थे और जिन्होंने उन दस्तावेजों पर अगूठे लगा दिए थे जिनके आधार पर उन्हें वस्तुत गोरी जाति की दासता भोगनी पड़ी।

14मार्च को उन्होंने नेटाल के अलेक्जाडर सभागार में जो भाषण दिया था उसकी टीका करते हुए केपटाउन के एक समाचारपत्र ने एक सपादकीय लेख प्रकाशित किया जिसमें कहा गया था कि शान्तिपूर्वक तर्क देने के बजाय सरोजिनी 'दास, गुलाम, कोढी, और अछूत' जैसे शब्दों के प्रयोग द्वारा लोगों की भावनाओं को उत्तेजित कर रही हैं। सपादकीय में उनके भाषणों की तुलना उन श्रमिक-नेताओं के भाषणों के साथ की गई जो अपने श्रोताओं को भड़काना चाहते हैं। एक अन्य सवाददाता ने लिखा है कि उनके भीतर "सशक्त भावावेग और आश्चर्यजनक आत्मसयम तथा अनुभवजन्य धैर्य का सगम हुआ हैं। वैसे उनसे यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वह मूर्खों की बातों को प्रसन्नतापूर्वक गले उतार सकती हैं।" उन्होंने वहा जो छाप छोड़ी वह प्रमुखतया शक्ति-शान्ति और आत्मविश्वासयुक्त शक्ति की छाप थी।

टाइम्स नामक पत्रिका के केपटाउन-सवाददाता ने शिकायत के स्वर में लिखा "यह दावा तो नहीं किया जा सकता कि श्रीमती नायडू ने दक्षिण अफ्रीकी लोकमत पर कोई स्थायी प्रभाव छोड़ा है किन्तु अपनी प्रवृत्तिमूलक भूलों के बावजूद उन्होंने कम-से-कम यह तो प्रदर्शित कर ही दिया है कि वह लोकमत न उतना कठोर है और न मैत्रीपूर्ण एव मानवीय अपील के प्रति उतना असवेदनशील नहीं है जितना कि कुछ लोग उसे मान बैठे हैं।" 18 मार्च के रैंड डेली मेल ने लिखा कि श्रीमती नायडू ससद की दीर्घा में पहुचने के समय ही 'प्रजातीय क्षेत्र विधेयक' की चर्चा के लिए सातवें के बजाय पहले स्थान पर ले लिया गया, और वे ऐसा समझते हैं कि सरकार ने इस प्रकार श्रीमती नायडू की एशियाई प्रश्न पर अपने विचार मन्त्रिमडल के समक्ष रखने का अवसर प्रदान किया।

मई 1924 में श्रीमती नायडू जनरल स्मट्स से मिलीं तथा उन्होंने उनके साथ उन नैतिक और वैधानिक कठिनाइयों की चर्चा की जिनका सामना दक्षिण

अफ्रीका के भारतीयों को करना पड़ रहा था।[1] गाधीजी के नाम एक पत्र में सरोजिनी ने अपनी यात्रा का विस्तृत विवरण दिया। वह पत्र 'यग इडिया' में प्रकाशित हुआ। उसमें कहा गया था

"मुझे बताया गया है कि यहा पर मेरे कार्य की प्रगति के बारे में आपको सक्षिप्त प्रेस-तारों (समुद्री तारों) द्वारा जानकारी दी जाती रही है। मैंने अपनी क्षमता और अवसर के अनुसार अपनी ओर से पूरी चेष्टा की है और एक प्रतिकूल प्रेस तथा विधायकों के अज्ञान के बावजूद मैं भारतीय हितों के पक्ष में दक्षिण अफ्रीकी जातियों के प्रत्येक वर्ग और श्रेणी के सैकड़ों नहीं वरन् हजारों लोगों की मित्रता प्राप्त करने में सफल रही हू। मैंने जब यह कहा कि दक्षिणी आफ्रीकी उत्पीड़न का विश्वविद्यालय है तो गोरी जातियों को कैसा बुरा लगा। तथापि, यह वास्तव में गैर-यूरोपीय जातियों की आत्मा को अनुशसित और पूर्ण बनाने वाला उत्पीड़न का विद्यालय ही है। साम्राज्य के सबल पुरूष (जनरल स्मट्स) के साथ मेरी भेंट बहुत दिलचस्प रही। वह अपने प्रसिद्ध आकर्षण और चुबकत्व से भरपूर और साथ ही बाहर से सरल और मधुर थे। किन्तु उस माधुर्य और सरलता के पौधे में कितनी गहरी सूक्ष्म दृष्टि और कूटनीति छिपि है। उनके बारे में मुझपर यह छाप पड़ी की प्रकृति ने उनकी रचना ससार के महानतम पुरूषों के बीच रहने के लिए की थीं। किन्तु दक्षिणी अफ्रीका में सत्ता की भूमिका स्वीकार करके उन्होंने अपने-आपको एक मामूली बौना बना लिया है। जो व्यक्ति अपने पूर्व नियत आध्यात्मिक स्तर की पूरी ऊँचाई तक नहीं उठा पाता उसके सग ऐसी ही त्रासदी घटित होती हे।"[2]

जनरल स्मट्स के साथ अपनी चर्चा के दौरान उन्होंने उनसे कहा कि दमनकारी विधान से किसी समस्या का समाधान नहीं होता, तथा उन्होंने उन्हें दृष्टि और विवेक सपन्न पुरुष मानकर उनसे प्रार्थना की कि आप "भारतीय प्रश्न पर सम्मेलन और सहचर्चा का सिद्धान्त लागू करें तथा इस प्रयोजन की पूर्ति के लिए भारतीय ससद के नेताओं तथा स्थानीय भारतीय नेताओं को लेकर एक गोलमेज

---

[1] काग्रेस का इतिहास भाग-2 ले0 पट्टाभिसीता रमैय्या पेज 183
[2] यग इण्डिया - 6 1924

सम्मेलन बुलाए और उसमें मुख्यतया ऐसा सूत्र खोजने की दृष्टि से विचार-विमर्श करें जो सबको स्वीकार्य हो।"

डरबन में सरोजिनी की उपस्थिति की खुशी असाधारण स्थानीय प्रदर्शन हुए। भारतीय समाज के उल्लास को एक स्थानीय पत्र ने 'नायडू उल्लास-भ्रमण' कहकर सबोधित किया। इसका कारण यह था कि पूरी तरह सजी हुई मोटर बसों में सवार होकर भारतीय कपड़े झडें लहराते हुए मस्ती से घूमते फिरते थे मानों वे समूचे ससार को अपने उल्लास-समारोह में सम्मिलित होने के लिए आमत्रित कर रहे हों। सपादकीय में विलक्षण रीति से यह टिप्पणी की थी कि स्थानीय फल और सब्जी विक्रेता अपना काम धधा छोड़कर इन उल्लास-भ्रमणों से सम्मिलित हुए और शराब के नशे में इतनी बुरी तरह धुत्त हो गए कि उससे समस्त 'भद्र' नागरिकों को परेशानी हुई।

केपटाउन से उनकी विदाई एक ओर दिग्विजय थी। स्टेशन पर भारी भीड़ थी, स्टेशन को वदनवारों और झडों से सजाया गया था, गाड़ी के इजिन को रगीन वदनवारों से ढक दिया गया था और नागरिकों ने अपने वस्त्रों में फूल सजा रखे थे। जैसे ही विशेष रेलगाड़ी स्टेशन से बाहर निकली स्टेशन पर खड़े लोगों को सरोजिनी का छोटा सा, शाही और फूलमालाओं से लदा हुआ शरीर विदा देने के लिए आयी भीड़ की ओर हाथ हिलाता हुआ दिखाई दिया।

12 अप्रैल को सरोजिनी ने लदन में पूर्वी-लदन के 'ब्रिटिश-इडियन एसोशिएसन' के समक्ष दक्षिणी अफ्रीका के बाबरे में एक भाषण दिया और यह उल्लेख किया कि दक्षिण अफ्रीका की वास्तविक समस्या वहा के एक लाख साठ हजार भारतीय नहीं वरन् वहा के साठ लाख मूल अफ्रीकी निवासी हैं।

सरोजिनी दक्षिण अफ्रीकी भारतीय सम्मेलन के चौथे अधिवेशन की अध्यक्षा चुनी गयीं। सम्मेलन नेटाल के नगर-सभागार में हुआ जिसमें नेटाल, केपटाउन और ट्रासवाल से प्रतिनिधि सम्मिलित हुए। अपने अध्यक्षीय भाषण में सरोजिनी ने अपने देशवासियों को उद्बोधन करते हुए कहा कि आप श्वेत जाति और काली जातियों के बीच 'स्वर्ण श्रृखला' बनें। इसके आगे उन्होंने उन्हें बुद्धिमत्ता-पूर्ण परामर्श दिया कि

" भारतवासियों को अफ्रीका की ओर इस दृष्टि से नहीं देखना चाहिए कि अफ्रीका उनके लिए क्या कर सकता है वरन् इस दृष्टि से देखना चाहिए कि वे अफ्रीका के लिए क्या कर सकते हैं।"[1]

12 जून 1924 के बबई लौटने पर उनका जो भव्य स्वागत किया गया वह भी उनकी दिग्विजय का प्रतीक था। उस महान् सम्मान को स्वीकार करते हुए उन्होंने कहा

"दक्षिण अफ्रीका, कीनिया, उगाडा, तथा अन्य ब्रिटिश उपनिवेशों में भारतीयों के विरूद्ध पक्षपात की भावनाए वस्तुत इतनी गहरी नहीं हैं कि सहानुभूति रखने वाले लोग मुक्त चर्चा के माध्यम से उनका निवारण न कर सकें। अपने जीवन को दक्षिण अफ्रीका का अभिन्न अग बनाना भारतीयों का मुख्य कार्य होना चाहिए।"[2]

उन्हें ऐसा भी महसूस हुआ कि व्यापारियों को सहारा देने के लिए शिक्षित भारतीयों को अधिक सख्या में दक्षिण अफ्रीका भेजा जाए, क्योंकि यद्यपि वे व्यापारी वहा जाकर बसने वाले पहले लोग हैं तथापि उन्होंने वहा भी विलक्षण भारतीय पृथकतावाद का प्रदर्शन किया है। भारतीय अपने आप में अलग बने रहे और उन्होंने अपनी विशेष जीवन पद्धति को बनाये रखा है। वे अपने बेटों का विवाह भारत में अपने गाव और अपनी प्रजाति के लोगों की लड़कियों से करके उन्हें अफ्रीका ले जाते हैं, तथा वहा के स्थानीय जीवन में आम तौर पर कोई भाग नहीं लेते। अत में उन्होंने कहा

"पहली बात तो यह है कि हम भारत के उत्प्रवास को लोकमत के दबाव के द्वारा नियमित तथा नियत्रित करें। मैं भारत को यह बताना चाहती हू कि हम जिस प्रकार के व्यापारियों को दक्षिण अफ्रीका भेज रहे हैं। उनको बड़ी सख्या में वहा भेजना हमारे हित के लिए पूर्णतया घातक होगा।"

कई वर्ष पश्चात् सरकार ने भारतीयों के उत्प्रवास के बारे में इसी नीति को अपनाया।

---

1 इडियन रिव्यू, 1925
2 इडियन रिव्यू, 1925
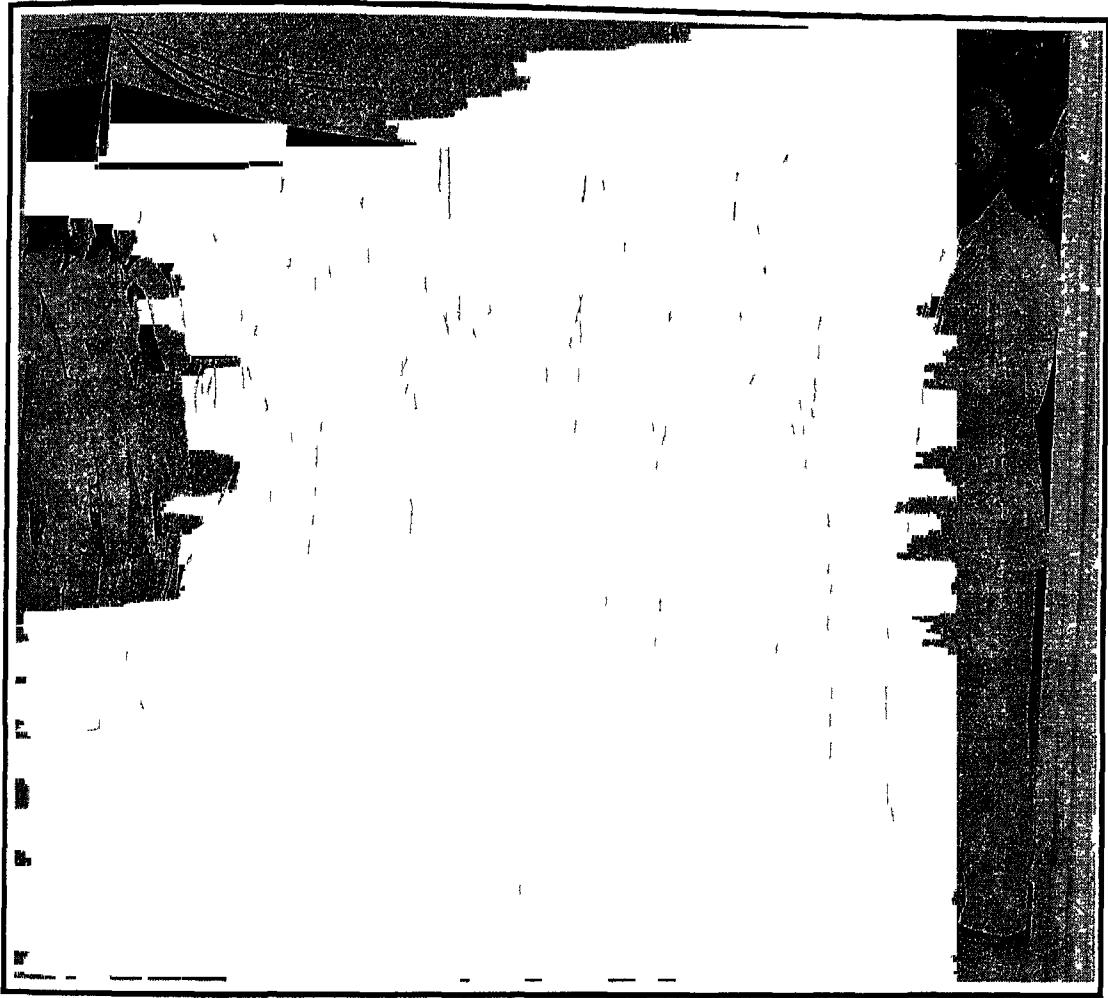
प0 जवाहर लाल नेहरू के साथ सरोजिनी नायडू

जिस समय सरोजिनी विदेशों में अपने देश के लिए महान् कार्य कर रही थीं। उस समय जेल में गाधीजी का (अपेन्डिसाइटिस) का आपरेशन हुआ। फरवरी, 1924 में स्वास्थ्य ठीक न होने के कारण उन्हें जेल से छोड़ दिया गया। लेकिन, गाधीजी के स्वास्थ्य-लाभ से पहले ही गभीर साप्रदायिक दगे फूट पड़े और भग्नहृदय गाधीजी ने उस समय तक का सबसे लबा अर्थात् 21 दिन का अनशन शुरू कर दिया। सरोजिनी उस समय भारत वापस आ गयीं थीं।

उन दिनों राजनीतिक कार्यवाही अस्थिर और अनियमित रूप से चल रही थी। सविनय अवज्ञा आदोलनों की बात अलग है, उनके दौरान या तो गतिविधि तीव्र हो जाती थी अथवा लोग जेलों में निष्क्रिय पड़े रहते थे, अन्यथा राजनीति अधिकाशत समय-समय पर सम्मेलनों तक सीमित रहती थी जिनके बीच राजनीतिज्ञ थोड़ी बहुत मात्रा में अपना सामान्य जीवन और व्यवसाय, जैसे वकालत आदि चलाते रहते थे। सम्मेलनों के बीच महात्मा गाधी भी अपने आश्रम की व्यवस्था, अपने पत्र के सपादन तथा हरिजनोत्थान, कताई और खादी सरीखे सामाजिक और आर्थिक कार्यो में लग जाते थे। आजकल की तरह पूरा समय देने वाला राजनीतिज्ञ उन दिनों बहुत कम और कोई-कोई ही होते थे।

सरोजिनी का सशक्त व्यक्तित्व सामती हैदराबाद के दमघोटू वातावरण और गृहस्वामिनी की परिसीमनकारी भूमिका से शीघ्र ही ऊब गया। यह उनसे सहज अपेक्षित था और उनके लिए अपरिहार्य भी, बम्बई कि सक्रिय सामाजिक, सास्कृतिक और राजनीतिक जिन्दगी ने उनको एक अनुकूल भूमिका प्रदान की तथा वह शीघ्र ही इस सार्वभौमिक नगर में बस गई। उन्होंने अपने जीवन का सर्वाधिक सक्रिय और उपयोगी काल यहीं बिताया। यहा वह केवल एक नागरिक नहीं वरन् एक सस्था बन गई, तथा ताजमहल होटल के उनके कमरे की तुलना गत शताब्दी के फ्रासीसी अभिजात-सदन से की जा सकती है।

लदन के दिनों से ही उनके पुराने सहकर्मी श्री जिन्ना भी उस समय बबई में अपने आपको एक प्रमुख बैरिस्टर के रूप में जमा रहे थे। उस समय तक राजनीतिक दृष्टिकोण रूढ़ नहीं हुआ था वह दिग्विजय के लिए एक राजनीतिक जगत की तलाश

में थे। उस समय कांग्रेस और मुस्लिम लीग अथवा कांग्रेस और हिन्दू महासभा की सदस्यता एक साथ ग्रहण करना असंभव था। श्री जिन्ना से यह आशा थी कि वह 'हिन्दु-मुस्लिम एकता के संदेशवाहक' बनेंगे, किन्तु उन्होंने मुस्लिम राजनीति में दिलचस्पी लेना शुरू कर दिया। काल ने यह सिद्ध किया कि हिन्दु-मुस्लिम एकता के संदेशवाहक जिन्ना नहीं थे वरन् सरोजिनी स्वयं ही थीं।

इस कार्य में जिन्ना को उस जमाने के प्रतिष्ठित राजनीतिक नेताओं का समर्थन प्राप्त था, तथा बम्बई में सरोजिनी की गतिविधि के बारे में प्रारंभिक सूचनाओं में से एक सूचना यह भी है कि 13 दिसंबर 1916 को तिलक, गांधीजी और श्रीमती बेसेंट के साथ उन्होंने मुस्लिम लीग की एक सभा में भाग लिया जिसकी अध्यक्षता श्री जिन्ना ने की। इस बारे में यह उल्लेख मिलता है कि उन लोगों का स्वागत दीर्घ करतलध्वनि के साथ किया गया था।[1]

सरोजिनी निरंतर गांधी के साथ रहने लगी थीं। 5 मई, 1918 को जब सरोजिनी नायडू दलितजाति मिशन में भाग लेने बीजापुर गईं तो वहां एक दिलचस्प घटना हुई। सम्मेलन में तय हुआ कि एक प्रस्ताव गांधीजी पेश करेंगे, लेकिन गांधीजी ने प्रस्ताव रखने से पहले यह पूछा कि पंडाल में दलित जाति के कितने लोग हैं। जब यह मालूम हुआ कि वहां तो दलित जाति का एक भी व्यक्ति नहीं है[2] तो गांधीजी ने अपने स्वभाव के अनुसार यह प्रस्ताव पेश करने से मना कर दिया।

सरोजिनी पर आरंभ से ही पुलिस ने निगरानी शुरू कर दी थी अतः उनकी गतिविधि के बारे में बहुत सी जानकारी पुलिस रिपोर्टों से प्राप्त की जा सकती है। इन रिपोर्टों की बहुत सी सामग्री 'भारत में स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास' के तृतीय खंड में उद्धृत की गयी है। उस स्रोत से यह पता चलता है कि फरवरी 1919 में सरोजिनी एक शिष्टमंडल लेकर गांधीजी से मिलने के लिए अहमदाबाद गईं और वहां उन्होंने गांधीजी का ध्यान रोलट बिल के कुछ प्रावधानों की ओर दिलाया। वहां से वाइसराय के नाम एक तार दिया गया कि यदि सरकार विधेयक को पास करने की कार्यवाही करेगी तो अहिंसात्मक प्रतिरोध किया जायेगा।

---

[1] सरोजिनी नायडू - ले0 ताराअली बेग पेज 121
[2] सरोजिनी नायडू - ले0 तारा अली बेग पेज 120

तृतीय खड के पृष्ठ 141 पर सरोजिनी में गाधीजी के विश्वास की अनायास ही अभिव्यक्ति हो गई है

"गाधीजी ने जोर देकर कहा कि मैं एक जुलाई को हर कीमत पर सत्याग्रह शुरू कर दूगा। उन्होंने घोषणा की कि मैंने बहुत सारा समय जिन्ना और सरोजिनी के साथ व्यतीत किया है जो कि इग्लैण्ड जा रहे हैं और मैंने उन्हें कुछ हिदायतें दी हैं। पुलिस ने सूचना दी है कि गाधीजी ने चार पत्र लिखकर सरोजिनी को दिए हैं जो वह इग्लैंड में उनकी ओर से वितरित करेंगी।"

सरोजिनी अखिल भारतीय होमरूल लीग के एक शिष्टमडल में सम्मिलित होकर इग्लैंड गई थीं। इस बारे में पीछे उल्लेख किया जा चुका है। वहा उन्होंने महिलाओं के अधिकारों का समर्थन किया। भारतीय सविधानिक सुधारों से सबधित सयुक्त समिति इस विषय में प्रधानतया उनके ही विचारों से प्रभावित हुई थी। उनकी भारत वापसी तथा सत्याग्रह शुरू होने के बाद की पुलिस की रिपोर्ट में उल्लेख है कि गाधीजी और सरोजिनी ने सूरत और उसके निकटवर्ती क्षेत्र की सभाओं में भाषण दिये।

पुलिस रिपोर्ट में सत्याग्रह आदोलन के तेजी से जोर पकड़ने के बारे में बहुत सजीव चित्रण मिलता है। 25 अप्रैल से गाधीजी और सरोजिनी ने सूरत जिले का दौरा किया। रिपोर्ट में कहा गया है कि वह जहा कहीं गई विशाल जनसमूहों ने उनका स्वागत किया तथा उन दोनों ने बहुत से भाषण दिए जिनमें हिन्दु-मुस्लिम एकता, खादी के प्रयोग तथा चरखा चलाने, और विदेशी वस्त्रों तथा शराब के बहिष्कार पर जोर दिया गया था। उसके बाद वह महाराष्ट्र प्रातीय सम्मेलन में सम्मिलित होने के लिए बबई गए और उसके तुरन्त बाद इलाहाबाद के लिए रवाना हो गए।

22 जून को बबई के बाहरी क्षेत्र में घाटकोपर में एक विराट जनसभा हुई। उसमें गाधीजी, सरोजिनी अली बधु और विठ्ठलभाई पटेल ने भाषण दिए। उन सबने आदोलन के समर्थन तथा तिलक स्वराज्य कोष में धन देने की अपील की। उसके बाद वह मगलादास कपड़ा बाजार गए जहा तिलक कोष के लिए पच्चीस हजार रूपये
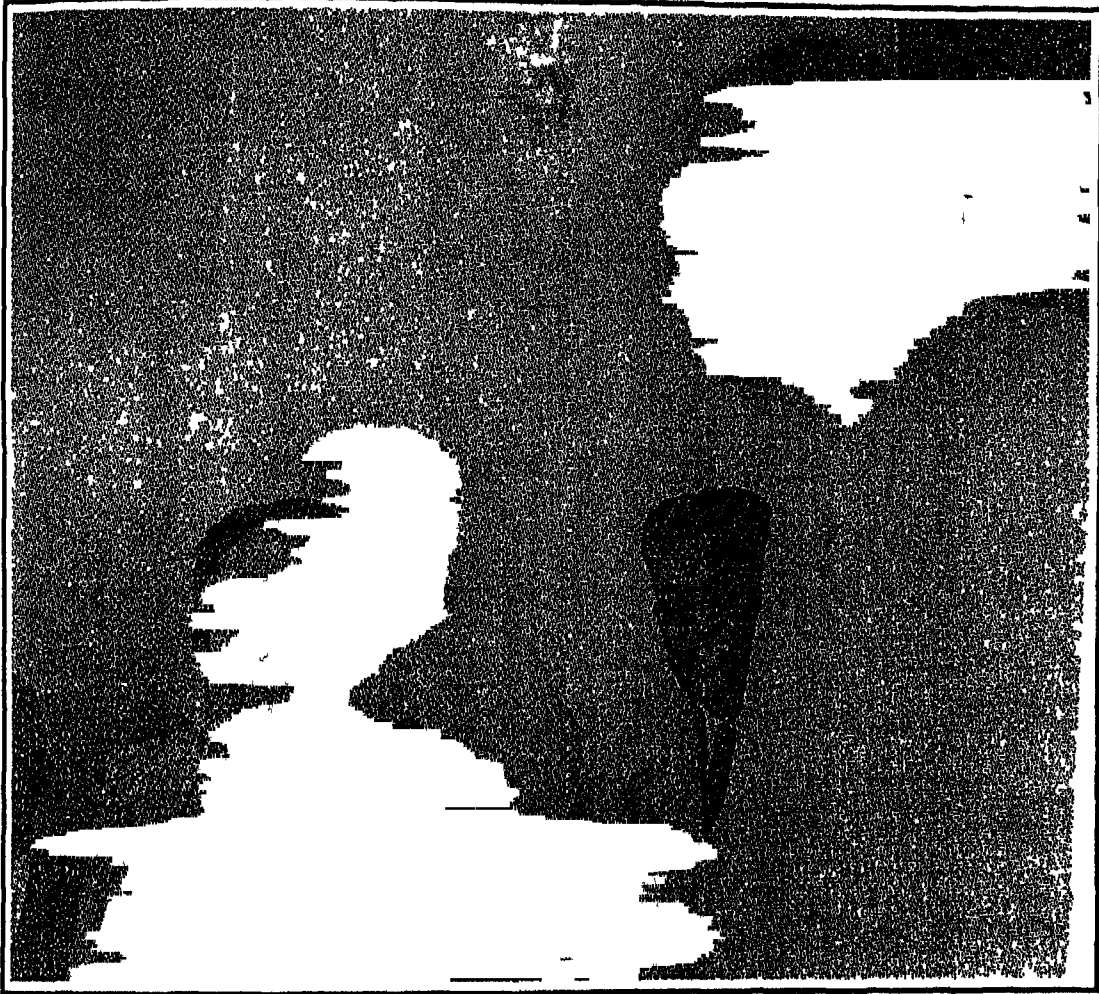
मुस्कुराते पल   सरोजिनी नायडू राजगोपालाचारी जी के साथ

की थैली भेंट की गई। यह भी उल्लेख मिलता है कि मौलाना शौकत अली ने एक रूपये का एक नोट नीलाम किया जिसे एक मुसलमान व्यापारी ने एक हजार रूपये में खरीदा।

आदोलन जोर पकड़ता गया और सभाओं उपस्थिति बढती चली गई। 8 अगस्त को ओमर सोभानी की एल्फिन्स्टन मिल्स के अहाते में विदेशी वस्त्र के एक विशाल ढेर में एक लाख लोगों की भीड़ के सामने आग लगाई गई। स्वय गाधीजी ने सिल्क की साड़ियों, कीमखाब तथा अन्य प्रकार के कीमती कपड़ों के उस ढेर में आग लगायी।

1924 तक उनके नेतृत्व को इतनी पर्याप्त और व्यापक मात्रा में मान्यता प्राप्त हो गई थी कि बेलगाम काग्रेस अधिवेशन की अध्यक्षता के लिए उनका नाम रखा गया। यद्यपि अत में उस अधिवेशन की अध्यक्षता के लिए गाधीजी को तैयार कर लिया गया था तथापि उन्होंने 'यग इडिया' के 17 जुलाई के अक में सरोजिनी के बारे में अपने विचार प्रकट किए। उनके निबध का शीर्षक था 'सराजिनी द सिगर' (कोकिला सरोजिनी) । उन्होनें लिखा ''यद्यपि मुझे यह विश्वास है कि मैं हिन्दू-मुस्लिम एकता की अभिवृद्धि में अपना नम्र योगदान कर सकता हू तथापि अनेक दृष्टियों से सरोजिनी यह कार्य मुझसे भी अधिक अच्छी तरह से कर सकती हैं। वह मुसलमानों को मेरी अपेख्ना कहीं अधिक घनिष्टतापूर्वक जानती हैं। वह उनके घरों में आती जाती हैं। मैं यह दावा नहीं कर सकता। इन योग्यताओं के साथ-साथ वह एक नारी हैं। यह उनकी सबसे बड़ी योग्यता है जिसमें कोई भी पुरूष उनकी बराबरी नहीं कर सकता।''

बेलगाव काग्रेस मे सामजस्य स्थापित करने की उनकी प्रतिभा को खुलकर प्रकाश में आने का अवसर मिल सकता था। जैसा कि पीछे उल्लेख किया जा चुका है काग्रेस के भीतर स्वराज्य की परिभाषा को लेकर वरिष्ठ नेताओं में मतभेद उत्पन्न हो गए थे। यद्यपि काकीनाडा अधिवेशन उनको सुलझाने में सफल हो गया था तथापि मतभेद पूरी तरह नहीं मिट पाए थे।[1] इसी कारण यह महसूस किया गया कि यह

[1] काग्रेस का इतिहास भाग-2, पट्टाभिसीतारमैया पेज 235

कार्य तभी सम्पन्न हो सकता है जब गाधीजी अधिवेशन की अध्यक्षता करें, वह अध्यक्ष निर्वाचित हो गए, और उन्होंने 1924 में बेलगाम अधिवेशन की अध्यक्षता की। पूर्वी और दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों की दशा का वर्णन करते हुए गाधीजी ने सरोजिनी द्वारा उन देशों में किए गए महान कार्य की ओर जानबूझकर श्रोताओं का ध्यान दिलाया। काग्रेस पहले ही उनकी उपलब्धियों से अवगत थी तथा उस गभीर अवसर पर गाधीजी के मार्गदर्शन की आवश्यकता के कारण ही वह अध्यक्षा नहीं चुनी गई।[1]

वस्तुत जब वह दक्षिण अफ्रीका में थीं तब गाधीजी ने स्वय घनश्यामदास बिडला को लिखे अपने 20 जुलाई, 1924 के पत्र में यह इच्छा प्रकट की थीं। उन्होंने उस पत्र में लिखा था कि मेरे तीन तात्कालिक उद्देश्य है "प्रथम, स्वराज्य पार्टी को इस आरोप से मुक्त करना कि उसने पद प्राप्त करने के लिए षड्यत्र किया, द्वितीय सुहारवर्दी को प्रमाणपत्र देना और तृतीय सरोजिनी के लिए काग्रेस का अध्यक्ष पद प्राप्त करना। तुम सरोजिनी के बारे में अनावश्यक रूप से चिंतित हो। उन्होने भारत की भली प्रकार सेवा की है और वह अब भी सेवा कर रही हैं जबकि मैंने उनके अध्यक्षपद के लिए कोई भी विशेष प्रयास नहीं किया है मेरे मन में पक्का विश्वास है कि अब तक जिन लोगों ने इस पद को ग्रहण किया है यदि वे उसके लिए उपयुक्त थे तो सरोजिनी भी उनके लिए उपयुक्त हैं। उनके उत्साह से सब चमत्कृत हैं। मैंने उनमें कोई दोष नहीं देखा, लेकिन इससे तुम यह निष्कर्ष मत निकाल लेना कि वह या दूसरे लोग जो भी कार्य करते हैं मैं उन सबका समर्थन करता हू।"[2]

यद्यपि सरोजिनी गाधीजी के इस विश्वास के योग्य पात्र थीं, लेकिन अतिम पक्ति और स्वय यह तथ्य कि गाधीजी को वह पत्र लिखना पड़ा यह सकेत करता है कि सरोजिनी की अनौपचारिकता और उनका अतर्राष्ट्रीय आचार काग्रेस के अधिक सौम्य और रूढिवादी तत्वों को पूरी तरह स्वीकार्य न था, तथा उनके साहसकतापूर्ण

---

1 राजेन्द्र प्रसाद, आत्मकथा पेज 244

2 बिरला, जी0डी0 इन दी शैडो आफ महात्मा पेज 7

और आवेगमूलक उद्‌गार कभी-कभी गाधीजी को उसी प्रकार परेशानी में डाल देते थे जिस प्रकार इससे पहले उनके कारण गोखले को परेशानी होती थी।[1]

यद्यपि उन्हें सर्वोच्च नेता के रूप में मान्यता प्राप्त करने के लिए एक वर्ष तक प्रतीक्षा करनी पड़ी तथापि जिस समय नवबर में सर्वदलीय सम्मेलन ने बबई में स्वराज्य की योजना तैयार करने और हिंदू-मुस्लिम प्रश्न के समाधान की दृष्टि से काग्रेस के दोनों गुटों के बीच एकता स्थापित करने के लिए एक समिति नियुक्त की तो सरोजिनी को उसकी सदस्यता के लिए अपरिहार्य माना गया। सरोजिनी के अतिरिक्त उसमें गाधीजी, जिन्ना, सप्रू और मोहम्मद अली भी थे।

अप्रैल 1925 में उनको राष्ट्रीय सप्ताह के आयोजन का दायित्व सौंपा गया। यह एक ऐसा प्रथम वार्षिक आयोजन था जो उसके बाद उन्हें बबई प्रदेश काग्रेस समिति के अध्यक्षपद के अपने अनेक वर्षो के कार्यकाल में अनेक बार आयोजित करना पड़ा। राष्ट्रीय-सप्ताह के वार्षिक सप्ताह के लिए उन्होंने जो भिन्न नहीं हो सकते थे। बाद के वर्षो में राष्ट्रीय सप्ताह के लिए उन्होंने जो कार्यक्रम तैयार किया था। उससे उन पर आ पड़ी जिम्मेदारी के बोझ का भान होता है

सप्ताह भर का कार्यक्रम

द्वार-द्वार जाकर बहिष्कार के प्रतिज्ञापत्रों का सग्रह

झडाभिवादन समारोह

धरना

6 अप्रैल का कार्यक्रम

विदेशी कपड़े के विरुद्ध प्रचार तथा प्रदर्शन (विशेषत जापान से आने वाली नकली खादी का विरोध)

विदेशी कपड़े की होली जलाना

प्रभात फेरिया निकालना और बहिष्कार के नारे लगाना

7 अप्रैल

खादी की फेरी द्वारा बिक्री

---

[1] नार्दन एलिनर, वीमेन बिहाइड महात्मा पेज 139

कताई और तकली प्रतियोगिताए

8 अप्रैल

चीनी (मिलों में बनीं शक्कर) विरोधी दिवस

व्याख्या भारत प्रतिवर्ष 11 करोड़ रूपये की विदेशी चीनी की खपत करता है और सरकार उस पर आयात शुल्क के रूप में 10 करोड़ रूपये प्रतिवर्ष कमाती है। नागरिकों को चाहिए कि वे सरकार को इस राजस्व से वचित कर दें। इसके लिए होटलों, चाय की दुकानों और हलवाइयों पर विशेष ध्यान दिया जाए, तथा थोक व्यापारियों से प्रतिज्ञापत्र भरवाए जाए।

9 अप्रैल

पेट्रोल और मिट्टी का तेल विरोधी दिवस

व्याख्या यद्यपि इन वस्तुओं का सपूर्ण बहिष्कार असभव है तथापि इनका प्रयोग कम कर देने से सरकार का राजस्व काफी कम हो जाएगा।

10 अप्रैल

विदेशी औषधि विरोधी दिवस

व्याख्या आयात का परिणाम घटाओ। डाक्टरों, कैमिस्टों, अस्पतालों आदि में प्रचार हो और उन पर दबाव डाला जाए।

11 अप्रैल

महिला और बाल दिवस

व्याख्या केसरिया साड़िया और वस्त्र पहन कर महिलाए और बच्चे प्रतिज्ञापत्र भरवाए, दुकानों पर धरना दें, जुलूस निकालें।

13 अप्रैल

जलियावाला बाग दिवस

व्याख्या आम हड़ताल, जुलूस, सभाए, झडा फहराना और शहीदों की स्मृति में दो मिनट का मौन।

बेलगाम काग्रेस अधिवेशन के समाप्त होते ही सभी के द्वारा यह महसूस किया जाने लगा कि अगले अधिवेशन के लिए अध्यक्षता का सम्मान सरोजिनी नायडू

को दिया जाना चाहिए। अत कानपुर में स्वय गाधीजी ने उनके नाम का प्रस्ताव रखा।[1] उनके निर्वाचन का आखों देखा हाल एलीनर मौर्टन ने अपनी पुस्तक 'वूमैन बीहाइड महात्मा' (गाधीजी के जीवन में महिलाए) में दिया है।[2]

जिस समय सरोजिनी गाधीजी के साथ पडाल में प्रविष्ट हुई तो समूचा श्रोतामडल उठकर खड़ा हो गया। "किसी जमाने में दुबली-पतली काया अब चौड़ी हृष्ट-पुष्ट हो गई थी, उनकी त्वचा कोमल और बाल घने काले थे। उनके साथ उनकी सबसे बड़ी बेटी थी जो गाधीजी के साथ सरोजिनी के सभी दौरों में रहती थीं। यद्यपि उनके पति डा0 नायडू उनके हृदयरोग के बारे में चितित थे, तथापि उनके चेहरे से अस्वस्थता का कोई लक्षण नहीं झलकता था।"[3]

सरोजिनी को काग्रेस की अध्यक्षा मनोनीत किया गया तथा स्वागत समिति के अध्यक्ष के भाषण के बाद दक्षिण अफ्रीका के प्रतिनिधि मडल के नेता ने भाषण देने की अनुमति मागी। सरोजिनी को उनका एक चित्र भेंट करते हुए उसने कहा, "दक्षिण अफ्रीकी भारतीयों ने भारत को ससार का महानतम जीवित व्यक्ति दिया है। महात्माजी हमारे हैं। सरोजिनी नायडू भी हमारी हैं। आपको हमें कम से कम एक अथवा दो नेता देने होंगे जो दक्षिण अफ्रीका जाए और हमारे सघर्ष में भाग लें। यदि हम भारत की महान् महिला को ले जाए तो हम उनके पीछें उनका चित्र छोड़ जाएगे जिससे कि आप उसको देखकर सतोष कर सकें। हम यह चित्र अपनी मा और मौसी को दक्षिण अफ्रीकी भारतीयों के प्रेम के प्रतीक के रूप में भेंट करते हैं।[4]

उसके पश्चात् सरोजिनी मच पर पहुची तथा हमेशा की भाति निरायास और बिना किसी लिखित टिप्पणी का सहारा लिए उनकी वक्तृता प्रवाहित हो उठी

"मित्रों एक महान पद का भार और उच्च दायित्व आपने मेरे अकुशल हाथों में सौंपकर मुझे जो असाधारण सम्मान प्रदान किया है उसके लिए आपके प्रति आभार प्रकट करते समय मेरे मन में जो गहन और सश्लिष्ट भावना उमड़ रही है

---

[1] वूमैन बिहाइड महात्मा - एलिनर मार्टन पेज 140
[2] राजेन्द्र प्रसाद आत्मकथा पेज 244
[3] वीमैन बिहाइड महात्मा - एलिनर मार्टन पेज 140
[4] सरोजिनी नायडू - ले0 ताराअली बेग पेज 127

उपयुक्त स्थान तथा प्रयोजन और मान्यता प्राप्त करने का नम्र किन्तु कठिन कार्य पूरा करने की चेष्टा करूगी।"

अहिंसा, असहयोग, ग्रामीण-पुनर्निर्माण, शिक्षा, राष्ट्रीय सेना, दक्षिण अफ्रीका आदि विषयों की चर्चा के उपरात वे हिन्दु मुस्लिम एकता के उस विषय पर आयीं जो उनको सबसे अधिक प्रिय था। उन्होंने कहा

" और अब मैं अत्यत झिझक तथा खेदपूर्वक उस समस्या पर जाती हू जो हमारी समस्याओं में सबसे अधिक चिताजनक और त्रासदीय है। मैंने अपना जीवन हिन्दु मुस्लिम एकता के स्वप्न की पूर्ति के निमित्त समर्पित कर दिया है, अत मैं भारत के लोगो के बीच फूट और विभाजन की कल्पना पर खून के आसू गिराए बिना नहीं रह सकती। वह मेरा आशा क मूलततु को ही भग कर डालती है।

"यद्यपि मेरे मन में बात का पक्का विश्वास है कि साप्रदायिक प्रतिनिधित्व का सिद्धान्त चाहे सयुक्त निर्वाचकों के माध्यम से लागू किया जाए अथवा पृथक निर्वाचकों के माध्यम से, वह राष्ट्रीय एकता की सकल्पना को कुठित करेगा, तथापि मैं यह स्वीकार करने के लिए बाध्य हू कि आज हम बढ़ते हुए साप्रदायिक द्वेष, शका अविश्वास, भय और घृणा के कारण जिस अत्यन्त तनावपूर्ण, अधकारमय और कटु वातावरण में जी रहे हैं उसमें कोई सतोषजनक अथवा स्थायी सामजस्य जब तक सभव नहीं हैं जबतक कि सशयातीत देशभक्ति से सपन्न उन हिन्दु और मुस्लिम राजनीतिज्ञों के बीच उत्कट्टतम एव धैर्यपूर्ण सहयोग उत्पन्न न हो जिन पर कि इस विनाशकारी रोग का राम बाण इलाज खोजने की नाजुक और कठिन जिम्मेदारी है।

"मैं अपने हिन्दु भाइयों से प्रार्थना करती हू कि वे अपनी उस परपरागत सहिष्णुता के उन्नत स्तर तक उठें जो हमारे वैदिक धर्म की मूलभूत गरिमा है, और यह समझने की चेष्टा करें कि इस्लाम का बधुत्व कितना सघन और दूरगामी यथार्थ है जो सात करोड़ भारतीय मुसलमानों को एक सूत्र में पिरोता है, तथा वे उन मुसीबतों में पूरा हिस्सा बटाए जो इस्लामी देशों पर तेजी से टूट रही हैं और उन्हें विदेशी शक्तियों की सैनिक तानाशाही की एड़ियों के नीचे कुचले डाल रही हैं।

श्री मती सरोजिनी नायडू

"जहा तक मुसलमानों का प्रश्न है मैं अपने मुस्लिम साथियों से निवेदन करूगी कि वे सीरिया, मिस्र, इराक और अरब की मुसीबतों की चिन्ता में इतने व्यस्त न रहें कि अपनी उस मातृभूमि भारत के प्रति अपने सर्वोच्च कर्तव्य की चेतना ही उनके मस्तिष्क से समाप्त हो जाए जिसे उनकी निष्ठा और वफादारी पर पहला अधिकार और दावा करने का हक है।

"यदि हिन्दु और मुसलमान पारस्परिक सहनशीलता के दैवी गुण का अभ्यास करें और एक दूसरे के धर्म, कर्म तथा उपासना में विवेकहीन बाधाए डालने की आतकपूर्ण कार्यवाहियों के बिना एक दूसरे के जीवन की पूर्ण स्वतत्रता प्रदान करना सीख लें, यदि वे एक दूसरे के जीवन की पूर्ण स्वतत्रता प्रदान करना सीख लें, यदि वे एक दूसरे के धर्म के सौंदर्य और एक दूसरे की सभ्यता के वैभव का सम्मान करना सीख लें, यदि दोनों सम्प्रदायों की महिलाए अपने समान भगनीत्व की घनिष्ठ मैत्री में सयुक्त होकर पारस्परिक माधुर्य और समन्वय के वातावरण में अपने बालकों का लालन पालन करें, तो हम अपने मनोरथ की सिद्धि के अत्यत समीप पहुच जाए।"[1]

उन्होंने अपना भाषण एक उद्‌बोधन और आह्वान के साथ समाप्त किया "स्वतत्रता सग्राम में भय अक्षम्य द्रोह है और निराशा अक्षम्य पाप। हार्दिक निवेदन भावना के साथ मैं दोनों हाथ उठाकर प्रार्थना करती हू कि आने वाले सकट की घड़ी में ईश्वर हमें पर्याप्त मात्रा में अडिग आस्था और अदम्य साहस प्रदान करे और हम जिस ईश्वर का नाम लेकर आज अपना कार्य आरभ कर रहे हैं वह हमें हमारी विजय के क्षणों में नम्र बनाए रखे।[2] तथा अपनी एक प्राचीन प्रार्थना के सुन्दर शब्दों में हम उससे निवेदन करते हैं

असतो मा सद्‌गमय

तमसो मा ज्योतिर्गमय

मृत्योर्मा अमृत गमय।[3]

---

[1] काग्रेस के सौ वर्ष – मन्मथनाथ गुप्त पेज 110, राजपाल एण्ड सस दिल्ली।
[2] काग्रेस का इतिहास – ले0 पट्टाभिसीता रमैया पेज 226
[3] काग्रेस का इतिहास – ले0 पट्टाभिसीता रमैया पेज 226

अर्थात् हमें असत्य से सत्य की ओर, अधकार से प्रकाश की ओर, मृत्यु से अमृत की ओर ले चलो।

उनकी वक्तृता के प्रभाव का उल्लेख पट्टाभि सीतारमैया ने 'भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के इतिहास, में किया है। उन्होंने लिखा है "सरोजिनी नायडू थोड़े से चुने हुए शब्दों के साथ अपने पद का कार्यभार ग्रहण किया। उनका अध्यक्षीय भाषण सभवत काग्रेस के मच से दिया गया सबसे छोटा भाषण था, लेकिन वस्तुत यह सबसे अधिक मधुर भाषण था। उन्होंने एकता पर बल दिया दलों के बीच एकता, तथा भारत और प्रवासी भारतीयों के बीच एकता। उन्होंने विधानसभा के मच से रखी गयी राष्ट्रीय माग का उल्लेख किया, तथा भय का परित्याग करने की प्रार्थना की। "स्वतत्रता के सग्राम में भय अक्षम्य द्राह है और निराशा अक्षम्य पाप। " इस प्रकार उनका भाषण साहस और आशा की अभिव्यक्ति था। कानपुर काग्रेस में अनुशासन बनाए रखने का काम उस व्यक्ति के कोमल हाथों में था जो कोमल भी था और सहनशील भी तथा वह अधिवेशन शान्तिपूर्ण रीति से सम्पन्न हो गया, केवल कुछ प्रदर्शन हुए जिनमें से कुछ तो श्रमिकों ने किए और कुछ अधिवेशन में आए प्रतिनिधियों ने किन्तु जवाहरलाल जैसे चुस्त लोगों ने उन्हें शान्त कर दिया।"[1]

सहज ही उनके भाषणों की जो समूचे विश्व का ध्यान गया। न्यूयार्क टाइम्स की दृष्टि में सरोजिनी 'जोन ऑफ आर्क' बन गई थीं "जिसका उदय भारत को प्रेरित करने के लिए हुआ था।" इग्लैण्ड के अखबारों में भी समान रूप से प्रशसा का स्वर उभरा। किन्तु, भारत में उनके शब्दों पर कोई ध्यान नहीं दिया गया, उनके प्रयास व्यर्थ हो गए।

हजारों प्रतिनिधियों और दर्शकों ने जिस उत्साह के साथ सरोजिनी की अध्यक्षता को अपना समर्थन प्रदान किया सरकार पर उसका कोई प्रभाव नहीं हुआ। इस सम्बन्ध में पुलिस रिपोर्ट में कटुतापूर्वक लिखा गया "साम्यवादियों के अतिरिक्त अन्य लोगों ने श्रीमती नायडू में बहुत कम दिलचस्पी ली, उसका भी कारण यह था कि वह साम्राज्यवादी विचारों की है तथा यह भी कि लाला लाजपतराय के साथ

[1] काग्रेस का इतिहास - ले० पट्टाभिसीता रमैया पेज 226
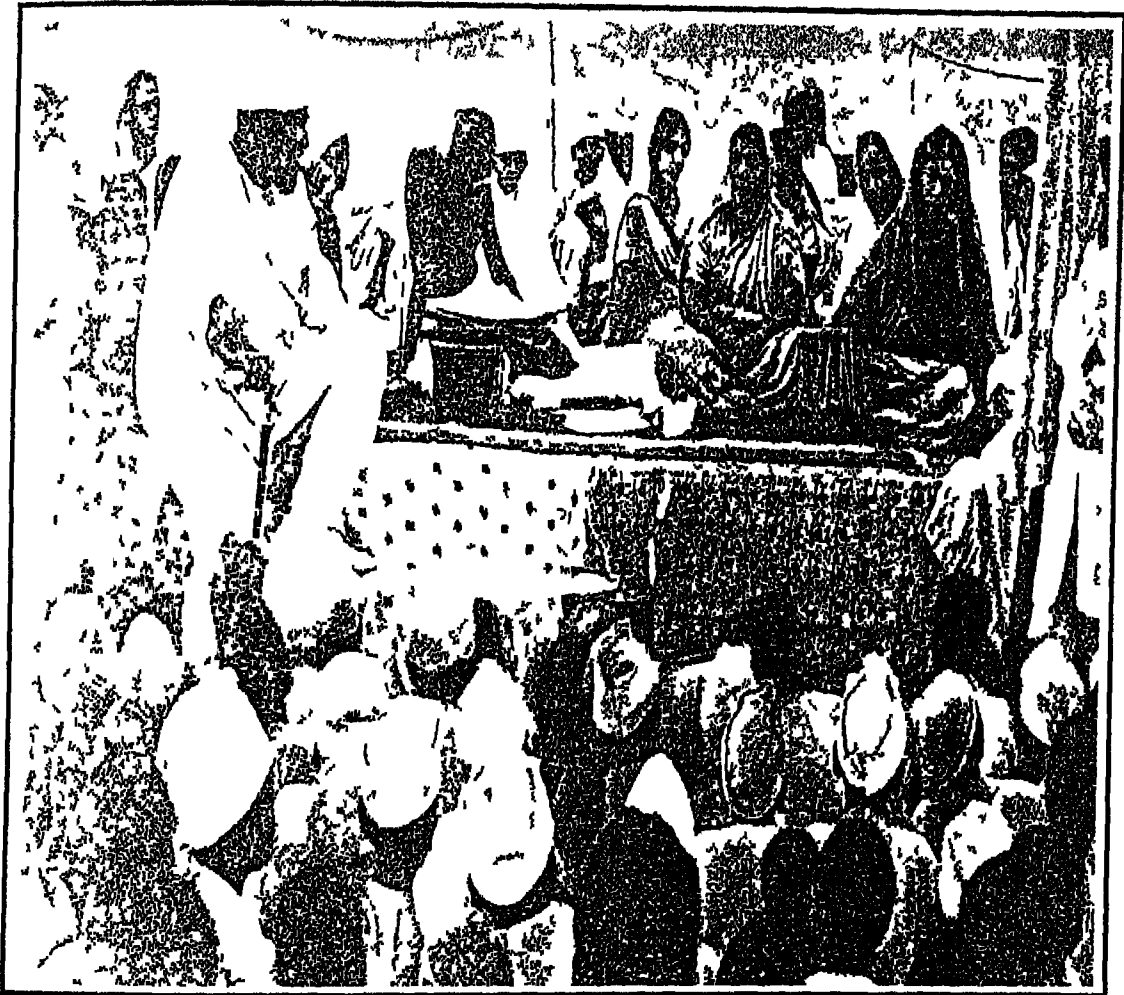
Ghandhi addressing a meeting of untouchables in Bombay-on the dais are shaukat Ali and Mrs Naidu 1926 At a Subjects Committe meeting of the Congress

दुर्व्यवहार हुआ था। वस्तुत योजना तो यह थी कि जब वह आए तो उनका बहिष्कार किया जाए लेकिन ऐसा किया नहीं गया। अध्यक्ष के रूप में सरोजिनी नायडू को पूरी तरह सफल नहीं कहा जा सकता। उसकी ओर से न तो लोगों ने ध्यान दिया और न उसका सम्मान ही किया। गाधीजी ने होशियारी के साथ अपने आपको पीछे रखा जिसके कारण वह अपनी स्थिति को बनाए रख सकीं।"[1]

अध्यक्षपद के कार्यकाल का सरोजिनी का एक वर्ष सरकार विरोधी गतिविधि से मुक्त रहा। अत उन्होंने अपनी शक्ति सगठनात्मक कार्य में लगाई। जुलाई 1925 में जब उनके मित्र और सहयोगी जे0 एम0 सेन गुप्ता कलकत्ता के महापौर चुने गए उस समय वे कलकत्ता में थीं। वे बगाल प्रातीय काग्रेस के अध्यक्ष भी थे। 1926 के प्रारभ में वह प्रात के दौरे पर गई, मई में प्रातीय काग्रेस ने अपना वार्षिक सम्मेलन कृष्णनगर में किया। वहा जब सभा अनियत्रित होने लगी तो सरोजिनी की उपस्थिति और उनके प्रभाव ने कार्य किया। उनकी उपस्थिति से प्रसन्न होकर कृष्णनगर नगरपालिका ने उसका अभिनन्दन किया।[2]

उनके अध्यक्षपद के कार्यकाल में एक गभीर परिस्थिति का उदय हुआ जिसे उन्होंने कुशलतापूर्वक हल कर दिया। अप्रैल 1926 में साबरमती में हुए एक सम्मेलन में केन्द्रीय और प्रातीय विधानसभाओं के भीतर काग्रेसजनों द्वारा अपनायी जाने वाली नीति सबधी मार्गदर्शक सिद्धान्तों के बारे में एक समझौता हो गया था, तथापि मई में उस समझौते की विस्तृत व्याख्या को लेकर दो दलों में मतभेद उत्पन्न हो गए, इनमें से एक दल का नेतृत्व मोतीलाल नेहरू और सरोजिनी कर रहे थे और दूसरे का, जो अपने आपको अनुक्रियावादी कहता था, एम0आर0 जयकर, एन0सी0केलकर और डा0 मुजे कर रहे थे। यह मतभेद इतना उग्र हो गया कि प्रत्युत्तरवादी (रेस्पॉन्सिविस्ट्स) ने अहमदाबाद में अखिल भारतीय काग्रेस महासमिति की बैठक का बहिष्कार कर दिया, तथा तूफानी अधिवेशन के बाद प्रत्युत्तरवादियों के समर्थक काग्रेस से अलग हो गए।[3]

---

[1] सरोजिनी नायडू ले0 पदमिनी गुप्ता एशिया पब्लि0 1966, पेज 9
[2] सरोजिनी नायडू ले0 उमा पाठक पेज 119
[3] सरोजिनी नायडू ले0 ताराअली बेग पेज 131

उन्हें सगठन के भीतर जिस प्रकार वैयक्तिक षड्यत्रों और सघर्षो का समाधान करना पड़ता था जिसके कारण उत्पन्न होने वाले मानसिक तनावों ने उन्हें थका दिया। वह जब कभी मानसिक दृष्टि से परेशान होती तो अपने प्रिय मित्रों से शक्ति ग्रहण करती थीं। जवाहरलाल नेहरू तब यूरोप में थे। सरोजिनी ने कुछ गुबार उन पर उतारा। उन्होंने जवाहरलाल को लिखा, "मुझे इस बात की बहुत प्रसन्नता है कि तुम्हें भारीय जीवन की शीतोष्ण कटिबधीय विभीषिका से एक लबा अवकाश मिल गया। ओह, काश मैं भी सागर पार होती, मुझे यहा दौरे करने और झगड़े सुलझाने में बहुत कठिन समय बिताना पड़ा है। शुभरात्रि, प्रिय जवाहर। मुझे यहा इस बात की प्रसन्न्ता है कि तुम भारत से बाहर हो तथा तुम्हारी आत्मा को अपने यौवन और अपनी गरिमा के पुनर्जागरण तथा शाश्वत सौंदर्य के दर्शन का अवसर मिल गया है।"[1]

कानपुर काग्रेस अधिवेशन के अध्यक्षीय भाषण में सरोजिनी ने काग्रेस के महिला विभाग की स्थापना का सुझाव रखा था। महिलाओं के प्रति उनके इस उद्बोधन से प्रभावित होकर कि महिलाओं को राष्ट्रीय गतिविधि में पूरा भाग लेना चाहिए, अक्तूबर 1926, में अनेक महिला सगठनों ने मिलकर अखिल भारतीय महिला सम्मेलन की स्थापना कर ली। यद्यपि सम्मेलन ने राजनीति से अलग रहना तय किया तथापि उसने महिलाओं को स्वतत्रता, बालकल्याण, शिक्षा तथा उन समस्त कार्यों में रूचि लेनी शुरू की जो राष्ट्र के एक अभिन्न अग के रूप में महिलाओं के स्तर को ऊँचा उठा सकते थे। भारतीय नारीत्व के इस पुनर्जागरण में सरोजिनी के योगदान के बारे में जितना भी कहा जाए, थोड़ा है।

जीवन की भली वस्तुओं के प्रति उनका प्रेम सर्वविदित है। मोटा खद्दर पहनना उनके लिए एक कठिन परीक्षा बन गया था। बाहर के समाज की तरह आश्रम में भी खूब ईर्ष्या द्वेष था। एक बार अवतीबाई गोखले ने गाधीजी से कहा कि सरोजिनी शुद्ध खादी नहीं पहनतीं। जमनादास ने उस घटना का वर्णन करते हुए लिखा है कि गाधीजी ने तुरन्त उत्तर दिया, "सरोजिनी जो कुछ भी पहनती है वह

इडियन क्वार्टरली रिव्यू महाराष्ट्र खण्ड तृतीय 1927
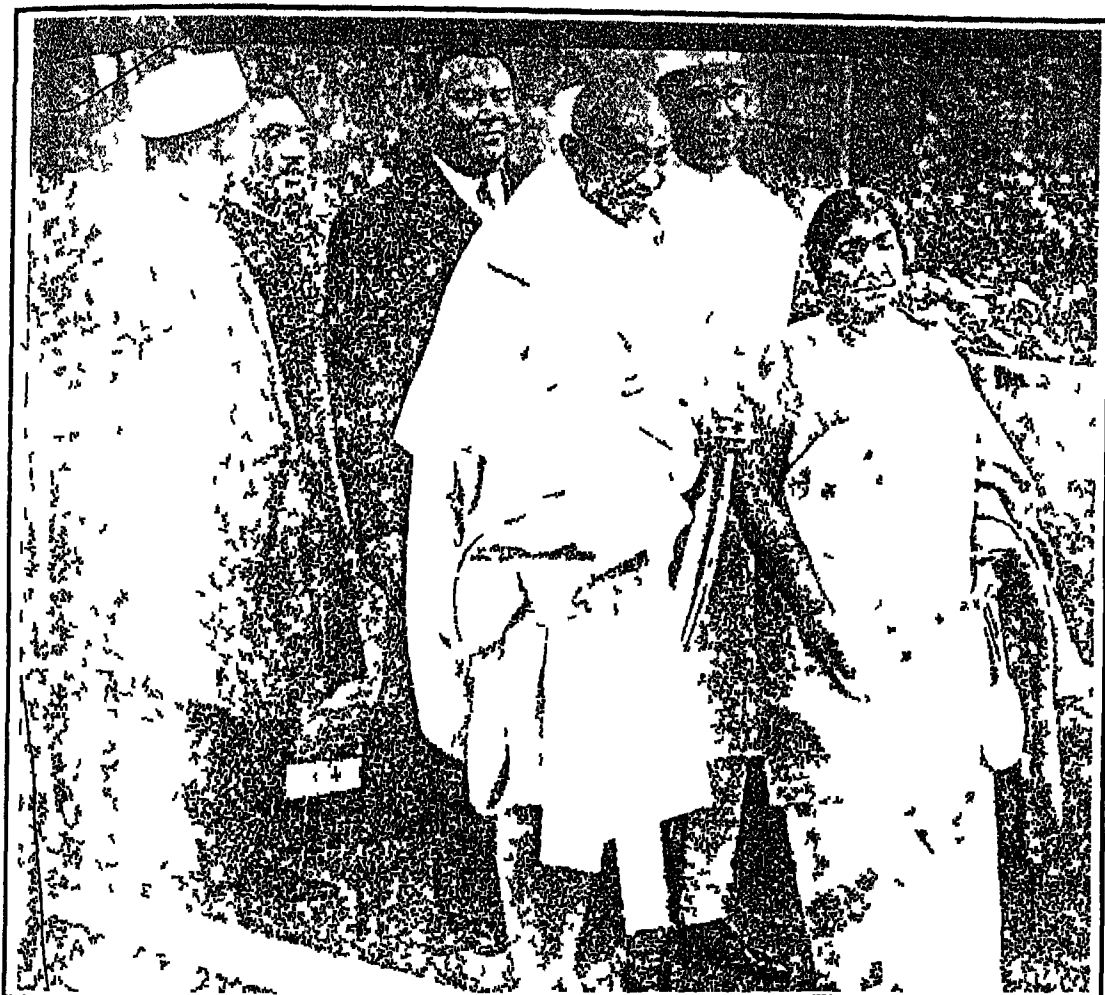
On the way to Buchıngham Palace to meet Kıng George V

उस वस्तु की अपेक्षा अधिक शुद्ध है जो तुम पहनती हो।"[1] इस प्रकार गाधीजी के प्रति गहरी निष्ठा के बावजूद वह पुन सिल्क पहनने लगीं, उन्होंने स्वय कहा है कि, "खादी के वस्त्रों में मुझे ऐसा लगता था कि मैं ठीक से कपड़े नहीं पहने हू।" ऐसी छोटी-छोटी बातों में ही वह अपने साथियों की अपेक्षा कहीं अधिक ऊची सिद्ध होती हैं। वह कभी दास मनोवृत्ति से ग्रस्त नहीं हुई। वह सदा मूलत आत्मचेता रहीं। वह अपने लिए स्वय अपना नियम थीं और आलोचनाओं से ऊपर रहीं।

प्राय उनका तीखा व्यग्य और हास्य कठिन अथवा खेदजनक परिस्थितियों को भी इतना हल्का कर देता था कि उन्हें हसकर टाला जा सकता था। मोटर कार दुर्घटनाए भी उनकी असाधारण स्फूर्ति को नहीं दबा पाती थीं। एक बार एक दुर्घटना में उनको बुरी तरह चोट आ गयी लेकिन उस अवसर के बारे में भी उन्होंने यही टिप्पणी की "यदि उस समय प्लास्टिक सर्जरी का प्रचन होता तो मैं इतनी कुरूप न रह जाती।"

1928 में उनको नया काम सौंपा गया। अखिल भारतीय महिला सम्मेलन ने उनको अखिल प्रशात क्षेत्रीय महिला सम्मेलन में अपनी प्रतिनिधि चुनकर होनोलूलू भेजा। सम्मेलन में भाग लेने के लिए वह अमरीका के लिए रवाना हुई। उससे थोड़ा ही पहले मिस मेयो की भारत विरोधी पुस्तक 'मदर इडिया' की चारों ओर व्यापक रूप से चर्चा हुई थी अत गाधीजी ने सरोजिनी से कहा कि तुम अमरीका और कनाडा भी जाना तथा वहा इस पुस्तक के कारण भारत के बारे में जो गलत धारणाए बनी हैं उनको दूर करने की कोशिश करना। उन्होंने अमरीका का प्रवास विलक्षण रीति से आरभ किया ज्यों ही वह जहाज से नीचे उतरीं उनसे पहला प्रश्न यह पूछा गया कि कैथरीन मेयो के बारे में आपके क्या विचार हैं? सरोजिनी ने प्रतिप्रश्न किया, "वह कौन है?" उसके बाद से उनकी यात्रा दिग्विजय यात्रा बन गई। उनके विनोदी स्वभाव, वक्तव्य तथा व्यक्तित्व ने पत्रकारों को सम्मोहित कर लिया तथा उनकी यात्रा और भाषणों की रिपोर्ट व्यापक तौर पर एव पूरी तरह प्रकाशित हुई। प्रभावशाली पत्र 'न्यूयार्क टाईम्स' ने टिप्पणी की, "श्रीमती नायडू व्यक्तिगत गुणों का विलक्षण मिश्रण

---

[1] गाधी रीडर पेज 283

Ghandhı, Kasturbaı, Mrs Naıdu, Malavıya at the mole, Bombay Bıddıng farewell to hıs countrymen from the promenade dech of S S Rajaputana

हैं। राजनीतिज्ञ के रूप में वे कठोर तथा कुशल व्यूहकार हो सकती हैं, ब्रिटिश शासकों के नाम जारी कर सकती है और अपने देशवासियों के लिए स्वराज्य की माग कर सकती हैं, तथा समान मताधिकार के लिए महिलाओं के शिष्टमडलों का नेतृत्व कर सकती हैं। दूसरी ओर, उनके गीतों तथा उनकी कविताओं में प्रकृति और मानवता के सौंदर्य की अभिव्यक्ति हुई है। सरोजिनी नायडू घोषणा करती हैं कि अब वह समय आ गया है जब भारतीय नारी जाति के विचार उस आकाश पर आग्नेय अक्षरों में उभरेंगे जिनकी लपटों को कोई बुझाएगा नहीं।" यह पौर्वात्य महिला स्वातत्रवादी कहती हैं, "हमें यह बात समझ लेनी चाहिए कि यदि वस्तुओं का उच्चतर स्तर हमारी सच्ची प्रसन्नता के साथ असगत हो जाए तो हमें उनके निम्नतर स्तर को स्वीकार करने के लिए तैयार रहना चाहिए। पुरुष अथवा नारी का मूल्याकन उनमें से प्रत्येक अथवा दोनों द्वारा सयुक्त रूप से सृजित वस्तुओं की मात्रा के आधार पर नहीं वरन् उस सद्भावना और सहानुभूति के आधार पर ही किया जा सकता है जिसके द्वारा वे उन वस्तुओं को मानवीय स्वरूप प्रदान कर सकते हैं।

आम तौर पर लोगों के मन में भारतीय नारी का जो बिब था सरोजिनी उससे बहुत भिन्न थीं जिसके कारण उनके व्यक्तित्व ने उनके श्रोताओं को सम्मोहित और अभिप्रेरित कर दिया। वह पूर्वी तट से पश्चिमी तट तक गई। वह भारतीय नारी, भारतीय पुनर्जागरण तथा भारत के आध्यात्मिक चितन जैसे विषयों पर ही नहीं बोलीं वरन् उन्होंने चुने हुए श्रोताओं के सम्मुख अपनी कविताओं का पाठ भी किया। वह जहा भी गयी वहा उनके सम्मान में भोज दिए गए।

दलित और गरीब दरिद्र लोगों के बाद उनका स्नेह बच्चों पर बरसता था। वह विद्यालयों में जाने और बालकों के समूहों से बातचीत करने का कोई अवसर नहीं चूकती थीं। एक बार वह एक विद्यालय में गयीं, उनकी वापसी के बाद प्रधानअध्यापिका ने डायरी में लिखा "क्योंकि वह अपने वास्तविक स्वरूप में थीं और उनके हाथ राख के नीचे छिपे जलते हुए अगारों को पहचानने के लिए पर्याप्त सवेदनशील थे अत उन्होंने अगारों पर से अनावश्यक और अनुप्रयुक्त आवरण को फूक मारकर उड़ा दिया और उन लड़कियों में से प्रत्येक पर उनकी उपस्थिति की

गरिमामडित प्रेरणा की अनुक्रिया हुई। सरोजिनी नायडू के भाषण के पश्चात् मुझसे एक लड़की ने कहा है, अब मुझे गाधी यथार्थ का प्रतीत होता है और मुझे मालूम है कि वह क्या करने की चेष्टा कर रहा है।' सरोजिनी नायडू ने इन नन्हें बच्चों के समक्ष अपने वास्तविक भाषण द्वारा भारत और महात्मा गाधी को तो सजीव कर ही दिया, वह इतनी शालीन और इतनी आकर्षक थीं और हमारे विद्यालय के जीवन में इतनी दिलचस्पी ले रही थीं कि वह जहा भी गई लोग उनसे मिलकर प्रसन्न हुए और चहक उठे।''

किन्तु वह केवल रोमाचित ही नहीं करती थीं, आघात भी पहुचा सकती थीं। एक ऐसा अवसर 'शान्ति के लिए मैत्री' के हेतु एक सम्मेलन के दौरान सत्तर राष्ट्रों को दिया गया भोज था। जब उन्हें 'पूर्व की ओर से अभिनन्दन' करने के लिए बुलाया गया तो उन्होंने पूछा कि भारत का झडा कहा है? यह सुनकर श्रोता चौंक गए और लज्जित हो गए। उन्होंने आगे कहा कि जब मानव-जाति का पाचवा भाग दासता में पड़ा हो तब विश्वशान्ति का उपयोग ही क्या है। पराधीन भारत विश्व शान्ति के लिए खतरा सिद्ध होगा और नि शस्त्रीकरण की चर्चा मजाक मानी जाएगी। अन्त में उन्होंने अलकारपूर्ण भाषा में कहा कि "विश्व में तब तक बच्चों शान्ति स्थापित नहीं हो सकती जब तक कि भारत की आशा के लाल रग, उसके साहस के हरे रग और उसकी आस्था के श्वेत रग में रगा हुआ भारत का झडा ससार के अन्य स्वातन्त्र्य प्रतीकों के बीच नहीं फहराया जाता।''

हालिद एदिब कमाल अतातुर्क की समकालीन थीं और वह सरोजिनी की प्रशसक न थीं। शकर लाल और डा असारी का मत है कि सरोजिनी भी हालिद से प्रभावित न थीं। कुछ वर्ष बाद हालिद एदिब ने मिस्र में एक पुस्तक प्रकाशित की जिसमें उन्होंने श्रीमती नायडू को कैट मछली अर्थात् राजनीतिक दृष्टि से महत्वहीन बताया और कहा कि "यदि बड़ी मछलियों को अकेले छोड़ दिया जाए तो वे मर जाती हैं लेकिन उनके बीच कोई कैट मछली हो तो उसकी उत्तेजना से वे जीवित रह जाती हैं।

महात्मा गाधी, सरोजिनी नायडू, प० मदन मोहन मालवीय तथा अन्य साथ

किन्तु सरोजिनी का मन कभी क्षुद्र नहीं रहा वह सयुक्त राज्य अमरीका की अपनी यात्रा के दौरान हालिद एदिब का भाषण सुनने गयीं।

1929 में जब वह भारत लौटीं तो शारीरिक और मानसिक दृष्टि से थकी हुई थीं। उनके लौटने के बाद गाधी जी ने लिखा, ''पश्चिमी जगत में अनेक विजय प्राप्त करने के पश्चात् 'यायावर चारण' घर लौट आई है। यह तो काल ही बताएगा कि उन्होंने वहा जो प्रभाव डाला है वह कितनी स्थायी है, तथापि यदि व्यक्तिगत अमरीकी सूत्रों से आने वाली सूचनाओं को उसकी कसौटी मान लें तो यह कहा जा सकता है कि सरोजिनी देवी के कार्य ने अमरीकी मस्तिष्क पर बहुत गहरा प्रभाव अकित किया है। अपनी दिग्विजय से वह ठीक उस समय लौटी हैं जब उन्हें देश की असख्य एव जटिल समस्याओं के समाधान में योग देना है। ईश्वर करे कि जो सम्मोहिनी वह अमरीकियों पर सदा सफलतापूर्वक डाल सकीं वह हम पर डालने में भी सफल रहें।''

भारत में उनको विश्राम नहीं मिल सका। विदेश यात्रा से लौटकर उन्होंने अपना सामान मुश्किल से खोला ही था कि उनकी यात्राए फिर से आरभ हो गई और नवबर 1929 में अपनी बड़ी बेटी पद्मजा को साथ लेकर वह पूर्वी अफ्रीकी भारतीय काग्रेस की अध्यक्षता के लिए रवाना हो गई। किन्तु, इस बार उन्हें अधिक समय तक बाहर नहीं रहना पड़ा और वह दिसबर में काग्रेस के वार्षिक अधिवेशन में भाग लेने के लिए समय पर स्वदेश लौट आई। उन्हें तत्काल कागेस की कार्यसमिति का सदस्य बना दिया गया और वह यह देखकर बहुत प्रसन्न हुई कि जवाहरलाल को अध्यक्ष निर्वाचित किया गया है। उस समय वह चालीस वर्ष के थे तथा तब तक के काग्रेस अध्यक्षों में सबसे कम उम्र के थें।

''नेता सम्मेलन द्वारा नियुक्त की गयी साम्प्रदायिक समस्या समिति की पहली बैठक कर ए0पी0 पैट्रो की अध्यक्षता में हुई। सरोजिनी नायडू विशेष आमत्रण पर उसमें सम्मिलित हुई। उन्होंने बैठक में कहा भविष्य में भारत सरकार चाहे जो रूप ग्रहण करे, उसे औपनिवेशिक पद प्राप्त हो, वह सघात्मक बने अथवा गणतत्रात्मक, मेरे विचार से भारतीय स्वाधीनता के घोषणा पत्र की प्रथम अनिवार्यता राष्ट्र के प्रत्येक अक की एकता है। यह एकता समस्त आवश्यक दावों और आश्वासनों के ऐसे

समानतामूलक और उदार सामजस्य पर आधारित होनी चाहिए जिसे कि देश के अल्पसख्यक अपने-आपको सुरक्षित अनुभव करें। मेरा यह विश्वास चेकोस्लोवाकिया सरीखे मध्य यूरोपीय देशों में किये गये इस प्रकार के सामजस्यों के हाल के ही अनुभवों से और भी अधिक पुष्ट हुआ है। यह महत्वपूर्ण बात नहीं है कि इस प्रकार के हल का यश देश में किन राजनीतिक दलों को प्राप्त होता है, इडियन नेशनल काग्रेस की भूतपूर्व अध्यक्षा के नाते मैं यह बात जोर देकर कहती हू कि इस महान सेवा से काग्रेस के नेताओं और कार्यकर्ताओं को भारतीय समाज के किसी भी अन्य अग की अपेक्षा अधिक प्रसन्नता अथवा कृतज्ञता की अनुभूति होगी। इस कार्य के लिए मेरा सहयोग हमेशा और हर परिस्थिति में उपलबध रहेगा। क्योंकि मेरी राजनीतिक आस्था की यह मूल मान्यता है कि भारत में राजनीति स्वतत्रता का एकमात्र अधिष्ठान और आश्वासन हिन्दु मुस्लिम एकता में निहित है।"

1930 का काग्रेस अधिवेशन जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में हुआ। वह बहुत घटना प्रधान तो रहा ही उसे वस्तुत भारत के स्वाधीनता अभियान में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर माना जा सकता है। उस अवसर पर पहली बार पूर्ण स्वराज्य को राष्ट्रीय लक्ष्य घोषित किया गया तथा उसकी प्राप्ति के लिए सविनय अवज्ञा और करबदी का निश्चय किया गया। उसके बाद गाधीजी आदोलन की योजना तैयार करने के लिए साबरमती लौट गए। काग्रेस के समस्त नेता उनके चारों ओर एकत्र हो गए और जिस समय उन्होंने यह शका प्रकट की कि आदोलन में भाग लेने वाले लोगों ने अहिंसा के उनके सिद्धान्त को शायद न तो पूरी तरह स्वीकार किया है और न समझा ही है, उस समय सरोजिनी उनके पास मौजूद थीं[1]

उस समय बहुत हृदय मथन और विचार विमर्श हुआ, और गाधीजी ने अतत उस नमक कानून का उल्लघन करने का निश्चय किया जिसके अनुसार सरकारी अभिकरणों के अलावा दूसरे लोगों के नमक बनाने पर पाबदी थीं। किन्तु अपने स्वभाव के अनुसार उन्होंने अपने इरादों की सूचना पहले वायसराय को दी। उन्होंने लिखा, "प्रिय मित्र, यद्यपि मैं ब्रिटिश शासन को अभिशाप मानता हू तथापि मैं एक

---

[1] सरोजिनी नायडू ले० ताराअली बेग पेज 142
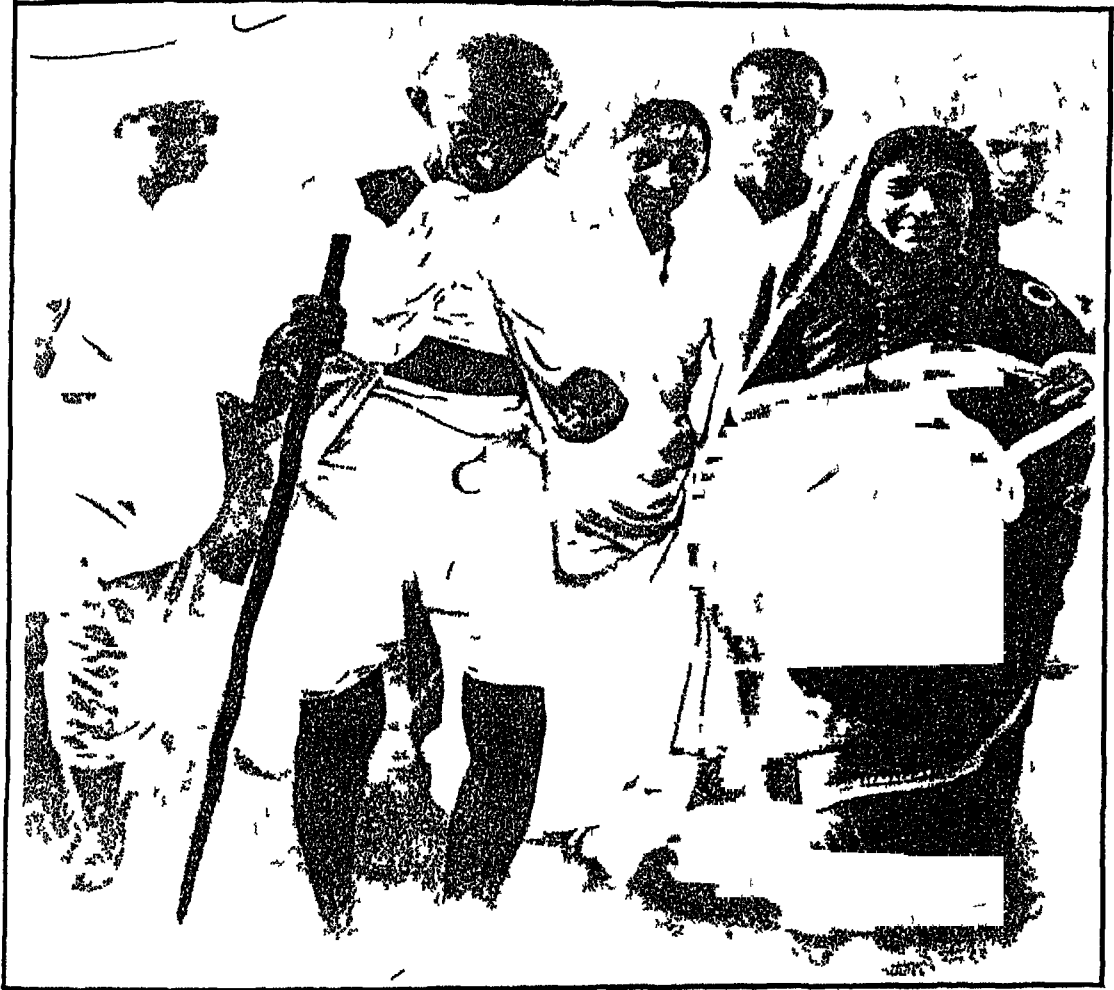
Mrs Naidu receiving Gandhi at Dandi, April 5

भी अग्रेज अथवा भारत में किसी अग्रेज के विहित हितों को हानि पहुचाना नहीं चाहता।'' आगे जाकर उन्होंने कहा कि एक गरीब देश में नमक कर साल भर में तीन दिन की आमदनी के बराबर बैठता है। उन्होंने वायसराय से अतिम प्रार्थना की कि वह ब्रिटिश शासन द्वारा किए गए अन्याय का निराकरण करें और यह घोषणा कर दी कि यदि उनकी चेतावनी की उपेक्षा की गयी तो वह मार्च 1930 में अपना आदोलन आरभ कर देंगे।

यद्यपि सरोजिनी गाधीजी के उन निष्ठावान और उत्कट अनुयायियों में से नहीं थीं जो 12 मार्च को दाडी कूच के समय उनके साथ थे तथापि वह उस समय गाधीजी के साथ थीं जब एक पूरी रात प्रार्थना में बिताने के बाद 6 अप्रैल को गाधीजी समुद्रतट पर गए और उन्होंने कुछ सूखा नमक उठाकर नमक कानून तोड़ा। देखने में यह कार्य बहुत महत्वहीन लगता था लेकिन वह इतना शक्तिशाली प्रतीक बन गया कि भावावेश में सरोजिनी चीख उठीं ''मुक्तिदूत को प्रणाम''। इसके तत्काल बाद कुछ हजार स्त्री और पुरूष समुद्र में घुस गए और उन्होंने गाधीजी का अनुकरण किया। सरकार सावधानी पूर्वक सारी स्थिति पर आख रखे हुए थी, अब वह आदोलनकारियों पर झपट पड़ी। पाच मई को गाधीजी गिरफ्तार कर लिए गए। उनके उत्तराधिकारी अब्बास तैयबजी का भी यही हाल हुआ तथा आदोलन का नेतृत्व सरोजिनी के कधों पर आ पड़ा। कुछ दिन बाद एक भेंट में उन्होंने कहा कि, ''अब वह समय आ गया है जब स्त्रिया स्त्रीत्व का बहाना लेकर आदोलन से अलग नहीं रह सकतीं। उन्हें देश के स्वाधीनता सघर्ष के खतरों और बलिदानों में अपने पुरूष सहयोगियों के साथ बराबर भाग लेना होगा।''

अनुमान किया जाता है कि उस समय तक नमक कानून तोड़ने के लिए वहा 25 हजार स्वयसेवक इकठ्ठे हो गए थे। सरोजिनी ने अस्वस्थता के बावजूद नेतृत्व की बागडोर सभाल ली। उन्होंने स्वयसेवकों से कहा कि चाहे किसी भी प्रकार की उत्तेजना हो आप शान्त रहें तथा उनको लेकर समुद्रतट की ओर चल पड़ीं। पुलिस ने

उन्हें घरसाना नमक कारखाने के पास रोक दिया। उस अवसर का वर्णन उनके जीवनीकार ने इस प्रकार किया है[1]

"जब उन्होंने यह देख लिया कि वे आगे नहीं बढ सकते तो वे रेतीली सड़क पर बैठ गए। भरी गरमी का मौसम था और सूरज सिर पर तप रहा था। उनके चारों ओर पुलिस ने घेरा डाल रखा था और नमक के क्षेत्र के चारों ओर काटेदार तार की बाड़ लगा दी गयी थी। वे लोग वहा फस गए थे और न उनके पास खाना था न पानी। युवा स्वयसेवक तेज प्यास से पीड़ित हो रहे थे तथा उनको मानसिक यातना पहुचाने के लिए प्यासे स्वयसेवकों के बीच में से पानी की गाड़ी लायी जा रही थी किन्तु उनको असह्य प्यास तृप्त करने के लिए एक भी बूद पानी नहीं दिया गया। उनके बीच सरोजिनी नायडू एक आराम कुर्सी पर बैठीं थीं। वह निरन्तर मुस्कुराती रहीं तथा अपनी सेना का उत्साह बढ़ाती रहीं। स्वयसवक उनके मुह से प्रसन्नतापूर्ण वार्तालाप और मजाक सुनकर चकित थे।"

अनेक विदेशी सवाददाताओं ने भी उस घटना का वर्णन किया है। एक अमरीकी पत्रकार ने लिखा था कि, "धूल भरी सड़क राष्ट्रीयतावादी स्वयसेवकों से भरी है जो एक महिला के चारों ओर बैठे हैं। वह महिला एक आरामकुर्सी में बैठी कभी पत्र लिख्र रही है और कभी सूत कात रही है। उसके और उसके अनुयायियों के सामने उतनी ही भारी सख्या में पुलिस है जो लाठियों और बदूकों से लैस हैं।[2] एक अन्य सवाददाता ने लिखा, "प्रख्यात भारतीय कवयित्री भारी बदन की सावली और तीखे नाक नक्श वाली है तथा खुरदरे और गहरे रग के हाथ बने कपड़े की ऊची साड़ी व चप्पल पहने है।[3]

लेकिन सरोजिनी अपनी आरामकुर्सी में बहुत देर तक नहीं बैठी रहीं। उन्होंने स्वयसेवकों को प्रार्थना के लिए इकठ्ठा किया और उनसे कहा, "गाधीजी का शरीर जेल में है किन्तु उनकी आत्मा तुम्हारे साथ है। भारत की प्रतिष्ठा तुम्हारे हाथों में है। तुम्हें किसी भी परिस्थिति में हिंसा का प्रयोग नहीं करना चाहिए। तुम्हारी पिटाई

---

[1] सरोजिनी नायडू ले० पद्मिनी सेन गुप्ता पेज 232

[2] वीमेन बिहाइन्ड महात्मा पेज 58

[3] आई फाउड नो पीस ले० वैब मिलर ।

की जाएगी लेकिन तुम्हें उसका प्रतिरोध नहीं करना चाहिए। तुम्हें घूसों से बचने के लिए हाथ तक नहीं उठाना चाहिए।"[1]

सवाददाता ने आगे लिखा है कि, " उनके भाषण का स्वागत इन्कलाब जिन्दाबाद के नारे से हुआ तथा उनके नेतृत्व में अहिंसक सेना नमक की क्यारियों की ओर बढ चली। अनेक बार जब मैं यह देखता कि पूर्णतया अप्रतिरोध मनुष्यों को जानबूझकर कुचला और मसला जा रहा है तो मेरा मन घबरा उठता और मैं वहा से चल देता। पश्चिमी लोगों के लिए अप्रतिरोध की कल्पना को आत्मसात करना कठिन होता है। मेरे मन में लाठी चलाने वाली पुलिस के प्रति ही नहीं वरन् उन लोगों के प्रति भी निस्सहाय रोष और घृणा का भाव जाग उठता था जो बिना प्रतिरोध किए पिटाई के समक्ष आत्मसमर्पण किए जा रहे थे, यों जब मैं भारत आया था मेरे मन में गाधीजी के प्रयोजनों के प्रति सहानुभूति थी।"

सवाददाता आगे कहता है, "जिस समय हम आपस में बातें कर रहे थे उसी समय एक ब्रिटिश अधिकारी उनके पास पहुचा और उनकी बाह छूकर बोला, 'सरोजिनी नायडू, आपको बदी बना लिया गया है।' वह हसी और उनका हाथ झटकती हुई बोलीं "मैं चलती हू, लेकिन मुझे छुओ मत'। पुलिस उन्हें वहा से ले गई और बाद में उन्हें कारावास का दड दिया गया।"

सरोजिनी कहानी सुनाने में बहुत पटु थीं, जेल जीवन ने उनकी इस प्रतिभा को क्षति नहीं पहुचाई। उन्होंने यरवदा जेल से लिखा, "मेरे प्यारे बच्चों तुम ससार के समस्त भागों सानफ्रासिकों, स्टाकहोम, डरबन, आक्सफोर्ड, वेनिस अथवा बुडापेस्ट, से मेरी यात्राओं की गाथाए पढ़ने में अभयस्त हो गए हो किन्तु दिलचस्पी अथवा नवीनता की दृष्टि से मेरी वर्तमान यात्रा सबसे बढकर है। मुझे युद्धबन्दी के रूप में एक विशेष रेलगाड़ी में बहुत गोपनीयता और सवधानीपूर्वक धरसाना से यरवदा लाया गया। डिब्बे की खिड़किया बहुत कसकर बद कर दी गयी थीं। मैं उच्च पुलिस अधिकारियों के पहरे में शान्ति से सोयी। मुझे अच्छा खाना मिला और भगवान को

सरोजिनी नायडू ले0 तारा अली बेग पेज 144

धन्यवाद दो कि कई दिन बाद मुझे स्वच्छ जल से देर तक और आनदपूर्वक स्नान की सुविधा मिली।"

उन्हें इस बात की बहुत प्रसन्नता थी कि, " यहा मेरे घूमने के लिए चौड़ा आगन है जिसमें शिरोष और आम के छोटे-छोटे पेड हैं, हसुकना झाड़िया और मेरे स्नान का पानी पर पली हुई कैना की एक क्यारी है।" अपने स्वभाव के अनुसार उन्होंने तत्काल उसका नामकरण कर दिया "एकात का उद्यान।"[1]

"और अब, निश्चय ही, तुम तात्कालिक समस्याओं और घटनाओं तथा व्यक्तित्वों के बारे में कुछ, सब कुछ जानना चाहोगी। शान्ति सम्मेलन की प्रारभिक बैठकें समाप्त हो गयी हैं। कौन जाने ये ही उसकी प्राय अन्तिम बैठकें सिद्ध हों। बहुत गरिमामय और सही रीति से पूरे सूट पहने हुए दोनों दूत जा चुके हैं तथा प्रख्यात अपराधियों और विद्रोहियों के खादीधारी झुड अपने स्थायी अथवा अस्थायी निवासों को वापस भेज दिये गये हैं। 'बौने आदमी' (महात्मा गाधी) और उसके समस्त पुराने विशिष्ट साथियों के बीच असाधारण तनाव और घमासान चर्चा का विषम दौर चला। वह अब पहले से कहीं अधिक एक नन्हीं सी विधवा सरीखा लगता है तथा अपनी चादर में सिर से पैर तक लिपटे रहते हैं जिसे मैं उनका ओपरा क्लोक (सगीत-नाटिका के अवसर पर ओढा जाने वाला बुरका) कहा करती हू। वह प्रशात बुद्धिमत्ता और बालसुलभ चचलता के अपने सहज किन्तु विरल मिश्रण से परिपूर्ण थे तथा लोगों के बारे में समाचार पाकर बहुत प्रसन्न हुए (क्योंकि उन्होंने 'बा' तक से मिलना जुलना बद कर दिया है)। वह तुम दोनों को ढेर सारा स्नेह भेजते हैं। उनके मन में मेरे लिए जो पक्षपातपूर्ण भाव है उसी के कारण वह ऐसा मानते हैं कि मेरी गिरफ्तारी सारे आदोलन की सबसे अधिक महत्वपूर्ण तथा अत्यधिक विश्वव्यापी महत्व की घटना है। उनकी इस भावना के कारण लोगों के मन में मुझसे बहुत ईर्ष्या होती है, किन्तु इसका उनके मन में कोई अफसोस नहीं है। (तुमने तो शायद कभी सोचा भी नहीं होगा कि तुम्हारी मा इतनी अद्भुत है)।"

---

[1] पद्मजा नायडू को 23 सितम्बर 1931 को लिखा पत्र।

चर्चाए तीन दिन तक चलती रहीं तथा नेहरू पिता-पुत्र को 16 अगस्त को नैनी जेल ले जाया गया। इसके शीघ्र बाद ही लार्ड इरविन ने एक गोलमेज सम्मेलन का सुझाव दिया तथा गाधीजी ने दिल्ली आकर उसके बारे में चर्चा करने का उनका निमत्रण स्वीकार कर लिया। किन्तु गोलमेज सम्मेलन लदन में 12 नवबर, 1930 को ही बुला लिया गया। उस समय तक गाधीजी और सरोजिनी जेल में ही थे। उसमें काग्रेस ने भाग नहीं लिया।

इसी बीच ब्रिटेन में सरकार बदल गयी तथा श्रमिक नेता श्री रेमजे मैकडॉनेल्ड प्रधानमत्री बने जिसके कारण ब्रिटिश सरकार की उग्र नीति में थोड़ी सी नरमी आ गयी। अस्वस्थता के कारण मोतीलाल नेहरू तो पहले ही जेल से छूट गए। जनवरी 1931 में गाधीजी और सरोजिनी को भी रिहा कर दिया गया।

अब राजनीतिक गतिविधि के केन्द्र इलाहाबाद और दिल्ली बन गए। मोतीलाल नेहरू की मृत्यु के कारण समस्त प्रमुख काग्रेस नेता उनके घर आनद भवन में एकत्र हुए। वहा तथा दिल्ली में ही 'दी नेकेड फकीर' के रचनाकार सर राबर्ट बर्नेज ने सरोजिनी की कुछ मानवतापूर्ण झाकिया देखीं और उनका वर्णन किया है। उनकी विनोदप्रियता ने विशेष तौर पर बर्नेज का ध्यान आकर्षित किया, उन्होंने लिखा है, "सौभाग्य की बात है कि अनेक भारतीयों में समूची गभीरता के बावजूद विनोदप्रियता भी है। मुझे एक ऐसे व्यक्ति से मिलने का अवसर मिला जिसमें यह गुण बहुत विकसित रूप में है। ये भारतीय कवियित्री श्रीमती सरोजिनी नायडू हैं। हम लोगों की भेंट एक पुष्प प्रदर्शिनी में हुई जहा भारतीय और अग्रेज नस्लों के लोग अपनी भिन्नता की चेतना के बावजूद बेगोनिया के पौधों के चारों ओर बधुत्वपूर्वक हिलमिल रहे थे। सरोजिनी नायडू तभी जेल से छूटीं थीं। मैंने उनके जेल के अनुभवों के बारे में पूछा। उन्होंने कहा कि 'बहुत अच्छा' समय बीता, मैं तो छूटना ही नहीं चाहती थीं, मैंने सुन्दर एन्थिरथिमिम्स के कुछ पौधे लागाए गए थे और ठीक जिस समय वे फूलने को हो रहे थे हमें जेल से छोड़ दिया गया। मैंने सिविल सर्जन से प्रार्थना की कि मुझे केवल एक दिन के लिए और रुकने की अनुमति दे दी जाए जिससे कि मैं अपने फूलों को निहार सकू, लेकिन उन्होंने एकदम मना कर दिया और मुझे बाहर

निकलना पड़ा। गाधी के बारे में तुम्हारी क्या राय है? वह एक छोटे से भद्दे व्यक्ति हैं न? गाधीजी के बारे में ऐसे भीषण व्यग्यों से उनके मित्रों का सबसे अधिक मनोविनोद होता था। वह इस बारे में पूरी तरह परिचित थीं कि महात्माजी बिड़लाओं के यहा ठहरते हैं तथा एक ओर तो फटी हुई साड़ियों में से आश्रमवासियों के लिए डोरी और पेटीकोट जैसी चीजें निकालने की किफायतदारी बरतते हैं, दूसरी ओर बकरी के दूध से नेकर हरी पत्तियों की सब्जियों जैसी सादगीपूर्ण चीजें खाते हैं जो प्राय अनुपलब्ध होती हैं अथवा बे मौसम। इसीलिए सरोजिनी ने एक बार कहा था कि गाधीजी को दरिद्र बनाए रखने के लिए एक करोड़पति की आवश्यकता होती है।

दिल्ली में गाधी और इरविन के बीच चल रहा विचार विमर्श चरम बिन्दु पर जा पहुचा। राबर्ट बर्नेज ने लिखा है कि सरोजिनी उसके बारे में आशान्वित न थीं "उन्हें आशा नहीं है" उन्होंने स्वय कहा, "मैंने वापस जेलयात्रा के लिए दातुन ब्रुश पहले से ही सावधानी से लपेटकर रख छोड़ा है।" प्रथम गोलमेज सम्मेलन के सदस्यों के बारे में उनके कथन का बर्नेज इस प्रकार उल्लेख किया है। "लदन में महज समय काट रहे हैं, वे भारत में किसी का भी प्रतिनिधित्व नहीं करते। उनके प्रस्ताव अस्पष्ट धुधले हैं। उनमें से किसी के पीछे कोई अनुयायी नहीं है। वे लोग मधुर स्वभाव वाले शिक्षित भलेमानुस भर हैं।" बर्नेज किचित तीखेपन से टिप्पणी करते हुए लिखते हैं, "इसमें कोई सदेह नहीं है कि सरोजिनी नायडू के इस कथन में आहत स्वाभिमान की सहज नारी सुलभ झुझलाहट काफी मात्रा में है क्योंकि जेल से लौटने पर गोलमेज सम्मेलन के सदस्यों को ख्याति प्राप्त करते देखना अप्रिय तो लगता ही है, भले ही वह ख्याति कितनी भी क्षणिक क्यों न हो।"

लगभग इसी समय सरोजिनी ने इरविन और गाधी इन दोनों प्रधान नायकों का वर्णन दतविहीन महात्मा और भुजाविहीन महात्मा इन शब्दों में किया।

लबी खिचने वाली उस चर्चा तथा उसके उतार चढ़ाव इरविन समझौता का विस्तृत विवरण यहा अपेक्षित नहीं है। इसके परिणामस्वरूप गाधी इरविन समझौता सामने आया तभी गाधी जी और सरोजिनी 29 अगस्त, 1931 को द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में भाग लेने के लिए जहाज द्वारा लदन को रवाना हुए। यात्रा शुरू करते

समय गाधीजी ने कहा, "मैं केवल ईश्वर के साथ लदन जा रहा हू जो मेरा एक मात्र मार्गदर्शक हैं किन्तु उनके साथ साकार चल रही थी नायडू।

जैसी कि, आशा की जाती थी समुद्री यात्रा ने उनकी चमत्कारी लेखनी को पर्याप्त रगीन सामग्री प्रदान की। सदा की तरह इस बार भी उन्होंने अपने बच्चों को पत्र लिखे। "स्वेज खाड़ी "से "6 सितम्बर, 1931" को उन्होंने एक पत्र लिखा[1]

यद्यपि सरोजिनी नायडू इग्लैण्ड में सुपरिचित थीं तथापि उनके व्यक्तित्व का प्रभाव कम महान न था। उसकी चर्चा मारगैरेटा बार्न्स ने अपनी पुस्तक 'इडिया टुडे एड टुमारो' में की है। गोलमेज सम्मेलन के सदस्यों का विश्लेषण करते हुए वह लिखती हैं कि उनमें से एक सरोजिनी नायडू हैं जो कवियित्री, राजनीतिज्ञ और सभी से सम्बद्ध मामलों का चलता फिरता विश्वकोश हैं तथा जिनमें उनकी अवस्था के अनुरूप बुद्धिकौशल के साथ ही एक युवती जैसी जीवतता का सगम हुआ है। सरोजिनी नायडू में किसी भी अन्य भारतीय राजनीतिज्ञ की अपेक्षा वे गुण प्राय अधिक हैं जो अग्रेजों को रूचते हैं। जहा वह दूसरों के साथ मजाक कर सकती हैं (शैतानी से सर्वथा मुक्त नहीं) वहीं वे अपने प्रति व्यग्य करके भी श्रोताओं को लोटपोट कर सकती हैं। सरोजिनी नायडू में हीन भाव के अस्तित्व का लेशमात्र भी सदेह नहीं होता तथा जब उन्हें अपने देशवासियों के चरित्र में यह लक्षण दिखायी पड़ जाता है तो वह अधीर बेकाबू हो जाती है। सम्मेलन की एक बैठक की समाप्ति पर वह मुड़ी ओर गाधीजी को खोजती हुई बोलीं, "हमारा छोटा मिकी चूहा कहा गया?" अनायास कही गई यह बात अविस्मरणीय है। एक अन्य अवसर पर एक प्रतिनिधि द्वितीय सदन के पक्ष में एक ही तर्क को बार बार दोहराकर अपने साथियों को इतना ऊबाए दे रहे थे कि बात सहनशक्ति के बाहर जा रही थी। सरोजिनी नायडू ने उनसे पूछा कि "द्वितीय सदन की क्या आवश्यकता है?" और वह आगे बोलीं कि मैं तो "तीसरे सदन अर्थात् कुछ राजनीतिज्ञों के लिए हत्यागार के पक्ष में हू।"

"मुझे इससे पहले इतनी अधिक निराशाजनक और नीरस सभा में भाग लेने का कभी अवसर नहीं मिला। भारत में हमने एक लम्बा "एकता और सर्वदलीय

---

[1] पद्मजा नायडू को 6 सितम्बर 1931 को लिखा पत्र।

सम्मेलन" किया था जिससे हमें बहुत ग्लानि हुई थी, यह सभा उस सम्मेलन की अपेक्षा निष्क्रिय ही सिद्ध हुई है। जो कुछ भी काम हुआ है वह निजी बातचीत के दौरान हुआ है जो कोई निर्णायक रूप नहीं ले सकी है। यह 'बौना आदमी' हर जगह अपना प्रभाव छोड़ता है लेकिन यहा उसका उतना प्रभाव नहीं पड़ा जितनी कि आशा थी यदि वह अपना महान आध्यात्मिक सदेश देने के लिए निकलता तो उसने सारे विश्व पर धाक जमा ली होती लेकिन जब वह द्वितीय सदन, वित्त और मताधिकार जैसी बातों की चर्चा करता है तो वह हमें अपने साथ पूरी तरह सहमत नहीं कर पाता तथा उसकी चर्चा का स्तर कानून और सविधान जानने वाले साधारणतर के स्तर से भी नीचा रह जाता है।"[1]

दक्षिण अफ्रीका में भारतीय गिरमिटिया मजदूरों की दुर्दशा ने ही पहले पहल गाधीजी के हृदय को इतना आलोड़ित कर दिया था कि उन्होंने अपने वकालत के दफ्तर के एकात का परित्याग करके मानवजाति की सेवा के लिए आत्मसमर्पण कर दिया। दक्षिण अफ्रीका में ही उन्होंने पहले-पहले सविनय अवज्ञा की पद्धति का मोटे तौर पर प्रयोग किया था जिसे वह भारतीय स्वाधीनता सग्राम के शिखर तक ले गए।

उस सारी कहानी को यहा कहने की आवश्यकता नहीं है, इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि आरभ से ही दक्षिण अफ्रीका की सरकार ने उस समझौते की भावना और शर्तों का उल्लघन किया जिसके आधार पर अभागे भारतीय किसानों को गुमराह करके जोहान्सबर्ग को सोने की उन खानों में मजदूरों की तरह काम करने के लिए ले जाया गया था जिनकी खोज उसी समय हुई थी।

भारतीय लोकमत इस प्रश्न पर पूरी तरह जागृत तथा उत्तेजित हो उठा था अत लोकप्रियता प्राप्त करने की इच्छा से भारत सरकार ने 1927 में दक्षिण अफ्रीकी सरकार के साथ केपटाउन समझौता किया जिसके अनुसार यह तय हुआ था कि प्रवासी भारतीयों के हितों की रक्षा के लिए एक भारतीय एजेन्ट नियुक्त किया जाएगा। इस समझौते में यह योजना भी शामिल थी कि प्रवासी भारतीय यदि भारत लौटना चाहेंगे तो उन्हें यात्रा व्यय में सहायता दी जाएगी और जो वहीं रहना पसद

---

[1] पद्मजा नायडू को 1 दिसम्बर 1931 को लिखा पत्र।

करेंगे उनके सामाजिक सुधार की व्यवस्था की जाएगी। तथापि समझौता उन वर्जनाओं को दूर कराने में समर्थ सिद्ध नहीं हुआ जिनके कारण भारतीय मूल के लोग कुछ क्षेत्रों में न व्यापार कर सकते थे, न बस सकते थे और न स्वामित्व प्राप्त कर सकते थे।

किन्तु कुछ भारतीय उन प्रतिबधों का उल्लघन करने में सफल हो गए थे, जिसके परिणामस्वरूप दक्षिण अफ्रीका की सरकार ने 1930 में ट्रासवाल एशियाई भूमिस्वामित्व अधिनियत पारित कर दिया जिसमें यह व्यवस्था थी कि जिन भारतीयों ने जमीन पर गैर कानूनी कब्जा कर लिया है उन्हें पाच वर्षो के भीतर जगह खाली कर देनी होगी ताकि अपने लिए निर्धारित क्षेत्रों में चला जाना होगा। इस अधिनियम का प्रभाव जिन भारतीयों पर पड़ रहा था वे अधिकाशत व्यवसायी थे और यह बात जाहिर थी कि इस अधिनियम के फलस्वरूप उनके तत्कालीन व्यवसाय चौपट हो जाते और आगे भी वे लाभकारी व्यवसाय नहीं कर सकते थे क्योंकि उनके लिए पृथक किए गए क्षेत्र व्यपार के प्रमुख केन्द्रों से दूर थे।

1927 के केपटाउन, समझौते, विशेषत उसकी धारा पर फिर से विचार करने के लिए जिसमें भारतीयों की भारत वापसी में सहायता का उल्लेख था तथा नए अधिनियम से उत्पन्न परिस्थिति का अध्ययन करने की दृष्टि से दोनों सरकारों ने यह तय किया कि द्वितीय गोलमेज सम्मेलन तत्काल बाद एक दूसरा सम्मेलन बुलाया जाए। भारतीय प्रतिनिधि मडल का नेतृत्व वायसराय की कार्यकारिणी परिषद के सदस्य सर फजले हसन ने किया। उसमें श्रीनिवास शास्त्री और सरोजिनी जैसे प्रसिद्ध व्यक्ति, दो प्रमुख यूरोपियन और सचिव के रूप में गिरिजाशकर बाजपेयी थे।

इतनी महान और गभीर सगति में भी सरोजिनी हमेशा की तरह दुर्दमनीय बनी रहीं। पहली ही बैठक में श्रीनिवास शास्त्री ने अविवेक पूर्वक यह कह दिया कि "मेरी समझ में यह बात नहीं आती कि सरोजिनी प्रतिनिधि मडल में क्यों हैं," यह सुनते ही सरोजिनी ने तत्काल उत्तर दिया, "श्रीनिवास शास्त्री इस बात के लिए पछताएगे कि उन्होंने इस बारे में सार्वजनिक तौर पर स्पष्टीकरण मागा है। मैं यहा केवल इस कारण आयी हू कि मेरे नेता (गाधीजी) को पौर्वात्य पुरूषों की बुद्धिमत्ता

पर पूरा भरोसा नहीं था अत उसने इस बात पर जोर दिया कि उसको पौर्वात्य महिलाओं की चिरतन बुद्धिमत्ता से सुदृढ किया जाए।''

प्रतिनिधिमडल में उनकी भूमिका के बारे में विस्तृत जानकारी उपलब्ध नहीं है। पत्र में उन्होंने अवश्य लिखे होंगे मगर वे उपलब्ध नहीं है, समाचार पत्रों के सवादों में घटनाओं का उल्लेख मात्र है जैसे दक्षिणी अफ्रीका के प्रधानमत्री जनरल हर्टजोग द्वारा सरकारी स्वागत। प्रतिनिधिमडल ने सरकार को जो प्रतिवेदन दिया होगा वह आज तक प्रकाश में नहीं आया है। राष्ट्रीय अभिलेखागार में एक गोपनीय फाइल है। इसके पीछे शायद यह कारण रहा हो, जैसे वर्तमान स्थिति से जाहिर ही है कि प्रतिनिधि मडल अधिक सफल नहीं रहा। किन्तु उसकी यात्रा के कारण दूषित ट्रासवाल अधिनियम कुछ सीमा तक सशोधित कर दिया गया था, अत वह कुछ तो फलीभूत रहा ही।

****

पंचम अध्याय

स्वतत्रता आन्दोलन में हिस्सेदारी एव उसके पश्चात

सरोजिनी इन परिस्थितियों में दक्षिण अफ्रीका से लौटीं। वे काग्रेस कार्यसमिति की एकमात्र सदस्या थीं जो जेल से बाहर थीं। अत उन्होंने काग्रेस की कार्यकारी अध्यक्षता का भार सभाल लिया तथा 3 मार्च, 1932 को जारी किए गए एक वक्तव्य में आदोलन के लिए जनता का आह्वान किया।

उन्होंने अपने वक्तव्य में सरकार से कड़ी टक्कर लेने के लिए काग्रेस के कार्यकर्ताओं को बधाई दी और उन्हें बताया, "इरविन ने जैसे अध्यादेश कई महीनों में जारी किए थे उनसे कहीं अधिक दमनकारी अध्यादेश विलिगडन ने आदोलन के शुरु में ही या यों कहें कि आदोलन शुरु होने के कई सप्ताह पहले ही हमारे सिर पर पटक दिए।"[1]

उन्होंने पूछा कि हमारे अहिंसक युद्ध के अढाई महीने बाद आज क्या स्थिति है? लगभग साठ हजार महिलाए और बच्चे जेल जा चुके हैं और 1932 का विदेशी कपड़े का आयात पहले की अपेक्षा भी कम हो गया। हम देख रहे हैं कि प्रदर्शन नियमित रूप से हो रहे हैं हड़तालें नियमित तौर पर की जा रही हैं और अध्यादेशों का नियमित रूप में उल्लघन हो रहा है। बबई पूर्णतया सगठित होकर युद्ध-परिषद के आदेशों का पालन कर रहा है, धमकियों और धरपकड़ के बावजूद एक बाजार भी ऐसा नहीं बचा है जिसमें हड़ताल होनी बद हो गई हो। उसके पश्चात् उन्होंने 6 अप्रैल से 13 अप्रैल, 1932 तक प्रदर्शनों और धरने का राष्ट्रीय सप्ताह और 21 अप्रैल से 27 अप्रैल 1932 तक डाकखानों का बहिष्कार करने के लिए डाक-सप्ताह मनाने के आदेश जारी किए।

सरोजिनी का मस्तिष्क महत्वपूर्ण योजनाओं और कर्तव्यों की भावना से भरा हुआ था, उन्होंने प्रातीय काग्रेस समितियों को लिखा कि वह अप्रैल के अतिम सप्ताह में दिल्ली में काग्रेस का अगला अधिवेशन करना चाहती हैं। अधिकाश प्रातीय अध्यक्ष पकड़े जा चुके थे अत आदोलन के सचालन के लिए प्रत्येक प्रात में अधिनायक नियुक्त कर दिए गए थे। सरोजिनी ने उनसे अनुरोध किया कि वे काग्रेस अधिवेशन

के लिए अपने प्रतिनिधियों को मनोनीत कर दें। उन्होंने यह भी सुझाव रखा कि अधिवेशन की कार्यवाही अध्यक्षीय भाषण और निम्न तीन प्रस्तावों तक ही सीमित रहेगी

1 काग्रेस का लक्ष्य पूर्ण स्वराज्य होगा।
2 कुछ विशेष परिस्थितियों में सविनय अवज्ञा को पुनर्जीवित करने से सबधित कार्यकारिणी समिति की अतिम बैठक के प्रस्ताव का अनुमोदन।
3 गाधीजी को काग्रेस के एकमात्र प्रतिनिधि और प्रवक्ता के रूप में स्वीकार करना।

उनके आदेशों के अनुसार दिल्ली में एक स्वागत समिति गठित कर ली गई।

सरकार ने तत्काल उसे गैर कानूनी घोषित कर दिया। दिल्ली और बबई की सरकारों के बीच तार और पत्र भी आ गए। 4 अप्रैल, 1932 के पत्र में नई दिल्ली से लिखा गया

"सरोजिनी नायडू की गतिविधि के कारण उनकी निकट भविष्य में ही किसी समय गिरफ्तार करना पड़ सकता है, उस सभावना की दृष्टि से बबई सरकार वैसी कार्यवाही अपरिहार्य होने पर यह मान सकता है कि उसे भारत सरकार की सहमति प्राप्त है।" बबई के पुलिस कमिश्नर ने 8 अप्रैल, 1932 को गोपनीय अर्धसरकारी पत्र सख्या एस0डी0 2840 में लिखा

"मुझे यह निवेदन करना है कि गृहमत्री रविवार को सवेरे होने वाले सम्मेलन में सरोजिनी नायडू की गिरफ्तारी के प्रश्न पर चर्चा करना चाहेंगे। मूलजी जेठा बाजार में स्वदेशी कक्ष के उद्‌घाटन के अवसर होने वाली कार्यवाही सभवतया उसके लिए पर्याप्त वैधानिक आधार प्रस्तुत कर देगी। सरोजिनी नायडू को कार्यसमिति की सदस्या के नाते गिरफ्तार किया जा सकता है अथवा राष्ट्रीय सप्ताह कार्यक्रम के लिए उत्तरदायी होने के आधार पर, अथवा मूलजी जेठा बाजार के उद्‌घाटन के अवसर पर दिए जाने वाले भाषण के आधार पर।"[1]

10 अप्रैल, 1932 के सम्मेलन की कार्यवाही से एक उद्धरण प्रस्तुत है

---

[1] सरोजिनी नायडू – लेखक तारा अली बेग पेज 158

" इस बारे में सदेह है कि सरोजिनी नायडू पर क्रिमिनल लॉं सशोधन अधिनियम के अतर्गत सफलता पूर्वक मुकदमा चलाने के लिए पर्याप्त सामग्री उपलब्ध है, अत यह निश्चय किया गया कि धारा 4 ई0टी0ओ0 के अतर्गत उनके नाम 24 घटे के भीतर बबई छोड़कर जाने का आदेश जारी कर दिया जाए।"

17 अप्रैल, 1932 के सम्मेलन की कार्रवाई का उद्धरण

"यह निर्णय लिया गया कि इस महिला के विरुद्ध तब तक कार्रवाई न की जाए जब तक यह प्रमाणित अपराध की दोषी न पाई जाए। यह सम्भवत कांग्रेस के अधिक नरम वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है और इसका जैसा प्रभाव है उससे कांग्रेस की अधिक आपत्तिजनक गतिविधियों पर अकुश लगेगा।

बबई के पुलिस कमिश्नर 19 अप्रैल, 1932 के पत्र में लिखा "ऐसा ज्ञात हुआ है कि श्रीमती सरोजिनी नायडू 22 अप्रैल को फ्रटियर मेल में दिल्ली के लिए रवाना होंगी।"[1]

समस्त प्रातीय सरकारों के नाम 19 अप्रैल, 1932 को निम्न तार भेजा गया "सरोजिनी नायडू का इरादा आगामी 22 तारीख को बबई से दिल्ली के लिए रवाना होने का है। भारत सरकार का विचार है कि राष्ट्रीय सप्ताह और कांग्रेस के अधिवेशन के सिलसिले में कांग्रेस की कार्यकारी अध्यक्ष तथा कार्यसमिति की सदस्या की हैसियत से उनकी गतिविधि के आधार पर उनकी गिरफ्तारी और क्रिमिनल लॉ सशोधन अधिनियम के अतर्गत निश्चित आरोपों पर उनके विरुद्ध मुकदमा चलाया जाना पूरी तरह उचित होगा। इस कार्यवाही के न होने तक भारत सरकार का विचार है कि यह गिरफ्तारी आपातकालीन शक्ति अधिनियम की धारा तीन और चार के अतर्गत उचित होगी तथा इससे दिल्ली प्रशासन को राहत की सास मिलेगी, अथवा उनके दिल्ली के लिए रवाना होने से पहले ही बबई सरकार आवश्यक कार्यवाही कर सकती है, तथा यदि वह ऐसा करे तो भारत सरकार कृतज्ञ होगी। भारत सरकार यह ठीक समझती है कि यदि सपरिषद-गवर्नर भी उचित समझें तो उन पर किसी निश्चित आरोप के आधार पर मुकदमा चलाये जाने की स्थिति में शाही वकील को छह महीने से अधिक के दण्ड की माग नहीं करनी चाहिए।"[2]

उपर्युक्त तार के सबध में बबई सरकार कि फाइल में यह टिप्पणी अकित है

"महामहिम को यह ज्ञात है कि सरोजिनी नायडू के मामले में पुलिस कमिश्नर और मुख्य प्रेसीडेन्सी मजिस्ट्रेट के साथ अनेक बार चर्चा हो चुकी है तथा वह इस निष्कर्ष पर पहुचे कि ऐसा कोई प्रमाण नहीं है जिसके आधार पर न्यायालय श्रीमती नायडू को दडित कर सकें। उन्होंने बबई में खुलेआम जो कुछ किया और कहा है उसमें से कुछ भी आपत्तिजनक नहीं है तथा हम बीच में ही पकड़े गए पत्रों की प्रामाणिकता सिद्ध नहीं कर सकते हैं और उन पर उनके हस्ताक्षर भी नहीं है। न उनको धारा 3 के अन्तर्गत कुछ दिनों के लिए गिरफ्तार करने का ही कोई लाभ है क्योंकि यदि उनको छोड़ा गया तथा पुन धारा 4 के अतर्गत उसके उल्लघन के आरोप में पकड़ा गया तो व्यर्थ ही एक के स्थान पर दो उत्तेजनापूर्ण खबरें समाचार पत्रों में प्रकाशित होंगी। अत महामहिम का विचार है रास्ता यह है कि पुलिस कमिश्नर सरोजिनी नायडू को कल यह आदेश जारी कर दें कि वह बबई छोड़कर बाहर न जाए। वह अपने कार्यक्रम की पहले ही घोषणा कर चुकी हैं अत वह निश्चित रूप से इस आदेश का उल्लघन करेंगी। इस स्थिति में वे रेलगाड़ी में चढने के बाद बबई से अगले स्टेशन पर गाड़ी ठहरते ही गिरफ्तार कर ली जाएगी। इस उपाय से भारत सरकार और दिल्ली प्रशासन दोनों के प्रयोजन पूरी तरह सिद्ध हो जाएगे। दोनों यही चाहते हैं कि वे दिल्ली न पहुचने पाए।"[1]

इस निर्णय का समुचित रीति से पालन किया गया तथा सरोजिनी के पास शीघ्र ही निम्न पत्र पहुच गया

"क्योंकि मैं इस बारे में आश्वस्त हू कि यह मानने के तर्कसगत कारण हैं कि आप सार्वजनिक सुरक्षा अथवा शाति के विरुद्ध कार्य करती रही हैं अथवा करने वाली हैं, अत मैं, पैट्रिक कैली पुलिस कमिश्नर, बबई आपके पास यह आदेश भेजता हूँ कि आप सविनय अवज्ञा आन्दोलन को आगे बढाने से सबधित किसी कार्यवाही तथा किसी सार्वजनिक सभा में भाग लेने से बाज आए और पुलिस कमिश्नर की अनुमति लिए बिना बबई नगर की सीमाओं को पार न करें।"[2]

सरकार का जैसा अनुमान था सरोजिनी ने नियत्रण आदेश का उल्लघन किया। इसके बाद की घटनाओं का उल्लेख 23 अप्रैल, 1932 की एक पुलिस रिपोर्ट में इस प्रकार मिलता है

"एक छपे हुए पर्चे में जनता से कल अपील की गयी थी कि वह बबई सेन्ट्रल स्टेशन पर सरोजिनी नायडू को विदाई दे। उसके अनुसार 22 तारीख को शाम 6 बजे से ही लोग स्टेशन पर एकत्र होने लगे। लगभग पचास व्यक्ति प्लेटफार्म पर मौजूद थे और कोई पचास ही प्लेटफार्म के बाहर थे। सरोजिनी नायडू लगभग 7 बजे स्टेशन पहुची। उनको देखते ही हाल में एकत्र भीड़ ने इन्कलाब जिन्दाबाद जैसे नारे लगाए। रेलवे पुलिस ने उन्हें शीघ्र ही खामोश कर दिया। श्रीमती नायडू सीधी अपने प्रथम श्रेणी के दो बर्थ वाले डिब्बे की ओर चली गयीं तथा 7 बजकर 30 मिनट पर गाड़ी के छूटने तक मित्रों से बातचीत में व्यस्त रहीं। रवानगी के समय से थोड़ा पहले लाल कमीज पहने हुए काग्रेस के दो स्वय सेवक प्लेटफार्म पर गए तथा काग्रेस के झडे हाथों में लेकर उनके डिब्बे के सामने पहरे पर तैनात हो गये। जब गाड़ी रवाना हो गयी तो प्लेटफार्म और हाल में एकत्र भीड़ ने सदा की तरह काग्रेस के नारे लगाए। दोनों स्वयसेवक प्लेटफार्म से निकलते समय जुलूस का नेतृत्व कर रहे थे। रेलवे पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया। "

पूर्वनिश्चित योजना के अनुसार सरोजिनी को अगले स्टेशन बाद्रा पर गाड़ी रूकते ही गिरफ्तार कर लिया गया और अर्थर रोड जेल भेज दिया गया। किंतु सरकार भी उन्हें अत्यत असाधारण कैदी मानती थी। इस बारे में मीरा बहन ने लिखा है "मुझे यह मालूम ही न था कि 'अ' श्रेणी की कैदी होने के नाते मुझे सब प्रकार की सुविधाए पाने का अधिकार था, लेकिन अब मेरी बैरक में सरोजिनी देवी के लिए प्रथम श्रेणी का साज सामान आने लगा। इसमें एक पलग, श्रृगार की मेज जिस पर ब्रुश और कघा था, स्नान के लिए टब आदि और परदे भी थे। मेट्रन बहुत उत्तेजित थी। उसके बाद अगले दिन सरोजिनी देवी आयीं। जीवतता और वाकपटुता उनमें से फूटकर बह रही थी। यह सच है कि वह जेल से बाहर जिस गहमा-गहमी और उत्तेजनापूर्ण वातावरण में से होकर गुजर रही थीं उसने उन्हें थका दिया था

Ghandhı wıth the Journalısts at Marseılles at Boulogne, accompanıed by courteous Brıtısh detectıve- hsı constant companıouns

लेकिन उनकी आयु के भार और उनकी व्यथा-वेदना ने उन्हें कभी म्लान नहीं किया।''[1]

उस जेल में उनका निवास बहुत लबा नहीं रहा। शीघ्र ही उनको वहा से यरवदा की महिला-जेल में स्थानातरित कर दिया गया जो उस पुरुष-जेल के ठीक सामने थी जिसमें गाधीजी नजरबद थे। अभी वे दोनों यरवदा जेल में ही थे कि 8 अगस्त 1932 को सरकार ने साप्रदायिक-निर्णय की घोषणा कर दी। यद्यपि गाधीजी ने एक पीड़ाजनक अनिवार्यता के तौर पर मुसलमानों के लिए पृथक निर्वाचन क्षेत्र का सिद्धात स्वीकार कर लिया था। तथापि जब इस सिद्धात को अछूतों अथवा हरिजनों पर भी लागू किया गया तो वे क्षुब्ध हो उठे। उन्होंने तत्काल ब्रिटिश प्रधानमत्री को लिखा, ''मुझे आपके निर्णय का प्रतिरोध अपना जीवन दाव पर लगाकर करना पड रहा है'' और उन्होंने प्रतिरोध स्वरूप आमरण अनशन शुरु कर दिया है।[2]

यह ऐतिहासिक उपवास जेल में एक सफेद पलग पर आम के पेड़ के नीचे शुरु हुआ। उस समय महादेव देसाई और सरदार पटेल उनके साथ थे। उपवास का आरभ प्रात कालीन प्रार्थना से हुआ। प्रार्थना के अत में महात्मा गाधी की मधुर-गायिका-शिष्या रेहाना बहन तैयबजी ने गाधीजी का प्रिय भजन 'वैष्णव जन' गाया। दर्शनार्थियों की भीड़ जेल के आगन में गाधीजी के समीप बैठने और उनके इस आत्मारोपित कष्ट में उनके प्रति सवेदना प्रकट करने के लिए उमड़ पड़ी। सरोजिनी नायडू को तुरन्त जेल के महिला विभाग से वहा लाया गया तथा वहा उन्होंने जो भूमिका अदा की उसका वर्णन गाधीजी के निष्ठावान सचिव प्यारेलाल ने इस प्रकार किया है ''जब इन पक्तियों का लेखक 21 तारीख (21-8-32) को तीसरे पहर गाधीजी से मिलने गया तब उन्होंने (सरोजिनी ने) स्वय उनके अगरक्षक के रूप में काम करना शुरु कर दिया था। उपवास की पूरी अवधि भर वे मा की तरह उनको सभालती रहीं तथा सवेरे से शाम तक सतरी की तरह उन पर पहरा देती रहीं, एव मा और परिचारिका दोनों के अनुलघनीय अधिकार का उपयोग करके अपने प्रतिपाल्य (गाधीजी) तथा समूचे घर पर आतक जमाए रहीं।[3]

---

[1] द स्पिरिटस पिलग्रिमेज - ले0 मीरा बहन, पृष्ठ 161
[2] एन आटो बायोग्राफी - ले0 जवाहरलाल नेहरू पेज 38
[3] गाधी रीडर, पृष्ठ 283

यद्यपि हरिजनों के सर्वमान्य नेता डॉ0 अम्बेडकर ने उपवास को 'एक राजनीतिक चकमा' कहा था तथापि गाधीजी की मृत्यु की आशका के कारण वे तथा कुछ हिन्दू नेता हरिजनों के राजनीतिक प्रतिनिधित्व के लिए कोई नई योजना तैयार करने को विवश हो गए थे। जब गाधीजी ने अपने क्षीण स्वर से उनके कान में फुसफुसाया, "मेरा जीवन तुम्हारी जेब में पड़ा है।" तब अम्बेडकर ने हथियार डाल दिए। यह योजना पूना पैक्ट के नाम से प्रसिद्ध हुई। यह दोनों पक्षों के लिए सतोषजनक थी अत ब्रिटिश प्रधानमत्री ने भी इसे स्वीकार कर लिया। जब उनका प्रयोजन सिद्ध हो गया तो गाधीजी ने कस्तूरबा, सरोजिनी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर और कुछ अन्य साथियों की उपस्थिति में थोड़ा सतरे का रस पीकर उपवास तोड दिया। किन्तु सरोजिनी का दायित्व पूरा नहीं हो पाया था। गाधीजी उपवास के कारण बहुत दुर्बल हो गए थे तथा यह आवश्यक था कि मिलने के लिए आने वाले असख्य लोगों के आग्रह से उन्हें बचाया जाता। इन दर्शकों में एक ईसाई मिशनरी भी था जिसने बाद में लिखा

"मैं महान कवियित्री और वक्ता सरोजिनी नायडू को देखकर अचरज में पड़ गया था। वह भीतर से ही घूर रही थीं मानो कोई विशाल शिकारी पक्षी अपने छोटे बच्चों की रक्षा कर रहा हो। उनकी तुलना में जेल के पहरेदार अधिक सौम्य प्रतीत होते थे।"

उपयुक्त पक्तियों का लेखक क्षण भर के लिए चकरा गया और यह नहीं समझ पाया कि पुरुषों की जेल में सरोजिनी कैसे पहुच गई

"कुछ क्षणों तक ध्यान से देखने के बाद मुझे यह पता चला कि वे सतरी को यह निर्णय करने में सहायता कर रही थीं कि असख्य दर्शनार्थियों में से किन को उनके बदी नेता के दर्शन के लिए बुलाया जा सकता है।"[1]

मई 1933 में गाधीजी ने फिर से घोषणा की कि वह छुआछूत के पाप के विरुद्ध आत्मशुद्धि के निमित्त 21 दिन का उपवास करेंगे। पुलिस के महानिरीक्षक कर्नल डायल के एक गोपनीय पत्र में इस बारे में कहा गया है

---

[1] बापू – ले0 मेरी बार, पृष्ठ 24, 25 और 26
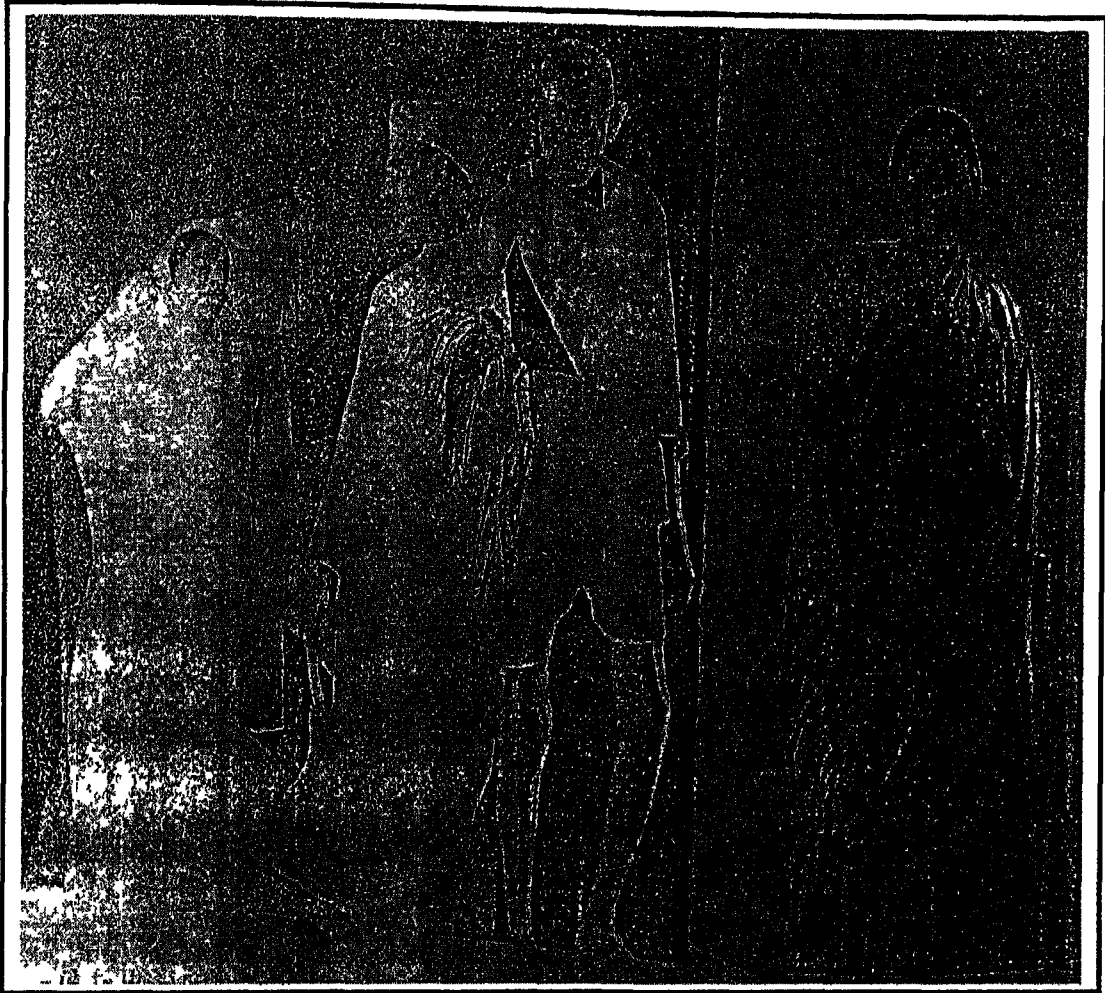
Gandhi taking his meals during the convalescence, June 1933 Leaving Parnakuti for a conference for the first time after the fast, June 1933

"प्रसगवश लिख रहा हूँ कि आज सवेरे जब मैं सरोजिनी नायडू से मिला तो मुझे लगा कि वे इस बूढे की बदर घुड़कियों से तग आ गयी हैं तथा यदि सरकार उन्हें गाधीजी से मिलने की अनुमति दे दे तो वह उनकी अच्छी तरह धुनाई करेंगी। मैंने उनसे कहा कि आप भेंट के लिए प्रार्थनापत्र दे दीजिये। मेरा विचार है कि यदि वह उनसे मिले लें तो अच्छा होगा क्योंकि वह निश्चय ही उन पर सयतकारी प्रभाव डाल पाती हैं तथा उनकी एक विशेष भेंट ही उपवासों के प्रति उनके आकस्मिक उत्साह को अवरूद्ध कर देगी। (हस्ताक्षर) ई0ई0 डायल।"

इसके बावजूद गाधीजी ने 8 मई 1933 को दोपहर के बारह बजे उपवास आरभ कर दिया। यह उपवास सरकार पर किसी प्रकार का दबाव डालने के लिए नहीं किया जा रहा था अत सरकार को लगा कि व्यर्थ ही गाधीजी की सभावित मृत्यु का दोष अपने सिर पर क्यों लिया जाए, अत उसने उसी दिन शाम के समय उन्हें सरोजिनी सहित रिहा कर दिया और वे उनके कधे का सहारा लेकर जेल से बाहर आए जहा से उन्हें लेडी ठाकरसी के घर ले जाया गया। वहा कस्तूरबा और सरोजिनी ने निरतर उनकी सेवा की और उन्होंने 21 दिन का उपवास पूरा कर लिया। कुछ सप्ताह रूककर जब गाधीजी में कुछ शक्ति आ गयी तो वह वर्धा के अपने आश्रम में चले गए तथा सरोजिनी ने राजनीतिक कार्य फिर से शुरू करने के पहले कुछ समय अपने परिवार के साथ हैदराबाद में बिताया।[1]

उन्हें उस विश्राम की बहुत आवश्यकता थी। उसके बाद सरोजिनी बबई जाकर फिर राजनीति में कूद पड़ी। कार्यसमिति की सदस्या के साथ-साथ वह अनेक वर्षो तक बबई प्रदेश काग्रेस समिति की अध्यक्षा भी रही थीं। एक समय एस0के0 पाटिल और आबिद अली उनके सचिव थे। स्वतत्र भारत की केंद्रीय सरकार में एस0के0पाटिल मन्त्रिमडल के सदस्य बने तथा आबिद अली कई वर्षो तक भारतीय ससद में उल्लेखनीय सेवा करने के पश्चात अतर्राष्ट्रीय श्रम आदोलन में सर्वोच्च पक्षों तक पहुचे, इनका कुछ श्रेय तो उनके मार्गदर्शक (सरोजिनी नायडू) को प्राप्त होता ही है।

---

[1] सरोजिनी नायडू - ले0 ताराअली बेग पेज 164

उसका अर्थ है भारतीय राष्ट्रपद की आत्मा। मैं यह राष्ट्रीयता शब्द का प्रयोग नहीं कर रही हू क्योंकि उसमें से दूसरों से पृथक होने की गध आती है, मुझे वह निहायत नापसद है। राष्ट्रवाद के आदर्श सृजन में प्रत्येक महिला निर्मात्री है। मैं चाहती हू कि भारत की महिलाओं में इस महान और गतिमय राष्ट्रीय चेतना जागृत हो जिसकी शक्तियों का सामान्य लोगों के हितों के लिए सग्रह किया जाना और उनमें सामजस्य बिठलाया जाना है।"

कुछ समय बाद सरोजिनी ने महिलाओं का पुन उद्‌बोधन किया। कराची में अखिल भारतीय महिला सम्मेलन के अधिवेशन में बोलते हुए उन्होंने पुन भारत की समस्त जातियों और ससार के समस्त राष्ट्रों के बीच एकता और समन्वय के अपने सूत्र को आगे स्पष्ट किया

"भारत का आदर्श और उसकी प्रतिभा सदा सर्वसमावेशकारी रहे हैं अपवर्जनकारी नहीं, वे सार्वभौमिक सस्कृति और चितन पर आधारित रहे हैं। भारत के लोग जब विश्वगुरुओं द्वारा सिखाये गये मनुष्य की एकरूपता के मौलिक आदर्श को समझ जाएगे तब वे ससार को युद्ध रोकने का आदेश भी दे सकेंगे। भले ही वे मदिर में हों या मस्जिद में, गिरजाघर में या अग्नि-देवालय में उन्हें उन बाधाओं को लाघना चाहिए जो मनुष्य को मनुष्य से अलग करती है। लेकिन वे नारी को नारी से अलग नहीं कर सकते क्योंकि वह स्वय सत्य का तत्व है जिस पर उसने मानवजाति की सभ्यता का निर्माण किया है।"[1]

उनकी उपस्थिति के लिए सर्वथा भिन्न क्षेत्रों से इतनी माग आती थी कि उनकी जीवनी को उनके भाषणों का सकलन बनने से रोकना एक दुष्कर कार्य था। उन्होंने लाहौर के एक छात्र-सम्मेलन में शिक्षा के माध्यम के रूप में अग्रेजी की पुरजोर वकालत की थी। वहा चर्चा का विषय 'विश्वविद्यालय सुधार के कतिपय पक्ष' था। उस चर्चा के दौरान सरोजिनी ने सकेत दिया कि अग्रेजी भाषा का प्रवेश भारत की जनता के लिए वरदान सिद्ध हुआ है तथा मैकॉले ने अग्रेजी का प्रवेश कराकर भारत की महान सेवा ही है। यदि हम उसका और कोई उपकार न मानें तो भी

---

[1] सरोजिनी नायडू - ले0 ताराअली बेग पेज 166

उसने कम से कम स्वतत्रता के सच्चे आदर्शो को हम तक पहुचाया है। एक सर्वसामान्य भाषा सभवत साप्रदायिक मतभेदों का महानतम हल है, और आज यदि भारत के लोग पेशावर से कन्याकुमारी तक एक सयुक्त स्वर में अपनी शिकायतें पेश करने में समर्थ हुए हैं तो वह सामर्थ्य अग्रेजी के समान तत्व के कारण ही उत्पन्न हुई है।

विद्यार्थियों के बाद सगीतकारों की बारी आयी तथा 4 मार्च, 1935 को सरोजिनी ने दिल्ली में अखिल भारतीय सगीत सम्मेलन की अध्यक्षता की। वहा उन्होंने घोषणा की, "मैं न तो सगीतकार हू न नृत्यकार। मैं तो उनकी गरीब मौसेरी बहन हू - कवयित्री।" जीवन भर उन्होंने वस्तुओं को राग अथवा चित्र, लय, रग अथवा आका में ही ग्रहण किया था। उन्होंने कहा कि मैंने उन्हें शब्दों के रूप में ग्रहण नहीं किया। अपने श्रोताओं का मन रखने के लिए शायद उन्होंने बात को तूल देकर कहा कि शब्द सवेदना के गौण माध्यम हैं। सगीत तथा नृत्य अविभाजित अथवा समग्र जीवन की चरम अभिव्यक्ति हैं। भाषा में अवरोध है तथा उसके लिए दुभाषिये की आवश्यकता होती है लेकिन सगीत के लिए किसी की आवश्यकता नहीं होती।

विद्यार्थियों और सगीतकारों के बाद कलाकारों की बारी थी। बबई में सार्वभौमिक कला चक्र (युनिवर्सल आर्ट सर्किल) का उद्घाटन करते हुए सरोजिनी ने भारतीय फिल्मों के एक विशिष्ट वर्ग के उत्पादन की भर्त्सना की एव भारतीय सगीत और भारतीय स्थापत्य की उन धाराओं की निदा की जो केवल पश्चिम की नकल करते हैं तथा देश के कलात्मक पक्षों को ससार की निगाहों में और स्वय भारतीयों की निगाह में भी गिराते हैं। अभिव्यक्ति के समस्त रूपों की चरम सिद्धि सौंदर्य है, अत सौंदर्य किसी राष्ट्र के जीवन और उसकी आत्मा का सर्वोच्च मानदड है। लेकिन उन्होंने इस बात पर बल दिया कि सौंदर्य मौलिक होना चाहिए अनुकरणात्मक नहीं। उन्होंने यह स्वीकार किया कि सिनेमा का कला के क्षेत्र में एक स्थान है किंतु उन्होंने कहा कि जब कोई भारतीय फिल्म भगवान कृष्ण को गुलाबी गेलिस पहने एक दीवान पर बैठा हुआ दिखाए जिस पर बड़े-बड़े फूलों की छपाई वाला मोटा लिनेन बिछा हो

तो उससे अधिक बेहूदापन और क्या हो सकता है? इस भोंडी नकल का ही दूसरा उदाहरण बबई की बड़ी-बड़ी गोथिक इमारते हैं।

वह वर्ष सरोजिनी के लिए एक ऐतिहासिक कार्य के साथ समाप्त हुआ। इडियन नेशनल काग्रेस की स्थापना बबई में 1885 में हुई थी। 1935 में काग्रेस अपनी स्वर्ण जयती मना रही थी। इस अवसर पर सरोजिनी ने बबई प्रातीय काग्रेस समिति की अध्यक्षता के नाते उस हाल के बाहर सगमरमर के एक स्मृतिपट्ट का अनावरण किया जिसमे उसकी सर्वप्रथम बैठक हुई थी। स्मृतिपट्ट पर निम्न वाक्य खुदा हुआ था

"इस हाल में 28 दिसबर 1885 को वीर देशभक्तों के एक दस्ते ने इडियन नेशनल काग्रेस की नींव डाली जो इन 50 वर्षो में असख्य पुरुषों और महिलाओं की आस्था और भक्ति तथा उनके साहस और बलिदान के आधार पर ईट-दर-ईट और मजिल-दर-मजिल अपनी मातृभूमि भारत के लिए उसके वैधानिक जन्मसिद्ध अधिकार स्वराज्य की प्राप्ति के अजेय प्रयोजन के सकल्प और प्रतीक के रूप में निर्मित हुई है।"[1] यद्यपि 1935 का वर्ष सरोजिनी के लिए निरतर प्रवास और भाषणों का वर्ष रहा तथा उसने उनकी शारीरिक शक्ति का बहुत दोहन किया तथापि वह आगे आनेवाले वर्षो की तुना में मानसिक और भावनात्मक दृष्टि से बहुत शातिपूर्ण वर्ष था। रक्त सबध को छोड़कर अन्य सभी अर्थो में वह नेहरू परिवार की सदस्या बन गयीं थीं अत कमला नेहरू की अतिम बीमारी और 1936 के आरभ में उनके देहावसान से इनको गहरी व्यथा हुई। गोलमेज सम्मेलन की चर्चाओं में से निष्पन्न नए भारत सरकार अधिनियम के कारण भी बहुत ही कठिन और मौलिक प्रकार के राजनीतिक निर्णयों की आवश्यकता उत्पन्न हो गयी थी। नए अधिनियम ने द्वैध शासन की पुरानी व्यवस्था को समाप्त कर दिया तथा प्रत्येक राज्य में मत्रिमण्डलों की व्यवस्था की, हालाकि कुछ शक्तिया प्रातीय गवर्नरों के पास सरक्षित रखी गई थीं। इस मौके पर इतिहास ने अपने आपको दोहराया और इस बारे में काफी बहस हुई कि जिन प्रातों में काग्रेस को चुनावों में बहुमत मिला था उनमें उसे मत्रिमण्डल बनाने चाहिए या नहीं।

---

[1] सरोजिनी नायडू - ले0 उमा पाठक पेज 125

जवाहर लाल नेहरू इस बार फिर काग्रेस के अध्यक्ष हो गए थे, और हालाकि व्यक्तिगत तौर पर वह यह मानते थे कि अधिनियम के अतर्गत मत्रिमडल, 'बिना शक्तियों के ही उत्तरदायी' माने जाएगे किंतु बहुमत ने उनका मत अस्वीकार कर दिया और यह निश्चय हो गया कि काग्रेस मत्रिमडल बनाएगी। जवाहर लाल नेहरू के मन में यह आशका उत्पन्न हो गई कि काग्रेस के मत्रियों को सत्ता भ्रष्ट कर सकती है अत उन्होंने इस प्रकार की प्रवृत्ति पर नियत्रण करने के लिए यथासभव अधिकतम उग्रवादी कार्यसमिति का निर्माण किया। काग्रेस के वामपक्षीय नेताओं में से उन्होंने जयप्रकाश नारायण, नरेन्द्रदेव और अच्युत पटवर्धन को कार्यसमिति में मनोनीत किया। ये लोग समाजवादी थे और अधिकाशत उनके विचार नेहरूजी के विचारों से मेल खाते थे। इन लोगों को मनोनीत करने के कारण यह अपरिहार्य हो गया था कि कुछ वरिष्ठ लोगों को कार्यसमिति से हटाया जाए। अत जवाहरलाल नेहरू ने कुछ लोगों से कार्यसमिति से त्यागपत्र देने का अनुरोध किया, उनमें सरोजिनी भी थीं। एक अच्छे सिपाही की तरह सरोजिनी तत्काल तैयार हो गई लेकिन कुछ ही महीनों के भीतर जयप्रकाश नारायण के त्यागपत्र के कारण उनको वापस ले लिया गया।

"यदि मेरे वश में हो तो मैं नए सविधान को आज ही समाप्त करना पसद करूगा। उसमें ऐसा कुछ भी नहीं है जो मुझे प्रिय हो लेकिन जवाहरलाल का रास्ता मेरे रास्ते से मेल नहीं खाता। भूमि आदि के बारे में मुझे उनके आदर्श स्वीकार है, लेकिन मुझे उनका प्राय कोई भी तरीका पसद नहीं है। मैं वर्गसघर्ष को रोकने की पूरी कोशिश करूगा। जवाहरलाल ऐसा नहीं मानते कि उससे बचने का कोई मार्ग हो सकता है। मेरा मत है कि यदि मेरी रीति-नीति स्वीकार कर ली जाए तो यह पूर्णतया सभव है।"[1] दरबारी विदूषक सरोजिनी भी उन्हें इस मानसिक तनाव से नहीं उबार सकीं। सरोजिनी नायडू ने जवाहरलाल नेहरू को लिखे अपने 13 दिसम्बर, 1937 के पत्र में अपनी विफलता स्वीकार की है

"मेरे परम प्रिय जवाहर,

यह पत्र मैं तुम्हें बेबेल की मीनार के आधुनिक सस्करण से लिख रही हू। 'बौना आदमी' निरपेक्ष भाव से बैठा हुआ पालक और उबली हुई गाजर खा रहा है, उधर जगत उसके इर्द-गिर्द उतार चढ़ाव के साथ बहता जा रहा है तथा बगाली,

[1] सरोजिनी नायडू - ले0 ताराअली बेग पेज 169

गुजराती, अग्रेजी और हिन्दी में फूट पडती है। विधान और उसके साथी उसके स्वास्थ्य के प्रति उनकी हठपूर्ण लापरवाही के कारण निराश हैं। वह सचमुच बीमार हैं, उसकी भुरभुरी हड्डियों और पतले होते जाते रक्त में ही रोग नहीं है उसकी आत्मा का अतरतम भी अस्वस्थ है वह अपने युग का सबसे अधिक अकेला और त्रस्त व्यक्ति है भारत का भाग्य-विधाता अपने ही नाश के कगार पर खड़ा है।

तुम भारत के दूसरे भाग्य-विधाता हो, तुम्हें मैं जन्मदिन की बधाई भेज रही हू आने वाले वर्ष में तुम्हारे लिए क्या कामना करू? सुख? शाति? विजय? मनुष्यों को ये वस्तुए अत्यधिक प्रिय होती हैं लेकिन तुम्हारे लिए इनका स्थान गौण है लगभग प्रासगिक मेरे प्रिय, मैं तुम्हारे लिए अटूट आस्था और तुम्हारे उस उत्पीड़न भरे मार्ग में उत्कट साहस की कामना करती हू जिस मार्ग पर स्वतत्रता का अनुसरण करने वाले सभी साधकों को अग्रसर होना पड़ता है और जिसे वे जीवन की अपेक्षा अधिक बहुमूल्य मानते हैं व्यक्तिगत स्वतत्रता नहीं वरन् समूचे राष्ट्र की बधन मुक्ति। यदि तुम्हारे भाग्य में दर्द, अकेलापन और दुख बदे हैं तो याद रखना कि तुम्हारे समस्त बलिदानों की चरम परिणति स्वतत्रता में होगी लेकिन तुम अपने आपको अकेला नहीं पाओगे।

तुम्हारी

सरोजिनी"[1]

सरोजिनी की सामान्य व्यथा को एक और घटना ने बहुत बढा दिया। भले ही दूर क्षितिज पर स्वतत्रता के विहीन के धुधले सकेत प्रकट हो रहे थे तथापि उन्हें लग रहा था कि हिदू-मुस्लिम एकता के उनके स्वप्न, उनकी आशाए और जीवन भर के प्रयास अतत विफलता की ओर बढ रहे हैं। नई साविधानिक योजना के अतर्गत मुस्लिम लीग ने भी चुनावों में भाग लिया तथा जिन्ना ने विभाजन की पूर्वकल्पना के आधार पर समानता की माग की। उन्होंने प्रातों में काग्रेस-मुस्लिम लीग मिश्रित सरकारों की स्थापना की माग की जिसे अति-आत्मविश्वासी जवाहरलाल नेहरु ने अस्वीकार कर दिया। यहा से दोनों सम्प्रदायों के बीच की खाई इतनी चौड़ी होती चली

---

[1] ए बच ऑफ ओल्ड लैटर्स, पृष्ठ 225

Starting for an interview with the Viceroy, Delhi,
March 15 1939

गई कि उसे कभी पाटा ही नहीं जा सका। उनके मन पर सबसे बड़ा घाव यह था कि साम्प्रदायिक एकता के प्रयत्नों में उनके पुराने मित्र और उनके सहकर्मी जिन्ना ही उनके उन आदर्शों के घोरतम विरोधी बन गए थे जिनके लिए वह मैदान में डटीं रहीं तथा काम करती रहीं। लेकिन, अतिम क्षण तक न उन्होंने आशा का परित्याग किया न प्रयास ही छोडा।[1]

अतरतम तक मानवतावादी सरोजिनी नायडू यूरोप के आकाश पर उमड़ते युद्ध के बादलों को उदास चित्त से देखती रहीं। भारतीय लोकमत म्यूनिख–सधि के उसी प्रकार विरुद्ध था जिस तरह काग्रेस के नेता अधिनायकवाद के सपूर्णत विरोधी थे। किन्तु सुभाषचन्द्र बोस इस सिद्धात में विश्वास करते थे कि मेरे शत्रु का शत्रु मेरा मित्र होता है, अत वह गाधीजी के चारों ओर एकत्र मध्यम मार्गियों और जवाहरलाल नेहरू को नेता मानने वाले समाजवादियें के विरोधी बन गए।

यह सघर्ष मार्च 1939 में त्रिपुरी के काग्रेस अधिवेशन में अध्यक्ष पद के मुद्दे पर उभरकर सामने आ गया। अधिवेशन की पूर्वसध्या में गाधीजी के उपवास, सुभाषबाबू की बीमारी और सब घात–प्रतिघात की गाथा काग्रेस के किसी भी इतिहास में मिल जाएगी जिसके परिणामस्वरूप सुभाषबाबू काग्रेस अध्यक्ष निर्वाचित हो गए, अत यहा उसके विस्तृत वर्णन की आवश्यकता नहीं है। किन्तु उसके बाद जो द्वन्द्व आरम्भ हुआ उसने सरोजिनी नायडू को तूफ़ान के बीच में लाकर खड़ा कर दिया। सुभाषबाबू के निर्वाचन की घोषणा होते ही गाधीजी ने अप्रत्याशित रूप से यह घोषणा कर दी कि "सुभाष के प्रतिद्वन्द्वी की पराजय मेरी ही पराजय है।" उधर काग्रेस के खुले अधिवेशन में प्रतिनिधियों के बहुमत के समर्थन के बल पर सुभाषबाबू विजयी तो हो गए थे लेकिन अखिल भारतीय काग्रेस महासमिति में उनके समर्थक अल्पसख्या में थे। इन दोनों परिस्थितियों ने अनिर्णय के वातावरण का निर्माण कर दिया। इसी समय गोविन्दबल्लभ पत और काग्रेस महासमिति के लगभग 160 सदस्यों ने एक प्रस्ताव द्वारा गाधीजी के नेतृत्व में आस्था प्रकट की तथा अध्यक्ष के नाते सुभाषबाबू से प्रार्थना की कि वह नई कार्यसमिति गाधीजी की इच्छा के अनुसार

सरोजिनी नायडू – ले0 ताराअली बेग पेज 170

मनोनीत करें। इस प्रस्ताव को आम तौर पर सुभाषबाबू के प्रति अविश्वास का प्रतीक माना गया। परिणामत गतिरोध उत्पन्न हो गया और नई कार्यसमिति का मनोनयन नहीं हो सका। दूसरी महत्वपूर्ण घटना अप्रैल 1939 में काग्रेस महासमिति के कलकत्ता अधिवेशन के समय हुई। सुभाषबाबू अस्वस्थ थे और उन्हें यह महसूस हो रहा था कि वह काग्रेस अध्यक्ष के रूप में काम नहीं कर पाएगे, अत उन्होंने त्यागपत्र देने की इच्छा प्रकट की किन्तु जवाहरलाल नेहरू ने एक समझौता प्रस्ताव तैयार किया जिसमें सुभाषबाबू से कहा गया था कि वह अध्यक्ष के पद पर बने रहें तथा पुरानी कार्यसमिति को ही बनाए रखें।

इस प्रस्ताव पर विचार करने के लिए जब अधिवेशन शुरु हुआ तो सुभाषबाबू पहले ही त्यागपत्र दे चुके थे अत उन्होंने अधिवेशन की अध्यक्षता करने से इकार कर दिया। कलकत्ता में सुभाषबाबू के समर्थक प्रबल थे अत इस गतिरोध का कोई हल नहीं निकल सका तथा सवेरे का अधिवेशन अनिश्चय की स्थिति में समाप्त हो गया। लेकिन शाम के अधिवेशन में सरोजिनी बीच में कूद पड़ी। और उन्होंनें अध्यक्ष की कुरसी सभाल ली। उन्होंनें उत्तेजित प्रतिनिधियों को दृढता और शाति के साथ नियत्रण में रखा और सुभाषबाबू से कहा कि आपको जो कुछ कहना है कहिए। सुभाषबाबू ने कहा कि "मैं सक्रियता के लिए एकता चाहता हू निष्क्रियता के लिए नहीं।" उसके लिए एक सामजस्यपूर्ण और समन्वित कार्यसमिति आवश्यक थीं यदि उन्हें मनपसद कार्यसमिति की छूट न दी जाती तो वह अध्यक्षता की जिम्मेदारी लेने को तैयार नहीं।

तब सरोजिनी ने उनसे सीधे प्रार्थना की। उन्होंने कहा कि "हम सब यह चाहते हैं कि सुभाषचन्द्र बोस अध्यक्ष बने रहें तथा काग्रेस के भविष्य का मार्ग दर्शन करें। हम उनके साथ सहयोग करना चाहते हैं। हम अपने साथ उनके सहयोग की कामना करते हैं, हम यह कहना चाहते हैं कि काग्रेस का अध्यक्ष अस्तित्वहीन नहीं होता। वह काग्रेस की नीति और प्रगति का सच्चा प्रवक्ता होता है। हम अपने लक्ष्य की सिद्धि के लिए सुभाषचन्द्र बोस को आवश्यक सहयोग देंगे।" उसके बाद उन्होंने आशा व्यक्त की कि जवाहरलाल नेहरू का समझौता प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकार

कर लिया जाएगा, और सुभाषबाबू को इस मामले पर विचार करने के लिए समय देने की दृष्टि से अधिवेशन को अगले दिन तक के लिए स्थगित कर दिया।

लेकिन, अगले दिन सवेरे सुभाषबाबू अपनी स्थिति पर डटे रहे। अत महासमिति के सामने नए अध्यक्ष का चुनाव करने के सिवाय दूसरा कोई मार्ग नहीं बचा। उस समय यह मुद्दा उठाया गया कि महासमिति को अध्यक्ष के निर्वाचन का अधिकार नहीं है, लेकिन सरोजिनी इस प्रकार की कानूनी आपत्ति से डरने वाली न थीं। उन्होंने घोषणा कर दी कि, "मेरा विचार है कि यह सदन इस वर्ष की शेष अवधि के लिए अपना अध्यक्ष निर्वाचित करने में वैधानिक दृष्टि से समर्थ है।" उनका यह स्वैच्छिक निर्णय यद्यपि सही मायने में सांवैधानिक नहीं था तथापि उसे आम स्वीकृति प्राप्त हो गई और डॉ0 राजेन्द्रप्रसाद को नया अध्यक्ष चुन लिया गया।

एक ओर तो काग्रेस के भीतर अनिश्चितता का वातावरण चल रहा था दूसरी ओर यूरोप में चले रहे युद्ध के कारण उत्पन्न हुई परिस्थितिवश विभिन्न दिशाओं में तनाव उत्पन्न हो रहे थे। ऐसी स्थिति में सरोजिनी नायडू शाति-स्थापना का कार्य करती रहीं। उनके लिए भारत से बाहर युद्ध और मानवजाति का कष्ट तथा भारत की पीड़ा के बीच कोई अतर नहीं था। ऐसे समय पर न तो सरोजिनी और न गाधीजी ही स्वार्थ की दृष्टि से सोच सकते थे। राजनीतिक दृष्टि से इस बारे में सदेह नहीं कि स्वतत्रता के सेनानी अपने हित के लिए उस इग्लैण्ड पर दबाव डाल सकते थे तथा उसके साथ सौदेबाजी कर सकते थे। जिसको आगामी चार वर्षो में प्राय घुटने टेक देने की स्थिति का सामना करना था। वे दोनों यह बात जानते थे कि सस्ते सौदे सस्ती और अस्थायी विजय को ही जन्म देते हैं। अतत मानव जीवन में केवल सिद्धात पर्याप्त नहीं होते वरन् उच्च सिद्धातों की आवश्यकता होती है यानी बुनियादी भलमनसाहत की।

उत्तरी अरकॉट जिला काग्रेस के सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए सरोजिनी नायडू ने कहा, "इग्लैण्ड आज ससार से कट गया है लेकिन हम भारत के लोग उसके साथ जुड़े हैं और हम उन इग्लैंडवासियों के साथ भी जुड़े हैं जो स्वतत्रता के लिए युद्ध कर रहे हैं, और भारत के खतरे ने इग्लैण्ड के खतरे को दुगुना कर दिया

है। यदि ब्रिटिश राजनीतिज्ञों ने इस बात को पहले ही समझ लिया होता तो इग्लैंड को नाजी आक्रमण के विरुद्ध युद्ध करने में भारत का पूर्ण समर्थन प्राप्त होता। काग्रेस इस समय ऐसा कोई काम नहीं करना चाहती जिससे ब्रिटिश सरकार को परेशानी हो, वह केवल यह घोषणा चाहती हैं कि भारत को युद्ध के उपरात स्वतत्रता प्रदान कर दी जाएगी। यदि यह घोषणा अब तक कर दी गई होती तो ब्रिटेन की कठिनाइया बहुत बड़ी सीमा तक दूर हो गई होतीं क्योंकि उसे भारत का अधिकतम समर्थन प्राप्त हो जाता।"[1]

1940 में काग्रेस कार्यसमिति की पूर्ण बैठ्क में दो प्रस्ताव पारित किए गए जिनमें स्वतत्रता-प्राप्ति के सही साधन के रूप में अहिंसा में आस्था को दोहराया गया तथा उस समय यूरोप में नाजीवाद और लोकतत्र के बीच चल रहे युद्ध में लोकतत्र के प्रति भारत का हार्दिक समर्थन व्यक्त किया गया। प्रस्ताव में कहा गया कि यद्यपि भारत लोकतत्रात्मक देशों के युद्ध प्रयासों में तब तक भाग नहीं ले सकता जब तक कि वह उसमें समानता और स्वतत्रता के आधार पर उनका साथी न बन जाए, तथापि वह मित्रराष्ट्रों के युद्ध-प्रयासों में किसी प्रकार की बाधा नहीं डालेगा। अबुल कलाम आजाद उस गुट का नेतृत्व कर रहे थे जो ऐसा मानता था कि भारत को युद्ध के प्रयास में पूरा समर्थन तथा मित्रराष्ट्रों का साथ देना चाहिए। लेकिन गाधीजी इस बात का दृढतापूर्वक डटे रहे कि भारत अहिंसा से प्रतिबद्ध है अत वह युद्ध में भाग नहीं ले सकता। प्रथम विश्वयुद्ध में उन्होंने एम्बुलेंस कोर में काम किया था और वे पट्टिया बनाया करते थे। द्वितीय विश्वयुद्ध में उनकी आस्थाओं में कोई अतर आने वाला नहीं था।

इसके पश्चात काग्रेस ने अहिंसात्मक सविनय अवज्ञा का झडा ऊचा रखने के लिए व्यक्तिगत सत्याग्रह शुरु कर दिया जिससे कि एक ओर तो स्वतत्रता सबधी गाधीजी के सिद्धान्तों का अनुशीलन हो सके तथा दूसरी ओर युद्ध प्रयास में बाधा भी न पड़े और मुश्किल के समय में ब्रिटिश अधिकारियों को परेशानी न हो। गाधीजी, जवाहरलाल तथा अन्य नेताओं के साथ अतत सरोजिनी को भी जेल में डाल दिया

[1] सरोजिनी नायडू – ले० ताराअली बेग पेज 174

गया। लेकिन 12 दिसम्बर 1940 को उन्होंने पुणे में लेडी ठाकरसी के घर से पद्मजा को लिखा " जरा देखो तो सही मुझे किस गरिमाहीन रीति से 'एकात के उद्यान' (यरवदा केंद्रीय जेल) से केवल इसलिए निकाल दिया गया कि मेरे स्वास्थ्य की आम स्थिति के बारे में दो पुराने कर्नल (चिकित्सक) आशकित हो गए थे कि कहीं मेरे लगाए हुए फूलों के पौधों के बीच ही मेरी मृत्यु न हो जाए। कर्नल आडवाना ने मुझसे कहा कि कृपया अब यरवदा न आयें हम न खतरा लेंगे न जिम्मेदारी। मैं चुहिया जैसी सगिनी हसा (मेहता) के साथ बहुत आरम से बस गयी थी। मैंने स्वाध्याय के लिए अभी दो सौ पुस्तकों की सूची बनाकर तैयार की है। मेरी गृहसज्जा परिपूर्ण और सुविधाजनक थीं मालूम नहीं अब 'बौना आदमी' मुझसे क्या काम लेगा। मैं कल वर्धा के लिए रवाना हो रही हू।"

इतिहास में कोई बदी मुक्त होने के प्रति इतना उदासीन नहीं हुआ और सरोजिनी ने तो अपने स्वभाव के अनुसार उन प्रतिकूल परिस्थितियों में भी एक घर बसा लिया था और एक जीवनचर्या बना ली थी। सरोजिनी वहा भी फूलों के बीच रहतीं, उनकी प्रिय बिरयानी तथा अन्य स्वादिष्ट वस्तुए ले जाने वाले मित्रों का अभिनन्दन करतीं, बाहर की दुनिया की गप्पों को सुनतीं जिनमें वह खोयी रहती थीं और साथ ही जैसा कि उन्होंने इस पत्र में लिखा है, "इस विवश विश्राम से मेरे स्वास्थ्य को लाभ होता।"

वह अपने बारे में स्वय कुछ भी निर्णय नहीं कर सकती थीं। जेल के बाहर दुर्बल स्वास्थ्य लिए उन्होंने दो दिन बाद वर्धा से लिखा "मैं अभी 'बौने-आदमी' के पास से (कच्ची प्याज और पालक में हिस्सा बटाकर) अभी लौटी हू। मन-ही-मन मुस्कराते हुए वह बोले, 'सचमुच सरकार तुम्हें बहुत समय तक जेल में नहीं रख सकती थी। तुम्हारा स्वास्थ्य जेल जाने लायक ही नहीं था, लेकिन मैं तुम्हें रोक भी कैसे सकता था?' अब वह कहते हैं कि मुझे और सत्याग्रह नहीं करना है क्योंकि वैसा करना मेरे लिए किसी भी सरकार के प्रति अन्याय होगा। यहा तो मेरे लिए ढेर सारा काम पड़ा है जो मुझे थका डालेगा लेकिन यदि मुझे यरवदा में रहने दिया गया होता तो मैं वहा आराम पा सकती थी, वहा मुझे पूरा आराम था। मैं कल बबई

प्रातीय काग्रेस समिति के किसी काम से बबई वापस जा रही हू तथा 20 अथवा 21 तारीख को मैं कुछ सप्ताहों के लिए घर लौटूगी।''

उनके पत्र में आगे कहा गया है कि पपी (उनकी छोटी बेटी लीलामणि) 24 तारीख को अखिल भारतीय महिला सम्मेलन में भाग लेने के लिए बगलौर जाएगी जिसमें सम्मिलित होने का एक आवश्यक निमत्रण सम्मेलन की तत्कालीन अध्यक्षा लक्ष्मी मेनन ने सरोजिनी को भेजा था। पद्मजा उस समय विजय लक्ष्मी पडित की हल्की जेल की सजा के कारण इलाहाबाद में उनके बच्चों के पास थीं। सरोजिनी ने पत्र के अत में लिखा, ''अब दुविधा की दीर्घ अवधि समाप्त हो गयी है, अब मुझे आराम मिल पायेगा। अपना ध्यान रखना और जवाहर को मेरा स्नेह-सागर पहुचा देना।''

लेकिन उस वर्ष उनके भाग्य में विश्राम बदा ही न था। हैदराबाद में घर लौटने पर उन्हें अपने बेटे बाबा की पत्नी ईव की कैंसर से धीमी मृत्यु के सताप का साक्षी होना पड़ा।[1] वह कुछ नहीं खा पाती थीं अत उसके लिए श्रीलका से सुनहरे नारियल मगाए जाते थे जिनका पोषक जल मरणासन्न ईव को थोड़ी राहत देता था। लेकिन उस सबका साक्षी होना भयकर था और उस भयकरता का वर्णन उन्होंने जवाहरलाल को लिखे एक पत्र में इस प्रकार किया है

''जेल से तुम्हारे सुन्दर पत्र और जेल से बाहर आने पर उससे भी सुन्दर वक्तव्य ने मेरी पीड़ित आत्मा के प्रेरणा दी और आराम पहुचाया। मेरा जीवन त्रासदियों के मामले में समृद्ध रहा है तथापि पिछले तीन महीने मेरे जीवन के अधिक सत्रास के दिन रहे हैं। किंतु व्यक्तिगत दुख और कष्ट आखिरकार व्यक्तिगत और निजी ही होते हैं।'' लेकिन राष्ट्र का कार्य व्यक्तिगत कष्ट के कारण रूका नहीं रह सकता था। सरोजिनी निकल पड़ी। 6 अप्रैल, 1940 को हैदराबाद में राष्ट्रीय सप्ताह समारोह के सिलसिले में आयोजित एक सभा की अध्यक्षता करते हुए श्रीमती नायडू ने कहा ''मुसलमान और इस्लाम के अनुयायी होने के कारण तुम्हें बहुसख्यकों से भयभीत नहीं होना चाहिए, न विद्रोह करने का विचार ही मन में लाना चाहिए। इसके

---

[1] सरोजिनी नायडू – ले० इन्दु जैन पेज 21

विपरीत तुम्हें इस्लाम के उपदेशों के अनुसार आचरण करना चाहिए, वह हमें शाति का सदेश देता है। तुम व्यापारी बनकर भारत आए थे किंतु अन्य विदेशियों से भिन्न तुम लोग भारत की भूमि पर बस गए और तुमने इसे अपना घर बना लिया। भारत की सत्कार-भावना ने तुम्हें यहा समृद्धिपूर्वक रहने का अवसर दिया और तुम और कहीं नहीं यहीं मरोगों भी। इतिहास ऐसे अनेक तथ्यों से भरा पड़ा है जिनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती और जो यह सिद्ध करते हैं कि भारत के मुसलमानों ने हिंदुओं की अनेक प्रथाओं को स्वीकार कर लिया है और वे हिंदुओं के साथ घुलमिल गए हैं। इस महान देश में दोनों सप्रदायों के बीच समान तौर पर एक नई भाषा भी विकसित हो गई है। कोई भी उनको अलग करने की बात नहीं कर सकता क्योंकि उनका विकास इस प्रकार हुआ है कि वे एक-दूसरे से पृथक् हो ही नहीं सकते। हिंदू, मुसलमान और अन्य सप्रदायों के लोग मिलकर भारत राष्ट्र का निर्माण करते हैं तथा उसको साप्रदायिक क्षेत्रों में विभाजित और खडित करने की बात मूर्खतापूर्ण है।"[1]

शताब्दियों के बाद भारत की प्राचीन समुद्री महत्ता को पुनर्जीवित करने वाली सिंधिया शिपिग कम्पनी का उद्‌घाटन जब राजेन्द्र प्रसाद ने बबई में किया उस अवसर पर सरोजिनी ने कहा "मैं उस दिन की राह देख रही हू जब हमारे देश में हमारे बनाए हुए कानून होंगे, हम अपनी विद्याओं के विकास के लिए स्वय उत्तरदायी होंगे, भारत में एक भी अशिक्षित व्यक्ति नहीं रहेगा, शोषण का समस्त भय समाप्त हो जायेगा, अपनी ही भूमि पर हम सपत्तिहीन नहीं रहेंगे और पुनर्जीवित अथवा नए सिरे से स्थापित प्रत्येक उद्योग के लिए विकास का खुला क्षेत्र रहेगा।"

अत में उन्होंने कहा था "हमें आशा करनी चाहिए कि जहाज-निर्माण का उद्योग अन्य महान उद्योगों का मार्ग प्रशस्त करेगा। उस स्थिति में यह सबसे अधिक दूरगामी औद्योगिक और राजनीतिक उपलब्धि होगा इन यार्डो में जो जहाज बनेगा उनको, उस सब सामग्री को जो इनमें लादी जाएगी, उन सब मुसाफिरों को जो इन जहाजों में यात्रा करेंगे, और सबसे अधिक उन राजदूतों को जो धरती के विभिन्न छोरों तक महान महात्मा का सदेश दे जाएगे, मेरा आशीर्वाद है।"

---

[1] सरोजिनी नायडू ले0 ताराअली बेग पेज 177

इस बीच यूरोप के युद्ध ने एशिया में एक दूसरा युद्ध भड़का दिया। 1941 के बाद खतरनाक घटनाओं की एक श्रृखला चालू हो गई – जापान ने दक्षिणपूर्व एशिया को रौंद डाला, बर्मा का पतन हो गया तथा 'शत्रु' भारत के द्वार पर आ पहुचा। अग्रेजों ने होश खो दिए और बगाल में घर फूक जौहर (सब कुछ नष्ट करके पीछे हटने) की नीति अपनाकर वहा की उन सब नावों को जला डाला जो वहा की अधिकाश जनता को उनका भोजन अर्थात् मछली प्रदान करती थीं। गरीब किसान देहात छोडकर कलकत्ता की ओर भागे और भूख से सड़कों पर मर गए। युद्ध के नरमेध से भी भयकर वह नरमेध था जिसमें बगाल में बीस लाख लोग अकाल से पीडित होकर मर गए।[1]

मार्च 1942 में एक अतरिम सरका की स्थापना का सूत्र तैयार करने के लिए भारतीय नेताओं के साथ चर्चा के निमित्त क्रिप्स मिशन भारत आया। कार्यसमिति की सदस्या के नाते सरोजिनी मार्च, अप्रैल और मई में काग्रेस कार्यसमिति की समस्त बैठकों में सम्मिलित हुई और वह काग्रेस सदस्यों के उस दल में भी थीं जो क्रिप्स मिशन से मिला था। वार्ता विफल हो गई क्योंकि काग्रेस और जिन्ना के बीच किसी भी सूत्र पर सहमति नहीं हो सकी। जिन्ना इस समय भारतीय मुस्लिम लीग के सर्वमान्य नेता बन चुके थे।[2]

स्वतत्रता सग्राम का अतिम निर्णायक दौर अब चरम शिखर पर जा पहुचा। काग्रेस कार्यसमिति ने जुलाई 1942 में 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव तैयार कर लिया। आठ अगस्त को बबई के उस ऐतिहासिक अधिवेशन में जिसमें 30,000 दर्शकों को समेटे तबुओं के नगर की समूची शाति और व्यवस्था आदर्श प्रबध महिला स्वय सेविकाओं ने किया था, महात्मा गाधी ने 'करेंगे या मरेंगे' की ऐतिहासिक घोषणा की और अग्रेजों से कहा 'भारत छोड़ो।'

सात अगस्त को सरोजिनी को आगामी घटनाओं का अपने अन्य साथियों की अपेक्षा अधिक आभास हो गया था, उन्होंने इन पक्तियों की लेखिका से उस दिन शाम के समय कहा, "विदा, प्रिय! क्योंकि कल हम सब जेल में होंगे।" लेकिन

---

[1] सरोजिनी नायडू – ले0 इन्दु जैन पेज 22
[2] सरोजिनी नायडू – ले0 उमा पाठक पेज 133

मौलाना आजाद ने उससे पहले गाधीजी को कभी उतना हताश नहीं देखा था। अपने सस्मरणों में उन्होंने लिखा है, "मुझे मालूम हुआ है कि उन्हें अचानक गिरफ्तारी की आशा नहीं थी।" यह आघात 9 अगस्त को तडके ही हुआ और समस्त नेता निरपवाद रूप से गिरफ्तार कर लिए गए तथा सारा देश शब्दश नेता-विहीन हो गया। सरोजिनी, गाधीजी, कस्तूरबा, प्यारेलाल, मीराबहन और महादेव देसाई को पुणे के आगा खा महल में नजरबद कर दिया गया तथा जवाहरलाल, मौलाना आजाद व अन्य लोगों को अहमदनगर किले में।"[1] देश भर में गिरफ्तारिया हुई औ कोई चार हजार लोग जेलों में डाल दिए गए। इस बार जेलों के नियम कठोर थे तथा बदियों को पत्र-व्यवहार की भी अनुमति न थी। तथापि, गाधीजी ने अपने जेलरों के साथ एक अनुपम कोटि का पत्र-व्यवहार बनाए रखा जिसने उन्हें रूला दिया। महाराष्ट्र सरकार की गोपनीय फाइलों में निहत्थे महात्मा की उस रीति-नीति का अभिलेख सुरक्षित है जो उन्होंने अपने बदीकर्ताओं को झुकाने के लिए इस्तेमाल की थी। एक पीड़ामय पत्र में जेल-अधीक्षक ने अपने सहयोगी से इस बात के लिए स्पष्टीकरण मागा कि गाधीजी के एक पत्र का उत्तर तत्काल क्यों नहीं दिया गया, क्योंकि देरी का परिणाम भयकर हो सकता था।

8 अगस्त, 1942 से मई 1944 तक जेल की लबी सजा से यह बात स्पष्ट थी कि ब्रिटिश सरकार ने दृढतापूर्वक यह तय कर लिया था कि इस बार वह नहीं झुकेगी। सरोजिनी में ही यह अनुपम योग्यता थी कि वह जेल उस लबी अवधि को एक जीवन पद्धति में ढाल सकीं जिसके दौरान दुर्घटनाए हुई तथा महादेव देसाई और कस्तूरबा दोनों की मृत्यु हुई। इस सबका विवरण पद्मजा के नाम उनके स्नेहपूर्ण पत्रों में हुआ है। पद्मजा के जन्मदिन 17 नवबर पर उनकी मा ने उनको बधाई देने के लिए एक पत्र लिखा

"मेरी प्यारी बच्ची,

यदि सेंसर कार्यालय में वह भी हुआ जिसे व्यग्य में यातायात अवरोध कहती हो तो भी मुझे आशा और विश्वास है कि तुम्हारे लिए परिमाण से कहीं अधिक स्नेह और तुम्हारी गणनाशक्ति से कहीं अधिक आशीर्वाद लेकर जाने वाले इस विशेष पत्र

---

[1] सरोजिनी नायडू - ले० पद्मिनी सेन गुप्ता पेज 68

की मुक्त और त्वरित यात्रा के लिए 'हरी झडी' दिखा दी जायेगी। क्या पपी ने (यदि उसे मेरे आदेशों वाला पत्र मिल गया हो) मेरा वह काला सदूक खोलने की व्यवस्था की जिसमें मैं एक छोटी-सी भेंट रखकर छोड़ आई थी। जिससे कि मेरी अनुपस्थिति की स्थिति में उसका उपयोग हो सके, क्योंकि मुझे यह पूर्वाभास हो गया था कि मैं इस समय घर पर नहीं रह पाऊगी। यदि पपी को मेरा पत्र न मिला हो तो तुम अपने आप साड़ी सदूक में से निकाल लेना। चाबियों के मेरे गुच्छे में दो पतली सी चाबिया एक साथ बधी हुई हैं, यदि ताले की चाबी हाथ न लगे तो उन चाबियों से पल भर में ताला खुल जायेगा। कुछ देर के लिए अपने आपको काया और आत्म दोनों से उस साड़ी में लपेट लेना (उस दुर्बल और पीड़ित काया, तथा ज्वाला, साहस और स्वाभिमान से परिपूर्ण उस उज्ज्वल और अपराजेय आत्मा को), तथा उसके ताने-बाने के प्रतीकात्मक सौंदर्य और अर्थ को हृदयगम करना उसमें फूलों की कोमल सुरम्यता भरी हैकृउसमें दीपशिखा का उज्ज्वल जादू है मेरी प्यारी बच्ची, वह तुम्हारी प्रतीक है।'' जैसे-जैसे वर्ष बीतता गया उनके पत्रों से उन पशुओं के प्रति उत्कट भावना व्यक्त होने लगी जिनसे वह घिरी रहती थीं। उन्होंने लिखा कि काश घर में भेजे गए पार्सल में एक छोटा सा कुत्ता भी होता। वह आगे लिखती हैं कि ''धरती पर सत दूसरे प्रकार के पशु से जूझने में अत्यत व्यस्त होते हैं तथा उनके हृदयों अथवा उनकी गोदी में प्यारे से छोटे गुलाबी-जिह्वा वाले मद-मद गुर्राते पिल्ले के लिए स्थान नहीं होता।'' 1942 के अतिम पत्र में वह लिखती हैं ''तुम सब प्रिय जनों के लिए बहुत-बहुत सुखद वर्ष की कामना करती हू और प्रार्थना करती हू कि हम सब पुन 1943 में मिल सकें।''

1943 के आरम्भ में पद्मजा पुन अस्वस्थ हो गई और उनकी मा ने उनको अपने पत्रों में धीमी गति से काम करने, आराम करने और प्रवास पर न जाने का परामर्श दिया, साथ ही खेदपूर्वक यह भी स्वीकार किया कि, ''मुझे इस बात की चेतना है कि यह बात वैसी ही है जैसी कि 'औरों को नसीहत खुद को फजीहत' लेकिन मुझे अपने अनुभव की कटुता यह लिखने को विवश करती है।'' इस समय सरोजिनी 63 वर्ष की थीं और गाधीजी तथा कस्तूरबा 73 वर्ष के। जेल की

निष्क्रियता, बाहर के जगत के साथ सचार के अभाव तथा ब्रिटिश हठ्धर्मिता के वातावरण ने जेल के सभी सदस्यों पर बहुत तनाव डाला क्योंकि इस विचार में बचा नहीं जा सकता था कि इस बार जेल जीवन की अवधि वर्षों लम्बी होगी।[1]

एक दिन जिस समय सरोजिनी भेंट के कमरे में जेल-अधीक्षक कर्नल भडारी से चर्चा कर रही थीं, महादेव देसाई ने बताया कि उनकी तबियत ठीक नहीं है। वह अपनी कोठरी में जाकर लेट गए और दिल के दौरे से उनका देहात हो गया। गाधीजी ने तुरन्त बागडोर सभाल ली। महादेव देसाई के शव को स्नानागार में लिटाकर उन्होंने दूसरों को उसके भीतर जाने की मनाही कर दी, तथा शव पर चदन का लेप करके वह तब तक उसके पास ही बैठे रहे जब तक कि जेल अधिकारियों ने बाहर के चौक में उनके दाहसस्कार की व्यवस्था की।[2]

यह बात आसानी से समझी जा सकती है कि उनके परिसीमित अस्तित्वों के तग दायरे के भीतर इन सब घटनाओं की भीषणता ने निराशा और अवसाद का वातावरण पैदा कर दिया था। मीराबहन ने उस समय का विवरण इस प्रकार लिखा है "सरोजिनी देवी का मनोबल अजये था। आगाखा महल में एक साथ नजरबन्दी के दौरान बापू भी अब तक सरोजिनी देवी के स्वभाव की गरिमा को नहीं समझ पाए थे। इस समय आकर जब हमें प्रत्यक्ष अनुभव हुआ तब हम उनके मातृ-हृदय की विशालता और कष्ट तथा अवसाद के क्षणों में उनके चरित्र की सुदृढ्ता को समझ पाए।"

सरोजिनी ने जेल में जिस घर का निर्माण कर लिया था उसमें उनका कमरा और बरामदा ही था जिनमें क्रमश भोजनकक्ष और रसोईघर था जिसकी वह स्वामिनी थी और जिसमें एक पुराना सिल्क का ड्रेसिग गाउन पहनकर कोयले की छोटी-छोटी सिगड़ियों पर वह अपने बरतन खड़काती रहती थीं। एक पुलिस जमादार, और बगीचे तथा गाधीजी की बकरी की देखभाल के लिए तैनात दो सिपाहियों के अतिरिक्त उन्हें बाहर के किसी व्यक्ति की कोई सहायता उपलब्ध न थी। उनमें से एक सिपाही अपनी वरदी के भीतर सीधा-सादा भारतीय युवक लगता था, वह शीघ्र ही 'माताजी'

---

[1] सरोजिनी नायडू लै0 उमा पाठ्क पेज 134

[2] सरोजिनी नायडू लै0 ताराअली बेग पेज 184

का स्वैच्छिक अनुचर हो गया और खाना बनाने में उनकी सहायता करने लगा।

किन्तु सबकी चिन्ता करने और रोगियों के लिए विशेष आहार तैयार करने के बावजूद यह छोटी सी टोली निराश होने लगी। कस्तूरबा ने कताई बद कर दी और जब फरवरी में गाधीजी ने अपने-आपको जनता से सर्वथा अलग कर देने के प्रतिरोध में आत्मशुद्धि का उपवास करने की घोषणा कर दी तो सरोजिनी को विश्वास हो गया था कि वह नहीं बचेंगी और उन्होंने यह बात गाधीजी से कह दी थी, "बापू, आपका उपवास बा को मार डालेगा।"[1]

उपवास आरम्भ होने से पहले वायसराय लार्ड लिनलिथगो ने गाधीजी को लिखा था "आपको यह बात निश्चित रूप से समझ लेनी चाहिए कि काग्रेस के विरुद्ध लगाए गए आरोपों का कभी न कभी उत्तर देना ही होगा और उस समय आपको और आपके साथियों को अपनी सफाई दुनिया के सामने देने का अवसर मिलेगा, यदि आप वैसा कर सकें और यदि इस बीच आप अपने-आप ही अपने किसी कार्य द्वारा जैसा कि आप इस समय सोच रहे प्रतीत होते हैं, उस अग्निपरीक्षा से निकल भागने के चेष्टा करते हैं तो निर्णय आपकी अनुपस्थिति में आपके विरुद्ध जाएगा।" ब्रिटिश सरकार के अधिकारी गाधीजी के उपवासों को केवल चाल पट्टी (ब्लेकमेल) मानते थे। इस बार उन्होंने गाधीजी की मृत्यु के लिए तैयार रहने का निश्चय कर लिया था, चाहे उसके परिणाम राष्ट्रीय स्तर पर कुछ भी होते, तथा उनके दाह-सस्कार के लिए सब तैयारी कर ली गई थी जिसमें चिता के लिए चदन की लकड़ी का सग्रह भी था।

लेकिन इस तैयारी का उपयोग बाद में कस्तूरबा के लिए हुआ। उपवास के दौरान उन्हें एक बार दिल का दौरा पड़ा लेकिन उससे वह उबर गई। उपवास 10 फरवरी, 1943 को सदा की तरह प्रार्थना से आरम्भ हुआ और कस्तूरबा ने अपने पति को पूर्ण उपवास से पूर्व अतिम चम्मच सतरे का रस पिलाया। इक्कीस दिन तक गाधीजी ने सतरे का रस भी नहीं लिया। उपवास के तीसरे दिन गाधीजी मूर्छित हो गए। चिकित्सा विशेषज्ञ जनरल कैन्डी और कर्नल बगेरशाह ने बाद में कहा था कि

---
[1] सरोजिनी नायडू - ले० पद्मिनी सेन गुप्ता पेज 69

जहा तक मनुष्य की बुद्धि काम करती है वहा तक यही कहा जा सकता है कि गाधीजी की उस समय मृत्यु हो जानी चाहिए थी। उनका बच जाना एक चमत्कार ही था और चिकित्सा विज्ञान उसकी व्याख्या नहीं कर सकता। इक्कीस फरवरी को उस समय सुशीला नायर गाधीजी के पास थीं जिस समय वह जी मिचलाने और यूरेमिया के कारण शक्ति खोकर बेसुध होने लगे थे। हताश होकर सुशीला ने गाधीजी को बूद-बूद करके नीबू का रस पिलाना शुरु कर दिया और गाधीजी पर उसका असर हुआ तथा धीमे-धीमे जीवन लौट आया।

इस सदर्भ में यह कहा जाता है कि एक ऐसा समय आया जब जनरल कैंडी को बुला लिया गया था और वह कमरे से बाहर निकलते ही दौड़े। वह अत्यन्त चितातुर नजर आते थे और उसका चेहरा सुर्ख हो गया था। बाहर उन्हें कर्नल बगेरशाह मिले और वे दोनों कमरे में लौटे। वहा उन्होंने गाधीजी को आखें खोले हुए पाया। गाधीजी ने उनसे गभीरतापूर्वक पूछा, "आप क्यों आए हैं?" ऐसा प्रतीत होता है कि जब कैन्डी ने उससे पहले उनकी जाच की थी तो उन्हें यह विश्वास हो गया था कि गाधीजी की मृत्यु हो गई है।[1]

पद्मजा के नाम 19 फरवरी के अपने पत्र में सरोजिनी ने उस अग्नि परीक्षा का वर्णन इस प्रकार किया है "तुम स्वय ही सोच सकती हो कि मेरे पास समय की कितनी तगी है। मेरा चितन प्राय एक स्थान और एक व्यक्ति पर केन्द्रित हो गया है। सरकारी और गैर सरकारी सभी चिकित्सक एकमन होकर उन पर ध्यान दे रहें हैं, उनकी चिता कर रहे हैं तथा उनकी सेवा में लगे हैं। निश्चित रूप से वह बहुत कमजोर हो गये हैं और भारी कष्ट में हैं, लेकिन इस स्थिति में भी चचल परिहास उनमें से फूट पड़ता है और वह मेरे साथ सदा की तरह मजाक करते रहते हैं। मैं उनके पास बहुम कम जाती हू क्योंकि मुझे यहा की समूची व्यवस्था सभालने तथा लोगों के बीच सामजस्य बनाये रखने का सारा भार अकेले ही ढोना पड़ता है। व्यवस्था सभालना तो आसान काम है लेकिन मानसिक तनाव की वर्तमान स्थिति में लोगों के बीच सामजस्य बनाए रखना सबसे अधिक कठिन कार्य बन गया है।

1 सरोजिनी नायडू ले0 ताराअली बेग पेज 186

"यह जानकर तुम्हारा मन बहुत भर आएगा कि कल शाम उपवास के नवें दिन वह बहुत ही अशक्त हो गए थे, लेकिन प्रार्थना के समय उन्हें एक मराठी भजन याद आ गया जो मुझे पसन्द है और उन्होंने अपनी कमजोर आवाज में आदेश दिया कि क्योंकि वह भजन मुझे पसन्द है इसलिए उसे गाया जाए। उनकी वास्तविक महानता इस बात में निहित हैं कि वह प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकताओं को अपना स्नेहपूर्ण चितन प्रदान करते हैं तथा छोटे से छोटे व्यक्ति के प्रति भी उनके मन और ह्रदय में अचूक उदारता भरी रहती है।"

और, 3 मार्च को उन्होंने लिखा "प्रिय बेटी। आज तुम्हारा ह्रदय मृत्यु की छाया की अधकारमय घाटी से 'बौने मायावी यात्री' की सुरक्षित वापसी पर प्रार्थना के दीर्घगान और प्रभु की प्रशसा से उत्फुल्ल हो उठा होगा। वापसी की यह यात्रा उन्होंने किस तरह पूरी की इस बारे में चिकित्साशास्त्र का ज्ञान सर्वथा मौन है। यह तो सर्वथा आस्था का चमत्कार है। लेकिन वह भी कैसा भयानक समय था जब हम आशा और भय से देखते रहते थे, आशा से कहीं अधिक भय से। कितु 'बौना बूढ़ा आदमी' वस्तुत अपने उपवास के बीसवें दिन और इक्कीसवें यानी अतिम दिन यानी कल विक्टर ह्यूगो के '93' का अतिम अध्याय पढ रहा था, उसने अपने पोते कनु की सगाई बिना किसी पूर्वकार्यक्रम के आश्रम की एक बगाली लड़की के साथ सपन्न की। कनु यहा अस्थायी परिचारक बनकर आया है। रस्म में दोनों के हाथ मिलवाए गए और उन्हें मुह भरकर गुड़ खिलाया गया। मैंने उसको (गाधीजी को) भारत सरकार के एक भूतपूर्व सदस्य के साथ 'द हाउड आफ हैवेन' की चर्चा करते सुना। वह बेचारा अग्रेजी भाषा की कविता से सर्वथा अपरिचित था और उसने यह समझा कि यह कोई नए किस्म का कुत्ता है जो कि स्वर्गजात-सेवा (हैवेन-बार्न-सर्विस) इडियन सिविल सर्विस के सदस्यों के लिए उपयुक्त पालतू पशु माना गया है। आज का समारोह बहुत सादा तथा बहुत छोटा सा था, बाहर के लोगों में केवल चिकित्सक थे जो उपवास टूटने के समय गाधीजी को देखने आ गए थे। उन्हें यह मालूम नहीं था कि उपवास टूटने से पहले कुछ प्रारभिक कार्य होंगे, ये बहुत कुशलतापूर्वक सपन्न हुए उपनिषद की प्रार्थना और एक भजन तथा कुरान की कुछ आयतें। कितु सर्वप्रथम

कार्यक्रम सबके लिए आश्चर्यजनक रहा। विधान (डॉ0 विधानचन्द्र राय, जो 15 फरवरी से गाधीजी के पास थे) फर्श पर बैठ गये और उन्होंने समारोह का समारभ टैगोर की सुन्दर और अत्यत समयानुकूल कविता 'जहा मन मुक्त है', से किया। पारपरिक सतरे का रस पीने से पहले 'बौने आदमी' ने सौम्य उदारतापूर्वक अपने चिकित्सकों के प्रति धन्यवाद का लघु भाषण आरभ किया किंतु वह अपना वाक्य पूरा करने से पहले ही भाव-विह्वल हो गया। उसको सभलने तथा धन्यवाद के गरिमामय शब्दों को पूरा करने में कुछ समय लगा। यह देखकर वहा सभी लोग भाव-विभोर हो गए। वह नवजात शिशु से भी अधिक कमजोर है और मेरे मन में आशका है कि वह अभी सकट से पार नहीं हुआ है। लेकिन जिस आस्था ने उसे छाया की घाटी में जीवित रखा है वही आस्था उसे सुनहली धूप में भी जिदा रखेगी।

"इस प्रकार वह समय पूरा हो गया जो एक त्रासदी के अतिम कगार पर पहुचने वाला था उसने (गाधीजी) चिकित्सकों से कहा, "ईश्वर ने मुझे किसी प्रयोजन के लिए जीवित रखा है। मैं मृत्यु और जीवन दोनों के लिए तैयार था। उसकी (ईश्वर की) इच्छा ही मेरा मार्गदर्शन करेगी। "हमारी जेल के द्वार फिर से बद हो गए हैं। वे कब खुलेंगे, यह मुझे मालूम नहीं है। इस बीच हम अपने नियमित कार्यक्रम की ओर लौट रहे हैं, लेकिन कुछ अतर के साथ।" और सरोजिनी अपना पत्र अपनी विशिष्ट शैली में समाप्त करती हैं

"अब विषम प्रकार की समस्त चिंताए दूर हो गई हैं अत मुझे आशा है कि प्यारी बच्ची तुम स्वस्थ होने की ओर ध्यान दोगी। मेरे बारे में चिता मत करना।" 'बुद्धिमान' सरकार ने आवश्यकता का पूर्वानुमान करके चदन की लकड़ी तैयार रखी थीं, और जेल के सभी बदी यह बात जानते थे। पूना के उस जर्जर महल में बदी मुट्ठी भर लोग अपने जेल-जीवन की अवधि के बारे में अनिश्चित थे, उनका स्वास्थ्य खराब था और वह नाड़ी-दौर्बल्य से पीड़ित थे। वह अपने आपको व्यस्त रखने के लिए हर प्रकार के प्रयास करते तथा यह जानकर दिन बिता रहे थे कि मनोबल बनाए रखना खेल सरीखा है। ऐसी स्थिति में सरोजिनी का अचानक मलेरियाग्रस्त हो जाना सचमुच परेशानी का कारण बन गया होगा।

भारत के नए वायसराय लॉर्ड वेवेल सेनापति रह चुके थे। भारत की बागडोर अब उनके हाथों में थी और गाधीजी के सहयोगियों में से कोई भी उनको नहीं जानता था। गाधीजी इस अफवाह पर भी चिंतित थे कि भारत का विभाजन करने की योजना बनाई जा रही है। इन अफवाहों की सचाई का पता लगाने का कोई उपाय उनके पास नहीं था, लेकिन वेवेल के प्रति न्याय करना होगा और यह मानना होगा कि उन्होंने भारत के विभाजन को रोकने की भरसक चेष्टा की। इस समय गाधीजी इतने हताशा हो गए थे कि उन्हें यह लगने लगा कि अगले सात वर्ष जेल में ही बिताने होंगे। सरोजिनी का बुखार बढता गया तथा चिकित्सक उनकी स्थिति के बारे में घबरा उठे। 21 मार्च को उन्हें बिना किसी पूर्वसूचना के स्ट्रेचर पर जेल से ले जाया गया। बबई सरकार के अभिलेख में इस बारे में केवल यह उल्लेख मिलता है "कैदी, सरोजिनी नायडू, बिना शर्त रिहा कर दी गई।"[1] अगले पूरे एक वर्ष गाधीजी और कस्तूरबा जेल में रहे। जिस समय कस्तूरबा अपनी सशक्त आत्मा के बल पर कठोर और कष्टमय जीवन को झेलकर दिवगत हुई उस समय उनकी अवस्था 74 वर्ष थी। जो हृदय इतनी लबी अवधि तक इस विचित्र पुरुष के साथ एकता के स्वर में धड़कता रहा वह एक दिन खामोश हो गया। साठ साल तक उन्होंने असख्य बलिदान किए लेकिन गाधीजी जीवन की पूर्णता तथा पूर्ण आत्मसमर्पण से प्राप्त होने वाली हितकारी शक्ति की प्राप्ति की दृष्टि से उनसे कभी सतुष्ट नहीं हुए। उन्होंने अनेक बार 'बा' की कठोर परीक्षा ली लेकिन 'बा' की भक्ति निस्सीम थी। अब वह नहीं रही। उनकी मृत्यु के तीन महीने बाद तक गाधीजी जेल में रहे। स्नेहसिक्त और निष्ठावान 'बा' के बिना उन महीनों में गाधीजी के अकेलेपन का अनुमान लगाया जा सकता है। यह उनकी अतिम जेल यात्रा थी।

सरोजिनी ने भले ही आगाखा महल को स्ट्रेचर पर छोड़ा हो उन्होंने अपने विलक्षण स्वभाव के अनुसार जेल से बाहर कार्यसमिति की एकमात्र सदस्या होने के नाते बीमारी में भी 'भारत छोड़ो' आदोलन की बागडोर सभाल ली। 9 अगस्त, 1943 को उन्होंने प्रेस को निम्न वक्तव्य जारी किया [2]

---

[1] सरोजिनी नायडू - ले0 ताराअली बेग पेज 188-189
[2] काग्रेस का इतिहास - ले0 डॉ0 बी0पट्टाभिसीतारमैया पेज 125

"महात्मा गाधी और कार्यसमिति की गिरफ्तारी के बाद काग्रेस के कार्यकर्ताओं के बीच कुछ वैचारिक भ्राति तथा मत-मतातर उत्पन्न हुए प्रतीत होते हैं इसका कारण यह है कि वह एक निश्चित कार्यक्रम और मान्य नेतृत्व से वचित हो गए हैं। इस बारे में जो सदेह लोगों के मन में हों मैं उन्हें यह बताकर दूर करना चाहती हू कि कार्यसमिति अथवा अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी ने काग्रेस के भीतर किसी व्यक्ति अथवा समूह को किसी प्रकार की सत्ता हस्तातरित नहीं की है। कई बार यह भी कहा गया है कि उसने गुप्त कार्यवाही को बढावा देने की अनुमति दी है, इस कथन पर मुझे विश्वास तो नहीं होता फिर भी मैं यह कहना चाहती हू कि गुप्त कार्यवाही काग्रेस की मान्यताओं और परपरा के विरुद्ध है तथा उसने इस की अनुमति नहीं दी है। काग्रेस के किसी सदस्य को यह शक्ति प्राप्त नहीं है कि वह सकट की इस घड़ी में उसके सविधान में सशोधन या उसमें परिवर्तन कर सकें। इसके बावजूद नेताओं की अनुपस्थिति मे हम सबका समान रूप से यह कर्तव्य है कि हम अपनी ओर से देश की सेवा के लिए काग्रेस के अधिकृत कार्यक्रम को अविराम गति से जारी रखें। राष्ट्रीय जीवन में असाधारण नाटकीय कार्यक्रमों का विशेष स्थान और प्रयोजन होता है लेकिन आज उनका महत्व सीमित और सदिग्ध रह गया है क्योंकि हम ऐसी समस्याओं से घिरे हुए हैं जिनके समाधान के लिए समूचे राष्ट्रीय चितन के सर्वोच्च और अविभाजित समर्पण की आवश्यकता है। जनता की हृदय विदारक और सर्वव्याप्त व्यथा असख्य भूखे लोगों के मुह से चित्कार कर रही है, और हममें से कोई भी सहायता के लिए आने वाली इस करूण पुकार को अनसुनी नहीं कर सकता। मैं अभी तक इतनी अधिक अस्वस्थ हू कि राहत के कल्याणकारी कार्य में सक्रिय भाग नहीं ले सकती, शायद इसीलिए मेरे मन में गरीब लोगों की हताश वेदना की चेतना बढ़ती जा रही है और मेरे मन में यह विश्वास दृढ़ होता जा रहा है कि वस्तुत इस समय हमारा स्थायी और एकमात्र कर्तव्य यह है कि हम उनकी निराशाजनक अवस्था को दूर करने के लिए उन्हें कुछ सहारा और ढाढस बधाए। एक स्थायी राष्ट्रीय एकता का निर्माण जनता की सेवा के लिए हार्दिक सहयोग की बुनियाद पर ही किया जा सकता है।"[1]

---

1 सरोजिनी नायडू – ले0 ताराअली बेग पेज 190

यहा उन्होंने 1942 और 1943 के जिन बीजापुर और बगाल अकालों का उल्लेख किया है वे युद्ध के प्रत्यक्ष परिणाम थे क्योंकि अग्रेजों को युद्ध का चक्र चालू रखना था, भारत के पार बर्मा में सैनिक ले जाने थे और सैनिकों को खिलाने के लिए खाद्य-सामग्री भेजनी थी। एक ओर तो खाद्य सामग्री का अभाव था दूसरी ओर जनता के लिए भोजन ढोने को खाली रेलवे वैगन उपलब्ध न थे अत उन्होंने (सरकार ने) बीजापुर के लोगों की बलि देकर बबई के उद्योगों को चालू रखने का निश्चय किया। स्वयसेवी कार्यकर्ता सचमुच बधाई के पात्र हैं कि बीजापुर अकाल में किसी की मृत्यु नहीं हुई लेकिन बगाल में अकाल से मरने वालों की सख्या बहुत अधिक है।[1]

जनवरी 1944 में सरोजिनी ने एक जोरदार भाषण में कहा कि यह कहना सरासर झूठ हैं कि भारत में हिंसा का विस्फोट काग्रेस की योजनाओं के अनुसार हुआ है या यह कि महात्मा गाधी जापान-समर्थक हैं।[2] यह अफवाह इस कारण फैली थी क्योंकि बर्मा में सुभाषचन्द्र बोस के नेतृत्व में आजाद हिंद फौज कार्यरत थी। सरोजिनी नायडू ने घोषणा की, "यदि कोई व्यक्ति यह कहने का (कि गाधीजी जापान-समर्थक हैं) दुस्साहस करता है तो यह बेहूदगी है, झूठ है। जेल से बाहर कार्यसमिति की एकमात्र सदस्या होने के नाते मैं आपको अधिकृत रूप से यह बताना चाहती हू कि जापान समर्थक होने का तो प्रश्न ही नहीं उठता हम निरतर किसी भी विदेशी आक्रमण के विरोधी रहे हैं। भले ही उस पर कोई भी लेबल लगा हो। जो कोई हमारे ऊपर आक्रमण करेगा हम उसका विरोध करेंगे। इस बारे में हमारे बीच किसी प्रकार का मतभेद नहीं है।"[3]

इसके कुछ समय पश्चात ही सरोजिनी अपनी बहन गुन्नू से मिलने लाहौर गयीं।[4] लेकिन पजाब पहुचते ही उन्हें आदेश दिया गया कि वे सार्वजनिक सभाओं में भाषण न दें, जुलूसों अथवा सभाओं में भाग न लें तथा समाचारपत्रों के साथ सबध स्थापित न करें।[5] जब उनसे आदेश पर हस्ताक्षर करने को कहा गया तो उन्होंने

---

[1] सरोजिनी नायडू - ले0 पद्मिनी सेन गुप्ता पेज 59
[2] काग्रेस का इतिहास भाग-2 ले0 पट्टाभिसीता रमैया पेज 126
[3] इडियन रिव्यू खड 45, 1944
[4] हिस्ट्री ऑफ काग्रेस - खड II पृष्ठ 578 (अग्रेजी)
[5] काग्रेस का इतिहास भाग-2 ले0 डा0 वी0पट्टाभिसीता रमैया पेज 127

उसकी पीठ पर लिख दिया कि मुझे मेरे चिकित्सकों ने इस प्रकार का सार्वजनिक कार्य न करने का परामर्श दिया है अत यह आदेश विहित नहीं है। लाहौर से वह कलकत्ता गयीं, उस समय फिर परिवार में कष्ट आ गया, उनका प्यारा छोटा बेटा रणधीर जिसे वह प्यार से मीना कहकर पुकारती थीं, गभीर रूप से बीमार हो गया।

"मीना बहुत ही बहुमुखी प्रतिभा का धनी था वह कोई विख्यात व्यक्ति नहीं था लेकिन उसका व्यक्तित्व ऐसा था कि जो लोग उसे जानते थे उन्हें उससे रोशनी मिलती थी। वह मेधावी और रचनात्मक मस्तिष्क, एक ऐसी व्यापक सस्कृति जिसका उदय पुस्तको से नहीं वरन् जीवन में से होता है और एक ऐसे हृदय का स्वामी था जो इन्द्रधनुष की तरह स्नेह, करूणा और सात्वना की अपरिमित दृष्टि से सम्पन्न था। वह सूक्ष्मदृष्टा, उदार और साहसी था किंतु विधाता का विधान नहीं था कि वह असमय ही काल के कराल गाल में समा जाए।"

सरोजिनी जब पीड़ा के ऐसे समय से गुजर रही थीं तो मई महीने की 6 तारीख को गाधीजी आगाखा महल से रिहा कर दिए गए और कई महीने तक पचगनी में हमारे पारिवारिक घर 'दिलखुश' में विश्राम करते रहे। लेकिन सरोजिनी अपने शोक को एक ओर रखकर 9 अप्रैल को कार्यसमिति की बैठक में भाग लिया। इस अवसर पर 100 महिला सगठनों की ओर से उनका अभिनदन किया गया तथा उन्होंने बगाल अकाल से बचाए गए बच्चों के लिए स्थापित किए गए 'बाल सुरक्षा कोष' की बैठक की अध्यक्षता की। इस सगठन ने आगे जाकर 'इडियन काउन्सिल फार चाइल्ड वैलफेयर' (भारतीय बाल कल्याण परिषद) का रूप ग्रहण कर लिया। उस वर्ष के अत में कलकत्ता में अखिल भारतीय विद्यार्थी सघ की सभा में भाषण करते हुए उन्होंने ठीक ही कहा

"मेरे जीवन की लघु त्रासदियों में से एक यह है कि मेरे मन में इस बात की चेतना है कि हमारी युवा पीढी को पुरानी की मूर्खताओं का भार भी ढोना पड़ रहा है। युवा के मन में शानदार सपने होते हैं, उसकी सामर्थ्य और सभावनाए निस्सीम होती हैं, अत उसे अपने सुरक्षित लक्ष्य को निगाह में रखकर आगे की ओर बढ़ते रहना चाहिए। इसके बजाय इधर उधर एक-दूसरे की ओर देखते रहकर उन्हें अपना समय नष्ट नहीं करना चाहिए।"

उन्होंने आगे कहा "मुझे ऐसा लगता है कि मेरी पीढ़ी ने ऐसी खराब मिसाल पेश की है, युवा पीढी के लोगों के सामने ऐसी आत्मघाती मिसाल रखी है कि वे सिर से पैर तक झगड़ों में डूबे हुए हैं परस्परघाती सघर्ष और साप्रदायिक झगड़ों में उलझे हुए हैं वे मात्र शब्दों पर झगड़ पड़ते हैं। आप अपने देश तथा विश्व की परिस्थिति की वास्तविकता क्यों नहीं स्वीकार कर लेते और स्वतत्रता की ऐसी स्थिति का क्यों नही निर्माण कर लेते जिससे कि आपका देश आपके इस स्वप्न को साकार कर सके कि उसे विश्व के अतर्राष्ट्रीय सघ में सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त हो। जिनके मन में यह विश्वास है कि भारत भारतीयों का है और भारतीयों के सिवाय और किसी का नहीं है वे भारत की मनीषा के साथ धोखा कर रहे हैं क्योंकि भारत की मनीषा सदा से सार्वभौम रही है।

"आप नारा लगाते हैं कि काग्रेस और लीग में एकता की स्थापना हो। शब्दों को सस्ते ढग से मत इस्तेमाल कीजिये। एकता कैसे? आप पर्वत की चोटी पर से एकता नहीं उतार सकते। आप और मैं रोजाना के आपसी सबधों में, एक-दूसरे की सस्कृति की सराहना के द्वारा एकता स्थापित कर सकते हैं क्योंकि वह सस्कृति की सराहना किसी जाति की आत्मा को अभिव्यक्त करती है। उस तत्व का निर्माण करके ही आप हिंदू-मुस्लिम एकता की आशा कर सकते हैं। यह मत कहिए कि भारत मे मानचित्र पर यह तो हिदू भारत है और वह मुस्लिम भारत। नेतागण एकता का निर्माण नहीं कर सकते। सैकड़ों नेपोलियन भी तब तक विजय प्राप्त नहीं कर सकते जब तक कि सेना बहादुर और वफादार न हो। एकता एक पक्षीय नहीं हो सकती। उसे सर्वतोमुखी और व्यापक होना चाहिए। चाहे वह राजनीतिक एकता हो, सामाजिक या अन्य प्रकार की वह तभी सभव है जब कि हम न्याय और समता के अत्यत निष्पक्ष मानदडों के प्रति आस्थावान न हों जिनमें हम आगे जाकर अपनी शक्ति भर उदारता की अधिकतम मात्रा सम्मिलित कर सकते हैं। राजनीतिक एकता का यही बुनियादी अर्थ है।"[1]

[1] इडियन एनुअल रजिस्टर जुलाई-दिसम्बर 1944

उनके अतिम वाक्य में उनके श्रोताओं की पकड़ से कहीं अधिक दार्शनिक तथा मानवीय सभावनाए निहित हैं। किसी भी विवाद में समझौते के अतिम चरण में उदारता ही इतिहास को युद्ध से शाति में बदल डालने की शक्ति प्रदान करती है। परिस्थितिया ऐसी आ गयीं कि यह काल भारत के इतिहास का सबसे अधिक नाजुक काल बन गया और सरोजिनी नायडू एकता के बारे में बोलते समय हृदय उडेल देती थीं। घटनाचक्र तेजी से चरम परिणति की ओर बढ रहा था।

इस दौरान मित्रराष्ट्र उत्तरी अफ्रीका और यूरोप पर हावी हो चुके थे तथा युद्धोत्तर समस्याओं के बारे में चितन आवश्यक हो गया था। यह बात जाहिर थी कि युद्ध में ब्रिटेन बहुत कमजोर हो गया था अत वह शक्ति के बूते पर भारत को दास बनाकर नहीं रख सकता था अत केवल भारत और ब्रिटेन के बीच ही नहीं काग्रेस, मुस्लिम लीग और देशी राज्यों के बीच भी राजनीतिक हल तलाश किए जाने आवश्यक हो गए थे। स्थिति वहा पहुच गयी थी जहा दोनों राजनीतिक दलों के बीच किसी प्रकार का समझौता सभव नहीं रह गया था क्योंकि मुस्लिम लीग पाकिस्तान की स्थापना का प्रस्ताव पास कर चुकी थीं, लेकिन अग्रेजों को लगा कि युद्ध की समाप्ति तक के लिए एक अतरिम सरकार की स्थापना की जा सकती है तथा दोनों दलों के बीच में अतिम समझौते को अभी टाला जा सकता है। प्रारभिक चर्चाओं से यह सकेत मिलता था कि अपने वामपक्षी विचारों के कारण क्रिप्स सबसे बड़े दल काग्रेस को मध्यस्थ के रूप में सबसे अधिक स्वीकार होंगे तथा मुस्लिम लोग उन्हें स्वीकार नहीं करेंगी। लेकिन क्रिप्स मिशन विफल हो गया और क्रिप्स हठी वायसराय लार्ड लिनलिथगो के साथ इग्लैण्ड लौट गए। उनके स्थान पर फील्ड मार्शल वेवेल नए वायसराय बनकर और नए सिरे से प्रयास करने का सकल्प लेकर भारत आए।[1]

जून 1945 में सभी नेताओं को जेल से रिहा कर दिया और प्रथम शिमला सम्मेलन समुद्रतल से 7,000 फुट की उचाई पर शुरु हुआ जिसने चर्चाओं के लिए शात वातावरण जुटाने में कम मदद नहीं की हलाकि चर्चाए सफलतापूर्वक समाप्त नहीं हुई। इस समय आकर जिन्ना के मन में यह विश्वास पूरी तरह दृढ हो गया कि

---

1 काग्रेस का इतिहास भाग-2 ले0 डॉ0वी0 पट्टाभिसीता रमैया पेज 132

काग्रेस का नेतृत्व विशेषत हिदू-नेतृत्व कभी भी निष्पक्ष नहीं हो सकता और मुसलमानों के लिए इस देश में अल्पसख्यकों के रूप में सुखद भविष्य नहीं बन सकता। वह अपने द्विराष्ट्र सिद्धात-हिदू भारत और मुस्लिम पाकिस्तान से टस से मस होने को तैयार न थे, उधर गाधीजी एक सयुक्त और लौकिक (धर्मनिरपेक्ष) भारत के सिवाय दूसरी किसी स्थिति को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं थे जिसमें कि केवल मुसलमान ही नहीं समस्त अल्पसख्यक अपनी भूमिका अदा करने के लिए स्वतत्र होते ।

जिन्ना के साथ चर्चा के अतिम दिन जवाहरलाल नेहरू को उन मित्रों के यहा व्यालू करना था जिनके साथ सरोजिनी ठहरी थीं। वह पैदल चलकर ही पहाडी से नीचे आए और देर से पहुचे। उनके मेजबानों ने बताया कि वह सिर झुकाये हुए और उदास मन से अहाते में घुसे और जब उन्होंने उनका अभिवादन किया तो बोले, "वह आदमी एक ही विचार से पीड़ित है, वह एकदम एकोन्माद से ग्रस्त है। अब हम और कुछ भी नहीं कर सकते।"

राजनीतिक घटनाए भारत के विभाजन की दिशा में बढती चली गई और उसे टाला नहीं जा सका। 15 अगस्त, 1947 को भारत विभाजित हो गया। जून 1945 में प्रथम शिमला सम्मेलन की विफलता से थोड़ा ही पहले ब्रिटेन में श्रमदल ने चुनाव जीत लिए थे। नए प्रधानमत्री एटली ने लॉर्ड पैथिक लारेंस को मत्रिमडल के दो अन्य सदस्यों के साथ द्वितीय शिमला सम्मेलन में नई योजना की चर्चा के लिए भारत भेजा। ब्रिटेन की ससद द्वारा भेजे गए शिष्टमडल केबिनेट मिशन और लॉर्ड वेवेल के मन में अविभाजित भारत की कल्पना थी तथा जब प्रथम चर्चा विफल हो गई तो उन्होंने जिन्ना के सामने यह प्रस्ताव रखा कि भारत को सघ बनाया जाए जिसमे केन्द्रीय सरकार के पास केवल प्रतिरक्षा, वैदेशिक सबध्र और यातायात होगा तथा प्रातीय सरकारों अन्य सभी विषयों के लिए जिम्मेदार होंगी एव वे अपने समूह बना लेंगी जिनकी अपनी कार्यपालिका और विधानमडल होंगे। मूल विचार यह था कि देश का प्रशासन चलाने के लिए एक पूर्णतया भारतीय अतरिम सरकार की स्थापना की जाए। सोचा यह गया था कि यह योजना प्रमुख पक्षों को स्वीकार्य होगी तो उनके

प्रतिनिधियों को मिलाकर, एक अतरिम सरकार स्थापित की जाएगी और इस बीच सविधान सभा नया सविधान तैयार कर लेगी।

लेकिन जब वाइसराय ने काग्रेस के नेताओं को यह कहा कि उनके प्रतिनिधियों में कोई भी मुसलमान नहीं होना चाहिए तो काग्रेस ने यह प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया। तथापि, लीग ने प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। वाइसराय ने महसूस किया कि काग्रेस के प्रतिनिधियों के बिना अतरिम सरकार का कोई अर्थ और उपयोग नहीं होगा अत उन्होंने उसका निर्माण टाल दिया लेकिन यह घोषणा कर दी कि सविधान सभा के चुनाव पूर्ववत कराए जाएगे। इस पर जिन्ना ने गभीर आपत्ति उठायी और स्वीकृति वापस ले ली।

यद्यपि वाइसराय और ब्रिटेन की श्रम-सरकार ने अत तक भारत की एकता को बचाये रखने की कोशिश की तथापि जिन्ना ने यह घोषणा कर दी कि भारत के विभाजन का कोई विकल्प नहीं हो सकता और उन्होंने भारत भर के मुसलमानों से कहा कि वे 16 अगस्त 1946 को प्रत्यक्ष-कार्यवाही दिवस मनाए। भारत के अनेक भागों में वैमनस्य की ज्वाला सुलग उठी। भारत के इतिहास में हिंदू-मुस्लिम सबध इतने निम्न बिदु पर कभी नहीं उतरे थे। कलकत्ता के विराट हत्याकाण्ड की अनुगूज बिहार में हुई जहा हिंदुओं ने मुसलमानों से बदला लिया। दगों का प्रभाव बगाला पर विशेष रूप से पड़ा और गाधीजी ने पूर्वी बगाल के क्षेत्रों विशेषत नोआखली की यात्रा करने का निश्चय किया जहा भयानक नरमेध हुआ था। सरोजिनी 1946 के अत में शातिनिकेतन से गाधीजी को लिखा

"यह पत्र नहीं है बल्कि स्नेह और निष्ठा का पुष्टिकरण है। प्रिय तीर्थयात्री प्रेम और आशा की तीर्थयात्रा पर जाते समय स्पेनिश भाषा के सुन्दर मुहावरे के अनुसार 'ईश्वर के साथ जाओ'। मेरे मन में तुम्हारे लिए कोई आशका नहीं है, केवल तुम्हारे मिशन में आस्था है।"[1]

वह इस बात को बहुत भली प्रकार समझती थीं कि गाधीजी की आत्मा को कितना अकेलापन महसूस होगा क्योंकि जिस भारत के लिए उन्होंने वर्षों तक एक

---

1 माई डेज विद गांधी – निर्मल कुमार बोस, 1953

साथ कार्य किया और बलिदान किए वह अब उनकी मुट्ठी से फिसल चुका था। गाधीजी निर्भीक थे, वह यह बात जानते थे कि और सरोजिनी भी जानती थीं कि उनके जीवन से कहीं अधिक उनके आदर्श सकट में थे। वह केवल इतना कर सकते थे कि लोगों के बीच जाए, उनके बीच रहें और अपने उदाहरण से उनके बीच बधुत्व की भावना लौटाने की चेष्टा करें। लेकिन अब तो बहुत देर हो चुकी थी।

अतत एक अतरिम सरकार की स्थापना हो गई जिसमें मुस्लिम लीग भी शामिल हुई, लेकिन उसका प्रयोजन नए वाइसराय लार्ड माउन्टबैटन की अध्यक्षता में भारत के विभाजन की प्रक्रिया और कार्यक्रम तैयार करना था। 15 अगस्त, 1947 को दो नये राज्यों की स्थापना हुई और भारत में काग्रेस ने सरकार बनाई तथा स्वतत्र भारत का सविधान सभा का गठन किया।

सविधान सभा में 11 दिसम्बर 1946 की कार्यवाही के निम्न अश से यह पता चलता है कि सरोजिनी ने सार्वजनिक जीवन में क्या भूमिका अदा की सभापति (डॉ0 सच्चिदानन्द सिन्हा) अब मैं बुलबुले हिन्द से प्रार्थना करूँगा कि वह इस सदन को गद्य में नहीं पद्य में सबोधित करें। (हसी और तालिया) (उसके बाद सरोजिनी नायडू तालियों की गड़गड़ाहट के बीच मच पर गई) सरोजिनी नायडू (बिहार आमसीट) श्री सभापति महोदय, आपने मुझे जिस प्रकार सम्बोधित किया है वह सवैधानिक नहीं है। (हसी) सभापति (डॉ0 सच्चिदानन्द सिन्हा) शाति, शाति[1] कृपा करके सभापति के प्रतिकूल कुछ न कहें। (देर तक हसी)

श्रीमती सरोजिनी नायडू यहा मुझे कश्मीरी कवि की कुछ पक्तिया याद आ रही हैं

"बुलबुल को गुल मुबारक गुल को चमन मुबारक,
रगीन तबियतो को रगे सुखन मुबारक।"

और आज हम अपने महान नेता तथा साथी राजेन्द्रप्रसाद की प्रशस्ति में चल रहे भाषणों की इन्द्रधनुषी छटा में मज्जन कर रहे हैं। मेरी समझ में नहीं आता कि काव्यात्मक कल्पना भी इन्द्रधनुष को कोई और छटा कैसे प्रदान कर सकती है। अत

[1] सरोजिनी नायडू – ले0 ताराअली बेग पेज 197

ने अपनी महान वक्तृता द्वारा सम्मोहित किया है, वह अब दृश्य स्थल से गायब हो गए मालूम होते हैं।

सर्वपल्ली राधाकृष्णन नहीं, नहीं। मैं यहा हू।

सरोजिनी नायडू उन्होंने हमें बहुत शक्तिशाली शब्दों में ज्ञान की बातें बताई हैं। अन्य वक्ताओं ने भी जो भिन्न प्रान्तों, सप्रदायों, धर्मो तथा जातियों के प्रतिनिधि हैं, सुन्दर भाषण दिए। "मैं इस सदन में कुछ रिक्त स्थान देख रही हू और मेरा हृदय अपने उन भाइयों की अनुपस्थिति पर दुखी है जो मेरे पुराने मित्र मोहम्मद अली जिन्ना के अनुयायी हैं मुझे आशा है कि मेरे मित्र डॉ0 अम्बेडकर शीघ्र ही इस सविधान सभा के प्रबल समर्थकों में शामिल हो जाएगे और उनके करोड़ों अनुयायी अपने हितों को अधिक सुविधासपन्न वर्गो की भाति ही सुरक्षित पाएगे। मुझे आशा है कि जो लोग अपने आपको भारत का मूल स्वामी मानते हैं यानी जनजातियों के लोग, वे यह महसूस करेंगे कि इस सविधान सभा में जाति, धर्म तथा प्राचीन या अर्वाचीन का भेद नहीं है। मुझे आशा है कि इस देश के छोटे से छोटे अल्पसख्यक समाज के लोग भी यह महसूस करेंगे कि उनके हितों का एक उत्साही, कठोर और प्रेमल सरक्षक है जो किसी भी महानतम शक्ति को इस देश में समानता और समान अवसर के जन्मसिद्ध अधिकार का उल्लघन करने की अनुमति नहीं देगा।"

उस जमाने के सन्दर्भ में उनका अगला वाक्य बहुत महत्वपूर्ण है "मुझे यह भी आशा है कि भारत के देशी नरेश, जिसमें मेरे अनेक मित्र हैं तथा जो बहुत चिन्तित, बहुत अनिश्चित और बहुत भयाक्रात हैं, यह महसूस करेंगे कि भारत का सविधान भारत के प्रत्येक मनुष्य की स्वतत्रता और मताधिकारपूर्ण नागरिकता के सविधान हैं, भले ही वह राजकुमार हों या किसान।"

उनका यह भाषण अतिम था जिसके अन्त में उन्होंने कहा "इसमें कोई सन्देह नहीं है कि मेरा भाषण अतिम भाषण है, इसका कारण यह नहीं है कि मैं एक महिला हू वरन इसलिए क्योंकि आज मैं काग्रेस की ओर से मेजबान की

हैसियत से काम कर रही हू और मैंने उन सब लोगों को उस सविधान के निर्माण में जो भारत की स्वाधीनता का अमर घोषणापत्र होगा। हमारे साथ भाग लेने के लिए प्रसन्नतापूर्वक आमन्त्रित किया है।"[1]

67 वर्ष की अवस्था में सरोजिनी हमेशा की तरह सक्रिय थीं तथा उनमें साहसपूर्ण और प्रभावशाली भाषण की क्षमता थी लेकिन पहले की तरह उनके मन में एकता की निस्सक आस्था नहीं रही थी। जीवन के अनुभवों ने उन्हें कटु अर्न्तदृष्टि प्रदान की थी, उन्होंने कटु सत्यों का सामना किया और उन्हें कटुतापूर्ण अनुभव हुए जो अब इतिहास का अग बन गये हैं। पी0ई0एन0 (इटरनेशनल एसोशिएशन ऑफ प्लेराइट्स, एस्सेइस्ट्स एण्ड नावेलिस्ट्स नाटककारों, सम्पादकों, निबन्ध लेखकों तथा उपन्यासकारों का अर्तराष्ट्रीय सघ) की अध्यक्षा सोफिया वाडिया, पी0ई0एम0 सम्मेलन की अध्यक्षता करने के लिए जब ब्यूनर्स आयर्स की तीन महीने की यात्रा पर जाने लगीं तो उनको विदाई दी गई, सरोजिनी ने कहा "ऐसे सम्मेलन के लिए भारत को विशेष सदेश भेजना चाहिए। भारत हमेशा शाति की शक्ति का समर्थक रहा है, लेकिन जैसा कि गाधीजी ने कहा है, वह शान्ति मौत की शाति नहीं, न वह पत्थर की निष्क्रिय शान्ति है, वह ऐसी शान्ति है जो प्रशिक्षित दृष्टिकोण से प्राप्त होती है, वह उन श्रेष्ठ हृदयों की शान्ति है जो सुन्दरतम के साथ तदात्म्य के फलस्वरूप शुद्ध हो चुके हैं। विश्व के प्रति भारत का यही सदेश है सब प्राणियों की एकता और हम चाहते हैं कि वे उन्हें बतायें कि उन समस्त साहित्यों का सम्पूर्ण प्रयोजन और अर्थ राष्ट्र की आत्मा को उन्नत करना रहा है और यह भी बतायें कि भारतीय साहित्य की सर्वोच्च और सुन्दरतम अवस्था जो कालातीत है और जो आने वाले कल के विहान जैसी ताजा और विश्व के सबसे पुराने सवेरे जैसे पुरानी है, तभी तक एक ही सुन्दर शब्द में निहित है शान्ति। शान्ति। शान्ति।"[2]

उन्होंने अपने घरेलू और पारिवारिक जीवन की बलि देकर अपनी जिस दुनिया को अपना समूचा जीवन दे डाला था उसके प्रति अपनी निराशा उन्होंने इन शब्दों में व्यक्त की "हम सबने सारे ससार में राजनीतिज्ञों की विफलता देखी है, हम सबने

---

[1] सरोजिनी नायडू – ले0 तारा अली बेग पेज 198
[2] सरोजिनी नायडू – ले0 तारा अली बेग पेज 199

वचन दिए जाने के समय ही उनके उल्लघन की त्रासदी देखी है, हम सबने राष्ट्र की विराट राजनीतिक सत्ता का उपयोग उसके द्वारा पहुचाई गई क्षति की पूर्ति में नहीं वरन् राजनीतिज्ञों द्वारा अपने कार्यो को सही सिद्ध करने में होते देखा है।" अब उनके पास स्वप्नद्रष्टा और अध्यात्मद्रष्टा की उच्च दृष्टि ही बच गई थीं, लेकिन वह इतनी यथार्थवादी थीं कि उन्होंने यह समझ लिया था कि वह उन आदर्शो को सत्ताधारियों के सामने केवल पेश ही कर सकती हैं उनके पास यह शक्ति नहीं कि वे राजनीतिज्ञों को सतों में बदल दें।

22 मार्च, 1947 को नई दिल्ली में एशियाई सबध सम्मेलन (एशियन रिलेशन्स कान्फ्रेंस) की अध्यक्षता सरोजिनी नायडू के जीवन शिखर का शीर्ष था। उनकी पीठ के पीछे एशिया का एक महान मानचित्र टगा था[1] और उन समस्त देशों के सैकड़ों विशिष्ट व्यक्ति और प्रतिनिधि (जिनमें से अनेक तब तक साम्राज्यवादी शासन के अतर्गत जी रहे थे) उनके सामने बैठे थे। सम्राज्ञी जैसी गरिमा और शालीनता के साथ अध्यक्षता करते हुए उन्होंने अपना अध्यक्षीय भाषण इस प्रकार आरम्भ किया "एक मित्र ने मुझे याद दिलाया है कि बाइबिल में एक कथन है कि पूर्व के राष्ट्रों का एक विराट सम्मेलन होगा जो मानवजाति के इतिहास में एक नये युग के विहान का प्रतीक बनेगा। मेरे लिए यह कहना बहुत अहमन्यतापूर्ण प्रतीत हो सकता है कि पूर्व के राष्ट्रों का यह सम्मेलन जो मैंने बुलाया है एक नये युग का प्रवर्तक होने वाला है। लेकिन फिर भी मुझे आशा है कि मैंने भारत की ओर से एशिया की जनता के प्रति जो मैत्री भाव प्रकट किया है उससे महान परिणाम आयेंगे। हमारा प्रयोजन क्या है? हमारा आदर्श क्या है? हमारा आदर्श एशिया में एक बृहत्तर प्रयोजन के लिए बुनियादी कदम उठाना है। वह प्रयोजन है मानवजाति की सेवा के महान उद्देश्य के लिए शाति, समन्वय और सहयोग। यहा हमारा सबध आतरिक विवादों अथवा सघर्षो से नहीं है, इस सम्मेलन का विषय आतरिक राजनीति अथवा विवादास्पद अतर्राष्ट्रीय राजनीति नहीं है, हमारा सबध एशियाई देशों की प्रगति के सर्वनिष्ठ आदर्श सेही है। यह प्रगति सामाजिक और आर्थिक प्रगति हैं, इसके ही आधार पर एक स्थायी राजनीतिक सफलता प्राप्त हो सकती है। हम एशिया के लोग

---

1 सरोजिनी नायडू - ले0. पदिमनी सेन गुप्ता पेज 74

सकटों से पराजित और किसी भी बात से निरूत्साहित हुए बिना एक साथ आगे बढेंगे क्योंकि मुझे विश्वास है कि जो कुछ मगलकारी है वह नष्ट नहीं हो सकता। मेरे पिता ने जो इस ससार के एक महान पुरुष थे अपनी मृत्यु के समय ये अतिम शब्द कहे थे 'न जन्म होता है, न मृत्यु, केवल आत्मा है जो जीवन के उच्चतर और उच्चतम स्तरों में विकास खोज रही है।"[1] उनके पूर्वजों अर्थात् भारत के ब्राह्मणों का यह दर्शन उनके जीवन के शेष तीन वर्षो में उनका सहारा बना। 3 अगस्त, 1947 को बाम्बे क्रॉनिकल ने नये औपनिवेशिक और प्रातीय प्रमुखों को सरकारी घोषणा प्रकाशित की

"भारत और पाकिस्तान के महाराज्यपालों (गवर्नर जनरलों) तथा भारत के पाच और पाकिस्तान के तीन प्रातों के राज्यपालों की नियुक्ति की घोषणा आज रात को की गई है। "रियर एडमिरल माउन्टबेटन ऑफ बर्मा (वर्तमान वायसराय) भारत उपनिवेश के गवर्नर जनरल होंगे, मुहम्मद अली जिन्ना पाकिस्तान उपनिवेश के गवर्नर जनरल।"

समाचार में आगे कहा गया था "ऐसा विश्वास किया जाता है कि जब तक डॉ0 बिधानचन्द्र राय सयुक्त राज्य अमरीका से वापस नहीं आते तब तक के लिए सरोजिनी नायडू ने सयुक्त प्रात की राज्यपाल बनना स्वीकार कर लिया है।"[2] सरोजिनी के प्रिय चिकित्सक डा0 विधानचन्द्र राय एक भारी भरकम शरीर और व्यक्तित्व के धनी थे, उनकी आखों में कुछ कष्ट था और वह चिकित्सा के लिए अमरीका गये हुए थे। वहीं जवाहरलाल नेहरू ने फोन पर इस चिकित्सक राजनीतिज्ञ से यह भार सभालने को कहा लेकिन उन्हें लगा कि यह कार्य उनके स्वभाव के अनुकूल नहीं है और कहा कि फिर भी यदि आप (जवाहरलाल जी) इसे आवश्यक ही समझते हैं तो मैं इस भार को अस्थायी तौर पर सभाल लूगा। सरोजिनी की प्रतिक्रिया भी यही थी। बॉम्बे क्रानिकल ने लिखा कि कार्यकारी राज्यपाल का पद सभालते समय उन्होंने प्रेस से कहा कि "आप जगली चिड़िया को पिजरे में बन्द कर रहे हैं।"[3]

---

[1] सरोजिनी नायडू – ले0 पद्मिनी सेन गुप्ता पेज 70
[2] सरोजिनी नायडू ले0 ताराअली बेग पेज 200
[3] बाम्बे क्रानिकल 8 1947

15 अगस्त को भारत की स्वतत्रता के पश्चात् भारत लौटने पर बिधानचन्द्र राय यह देखकर प्रसन्न हुए कि "सरोजिनी नायडू अपनी नयी स्थिति में पूरी तरह प्रसन्न थीं और अपने कर्तव्य ठीक से निबाह रही थीं।" पश्चिमी बगाल काग्रेस कमेटी के अभिलेखों से ऐसा आभास मिलता है कि डॉ0 राय ने उत्तर प्रदेश के राज्यपाल पद से त्यागपत्र देने का निश्चय कर लिया था। इस प्रकार अनायास ही सरोजिनी नायडू भारत के सबसे बड़े राज्य की राज्यपाल बन गई। वह प्रथम महिला राज्यपाल थीं।

इतना ही नहीं, अन्य कोई भी राज्य 15 अगस्त 1947 को भारत की स्वाधीनता की ऐसी कलात्मक घोषणा प्राप्त नहीं कर सकता था, और न उसे नये राज्यपाल का ऐसा रगीन शपथग्रहण समारोह ही प्राप्त हो सकता था। उस समारोह में सरोजिनी ने यूरोपियन पोशाक पर पाबदी लगा दी थी। अत विविध भारतीय पोशाकों और पगड़ियों-टोपियों में वह दृश्य निजाम के पुराने दरबारों की याद ताजा करता होगा। दरबारी नर्तकों-नर्तकियों के स्थान पर देश के समस्त धर्मो के ग्रथों से पाठ हुए। उनके लिए यही उपयुक्त था क्योंकि उनके लिए सब धर्म समान थे। नये राज्यपाल यके शपथ ग्रहण के समय सिख, मुस्लिम, जैन, बौद्ध, हिंदू तथा ईसाई प्रार्थनाए गाई गई।

यह भी एक विचित्र बात रही है कि हिंदी के सबसे अधिक हिमायती राज्य में प्रथम राज्यपाल ने 15 अगस्त 1947 को अग्रेजी में अपना हृदयस्पर्शी भाषण दिया। उस ऐतिहासिक दिवस पर जनता को सबोधित करते हुए उनकी गहरी भावनाओं को आसानी से समझा जा सकता है "हे ससार के स्वतत्र देशों। अपनी स्वतत्रता के दिन आज हम भविष्य में तुम्हारी स्वतत्रता के लिए प्रार्थना करते हैं। हमारा सघर्ष ऐतिहासिक रहा है, वह अनेक वर्षो तक चला और उसमें बहुत से प्राणों का बलिदान हुआ। यह एक सघर्ष रहा है, एक नाटकीय सघर्ष। यह वीरों का एक ऐसा सघर्ष रहा है जो अपने देश के कोटि-कोटि जनों के बीच अनाम है।"[1] यह महिलाओं का सघर्ष रहा है जो स्वय वह शक्ति बन गई थीं जिसकी वे उपासना करती हैं। यह युवा का

---

[1] सरोजिनी नायडू – उमा पाठक पेज 110

सघर्ष रहा है जो अचानक शक्ति में रूपातरित हो गया। यह युवकों, वृद्धों, धनियों, निर्धनों, शिक्षितों, अशिक्षितों, रोगियों, अछूतों, कोढियों और सतों का सघर्ष रहा है।

"हम अपने कष्टों की कुठाली में से आज नये सिरे से जन्म लेकर उठे हैं। विश्व के राष्ट्रों! मैं भारत के नाम पर तुम्हारा अभिनदन करती हू, अपनी मा के नाम पर, अपनी उस मा के, जिसके घर पर हिम की छत है, जिसकी दीवारें सजीव समुद्रों की हैं, जिसके दरवाजे तुम्हारे लिए सदा खुले हैं। मैं इस भारत की स्वतत्रता समस्त ससार के लिए प्रदान करती हू यह अतीत में कभी नहीं मरा, यह भविष्य में कभी नष्ट नहीं होगा और यह ससार को अतत शाति की दिशा में ले जायेगा।"[1]

सरोजिनी के सपनों के भारत-सशक्त, आश्रयदात्री, सवेदनशील मा का पुनर्जन्म हो गया, किंतु मा के बच्चे अनुशासनहीन बने रहे, उन्होंने अपना ध्यान राष्ट्रीयता के एक तत्व पर केंद्रित नहीं किया और वे आपस में बटे रहे। इस बात की चेतना उत्तर प्रदेश के उस राज्यपाल से अधिक और किसी के मन में न थी। वे उस राजभवन में अपनी तुलना पिजरे के पछी से करती थीं, यह उपाधि उस उपाधि के सदर्भ में उपयुक्त ही प्रतीत होती है जो उन्हे महात्मा गाधी ने दी थी - "भारत कोकिला। और जहा एक सरकारी सस्थान को एक सुदर घर में बदल डाला था और एक सत्कार और स्वागतपूर्ण सरकारी निवास को महत्ता और गरिमा का केन्द्र बना दिया था, वहीं उनके अनेक भाषण और पत्र यह सिद्ध करते हैं कि उनका हृदय देश की जनता के लिए व्यथित था।"[2]

उस सुव्यवस्थित भवन में आने-जाने वाले असख्य अतिथियों को इस व्यथा का बोध कभी नहीं हो पाता था। वे प्राय उन्हें विस्तृत बरामदे में धूप में बैठे जासूसी कहानियों पढते अथवा रगीन चाय समारोहों की अध्यक्षता करते और मित्रों तथा भेंटकर्ताओं को विनोद और परिहास से परिपूर्ण कहानिया अथवा चुटकुले या सस्मरण सुनाकर उनका मनोरजन करते देखते थे। वे दिन असख्य मित्रों को अब भी याद आते हैं। वे उनकी सुदर मेज और शानदार भोजन, सज्जा की भारतीय शान-शौकत तथा राजभवन के उन कर्मचारियों के बारे में चर्चा करते हैं जो उन्हें बहुत प्यार करते

---

[1] सरोजिनी नायडू - ताराअली बेग पेज 202
[2] सरोजिनी नायडू - उमा पाठक पेज 115

थे और राजभवन को उसकी व्यवस्थित और गरिमामय रीति से सजाये रखते थे। जिस तरह पूर्ववर्ती अग्रेज स्वामियों के लिए सजाते थे। यह बात सर्वविदित है कि जिन कर्मचारियों ने अग्रेजों की सेवा की थी उनकी मनोवृत्ति प्राय ऐसी दासतापूर्ण हो जाती थी कि वे भारतीय स्वामियों को निरादर की दृष्टि से देखने लगते थे, लेकिन सरोजिनी शासन ही नहीं कर सकती थीं वह स्नेह भी उगा लेती थीं। राज्यपाल के रूप में उनके स्वभाव के उस पक्ष की तुष्टि के लिए पर्याप्त विस्तृत क्षेत्र प्राप्त हो जाता था जिसके अतर्गत वह सौंदर्य, सत्कार और मनोरजन करना पसद करती थीं। कुछ लोग कहते हैं कि अपने अतिम दिनों में वह एकातप्रिय हो गई थीं। इसके विपरीत कुछ लोग यह कहते हैं कि बचपन में वह अपने पिता के दरबार का मनोरजन किया करती थीं और यद्यपि वह वैभव के मामले में निजाम को मात नहीं कर सकती थीं तथापि वह अपने साम्राज्य के सत्कार को अपरिमित रूप में हार्दिक और राजसी बनाने में अधिक सफल रहीं। एक बात बहुत स्पष्ट है कि उन्होंने अपने स्वभाव को बनाये रखा। जब जेल में या झोपड़ी में वह वहा की परिस्थिति को आत्मसात कर लेती थीं और वहा जो कुछ उपलब्ध होता था उसी से काम चला लेती थीं तब साम्राज्ञी की भूमिका पाने पर तो उनका साम्राज्ञी हो जाना स्वाभाविक ही था। मानव के रूप में उनकी प्रतिभा सर्वतोमुखी और लचीली थी, लेकिन उनमें सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि उनका व्यक्तित्व उनका नितात अपना था।

केन्द्रीय शिक्षा बोर्ड की बैठकों के दौरान मौलाना आजाद, हुमायू कबीर और अन्य अनेक मित्र लखनऊ के राजभवन में ठहरते थे। सरोजिनी भाषा के प्रश्न पर बहुत चिंतित थीं और वह यह भी जानती थीं कि उनके शिक्षामत्री हिंदी के कितने बड़े हिमायती थे और वे चाहते थे कि हिंदी को उर्दू और अग्रेजी दोनों का स्थान प्राप्त हो। उत्तर प्रदेश उर्दू का घर था और जहा तक मालूम होता है उसके भविष्य के बारे में बहुत अनिश्चितता थी। भाषा वस्त्रों की तरह ही व्यक्ति की निजी चीज होती है। इससे भी अधिक बात यह कि मानव जीवन में भाषा सस्कृति और जीवन के लिए बहुत महत्वपूर्ण होती है। यही कारण है कि भाषा के प्रश्नों को लेकर चिन्ता और प्रतिरोध के बड़े तूफान उमड़ पड़ते हैं। जहा उनके मत्री हिन्दी का समर्थन कर रहे थे

होने के दौर से गुजर रहे हैं। इस नये भारत का निर्माण कौन करेगा? इस नये भारत के विधायक कौन होंगे? उस जादुई दुनिया का निर्माण कौन करेगा जिसमें समस्त समस्याओं का समाधान हो जाये, समस्त अन्याय समाप्त हो जाये, समस्त भेदभाव तिरोहित हो जायें, और जिसमें युवक और युवतिया, कदम-से-कदम मिलाकर नये विश्व के उन मुक्त युवाओं में शामिल होने के लिए आगे आए जो अपने झडे और अपनी स्वतत्रता के पीछे निहित तत्वों के प्रति अभ्यस्त हो चुके हैं।''

इसकी कम ही सभावना है कि उन्होंने उस दिन जो बहुत स्पष्ट बातें कही थीं उन्हें उनके किसी भी श्रोता ने पूरी तरह समझा हो, उनमें से एक बात यह थी ''मानव जाति के लिए स्वतत्रता सबसे बड़ा दायित्व है'' उस काल की उन्नयनकारी हवा में जब स्वतत्रता की मादकता ने बूढों और जवानों को मदहोश कर रखा था ऐसे कम ही लोग थे जिनके मन में सरोजिनी की तरह इस बात का अहसास हो कि हमारी स्वतत्रता भविष्योन्मुखी होने के बजाय अतीतोन्मुख है अत उसके परिणाम कटु हो सकते हैं और यह भी कि हमारे देश की जनता निरतर शासित रहने की अभ्यस्त होने के कारण महज प्रतिरोध और विद्रोह की स्वतत्रता का उपयोग करना जानती हैं, उसे त्याय, सहिष्णुता और शासन करने के लिए आवश्यक बुद्धिमत्ता का बोध नहीं है। उन्होंने उस स्मरणीय दीक्षात भाषण में आगे कहा

'' प्रत्येक पीढी का जीवन एक खाली मदिर है जिसके भीतर ईश्वर की प्रतिमा स्थापित करने के लिए देवताओं की आवश्यकता होती है। आप लोग जिन्होंने आज डिग्रिया प्राप्त की हैं इस बात को समझें कि ज्ञान अपने आप में तब तक एक सूखी चीज है जब तक आप उस प्रतिज्ञा को जो आज आपने दीक्षादान के समय ली है कि आप मानवजाति की प्रगति के लिए भरसक प्रयास करेंगे अपनी दैनिक प्रार्थना, दैनिक सभाषण, दैविक कर्म का अग नहीं बना लेते तब तक आपका ज्ञान किसी काम का नहीं है। मानवजाति की सेवा का जो व्रत आपने लिया है उसके प्रति यह तो विश्वासघात होगा कि आप अपनी डिग्रियों और अपने डिप्लोमा का उपयोग महज अपने लाभ के लिए करें। मैं ऐसा महसूस करती हू कि भारतीय युवा के कर्तव्य का एक बड़ा भाग एक स्वाभिमानी अविभाजित भारत, एक प्रगतिशील भारत, एक

अविभाजित भारत और एक सही दृष्टिकोण वाले भारत के इतिहास का नव-निर्माण करना है।''

और अत में उन्होंने कहा ''मैंने जीवन भर आप पर प्यार बरसाया है और मैं जैसे-जैसे वृद्ध होती जाती हू वैसे-वैसे मन में यह विश्वास दृढ होता जाता है कि ससार के युवा मेरे सपनों को, मेरे अधूरे सपनों को पूरा करेंगे। हम विभाजन की नहीं एकता की बात करें, हम घृणा की नहीं प्रेम की बात करें, हम अधिकारों की नहीं साथीपन की बात करें, हम श्रेष्ठ और सुन्दर रीति से कर्तव्यों के परिपालन की बात करें।''[1]

उस दीक्षात भाषण के केवल एक महीने बाद 30 जनवरी, 1948 को सरोजिनी के जीवन के प्रेरक, सहयोगी, प्रिय गुरु और शिक्षक महात्मा गाधी की गोली मारकर हत्या कर दी गयी। उनकी मृत्यु से सारे ससार को धक्का लगा क्योंकि उनकी मृत्यु भी उतनी ही अर्थवती थी जितना सार्थक उनका जीवन था उस दिन दिल्ली में जो नाटकीय घटना हुई वह मानवीय अस्तित्व का एक ऐतिहासिक नाटक बन गया जिसमें जीवन, मृत्यु, श्रेय, दुर्जनता और अतिम बलिदान द्वारा सद् की विजय, ये सभी तत्व उभरकर सामने आ गए। सरोजिनी ने उनके प्रति अपनी हृदयस्पर्शी श्रद्धाजलि में दु ख प्रकट करने पर समय नष्ट नहीं किया। वह त्रासदी इतनी विराट थी कि उसमें दु ख मनाना बहुत छोटी बात होती। वह उनकी शक्ति के बारे में बोलीं, उस व्यक्ति की शक्ति के बारे में जो इतना सत था, देहातीत था, इतना नम्र था, मरते समय जिसके पास कुछ न था, जो निहायत कमजोर था, साथ ही जिसकी शक्ति अतुल अपरिमेय थी और उसने जिस शक्ति का प्रयोग किया सम्राट भी उससे परिचित न थे। उन्होंने बताया कि यह सब इस कारण था क्योंकि ''वह प्रशसा की परवाह नहीं करते थे, वह निदा की भी परवाह नहीं करते थे। वह केवल उन आदर्शों की परवाह करते थे जो उन्होंने सिखाये और जिन पर उन्होंने आचरण किया। और हिंसा तथा मनुष्य के लोभ में से उत्पन्न होने वाले अत्यत भयकर सकटों में भी, जब युद्धस्थल पर सूखी पत्तियों और मुरझाये फूलों की तरह मनुष्यों

---

[1] सरोजिनी नायडू - ले0 ताराअली बेग पेज 206

की लाशों के ढेर लग गये तब भी उनकी आस्था अहिंसा के अपने सिद्धान्त से तनिक नहीं डिगी। उनके मन में यह विश्वास था कि भले ही सारा ससार आत्महत्या कर डाले और सारे ससार का रक्त बह उठे, तब भी उनकी अहिंसा ससार की नयी सभ्यता की प्रामाणिक आधारशिला सिद्ध होगी, और उनके मन में यह आस्था थी कि जो जीवन की खोज करेगा वह उसको खो बैठेगा और जो जीवन को खो देगा वह उसे पा जायेगा।'' ईसा मसीह की तरह उनके सामने प्रेम के सिद्धात का कोई विकल्प न था क्योंकि इस धरती पर मनुष्य का जीवन सीमित है, लेकिन उस अल्पकाल में भी प्रेम का पाठ सीखा जा सकता है। और, ईसा की ही तरह मृत्यु हिसा से हुई जिसके कारण मानवमात्र का हृदय चीत्कार कर उठा।

ऐतिहासिक दृष्टि से गाधीजी की मृत्यु कटुतापूर्ण घृणा के वातावरण में हुई। विभाजन ने लोकमानस पर भीषण घाव छोड़े थे। भारत और पाकिस्तान, दोनों नये राज्य दिग्भ्रात थे और उन पर जो दायित्व आ पड़ा था उसके लिए वे नये थे। ऐसी अनिश्चित परिस्थितियों में आशकाए और घृणा, अतिशयता और अविवेक की सीमाओं को स्पर्श करने लगती हैं और जो लोग कभी भाई की तरह रहे होते हैं वे घृणा और अविश्वास से टूट जाते हैं तथा एक दूसरे के प्रति शत्रुओं जैसी घृणा से भी अधिक भयकर घृणा करने लगते हैं। गाधीजी की हत्या के आघात ने दोनों ओर बढती हुई घृणा के उस ज्वार को अवरूद्ध कर दिया।[1]

राष्ट्र के नाम अपने सदेश में सरोजिनी ने 1 फरवरी, 1948 को कहा ''उनका सर्वप्रथम उपवास जिसके साथ मैं भी जुड़ी थी 1924 में हिंदू-मुस्लिम एकता के लिए था, लेकिन उसके प्रति सारे राष्ट्र की सहानुभूति थी। उनका अतिम उपवास भी हिंदू-मुस्लिम एकता के लिए था लेकिन उसके प्रति सारे राष्ट्र की सहानुभूति नहीं थी। राष्ट्र इतना विभाजित, इतना कटु, घृणा और सदेह से इतना परिपूर्ण तथा देश के विविध धर्मों के सिद्धान्तों के प्रति इतना निष्ठाहीन हो गया था कि महात्मा को समझने वाले लोग मुट्ठी भर रह गये थे और इन्हीं लोगों ने उस उपवास का सही अर्थ समझा। यह बात भी बहुत स्पष्ट है कि किसी अन्य सप्रदाय ने नहीं वरन् उनके

---

[1] सरोजिनी नायडू ले0 ताराअली बेग पेज 1

ही धर्म के लोगों ने हिसक रीति से उनका विरोध किया और अमानवीय रीति से अपना क्रोध और रोष प्रकट किया। हिंदू जाति के लिए यह खेद की बात है कि उसका सबसे महान हिंदू, हमारे युग का एकमात्र हिंदू जो अत्यत पूर्णता और अकप आस्था के साथ हिंदू धर्म के सिद्धान्त, आदर्शो और दर्शन के प्रति सच्चा था, एक हिंदू के हाथों मारा गया।"[1]

उन्होंने कापती हुई आवाज में कहा " यह सचमुच हिंदू आस्था की कब्र पर लगे पत्थर पर खुदा लेख है कि हिंदू अधिकारों और हिंदू जगत के नाम एक हिंदू के हाथ से सर्वश्रेष्ठ हिदू का बलिदान हुआ। मगर कोई बात नहीं हममें से बहुत से लोगों के लिए यह दिन-प्रतिदिन और वर्ष प्रतिवर्ष महसूस होने वाली व्यथा और हानि की चेतना है क्योंकि हममें से कुछ लोग तीस से भी अधिक वर्षो से उसके साथ समीप से जुड़े थे, हमारे जीवन और उसका जीवन एक-दूसरे के अभिन्न अग बन गये थे हमारे पुट्ठे, धमनिया और शिराए, हृदय और रक्त उसके जीवन के साथ गुथे-बुने थे।[2]

"लेकिन यह तो आस्थाहीन विश्वासघातियों जैसा कर्म होगा कि हम निराशा के सामने घुटने टेक दें। यदि हम यह सोचकर कि वह चले गये सचमुच यह मान लें कि उनकी मृत्यु हो गई और हम यह विश्वास कर लें कि सब कुछ खो गया है तो हमारे प्रेम और हमारी आस्था का क्या मूल्य रह जाता है।? क्या हम यहा उनके उत्तराधिकारी नहीं है, उनके आध्यात्मिक वशज, उनके महान आदर्शो के रिक्तभागी (लीगेटीज), उनके महान कार्य के उत्तराधिकारी? क्या उनके कार्य को पूरा करने सयुक्त प्रयास द्वारा उससे कहीं अधिक परिणाम प्राप्त करने के लिए हम नहीं है जितना कि वह अकेले कर सकते थे? अत मैं कहती हू कि निजी दुख मनाने का समय बीत गया है।"

इस शक्तिशाली भाषण का समापन अपनी अतरात्मा की गहरायी से निष्कृत स्पदनशील शब्दों से करते हुए वह ऊचे स्वर में बोलीं "मेरे पिता, विश्राम मत करो। हमसे हमारी प्रतिज्ञा का पालन कराओ, हमें शक्ति दो कि हम अपने वचन को

---

[1] गाधी सदेश नवम्बर 2002 – सम्पादक अशोक कुमार गुप्त, मुम्बई पेज 31-32

[2] वही।

निभा सकें, हम जो कि तुम्हारे उत्तराधिकारी हैं, तुम्हारे वशज हैं, तुम्हारे गुमाश्ते हैं, तुम्हारे सपनों के सरक्षक हैं, भारत की नियति के वाहन हैं। तुम्हारा जीवन अत्यत शक्तिशाली था, उसे अपने मरण में भी तुम उतना ही शक्तिशाली बना रहने दो। मरणधर्मिता से परे तुमने अपने सर्वप्रिय उद्देश्य के लिए सर्वोच्च कोटि का बलिदान देकर मरणधर्मिता को लाघ लिया।"[1]

और जिस प्रयोजन से वह नोआखाली गये और पाकिस्तान की जनता के प्रति उदारता प्रदर्शित करने के लिए उन्होने सर्वोच्च दड चुकाया उसे उनकी सहयोगिनी सरोजिनी ने अन्य लोगों की अपेक्षा सबसे अधिक हृदयगम किया। यह प्रयोजन था हिंदू-मुस्लिम एकता का। उनके ही काल में और उनके प्रयासों के बावजूद भारत विभाजित हो गया और गाधीजी ने अतत पूर्ण ज्ञान का मूल्य चुका दिया। भारत में तब तक शाति नहीं होगी जब तक कि भाई के प्रति भाई का प्रेम न हो और लोगों में एक-दूसरे का विश्वास पैदा हो। उन्होंने गोखले से बहुत आत्मविश्वासपूर्वक कहा था कि पाच वर्षो में हिंदू-मुस्लिम एकता स्थापित हो जायेगी, उसके बाद की लबी शताब्दियों में उन्होंने यह बात दूसरों की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह समझ ली थी कि वह प्रयोजन उनके जीवनकाल में सिद्ध नहीं होगा।

गाधीजी सरोजिनी के लिए 'मेरे गुरु, मेरे नेता, मेरे पिता' थे। उनकी मृत्यु में सरोजिनी ने गाधीजी की विजय को पहचान लिया था। गाधीजी हमेशा यह मानते थे कि मनुष्य को मौत का सामना करने के लिए तैयार रहना चाहिए। उनके बारे में कहा गया है, "वह सम्राटों की तरह सत्ता के चरम शिखर पर पहुचकर दिवगत हुए।"[2] सरोजिनी का यह कथन बहुत सही है कि यह उपयुक्त ही था कि गाधीजी का देहावसान सम्राटों की नगरी दिल्ली में हुआ। जिस समय गाधीजी का शात शव फूलों से ढका है और हृदय में पिस्तौल की गोली छिपाये रखा हुआ था तब सरोजिनी ने देखा कि कुछ महिलाए उस सत के पार्थिव अवशेष को घेरकर रूदन कर रही हैं। सरोजिनी अचरज से बोलीं, "यह क्रदन किसलिए हो रहा है? क्या आप लोग यह चाहती थीं कि वह बुढ़ापे और अपच से मरते? उनके लिए यही मृत्यु महान थी।"

---

[1] सरोजिनी नायडू – ले0 ताराअली बेग, पेज 209

[2] सरोजिनी नायडू ले0 पद्मिनी सेन गुप्ता – पेज 71

उनके इन शब्दों से सार्वभौम अदृश्य का नाटक साफतौर पर समझ में आता है। यह कोई साधारण मृत्यु या हत्या न थी। नाथूराम गोडसे मनुष्य के प्रति मनुष्य की दैवी अभिव्यक्ति का शाश्वत और नियति द्वारा प्रेरित साधन था।

इन सघात्मक घटनाओं के कुछ दिनों बाद सरोजिनी को अपने सबसे पुराने मित्र नवाब निजामत जग का पत्र मिला जो कि उस समय 76 साल के थे। उनके कोमल दार्शनिक पत्र उन्हें उन दीर्घ वर्षों की मधुर स्मृतिया याद दिलाते थे जो सरोजिनी के लिए अशात और सक्रियतापूर्ण वर्ष थे तथा स्वय उनके लिए पुरातन हैदराबाद के शात पानी में लगर डालकर खड़े हुए वर्ष 1911 से वे दोनों एक दूसरे को नियमित रूप से पत्र लिखते रहे थे। निजामत जग के पत्र पुरानी स्मृतियों तथा घटनाओं के सच्चे अर्थों पर किये गये चितन से परिपूर्ण होते थे। गाधीजी के बारे में उन्होंने लिखा "मैं उनकी सच्ची आध्यात्मिक अतदृष्टि का सबसे अधिक प्रशसक हू, वह उनकी सहजात आत्मीयता की सहचारिणी थी। महान और स्थायी सत्यों के ज्ञान के आधार पर वह यह समझ गये थे कि सबसे अधिक निकृष्ट कोटि की दासता आत्मा की पराधीनता है और दास मनोवृत्ति वस्तुत दोषपूर्ण प्रयोजनों की सिद्धि के लिए दुष्ट मनोवृत्ति के समक्ष समर्पण है। उनकी अपनी बुनियादी मान्यताओं ने इस केंद्रीय आस्था को सुदृढ़ बना दिया था कि दासता से मुक्ति केवल आत्म-मुक्तिदायी आत्मा द्वारा अपने भीतर की सक्रियता के द्वारा प्राप्त की जा सकती है।

"एक ओर गाधी भारत की सर्वोच्च कोटि की सतान का प्रतीक है, दूसरी ओर उनका हत्यारा भारत की भूमि में से जन्म लेने वाले दुष्टतम कोटि के अपराधी वर्ग का प्रतीक है यह एक ऐसा वर्ग है जो आस्था से शून्य, हृदय में अनीश्वरवादी, मानवता और सदाशयता के अर्थ को समझने में असमर्थ तथा इस सबसे कहीं अधिक कृतघ्न होता है।"

बनारस में आयोजित अखिल भारतीय लेखक सम्मेलन के द्वितीय अधिवेशन के अवसर पर उन्होंने[1] अपने अध्यक्षीय भाषण में इस बात पर दुख प्रकट किया कि समारोह का उद्घाटन करने के लिए जवाहरलाल नेहरू वहा नहीं जा पाये। उन्होंने

---

[1] सरोजिनी नायडू लें0 डॉ0 माजदा असद पैज 65

कहा, ''प्रधानमत्री आते-जाते रहते हैं लेकिन जवाहरलाल एक ही हैं, वह सितारों तक जाने और वहा से आशा तथा साहस का सदेश और आत्मा की वह सपदा लाने के लिए व्यग्र रहता है जिसे स्वतत्रता कहते हैं।'' पवित्र तीर्थ वाराणसी के बारे में चर्चा करते हुए उन्होंने लेखकों और विद्वानों के श्रोतामण्डल को बताया कि यह वह नगर है जहा मनुष्य की आत्मा दृष्टा के स्तर तक उठी और यही बुनियादी तौर पर भारतीय सस्कृति का हृदय है क्योंकि बौद्धों और हिंदुओं दोनों ने यहा उन महापुरुषों की खोज की जिन्होंने मानवीय सकीर्णता और तुच्छ राष्ट्रीयता को लाघना सीख लिया था। साहित्य के अर्थ और प्रयोजन का वर्णन करते हुए उन्होंने उस लेखक की विराट महता पर बल दिया जिसकी दृष्टि सप्रदायों, समुद्रों और पर्वतों को लाघ जाती है और जो सम्राटों और सेनापतियों की अपेक्षा कहीं अधिक काल तक जिदा रहता है। लेकिन उन्होंने उस सभा से पूछा, ''क्या हम भारत में अपने मिशन के प्रति सच्चे सिद्ध हुए हैं? नेता होने की कोशिश में क्या शास्त्रीय चर्चाओं अथवा भारतीय जनता की पारस्परिक घृणा की मनोवृत्ति के कारणों की खोज में अतिव्यस्त नहीं रहे हैं? यदि हम अपने ध्येय के प्रति सच्चे होते तो क्या हिंदुओं और मुसलमानों के बीच मतभेद इतने उग्र होते?'' उन्होंने अपना अलकारपूर्ण भाषण इस कठोर चेतावनी के साथ समाप्त किया, ''हम अपने अधविश्वासों को भुलाकर लिखने में असमर्थ रहे हैं, इसका परिणाम यह है कि आज हमारे बीच मृत्यु और फूट विद्यमान है। जो कुछ सर्वनिष्ठ नहीं है वह मानवीय नहीं है, जो कुछ सार्वभौम नहीं है वह मानवीय नहीं है, जो जीवन नहीं है वह मानवीय नहीं है। आप किसी भी भाषा में लिखें, जो कुछ आप लिखें वह जीवन की सच्ची और यथार्थ अनुकृति होनी चाहिए वह मानवीय मान्यताओं की व्याख्या और मानवीय चेतना के उन्नयन का पूरा निरूपण होना चाहिए। जो भी भाषा आपको पसद है उसमें तभी तक निपुणता प्राप्त कीजिए जब तक कि वह मानवीय हृदय और आत्मा की भाषा बनी रहे। केवल साहित्य के माध्यम से ही सत्य और जीवन को सुरक्षित रखा जा सकता है। अत यदि आप और मैं अपने ध्येय के प्रति सच्चे हैं तो हम आत्मा के रूप में जीवित रहेंगे। हम आने वाले युगों का अभिन्न अग बन जाएगे लेकिन तब जब हम विश्वप्रेम से ओतप्रोत होकर सौंदर्य और सजीव सौंदर्य का सृजन करें।

उनका जीवन सर्वतोमुखी हो गया था। अपने जीवन भर उन्होंने सत्य के प्रत्येक आयाम को साथ लेकर, एक कवि की आखों से देखे गये सत्य की दृष्टि से और अपने प्रिय नेता गाधीजी के कर्मयोग की धारणा के अनुसार कार्य किया। गाधीजी ने ही जनता के हृदय में उनका प्रवेश कराया और उनकी वक्तृता से जनता के हृदय को आलोकित कराया जिससे कि वह स्वतत्रता के सघर्ष के लिए कार्य करे। मनुष्य के इस दीर्घ अनुभव तथा क्रिया और प्रतिक्रिया के रहस्यों की चुनौतियों के पश्चात् वह पुन लेखन की ओर झुकीं और उन्होंने अनुभव किया कि लिखित शब्द मानवजाति के हृदय को छूने का सबसे अधिक दीर्घजीवी साधन है। सरोजिनी हमेशा कल्पनाकार की महानतम आवश्यकता को पहचानती थीं सपनों की सिद्धि को अपनी आखों से देखना । और वह यह भी पूरी तरह जानती थीं कि सपने चाहे उनके अपने हों या किसी अन्य व्यक्ति के आशिक रूप में ही सिद्ध होते हैं और किसी मार्ग में ही उनमें परिवर्तन भी जो जाता हैं। एक बार सरोजिनी ने मौलाना आजाद के वारे में कहा था

"भारत के एक सिरे से दूसरे तक खोजने पर इतना दृढ देशभक्त आदर्शों के प्रति अडिग आस्थावन पुरूष, इतना प्रकाड विद्वान, स्वतत्रता का इतना महान देशभक्त और हमेशा देश की घातक साप्रदायिकता के भयावह और भीषण कीटाणुओं से सर्वथा मुक्त व्यक्ति पाना कठिन है। वह (मौलाना आजाद) एशिया के महानतम विद्वानों और भारत के महान विचारकों में से थे।"

डा राधाकृष्ण को सबोधित करते हुए उन्होंने पूछा

"क्या दार्शनिकों को प्रशसा की आवश्यकता होती है? कल ही हम आपके जादुई भाषण से सम्मोहित हो गये थे, वह इतना गरिमामय भाषण था कि श्रोताओं में एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं रह गया था जिसका हृदय उसके प्रभाव से अछूता रह गया हो। आप ने बहुत प्रशसा और विद्वता उपार्जित की है। मुझे इस बात पर बहुत गर्व है कि बौद्धिक प्रतिभा के अतिरिक्त आप में परिहास का आनदमयी और प्रियकर गुण भी विद्यमान है जिसके कारण आप दार्शनिक ही नहीं एक साथी, सहयोगी और मित्र भी बन जाते हैं। क्या आप मुझे यह अनुमति देंगे कि मैं आपकी प्रतिभा की सराहना के प्रतीक के तौर पर कागज का यह टुकड़ा आपको भेंट करू?"

ये पक्तिया ऐसी हैं मानों वह स्वय अपने बारे में लिख रही हों। उनके लिए यह बहुत ही उपयुक्त था कि अपनी मृत्यु से केवल एक महीना पहले लखनऊ-विश्वविद्यालय के कुलपति के नाते उसके रजत जयती दीक्षात समारोह की अध्यक्षता करते हुए उन्होंने भारत माता के कुछ प्रतिभावान पुत्रों बेटों को मानद उपाधिया प्रदान कीं। उनमें जवाहरलाल नेहरू, मौलाना अबुल कलाम आजाद, गोविदवल्लभ पत, डा राधाकृष्ण (जो बाद में भारत के राष्ट्रपति हुए) जैसे महान नेता आर राधाकृष्ण, मेघनाद साहा और होमी भाभा सरीख बुद्धिवादी और वैज्ञानिक थे। सम्मानित व्यक्तियों को इस सूची में अतिम व्यक्ति थे शेख मुहम्मद अब्दुल्ला।

अपने प्रिय जवाहर के लिए उनकी टिप्पणी सक्षिप्त और विलक्षण थीं "मै तुम्हारे बारे में क्या कहू? योद्धा, कवि, राजपुरुष, स्वप्नदृष्टा, राजनीतिज्ञ और हमारे प्यारे महात्मागाधी के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी । तुमने भारत के व्यक्तित्व को सितारों तक ऊचा उठाया है। तुत निस्सदेह नेता हो, लेकिन हमारे खेल के साथी और मित्र, तथा भाई और मेरे बेटे भी हो। मुझे आशा है कि एक दिन ऐसा आएगा जब तुम्हें एक और पुस्तक लिखने का अवकाश मिलेगा और उसमें तुम कहोगे, "मैनें अपनी मजिल प्राप्त कर ली है, भारत ने अपनी मजिल प्राप्त कर ली है।"

अपने शिक्षामत्री डा सपूर्णानद को मानद उपाधि प्रदान करते समय उन्होंने प्रदेश के छात्रों के लिए उनके कार्य का उल्लेख किया "किसी भी विद्यार्थी अथवा विद्यार्थियों को भड़काने वाले व्यक्तियों को ऐसा मानने का अधिकार नहीं है कि उनके मत्री, विशेषत डा सपूर्णानदजी अपनी शक्ति भर कार्य नहीं कर रहे हैं। वह बुद्धिवादियों में भी बुद्धिवादी हैं।" यह सुनते ही हॉल में शोर मच गया। लेकिन सरोजिनी में अनुशासनहीन भीड़ को नियत्रित करने की शक्ति नष्ट हुई थीं, वह कठोर स्वर में बोलीं,"मेरे भाषण के बीच आप खामोश रहेंगें।" उनका यह स्वर शोर के बीच धस गया और हाल में पूरी तरह शाति छा गई उनके जीवन में ऐसे अनेक अवसर आए, इससे ऐसा आभास होता है कि उनकी उपस्थिति और उनके स्वर के चुंबकीय प्रभाव में कोई ऐसा विशेष गुण था जिसका श्रोताओं पर यह असाधारण असर होता था।

विज्ञानी प्रो0 के एस कृष्णन को मानद उपाधि प्रदान करते हुए उन्होंने जो विचित्र टिप्पणी की, शायद वैसी टिप्पणी अन्य किसी व्यक्ति के बारे में कभी नहीं की गयी। उन्होंने कहा

''आपके कार्य की विद्वतापूर्ण बारीकियों को समझ पाना मेरे वश की बात नहीं है लेकिन मैंने विस्मय और गौरवपूर्वक आपकी एक महान् भूल देखी है, और वह भूल यह है कि आप बहुत नम्र और बहुत निरभिमानी हैं जबकि विज्ञान के हित में आपको गर्वीला होना चाहिए। ऐसा मत मानिये कि विज्ञान के क्षेत्र में उद्दाम होने का अर्थ अहमन्यता है। आपके पास विश्व को देने के लिए एक उपहार है, अभिमान के साथ दीजिए और निश्चिततापूर्वक दीजिए।''

अपने मुख्यमत्री पडित पत को मानद उपाधि देते हुए उन्होंने कहा कि उनकी प्रशसा करना रिश्वत देने जैसा भ्रष्टाचार है। इसके बावजूद उन्होंने भारत के सबसे बड़े राज्य की समस्याओं के बारे में उनकी पूर्ण जागरूकता के लिए उनकी प्रशसा की और कहा

''मैने इस प्रदेश में दिन-प्रतिदिन उनका कार्य देखा है, और मुझे मालूम नहीं कि वह कब सोते हैं। मुझे यह मालूम है कि वह इस प्रदेश के लिए जागरूकता के सजीव प्रतीक बन गये हैं। वह उन लोगों में से हैं जो उन परिस्थितियों में भी जिनमें निजी औरसाप्रदायिक भावना का किचित औचित्य हो सकता है समस्त निजी और साप्रदायिक भावनाओं से ऊपर उठ गये हैं। अपने इसी निष्पक्ष साहस के कारण वह उत्तर प्रदेश के नायक बन गये हैं।''[1]

अपने जन्मदिन 13 फरवरी (1949) से कुछ ही पहले सरोजिनी नायडू दिल्ली गयीं। जिस समय वह राष्ट्रपति भवन(उस समय गवर्नर-जनरल का भवन) की कार में बैठ रही थीं उस समय उनका सिर कार की नीची छत से टकरा गया और ऐसा लगता है कि वह इस आघात से कभी नहीं उबर सकीं।[2] यद्यपि वह अपना नियमित कार्य करती रहीं तथापि वह अपना नियमित कार्य करती रहीं तथापि उनके सिर से भयकर शूल होने लगा था। इसके बावजूद उन्होनें राज्य के कार्य को प्राथमिकता दी

---

[1] सरोजिनी नायडू ले0 ताराअली बेग पेज 216
[2] सरोजिनी नायडू ले0 पद्मिनी सेन गुप्ता पेज 77

और वह 15 फरवरी को लखनऊ लौट गयीं जिससे कि वह कमला नेहरू अस्पताल के बेगम आजाद कक्ष का उद्घाटन करने के लिए फरवरी के अत में गवर्नर-जनरल राजगोपालाचारी के इलाहाबाद आगमन के अवसर पर उनके स्वागत की तैयारी कर सकें। वह यह सोचकर बहुत दु खी हो उठीं कि वह राष्ट्र के प्रात में राष्ट्र के अध्यक्ष के प्रथम आगमन पर उनका स्वागत और परपमरागत सम्मान स्वय नहीं कर पायेंगी।

उस समय तक उनके सिर में बराबर दर्द बना रहने लगा। इसी निराशा में उन्होंने पद्मजा को राजाजी के सम्मान में स्वागत की तैयारी करने और उस अवसर पर अपना प्रतिनिधित्व करने के लिए इलाहाबाद जाने को राजी कर लिया।[1] उनकी दूसरी बेटी लीलामणि दिल्ली में विदेश विभाग में थीं और उनका बेटा तथा पति हैदराबाद में सयोग की बात है कि परिवार का कोई भी व्यक्ति इस समय उनके पास न था। 18 फरवरी को सास कठिनाई होने पर उन्हें ऑक्सीजन देनी पड़ी। 20 फरवरी को डा बिधान चन्द्र राय अपनी पुरानी मित्र को देखने लखनऊ आये जो उनके स्थान पर राज्यपाल बनी थीं। हालाकि वह ठीक नहीं हो पायीं फिर भी उनकी हालत में मामूली सा सुधार हुआ, लेकिन एक मार्च को उन्हें रक्त देना पड़ा। इसके बाद वह खूब सोयीं, और रात में देर से जगने पर उन्होंने नर्स से गाने को कहा। जीवन भर उन्हें गीता पर प्यार रहा था। उनकी बेटी अपने बचपन की याद करके कहती है कि जब वह अधेरे में डरतीं तो जोर-जोर से गाने लगतीं 'जीसस। मेरी आत्मा के प्रेमी, '(जीसस। लवर ऑफ माई सोज) । उस रात किसी को मालूम न था कि अधेरा कितना समीप आ रहा है। लेकिन बीमारी के बावजूद ज्यों ही कोई उनके समीप आता तभी वे स्नेह से लबालब, भरे मजाक में कहा, "जब तक आपके चारों ओर लोगों का जमघट बना रहेगा तबतक न आप बीमार पड़ेंगी न मरेंगी।"[2] मुझे सपेन में भी ख्याल न था कि मेरी यह बात कभी भविष्य में जाकर कितनी सही सिद्ध होगी। नर्स ने जब गाना बद किया तो वह बोलीं "मैं चाहती हू कि मुझसे कोई बात न करे।" बस यही उनके अतिम शब्द थे।

---

[1] सरोजिनी नायडू - ले0 माजदा असद पेज 67
[2] सरोजिनी नायडू - ले0 ताराअली बेग पेज 217

लखनऊ में गोमती नदी के किनारे सरोजिनी नायडू का सादा-सा स्मारक है। उसके इर्द-गिर्द विस्तृत घास के मैदानों पर अब बच्चे खेलते हैं, उसी सीढियों पर सटकर बैठे हुए प्रेमी आपस में मद स्वर में बातें करते हैं और थके हुए नागरिक तथा व्यस्त गृहिणी साढझ पड़ें पल भर के विश्राम के लिए वहा चले जाते हैं।[1] राजभवन के विस्तृत बरामदों में उनकी उत्तर प्रदेश की सतति ने उनके प्रति अतिम सम्मान प्रकट किया, भारत के नेता इकट्ठे हुए और उनका परिवार उनके पास खड़ा रहा। वहा से लखनऊ के नागरिक उनके शव को राजकीय सम्मान के साथ यहीं लाये थे। उनकी अर्थी के पास एक प्रधानमत्री और दो भावी प्रधानमत्री व्यथित चित्त से खड़े हुए थे, और गर्वनर जनरल राजगोपालाचारी ने शोकग्रस्त लोगों को सात्वना प्रदान की थी। जिन लोगों ने उनको अस्वस्थता और पीड़ा के बावजूद हमेशा इतनी प्रचुरता और स्पदनशीलता के साथ सलीव देखा था वे यह कैसे मान सकते थे कि काश्मीरी शाल और सुदर पुष्प-सज्जा के नीचे का शात शव उनका ही हो सकता है, लेकिन वह था इन्हीं का शव भारत कोकिला का स्वर सदा के लिए मौन हो गया।

3 मार्च, 1949 को ससद में सरोजिनी को श्रद्धाजलि देते हुए प्रधानमत्री ने एक लबे और हृदयद्रावक भाषण में कहा[2] "वह एक महान मेधावी, जीवनीशक्ति से परिपूर्ण और मुक्त हृदय व्यक्ति थीं वे बहुमुखी प्रतिभा की धनी थीं, और इस सबने उन्हें पूर्णतया अनुपम बना दिया था। इन्होंने अपना जीवन कवियित्री के रूप में शुरू किया और तेज के साथ राष्ट्रीय सघर्ष को नैतिक गरिमा प्रदान की थी ठीक उसी तरह उन्होंने उसमें कलात्मकता और काव्यात्मकता का समावेश कर दिया निस्सदेह, हम अनतकाल तक उनको स्मरण करते रहेंगे, लेकिन शायद हमारे बाद आने वाली पीढ़िया और वे लोग जो उनके साथ नजदीक से जुड़े नहीं रहे उस व्यक्तित्व की समृद्धता को पूरी तरह नहीं पहचान पायेंगे जिसे लिखित शब्दों और अभिलेखों में न पूरी तरह रूपातरित किया जा सकता है न तत्वातरित ही। इस तरह उन्होंने भारत के लिए काम किया। वे काम करना और खेलना दोनों जानती थीं, और यह एक आश्चर्यजनक सयोग था। वे यह भी जानती थीं कि महान प्रयोजनों के लिए किस

---

1 सरोजिनी नायडू - ले0 माजदा असद पेज 68
2 सरोजिनी नायडू - ले0 माजदा असद पेज 68

प्रकार आत्मबलिदान किया जाता है और वह भी इतनी शालीनतापूर्वक और महिमामय रीति से कि बलिदान भी सुगम लगने लगता था, तथा ऐसा न लगता था कि उसमें आत्मा की व्यथा का किंचित भी समावेश है जबकि उन जैसे सवेदनशील व्यक्ति के लिए उस सब में आत्मा का अत्यत व्यथित होना निश्चित है।"

उसके पश्चात् प्रधानमत्री ने सदन को स्मरण दिलाया कि[1] "वह भारत की एकता के प्रत्येक पक्ष, उसके सास्कृतिक तत्व की एकता और उसके विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों की एकता के समर्थन में भारत में अन्य किसी भी अपेक्षा अधिक सन्नद्ध रहीं। यह एकता उनके लिए वासना बन गयी थी। वह उनके जीवन की बुनावट और उसका ताना-बाना बज गयीं थीं।" अपने औपचारिक भाषण को बहुत असामान्य रीति से समाप्त करते हुए प्रधानमत्री ने सदन को बताया कि सरोजिनी अपने हजारों-लाखों देशवासियों के उतनी ही समीप थी जितनी कि वह अपने सबधियों के निकट थी, और "अत इस सदन की ओर से हम वह सवेदना सदेश भेजें पर वास्तव में स्वय हम सबकी ओर हम सबके हृदयों की सात्वना के लिए भी उस सदेश की उतनी आवश्यकता है।" देश भर से राज्य विधानसभाओं, मित्रों और साथियों की ओर से इसी प्रकार से सदेश पीड़ित परिवार को प्राप्त हुए। डा विधान चन्द्रराय ने बगाल विधानसभा से अपने भाषण में उनके जीवन-इतिहास का वर्णन किया और उन अनेक महत्वपूर्ण अवदानों का उल्लेख किया जो सरोजिनी नायडू से भारतीय इतिहास हो प्राप्त हुए। उन्होंने कहा कि इसके बावजूद, "हममें से जिन लोगों को जीवन में उन्हें निकट से देखने का अवसर मिला वे जानते हैं कि सरोजिनी नायडू एक स्नेहसिक्त परिवार में प्रिय पत्नी थीं। परिवार के भीतर वह एक साथ नर्स, एक रसोइया और व्यथा के समय सवेदनशील व्यक्ति बन जाती थीं। यह एक आश्चर्यजनक सयोग था। एक ओर वह स्वतत्रता-सग्राम की सेनानी थीं और उन्होंने ब्रिटिश निरकुशवाद की पूरी चोट का सामना किया था, दूसरी ओर वह अत्यत कोमल थीं उनमें यह अद्‌भुत गुण था कि जो कोई व्यक्ति उनके निकट सपर्क में आता उसके साथ बहुत आत्मीयता का व्यवहार करती थीं। उनके समान दूसरा व्यक्ति

---

[1] सरोजिनी नायडू डॉ0 ताराअली बेग पेज 218

खोजना कठिन है। सरोजिनी नायडू अपने ढग की एक ही है। सभवत ससार भर में वह अकेली महिला थीं, जिसे एक बड़े प्रात का भार सौंपा गया हो। मैं समझता हू कि ससार में रूस में या सयुक्तराज्य अमरीका में कहीं भी राजनीतिक अथवा प्रशासकीय क्षेत्र में इतना बड़ा भार विधानचन्द्र राय ने अनजाने में ही भारत की महिलाओं को श्रद्धाजलि समर्पित की जो मानव जीवन के सर्वोच्च दायित्वों को वहन करना जानती है और साथ हीं अपनी नारीसुलभ प्रकृति को कभी नहीं खोतीं। भारत के लिए यह सौभाग्य की बात है कि राजनीति और राज्य और राज्य के प्रश्नों पर स्त्री-पुरुष भेद कभी नहीं पैदा हुआ, न उनमें समानता की ही होड़ मची। किसी तरह, और शायद सरोजिनी नायडू जैसी महिलाओं के कारण ही भारत की महिलाए पुरुषत्व धारण किए बिना ही मताधिकार से विभूषित हो गयीं, क्योंकि इन महिलाओं के नारीत्व, स्नेहिल स्वभाव और उनी कोमलता ने वह कठोर रूप धारण नहीं किया जो प्राय सार्वजनिक जीवन व्यक्ति पर लाद देता है।

यह बहुत उपयुक्त ही है कि भारत में सरोजिनी के जन्मदिन 13 फरवरी को महिला दिवस मनाया जाता है। यही महिला दिवस इस जगत की कस्तूरबा सरीखी महिलाओं के जन्मदिन पर नहीं मनाया जाता जो सीता की तरह नारीसुलभ भक्ति की प्रतीक हैं वरन् एक ऐसी महिला के जन्मदिन पर मनाया जाता है जो परिपूर्णत ओर प्रत्येक प्रकार से एक सपूर्ण महिला थी। उन्होंने कभी भी अपने नारीत्व के साथ विश्वासघात नहीं किया, उनका हृदय एक विराट भवन था जिसमें सबको शरण मिल जाती थी, उनके हृदय की करूणा उन्हें एक नारी के सामान्य जीवन से बाहर घसीट लाती थी तथापि उन्होंने कभी अपने परिवार को अपने स्नेह, सेवा और भक्ति से वचित नहीं किया, न उन्होंने एक चमत्कारी ढग से दो असभव छोरों के बीच विराट शक्ति के साथ सामजस्य स्थापित किया। उनकी महानता एक प्रमुख तत्व उनकी यह अनुपम क्षता थी अथवा प्रयोजन के प्रति उनके इस सर्वत तत्काल समर्पण और तद्रूपता के कारण ही उनके कार्य व्यक्तियों और प्रयोजनों में जीवन फूक देते थे। द्वितीय शिमला सम्मेलन की दुर्गम समस्याओं के मध्य भी बबई राज्य सरोजिनी के लिए सबसे अधिक अपना हो गया था, उसी की राजधानी बबई के सुन्दरबाई हाल में

डा राधाकृष्णन ने मार्च 1949 को एक शोकसभा की अध्यक्षता करते हुए कहा था, 'उनका जीवन जितना हमारे देश के प्रति समर्पित था उतना ही ससार के कल्याण के प्रति भी समर्पित था। उन्होंने उस सबका परित्याग कर दिया था जो घृणा पैदा करता हे आर उसक बसके लिए कार्य किया जो समीप लाता है और एकता स्थापित करता है उनकी मेधा, उनकी मुक्त सत्यप्रियता, उनकी कल्पनाशील प्रतिभा, के दशे के हित के लिए समर्पित थीं। उनके किसी भी काम या शब्द में घृणा अथवा कटुता नहीं होती थीं। वह न कभी उत्तेजना पैदा करतीं, न कठमुल्लन दिखाती और न आलोचना करतीं थीं। वह हमेशा न्यापूर्ण, मित्रवत और दृढ रहती थी।'' दार्शनिक की तरह उन्होंने आगे कहा, ''सभ्यता के युद्ध की अतिम रूप से नहीं जीते जाते। उनमें से प्रत्येक में चद स्वर ही ऐसे होते हैं जिन पर यह निर्भर करता है कि युद्ध में विजय हुई या पराजय।''

सरोजिनी नायडू कहा करती थीं कि ''गाधी मेरा कन्हैया है और मैं उसकी नम्र बासुरी हू।''[1] बासुरी-वादक और बासुरी दोनों ने मिलकर स्वाधीनता के सघर्ष को प्रतिष्ठा और महानता प्रदान की, और यदि कहीं दानों में से कोई भी दूसरे के बिना ही होता तो शायद भारत का इतिहास कुछ और ही होता। भारत के इतिहास को सरोजिनी की देन अनेक प्रकार से अदृश्य थी, लेकिन वायु की तरह उसके जीवन के लिए अनिवार्य थी। शायद दूसरी बातों से अधिक वह एक सहधर्मिणी थीं, आध्यात्मिक रक्षक और जीवनकोष यह एक ऐसी भूमिका है जिसके लिए प्राचीन हिन्दू समाज की मान्यता के अनुसार उच्चतम कोटि के जीव की आवश्यकता होती है। सचमुच गाधीजी के साथ अपने सम्पर्क सहचर्य द्वारा उन्होंने आधुनिक भारत और उसके स्वाधीनता सग्राम को राष्ट्र के कार्य के प्रति आत्मसमर्पण के माध्यम से यह महानतम नारी सुलभ सेवा प्रदान की।

सरोजिनी नायडू जब छोटी बच्ची थीं तब तक वह रात-प्रति-रात स्वप्न देखतीं और कहती थीं, ''मैने ससार को बदलने के लिए क्या किया?'' शायद यह तो कोई भी नहीं जानता कि उन्होंने कितना किया, सच्चे मानवतावादी का कार्य कभी

---

[1] सरोजिनी नायडू – लै0 ताराअली बेग पेज 221

अभिलेखों, टिप्पणियों ओर अभिलेखों तक नहीं पहुचता। वह इधर-उधर पत्रों में पड़ा रहता है लेकिन अधिकाशत वह उन लोगों के हृदयों में ही पड़ा रह जाता है जो उनको जानते हों। राष्ट्र की उपलब्धियों में जो अनेक लोगों के सम्मिलित प्रयास का परिणाम होती हे। वह अपने आपको कवियित्री-गायिका कहती थीं क्योंकि सरोजिनी नायडू अपनी प्रतिभा को, धरती पर मनुष्य की यात्रा की अल्पकालिकता को और उसकी उपलब्धियों की स्वरूपहीनता को भलीभाति समझती थीं। वह अपने बचपन से ही यह बात भी जानती थीं कि व्यक्ति आत्म-गौरव के लिए नहीं वरन् अपनी शक्तियों को प्रतिभापूर्वक अभिव्यक्ति करने के कार्य करता है, भले ही वह शक्ति गान की हो या आत्मा की । सरोजिनी एक ऐसी महिला थीं जिन्हें जीवन के अर्थ का बोध था, इसीलिए उन्होंने हजारों लोगों के हृदयों और अपने देश के जीवन को अतुलनीय आभा और आह्लाद की भेंट प्रदान की।

उन्होंने निजामत जग को लिखा था, "बहुत पहले जब मैं सपनों में खोए रहने वाली बालिका ही थी एक विश्वविख्यात व्यक्ति ने मुझसे कहा था, "बेटी, अपने क्षितिज का विस्तृत वर्णन करो, और मानवजाति के दु ख और सुख के साथ एकाकार हो जाओ, तब तुम अमर कला का सृजन करोगी।" उस व्यक्ति के लिए इन शब्दों से अधिक उपयुक्त और कोई स्मृतिलेख नहीं हो सकता जिसका क्षितिज समूचे ब्रह्माण्ड तक विस्तृत था और जिसका स्नेह ईश्वर की सृष्टि के छोटे से छोटे प्राणी पर भी बरसता था।

सरोजिनी नायडू का जीवन एक कलाकृति था। मृत्यु में वह अकेले थीं लेकिन जीवन में वह समूची जीवसृष्टि के साथ थीं और अपने जीवन में वह हमारे सतों द्वारा निर्धारित कसौटी पर खरी उतरीं "जगत् में आते समय तुम रोते हो और जग हसता है। ऐसे जियो कि जब तुम जगत से जाओ तो तुम हसो और जग रोए।"

****

षष्ठम् अध्याय

उपसहार

13 फरवरी सन् 1879 को हैदराबाद में जन्मी सरोजिनी नायडू के माता-पिता धर्म, जाति प्रदेश आदि की सकुचित विचारों से ऊपर थे। उनका हृदय तथा घर हर वर्ग जाति, धर्म, गरीब एव अमीर के लिए खुला रहता था। ऐसे वातावरण में पलने के कारण बच्चों के व्यक्तित्व में भी वही सर्वदेशीय भावना रही। हैदराबाद में पले बढे होने के कारण बच्चों में मुसलमानों के प्रति विशेष लगाव था। सरोजिनी के व्यक्तित्व पर ये प्रभाव अत्यन्त प्रखर थे। वे मुस्लिम सस्कृति, उनकी स्त्रियों, नवाबी रग-ढग, उर्दू शायरी आदि से अत्यन्त प्रभावित थीं। बगाली माता-पिता होते हुये भी वे उर्दू में पारगत थीं, और बागला लिपि से अपरिचित। प्रदेश या जाति के प्रति व्यक्ति की दुर्बलता से उन्हें चिढ़ थी। नेहरू उन्हें केवल भारतीय न कहकर अन्तर्राष्ट्रीय कहते थे वे पूरा जीवन हिन्दु मुस्लिम एकता के लिए कार्य करती रहीं। उन्हें इस बात का गर्व था कि वे भारत के प्रमुख मुस्लिम शहर से थी, उन्होंने पहले शब्द अमीर खुसरों की जबान से सीखे, उनके पहले साथी मुसलमान बच्चे थे। मद्रास में युवा मुस्लिम सगठन के अन्तर्गत "इस्लाम के आदर्शो" पर भाषण देने वाली वे एक मात्र हिन्दू महिला थीं। बम्बई में गाधी के साथ मस्जिद में जाने वाली वही थी जो वहा बोलने के लिए आमन्त्रित थीं। और इसका उन्हें गर्व था। उमर सोबानी, मुहम्मद अली जिन्ना, अली भाई, डॉ0 असारी जैसे मित्रों के साथ कार्य करती रहीं। यह जानते हुए भी कि जिन्ना भारत को बाटकर पाकिस्तान की स्थापना करना चाहते थे उन्होंने मित्रता नहीं छोड़ी। नयनतारा सहगल ने लिखा है कि उन दिनों यह अफवाह थी कि उन दोनों के बीच रोमास चल रहा था, यह कहा तक सच है नहीं कहा जा सकता किन्तु पूरी मुस्लिम जाति के साथ उनके प्रेम को निरन्तर देखा जा सकता है।

ग्यारह वर्ष की छोटी आयु में पहली कविता, वह भी अग्रेजी में लिखी। अग्रेजी में भारतीय लेखन पर बहुत वाद विवाद होते रहे हैं। जैसे आलोचक विवाद के लिए स्वतत्र हैं वैसे ही लेखक अपने विषय और माध्यम को चुनने के लिए स्वतत्र हैं, जब कोई किसी भाषा को अपनी भावाभिव्यक्ति के लिए चुनता है तब वह उसके लिए

विदेशी भाषा नहीं रह जाती। यही कारण है कि कई भारतीय अग्रेजी भाषी लेखक गद्य और पद्य दोनों क्षेत्रों में ऊँचे स्तर पर पहुँच सके। वे ऐसे ही रचनाकारों में थीं। श्री अरविन्द ने लिखा था – "हर स्थिति में यह सच नहीं होता कि व्यक्ति सीखी हुयी भाषा में उच्च स्तरीय रचना नहीं कर सकता। फ्रेन्च और अग्रेजी दोनों भाषाओं में उन लोगों ने जिनकी यह स्थानीय भाषा नहीं थी, उत्तम रचनाए की हैं, हलाकि ऐसा कम ही मिलता है। कुछ तरूदत्त की कवितायें, कुछ सरोजिनी नायडू की कवितायें, कुछ हरीन की कवितायें अच्छे अग्रेजी आलोचकों द्वारा उच्च स्थान पर रखी गयी हैं। मुझे विश्वास नहीं लगता कि हमें अग्रेजों से अधिक इस बात को अरूचिकर मानना चाहिए, मुझे लगता है कि समय के साथ लोग बहुभाषी होते जायेंगे और यह मानसिक वाधायें दूर होती जायेंगी। आश्चर्य की बात है कि अग्रेजी न बोलने की सजा ने उन्हें पिता द्वारा कमरे में अकेले बन्द कर दिया गया था और बाद में वह अग्रेजी भाषा के अलावा किसी भाषा में लिख ही नहीं पायी। उनकी काव्य पुस्तकें दि गोल्डन थ्रेशोल्ड" (1905), "दि बर्ड ऑफ टाइम" (1912), "दि ब्रोके बिंग" (1917), "सेलेक्ट पोयम्स" (1930), "दि सेप्टर्ड फ्लूट" (1937) आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस और डाड मीड एड कम्पनी अमरीका से छपी। अन्तिम सकलन 1958 में दुबारा किताबिस्तान इलाहाबाद से छपा इसके अतिरिक्त "दि फादर ऑफ दि डान" प्रकाशित हुयी जिसे 1961 में उनकी बेटी पद्मजा नायडू द्वारा एशिया पब्लिशिंग आउस बम्बई से प्रकाशित हुयी। कविता के अतिरिक्त 1925 तक के उनके भाषण तीन खण्ड मद्रास से जी0ए0 नटेशन एड कम्पनी द्वारा छापे गये, आज वे अनुपलब्ध हैं। उनकी अन्य रचनायें भारत तथा विदेश में विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में छपी। 1917 के बाद से उन्होंने कविता लिखना प्राय बन्द कर दिया था। उनकी तीन कविताओं "दि सोल्स प्रेयर" "इन सैल्यूटेशन टू दी इटर्नेल पीस" एव "टू ए बुद्धा सीटेड आन ए लोटस" को "दि आक्सफोर्ड बुक आफ इगलिश मिस्टिकल वर्स" में स्थान मिला। निस्सीम एजकील का विचार था कि सरोजिनी नायडू अग्रेजी कविता में बीसवीं सदी के प्रारम्भ और उससे पूर्व होने वाले साहित्यिक आन्दोलन से परिचित नहीं थी। किन्तु जेम्स एच0 कजन्स का मानना था कि उनकी कविता मात्र प्रतिबिम्ब

न होकर अपने सुन्दर गुणों के कारण एक सशक्त व्यक्तित्व उभारने में सफल हुयी। श्री अरविन्द के अनुसार – "उनकी कविता में वे गुण हैं जिनके कारण वह उत्कृष्ट, अनुपम और चुनौती रहित है।" वे रायल सोसाइटी ऑफ लिटरेचर की फेलो चुनी गयी थीं।

वक्ता के रूप में सरोजिनी सबसे अधिक प्रतिभाशाली थीं। भारत में अंग्रेजी वक्ताओं की वे प्रेरणा बनीं। उनके भाषणों में विषय के प्रति काव्यात्मक और राजनीतिक पकड़ के साथ एक ऐसा दर्शन होता था जो कुछ कठोर तथ्यों को प्रस्तुत करने के बावजूद श्रोता पर गहरा प्रभाव छोड़ता था। उनके शब्द धारा प्रवाह बहते थे। एक जीवन लेखक ने उनकी प्रशसा में कहा – "उनकी भाषा गरिमापूर्ण अखड प्रवाह, उनके कथनों में जोश, भावावेग और सवेदनशीलता का सामजस्य, सजीव बिम्ब, भावभगिमा कभी तीखी कभी नम्र होती आवाज श्रोताओं को निरन्तर उत्साहित रखती थी।"

उनके भाषणों में ऐसी चुम्बकीय शक्ति थी कि वे विश्व भर के श्रोताओं को बाध सकती थीं। भाषणों के विषय विविध- राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक पक्षों को लेकर थे। एक ओर इस्लाम के आदर्शो पर बोली तो दूसरी ओर हिन्दू धर्म पर। कही हिन्दू मुस्लिम एकता के पक्ष में बोलीं तो कहीं अनुबन्धित मजदूरी के विरोध में, कभी छात्रों को सम्बोधित किया तो कभी स्त्रियों को। हर भाषण में एक सा ओज, एक सा उत्साह व्यक्त होता था। विदेशों में भी उनके भाषणों में धूम मची थी। मैसेचुसेटस की डोरोथी वाल्डो हो या कनाडा की हेलेन रीड – सबका यही कहना था कि उनके विचारों एव अनुभवों की विशदता, शब्दों और आवाज में काव्यात्मक अभिव्यक्ति, उनकी विनोदप्रियता, अंग्रेजी भाषा का समृद्ध प्रयोग लोगों को चकित कर गया। छात्र हो या बढ़ई, बच्चे हो या बड़े सभी मत्रमुग्ध हो जाते थे। सी0एफ0 एन्ड्रूज ने लिखा है कि सरोजिनी नायडू की विदेश यात्रा आश्चर्यजनक रही। केनेडा, अमरीका दोनों जगह उनकी प्रशसा हो रही है। उनके पास भाषण कला का उपहार है जो यहाँ ग्रहण किय जा रहा है।

उनके अधिकतर भाषण अंग्रेजी में होते थे। कभी-कभी स्थिति के अनुसार हिन्दुस्तानी में भी बोलना पड़ता था जैसे पुलिस परेड के अवसर पर, किन्तु जल्दी ही

उसे छोड़कर अंग्रेजी में बोलने लगती थीं। अपने पहले भाषण के अलावा वे कभी बोलने के लिए कुछ लिखकर नहीं ले जाती थीं। पहली बार भी मच पर पहुँचने के बाद कागज देखने का प्रयास भी नहीं किया था। बाद में तो यूँ ही धाराप्रवाह बोलती थीं। अधिकतर उनकी आलोचना में यही कहा जाता था कि भाषा अत्यन्त सुन्दर होती थी, पर यह समझ पाना कि वे वास्तव में क्या कहना चाहती थीं। प0 मोतीलाल नेहरू राजनीति में अत्यधिक भावुकता को सन्देह की दृष्टि से भाव-विह्वल होकर रोने लगे। तब उन्होंने पूछा, 'पर उन्होंने कहा क्या था?' इसका उत्तर केवल यही है कि जब वक्ता स्रोता को मोह ले तो उसका बोलना सार्थक होता है। सरोजिनी ने देश विदेश में असख्य भाषण दिये। अधिकाश भाषण सकारात्मक मुद्दों को लेकर थे। अपने स्रोता को बाधने की सामर्थ होने के कारण वे उनको अपनी बात से सहमत करवा पाती थीं। उन दिनों जब देशवासी हीन भावना से ग्रसित थे, पराधीनता को अपना भाग्य समझकर स्वीकार किये हुये थे, उनके भाषण उनमें जीवन शक्ति भर रहे थे। कभी प्राचीन समृद्ध का हवाला देकर, कभी धिक्कार कर वे उन्हें जगाने की चेष्टा कर रही थीं। इस प्रयास से वे काफी सफल भी हुई, पर अक्सर उन्हें यह शिकायत रहती थी कि पत्रकार उनके शब्दों को तोड़ मरोड़कर प्रस्तुत करते हैं जबकि पत्रकारों का कहना था कि वे इतनी जल्दी बोलती थीं कि शब्दों को सही ढग से बता पाना कठिन होता था।

सरोजिनी में देशभक्त की भावना अत्यन्त तीव्र थी। सम्भवत इसका कारण यह रहा होगा कि उनके पिता भी इस दिशा में निरन्तर कार्य करते रहे थे। और इसी अपराध में उन्हें हैदराबाद से दो बार निकाल दिया गया था। दूसरी बार तो वह लौट भी नहीं पाये कि कलकत्ता में उनकी मृत्यु हो गई। सरोजिनी में भी वही साहस एव लगन थी। गाधी के सम्पर्क में आने के बाद वे स्वतन्त्रता सग्राम में सक्रियता से लग गई। वे आजीवन देश की स्वतत्रता के लिए हर क्षेत्र में कार्य करती रहीं। 1922 में काग्रेस के दो दलों में पुन मित्रता करवाने का श्रेय उनको था। 1929 में वे काग्रेस की महिला अध्यक्ष चुनी गई। 1930 में नमक आन्दोलन में पहली बार स्त्रियों के सक्रिय सहयोग की आवश्यकता की ओर गाधी का ध्यान आकर्षित किया

और उनके महत्व को प्रमाणित किया। 1931 में दूसरी गोलमेज कांफ्रेंस की सदस्य के रूप में गाधी के साथ लन्दन गई, पर वे इससे घबराई नहीं बल्कि साथियों का मनोबल बढ़ाने की चेष्टा करती रहीं। जब कोई साथी रुग्ण होता था, तो स्वय बीमार होते हुए भी उसका पूरा ध्यान रखती थीं। खाना बनाने का दायित्व स्वय उठाती थीं। जेल की चारदीवारी में बागवानी भी करती थीं।

उनका विश्वास था, स्त्री के विकास के बिना देश का उद्धार नहीं हो सकता और स्त्री शिक्षा के विरुद्ध स्त्री-विकास नहीं हो सकता। स्त्रियों के अधिकारों के लिए वे बराबर सघर्ष करती रहीं उनके मताधिकार के लिए एक प्रतिनिधि मण्डल लेकर गई। व 'मरदाना' 'जनाना' के बीच का मतभेद सदा के लिए दूर कर देना चाहती थीं। और यह भी कि स्त्रिया पुरुषों की सहयोगिनी के रूप में अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग अदाकर सकती हैं। उनके प्रयास का ही परिणाम था कि गाधी को स्वीकार करना पड़ा कि स्त्रिया स्वतन्त्रता आन्दोलन में बड़ा अहम रोल रखती हैं। उनके सहारे अहिंसात्मक लड़ाई लड़ना समभ हो सकता है। उनकी मृत्यु के बाद 13 फरवरी को उनका जन्मदिवस 'महिला दिवस' के रूप में मनाया जाने लगा। उनके नाम से डाक टिकट जारी किये गये। इडियन स्कूल ऑफ इटरनेशनल स्टडीज और एशिया पब्लिशिग हाउस ने मिलकर उनके नाम से एक भाषण माला आरम्भ की जो अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा में रुचि और शोध को प्रश्रय देने की थी। इस वार्षिक श्रखला में ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय विषय को लिया जाता रहा जो राजनीतिक, आर्थिक, ऐतिहासिक और कानूनी विषयों से जुड़े होते थे। ये विषय विश्व शान्ति की दिशा में योगदान देते थे। सरोजिनी सदा इसी दिशा में कार्य करती थी। पहली एशियन रिलेशन्स कांफ्रेंस की अध्यक्षा के रूप में उन्होंने इसी की माग की थी।

सरोजिनी के कार्य क्षेत्र की गरिमा और गम्भीरता को देखकर कोई उनके लिए व्यक्तित्व के दूसरे पक्ष की कल्पना भी नहीं कर सकता था। वे भारतीय महिला की आकाक्षाओं और परम्पराओं को ही नहीं, उनके बनाव-श्रृगार के प्रेम को भी व्यक्त करती थीं। श्रीमती मथ्थुलक्ष्मी रेड्डी ने लिखा – "मैं उनकी सादगी और बच्चों जैसे प्रकृति को देखकर अचरज में पड़ गई। वे अपने व्यवहार और रुचि-अरुचि में सच्ची

औरत थी। वे जेवर और साड़ियों की शौकीन थीं। नेकलेस, चूड़ी, पेडेंट, लेस की बार्डरवाली साड़ी उन्हें प्रिय थी। मैंने उन्हें देश की सेशन में महिलाओं की समस्याओं पर बोलते हुए सुना, जिसका मुझ पर गहरा प्रभाव पड़ा। पर उन्हें और औरतों की तरह जेवरों का शौक रखते देखकर ताज्जुब हुआ।'' वे बगाल से प्रेम करने के बावजूद वहाँ की स्त्रियों के हल्के रग की साड़ियाँ पहनने की आलोचना करती थीं। अपने आप अवसर के अनुसार साड़ियों का चुनाव करती थीं। गाधी के प्रति अथाह श्रद्धा एव विश्वास होने के बावजूद न खादी पहनने की शौकीन थीं, न शाकाहारी भोजन की, जिसे वे 'घास-पात' कहती थीं। गाधी जी की गिरफ्तारी के बाद उन्होंने कुछ समय तक खादी पहनी थी। पर सदा रगीन एव बढ़िया ढग के सिले वस्त्र पहनती थीं जिसकी बहुत प्रशसा होती थी। उस समय वह स्त्रीत्व की सुन्दर प्रतीक लगती थीं। ''आकार में सीधी हावभाव से प्रभावशाली, एक सशक्त और सुन्दर उपस्थिति हुआ करती थीं।''

वे स्वभाव और रूचि में कलात्मकता रखती थीं। कविता के अतिरिक्त सगीत उन्हें अत्यन्त प्रिय था। उसमें भी ''रवीन्द्र सगीत''। श्रीमती सुषमा सेन ने लिखा है कि, ''कलकत्ता के इग्लैण्ड से लौटे अभिजात्य वर्ग के लोगों के घरों में वे प्रिय हुआ करती थीं। हम प्राय सगीत सभाओं में मिला करते थे। ये गीत सरोजिनी के जीवन के अन्त तक रहे, बाद में हम जब भी शिमला या दिल्ली में मिले वे मेरी बहन प्रतिभा से और मुझसे अपने प्रिय सगीत रवीन्द्र सगीत गाने को कहती थीं। और स्वय भी जोश में साथ देती थीं।'' उन्हें बागवानी का बहुत शौक था। जेल में रहते समय अपने सेल के बाहर बहुत से पौधे लगाये थे। जब फूल निकलने वाले थे, तो जेल से रिहाई का आदेश आया तो उन्होंने कुछ दिन रूककर उन्हें खिलते देखकर जाने की अनुमति चाही, तो नहीं दी गई। उत्तर प्रदेश के सरकारी घर में भी बहुत सुन्दर फूलों से बगीचा भरा रहता था। उन्हें हस्तकला में भी रूचि थी और यही कारण है कि अपने सरकारी घरों में उन्होंने हाथ के कटे कपड़ों के पर्दे और सुन्दर चीजों से सजावट की थी। विवाह के बाद छोटी सी उम्र में हैदराबाद में बसाए घर से लेकर लखनऊ सरकारी आवास तक घर की साज-सज्जा उनकी सुरूचि की द्योतक है।

सरोजिनी में मानवीय सवेदनशीलता भरी हुयी थी।। प्रत्येक स्त्री पुरुष उनके लिए महत्वपूर्ण था। उनका मानना था कि किसी भी देश की महानता उसके महान लोगों में न होकर औसत लोगों में होती है जो प्रतिदिन के कार्य ईमानदारी से करते है। प्रत्येक व्यक्ति को उन्नति का अवसर देते हैं किसी के रास्ते की बाधा नही बनते है। एक बार कांग्रेस सेशन के बाद सभी नेता स्टेशन पर एकत्रित थे। एक युवक मोतीलाल नेहरू से हस्ताक्षर लेना चाहता था। ट्रेन में भीड़ थी उनका टिकट न होने के कारण जवाहर लाल चिन्तित थे। उन्होंने उस युवक को हटा दिया। सरोजिनी सब देख रही थीं। उन्होंने तत्काल मोतीलाल जी के पास जाकर हस्ताक्षर लिये और उस युवक को दिये क्योंकि वह उसे उदास देखना नहीं चाहती थीं। जब भी कोई अपनी समस्या लेकर उनके पास आता था, वे सुनती थी तथा मदद करने की चेष्टा करती थीं। पर जिससे मदद दिलवाती थी उस पर दबाव नहीं डालती थीं। ओ0पी0 मुथाई ने अपनी पुस्तक में एक घटना का जिक्र करते हुए बताया है कि वे नेहरू के वैयक्तिक नौकर के लिए स्वय फल लेकर गई। परिचित लोग जब गवर्नर आवास पर आते थे तो कभी व्यस्तता का बहाना नहीं करती थीं। उन्हें प्रेमपूर्ण भाव से बिठाती थीं। नौकरों को दोपहर को न तग करने के उद्देश्य से स्वय फोन आदि सुनती थीं। झाडू तक लगाने में सकुचाती नहीं थी। मित्रों के प्रति भी यही सवेदनशीलता दिखायी देती थी। स्व्य अस्वस्थ होने पर भी गोखले के पास नित्यप्रति जाती थीं, ताकि वे विदेश में अकेलापन न महसूस करें। गाधी जी के उपवास के दिनों में पूरी तरह ध्यान रखती थीं, यहाँ तक कि मिलने-जुलने वालों पर भी नजर रखती थीं। नेहरू परिवार में कोई भी अस्वस्थ हो, बराबर उनके घर में जानकारी रखती थीं।

वे विनोदी स्वभाव की थी और यही कारण था कि उनकी स्पष्टोक्ति भी अप्रिय नहीं लगती थी। दूसरो के प्रति हसी में जो कहती थीं उसमें द्वेष का भाव न होने के कारण कड़वाहट नहीं आती थी। गाधी को मिकी माउस, च्याग काई शेक को डोनाल्ड डक कहती थीं तो अपनी हँसी उड़ाने में भी पीछे नहीं रहती थीं। फोटोग्राफरों के बराबर कोण तय करने के प्रयास को रखकर बोली, मैं सब तरफ से एक सी गोल दिखती हूँ। उत्तर प्रदेश में एक दुर्घटना में चेहरे पर चोट लग जाने के बाद कहा

करती थी कि अगर प्लास्टिक सर्जरी होती तो मैं इतना ज्यादा बदसूरत न दिखती। किन्तु उनमें हीन भावना कतई नहीं थी। क्योंकि वह अपनी आकर्षण शक्ति से परिचित थी। विदेशी पत्रकार हो या विदेशी व्यापारी, छात्र हो या दुकानदार, स्त्री हो या पुरुष, उनके जादू से नहीं बच पाया था। उनकी आखें सबको बहुत सुन्दर और बड़ी लगती थीं। मॉर्टन गौस, सीमन्स सभी ने इस ओर सकेत किया है कि उनकी आखें आश्चर्यजनक रूप से बड़ी हैं उनका चेहरा कोमलता एव पवित्रता का परिचायक था।

सरोजिनी मृत्यु के बाद स्टेट्समैन समाचार पत्र में सम्पादकीय में छपा था, "मृत्यु ने भारतीय स्वतत्रता सग्राम के एक और शानदार व्यक्तित्व को छीन लिया। श्रीमती सरोजिनी नायडू बगाल की एक प्रतिभाशालिनी पुत्री थी। और तीस साल तक राष्ट्रीय आन्दोलन से जुड़ी रहीं साथ ही सामाजिक एव कानूनी सुधार में स्त्रियों को लाने वाली वे ही थीं। उन्हें ब्रिटेन, यू0एस0ए0 आदि में भी बहुत प्रसिद्धी मिली। अग्रेजी साहित्य के कद्रदानों ने उन्हें गीतिकाव्य की सवेदनशील कलाकार माना है। 'दि लीडर' में सरोजिनी के अग्रेजी भाषा पर प्रभुत्व की प्रशसा की गई। न केवल भारत बल्कि विदेश में भी उनकी मृत्यु का शोक प्रकट किया गया। वेरा ब्रिटन ने लिखा है कि, "श्रीमती सरोजिनी नायडू की मृत्यु से न केवल भारत और ससार को बल्कि साहित्य, शान्तिवाद और स्त्रीवाद को भी बड़ी क्षति पहुँची है।" ब्रेल्सफोर्ड का मानना था कि, "मेरे विचार में वे न केवल भारत बल्कि विश्व की सम्पूर्ण महानतम स्त्रियों में अपना स्थान रखती हैं। मैं किसी ऐसी महिला के बारे में ऐसा सोच भी नहीं सकता जो मोहकता, विनोद प्रियता, कलात्मकता तथा साहस में श्रीमती नायडू के समान दीप्तिमान हो सकती हो।"

गाधी जी द्वारा "भारत कोकिला" कही जाने वाली सरोजिनी नायडू जीवनपर्यन्त देश के प्रति समर्पित रही। उनका स्वास्थ्य पहले भी ठीक नहीं था किन्तु बार-बार जेल जाने और जेल से बाहर होने पर देश विदेश में गाधी के सिद्धान्तों का प्रचार करते रहना, इस कारण से उनका स्वास्थ्य और बिगड़ता चला गया, फिर भी वह जिन चीजों के लिए संघर्ष करती रही, वे आत्मा के उत्थान की थी। किसी भी

व्यक्ति के लिए स्वतन्त्रता हवा-पानी से अधिक जरूरी होती है। हिन्दू मुस्लिम एकता या स्त्री-मुक्ति उनके दृष्टिकोण की उदारता का परिचायक है, इन्हीं के लिए प्रयत्नशील कविता सरोजिनी आने वाली पीढ़ी भारत की भौतिक-आध्यात्मिक सम्पदा सौंपने के साथ उसे सुरक्षित रखने का आहवान करती है -

बच्चो, मेरे बच्चों सुबह हो रही है,
सुबह के मजीरे तुम्हे जगा रही है।
लम्बी रात शेष हुई, हमारे श्रम का अन्त हुआ,
जिन खेतो की हमने सेवा एव रक्षा की
उनकी खेती काटने को तैयार है।
जब तुम सो रहे थे, हमने बुआई की थी।
हमारे हाथ कमजोर थे पर मेल मे प्यार था,
अधेरों में हम तुम्हारे वैभव की सुबह से स्वप्न देखते रहे,
कल की खुशी के लिए चुपचाप सघर्ष करते रहे।
अपने दु ख के कुओ से तुम्हारे बीजो को सींचते रहे,
जागने पर तुम्हारी खुशी के लिए मेहनत करते रहे,
हमारी निगरानी पूरी हुई लो' सुबह की रोशनी आ रही है।

शुरु में कविता के लिए जानी गयी सरोजिनी जब राजनीति में सक्रिय हुयी तो लोगों ने सवाल किया कि वे कविता का स्वप्निल ससार छोड़कर राजनीति में क्यों आयी उन्होंने जवाब दिया कि कविता लिखने का मतलब सगमरमर के दुर्ग में रहना और केवल गुलाबों के बागों की बात करना नहीं होता, बल्कि लोगों के बीच रहना और खतरे की घड़ी में लोगों में उत्साह और प्रेरणा भरना होता है।

उन्हें राजनीतिज्ञ कहलाना पसन्द नहीं था। अल्डुअस हक्सले के कहने पर कि अगर सभी भारतीय राजनीतिज्ञ उन जैसे होते तो भारत बहुत खुशनसीब होता, उन्होंने कहा, "पता नहीं लोग मुझे राजनीतिज्ञ क्यों कहते हैं जबकि मैं ऐसा नहीं मानती। यह भाग्य की विडम्बना और मजाक है। देशभक्ति के अन्तर्गत केवल राजनीतिक ही नहीं सामाजिक पक्ष भी आता है। ताप्ती मुखर्जी की कविता "सरोजिनी" उनके

व्यक्तित्व की विशेषताओं को इस प्रकार अंकित करती है कि देवताओं ने उन्हें बनाने के लिए पचतत्वों से सहायता मागी। क्षिति ने धरती मा की उर्वरा मुस्कान दी, आपने उसमें दुख का समुद्र और बहते पानी सी हसी कर दी, मरूत ने आवाज में बीन और बासुरी की झनकार दी, व्युम ने अपनी उदारता और विस्तार दिया, देवता प्रसन्न हो गये, पर निर्मित स्त्री ने अत में कहा 'अग्नि कहाँ है, जिसके तेज से शुद्धि होती है।' देवता बोले, 'अग्नि' स्त्री के लिए? पर जब उस औरत ने अन्याय और विदेशी हाथों के शर्मनाक शोषण के विरुद्ध अपनी बहनों को जगाने के लिए और अपने देश को मनोकूल रूप से गौरवमय बनाने के लिए शब्दों से आग दहकाई, तो सब चकित रह गये। देवता तक काप उठे। वह औरत सरोजिनी थी। अनुबन्धित मजदूरी के विरोध में उन्होंने कहा विदेश में तुम्हारी स्त्रिया जो लज्जा झेल रही हैं उसे तुम्हें अपने खून से ढकना होगा जो आज रात आप सुन रहे हैं, उससे आप में गुस्से की आग भड़की होगी। भारत के पुरुषों, उस गुस्से को अनुबन्धित मजदूरी की चिता बना दो।

****

CHRONOLOGY OF IMPORTANT DATES

1879	Born on February 13 at Hyderabad, daughter of Prof Agharenath Chattopadhyaya and Varada Sundari
1890	First poetical composition
1891	Matriculated meritoriously from the Madras University
1892 1895	Stayed at home writing verses
1894	Fell in love with Govindarajulu Naidu
1895	To England in September on a special scholarship from the Nizam of Hyderabad, "Songs" published privately
1895 1898	At King's College, London, and at Girton College, Cambridge , met Edmund Gosse Arthur Symons and other members of the Rhymers Club , visited Italy
1898	Return to India , married to Govindarajulu Naidu
1902	Met Gopal Krishna Gokhale
1905	"The Golden Thresold" published in London
1906	Addressed the Indian Social Conference in Calcutta on "The Education of Indian women"
1908	Awarded the Kaiser i-Hind gold medal in recognition of her social services , attended the session of the Indian National Social Confernece at Madras
1909	Met Mrs Mutthulakshmi Reddy, in Madras for the first time
1912	"The Bird of Time" published in London
1914	Met Mahatma Gandhi for the first time in London on August 8
1915	Father and Gokhale passed away
1916	Met Pt Jawaharlal Nehru at the Lucknow Congress Session, the real beginning of Sarojini's political career, three of Sarojini's poems included in "The Oxford Book of English Mystical Verse"
1917	"The Broken Wing" published in London

1919	To England as a member of the deputation of the All India Home Rule League founded by Lokmanya Tilak
1920	Returned to India and intensified the nation's fight for freedom
1922	Attended the trail of Mahatma Gandhi
1924	Visited Africa as a delegate to the Kenya Indian Congress
1925	Elected President of the Indian National Congress at the Kanpur Session
1928 1929	Visited the United States and Canada as an emissary of Mahatma Gandhi
1929	Visited East Africa a second time
1931	Accompanied Mahatma Gandhi to London to attend the Second Round Table Conference, Visited South Africa as a delegate of the Indian Government to review the working of the Cape Town Agreement of 1927
1932	Arrested and sent to the Arthur Road Jail, thence to the women's jail in Varavada, for participating in the Civil Disobedience Movement
1933	Released on May 8 along with the Mahatma worked for the opening of the Lady Irwin College for Women in Delhi
1934	Presided over the Indian women's Association in Madras, and attended the All-India Women's Conference in Karachi
1935	Presided over the All India Music Conference in Delhi participated as President of the Bombay Provincial Congress Committee in the Golden Jubilee celebrations of the Indian National Congress
1938	Opened the Hooghly Jute Mills Worker's Conference at Champdani on July 17

1939	Solved the problem of Congress Presidentship when Subhash Chandra Bose declined to act as President on principles
1940	Offered Satyagraha along with Bhula Bhai Desai and other Congress Workers
1942	Imprisoned a third time August 9 in the wake of the "Quit India" Movement
1943	Released unconditionally on March 21
1944 1947	Visited Bengal many times to consult her physicians B C Roy and S K Sen
1944	Presented to the Mahatma a Rupees eighty Lakh purse on behalf of the country
1947 1949	Governor of Uttar Pradesh
1947	Presided over the Asian Relations Conference held in New Delhi in March
1948	Grief at the assassination of Mahatma Gandhi
1949	Died at Lucknow on March 2, and cremated with full state honours on the banks of the Gomati
1961	"The Feather of the Dawn", edited by Padmaja Naidu published in Bombay

(क) मूल एव सहायक सदर्भ ग्रथ-सूची

क्र०	ग्रथ	विवरण
1	साग्ज	अघोरनाथ चट्टोपाध्याय द्वारा निजी रूप से प्रकाशित 1896
2	दि गोल्डन थ्रैशोल्ड	डब्ल्यू0 हीनमान, लन्दन 1905
3	दि बर्ड आफ टाइम	विलियम, हीनमान, लन्दन 1912
4	दि ब्रोकेन विंग	विलियम, हीनमान, लन्दन 1917
5	दि सेप्टर्ड फ्लूट	जोसेफ आसलैण्डर की प्रस्तावना सहित, डॉड मीड एड कम्पनी 1937
6	दि सेप्टर्ड फ्लूट	किताबिस्तान, भारत में प्रथमत प्रकाशित, 1943 द्वितीय सस्करण 1946
7	दि गिफ्ट आफ इडिया	प्रथम सस्करण, हैदराबाद (दक्षिण) 1917 द्वितीय सस्करण, दि कैम्ब्रिज प्रेस, मद्रास 1919
8	गोपाल कृष्ण गोखले	बाम्बे क्रानिकल में प्रथमत प्रकाशित पुस्तिका
9	दि सोल आफ इडिया	प्रथम सस्करण, हैदराबाद 1917, द्वितीय सस्करण, दि कैम्ब्रिज प्रेस, मद्रास 1819
10	स्पीचेज एण्ड राइटिंग्ज आफ सरोजिनी नायडू	जी0ए0 नटेशन एण्ड कम्पनी मद्रास, दूसरा एव तीसरा सस्करण
11	ग्रेट वीमैन आफ इडिया	कमला सत्थियनाथन्, लागमैन्स, इडियन रीडिंग बुक्स 1930
12	लाइफ एण्ड माइसेल्फ	ले0 हरीन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय भाग c, नालन्दा पब्लिकेशन्स, डान अप्रोचिग नून बम्बई
13	दि लेडीज मैगजीन	1901-1917, स0 के0 सत्थियनाथन्
14	सरोजिनी नायडू	अमरनाथ झा, एक निजी प्रकाशन
15	इडियन राइटिंग इन इगलिश	के0आर0 श्रीनिवास आयगर, एशिया पब्लिशिग हाउस, 1962
16	वीमैन आफ इडिया	मु0स0ताराअली बेग, पब्लिकेशन्स, डिविजन 1958
17	वीमैन विहाइण्ड महात्मा गाधी	एलीनर मॉर्टन, मैक्स रीनहार्ड, लन्दन 1954
18	माइ डेज विद गाधी	निर्मल के0 बोस, निशान, 1953

19 मिशन विद माउण्टबैटन — एलन कैंपबेल जान्सन

20 जैस्टिग पाइलेट — एल्डस हक्सले, चैटो एण्ड विंडस 1931

21 दि नैकेड फकीर — राबर्ट बर्नेज, विक्टर गोलाज, लन्दन 1954

22 माई गाधी — ले0जॉन हेन्स होम्स, एलन एण्ड अनविन, लन्दन 1954

23 दि अवेकनिग ऑफ इडियन वूमैन हुड — मार्गरिट ई0कजिन्स, गणेश मद्रास, 1922

24 दि गोल्डन ट्रेजरी ऑफ इण्डो-एग्लियन पोएट्री — 1829-1865, स0 वी0के0 गोकाक, साहित्य अकादमी

25 इण्डो-इग्लिश लिट्रेचर इन दि नाइन्टीन्थ सैंचुरी — जॉन बी0 अल्फान्सोकरकल, दि लिटरेरी हाफ-ईयरली, मैसूर विश्वविद्यालय

26 इण्डो-इग्लिश पोएट्री — पी0सी0 कोटोकी, प्रकाशन विभाग गोहाटी विश्वविद्यालय, 1969

27 क्रिटिकल ऐसेज आन इण्डियन राइटिंग्स इन इग्लिश — स0 एम0के0 नायर, एस0के0 देसाई, जी0एस0 अमुर, कर्नाटक विश्वविद्यालय, धारवाड 1968

28 दि स्वान एण्ड दि ईगल — बी0सी0डी0 नरसिंहैया, इडियन इस्टीटयूट ऑफ एडवास्ड स्टडीज, शिमला, 1969

29 दि टू-फोल्ड वाइस — ऐसेज ऑन इडियन राइटिंग इन इग्लिश, स0 वी0के0 राघवाचार्यलु, नवोदय पब्लिशर्स

30 एशियन रिलेशन्स — रिपोर्ट ऑफ दि प्रोसीडिंग्ज एड डाक्यूमैंट आफ दि फर्स्ट एशियन रिलेशन्स कान्फ्रैंस-नई दिल्ली, 1947, एशियन रिलेशन्स आर्गनाइजेशन, नई दिल्ली, 1948

31 दि हिस्ट्री आफ दि इण्डियन नेशनल काग्रेस — डॉ0 बी0 पट्टाभि सीता रामैय्या पद्म - पब्लिकेशन्स, बम्बई (अग्रेजी) 1946-47

32 मार्डन इण्डियन पोएट्री इन इग्लिश — एथ्रालॉजी एड क्रेजे, स0पी0लाल, राइटर्स वर्कशाप, कलकत्ता

33 सरोजिनी नायडू — पद्मिनी सेन गुप्ता, एशिया पब्लिशिग हाउस, 1966

(ख) सहायक सदर्भ पुस्तकें

क्रम	पुस्तक	लेखक / प्रकाशक
1	भारतीय इतिहास कोष	सच्चिदानन्द भट्टाचार्य, हिन्दी समिति, उत्तर प्रदेश।
2	भारत में सशस्त्र क्रान्ति की भूमिका	तरिणी शकर चक्रवर्ती 15बी, एडमान्स्टन रोड, इलाहाबाद।
3	भारत का मुक्ति-सग्राम	अयोध्या सिह, रेखा प्रकाशन, कलकत्ता।
4	इपीरियल गजेटियर ऑफ इडिया	खड - 22
5	द हिस्ट्री ऑफ इडियन नेशनल काग्रेस	(प्रथम खड व द्वितीय खड) डॉ0 पट्टाभि सीतारमैया, पद्मा पब्लिकेशस, प्रा0लि0, बबई।
6	भारत में अग्रेजी राज	सुदरलाल - प्रकाशन विभाग, भारत सरकार नई दिल्ली।
7	भारतीयइतिहास का परिचय	पी0एस0 त्रिपाठी, यगमैन एड कम्पनी दिल्ली।
8	भारतीय नवजागरण का इतिहास	बाबूराव जोशी, सस्ता साहित्य मडल, नई दिल्ली।
9	भारतीय स्वतत्रता सग्राम का इतिहास	रामगोपाल, पुस्तक केन्द्र, 72 हजरतगज, लखनऊ।
10	भारतीय स्वतत्रता आन्दोलन का इतिहास	(प्रथम खड) ताराचन्द, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली।
11	भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन का इतिहास	मन्मथनाथ गुप्त, आत्माराम एड सस, काश्मीरी गेट, दिल्ली।
12	भारत का वृहद इतिहास	तृतीय भाग (आधुनिक भारत) मजूमदार आदि, मैकमिलन एड कम्पनी।
13	आधुनिक भारत (ए हिस्ट्री आफ माडर्न इडिया)	(1707-1947)- एल0पी0शर्मा, प्रकाशक, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल, हास्पिटल रोड, आगरा।

14 श्रीमती सरोजिनी नायडू	ले0 माताप्रसाद पाठक, प्रकाशक- शिवनारायण मिश्र 'मिषग्रन्त्र वैद्य' प्रकाश पुस्तकालय, कानपुर, प्रथम सस्करण स0 2000
15 भारत का स्वतत्रता सघर्ष	प्रो0 बिपिनचन्द्र, मुहला मुखर्जी, आदित्य मुखर्जी क0न0 पनिकर, सुचेता महाजन, 1998-9, दूसरा सस्करण, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।
16 स्वतत्रता सग्राम	ले0बिपिनचन्द्र, अमलेश त्रिपाठी, वरूण दे, नेशनल बुक ट्रस्ट, इडिया नई दिल्ली 1977, 72
17 गाधी विचार और दृष्टि	ले0 हरदान हर्ष, श्याम प्रकाशन जयपुर - 1996
18 महात्मा	ले0डी0जी0 तेन्दुलकर, 8 खण्डों में
19 काग्रेस चित्रावली	प्रकाश पुस्तकालय कानपुर
20 भारत कोकिला सरोजिनी नायडू	राजपाल एण्ड सन्स दिल्ली
21 सरोजिनी नायडू	ले0राजकुमार शर्मा, दिल्ली पुस्तक सदन, नईदिल्ली।
22 स्वतत्रता सग्राम और महिलायें	ले0 विश्वप्रकाश गुप्त/मोहनी गुप्त, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली -1999, नमक प्रकाश्न नई दिल्ली।
23 भारत की महान नारिया	ले0 राजकुमार, अनिल आलेख प्रकाशन, नई दिल्ली।
24 आधुनिक भारतीय सामाजिक और राजनीतिक विचार	ले0 ज्योति प्रसाद सूद, के0 नाथ एड कम्पनी, मेरठ।
25 काग्रेस का इतिहास	1885-1935, भाग-1, ले0 पट्टाभिसीता रमैया, हिन्दी अनुवादक-हरिभाऊ उपाध्याय, प्रकाशक- सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली, 1946
26 काग्रेस का इतिहास	भाग-2 एव तीन ले0 पट्टाभिसीता रमैया, प्रकाशक- सस्ता, साहित्य मण्डल, नई दिल्ली।
27 काग्रेस के प्रस्ताव	ले0 कन्हैयालाल, 1931
28 राष्ट्रीय आन्दोलन	ले0-प्रभुदयाल, 1976

29 राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास	1962, मन्मथनाथ गुप्त
30 राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास	1948, मन्मथनाथ गुप्त
31 कांग्रेस चरितावली	1908, ले0 सूर्य कुमार
32 पत्र-व्यवहार भाग-8 राजनीतिक व्यक्तियों व समाजसेवियों से	सम्पादक- रामकृष्ण बजाज, सस्ता साहित्य मण्डल नई दिल्ली, शाखा इलाहाबाद 1969, जमनालाल बजाज सेवा ट्रस्ट वर्धा की ओर से मार्तण्ड उपाध्याय द्वारा प्रकाशित।
33 सम्पूर्ण गाधी वागमय वाङमय	खण्ड 26 - 1925(जनवरी-अप्रैल) - 1968 खण्ड 23 - 1922-1924, 1967 खण्ड 24 - 1924, 1968
34 सरोजिनी नायडू	ले0 राजकुमार शर्मा, 30/36 गली न01, प्रकाशन- दिल्ली पुस्तक सदन, विश्वास नगर, शाहदरा, दिल्ली-110032
35 काग्रेस के सौ वर्ष	(सघर्ष और सफलता का इतिहास) ले0 मन्मथनाथ गुप्त
36 भारतीय स्वतत्रता सग्राम में महिलाओं का योगदान	ले0 बानो सरताज, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली।
37 स्वतत्रता सग्राम और महिलायें	विश्व प्रकाश गुप्त/मोहन गुप्त 1999, राधा पब्लिकेशन नई दिल्ली।
38 भारत कोकिला-सरोजिनी	राजपाल एण्ड सन्स, मदरसा रोड, काश्मीरी गेट, नायडू दिल्ली।
39 सरोजिनी नायडू	ले0 इन्दु जैन, 1951, प्रकाशन विभाग सूचना एव प्रसारण मत्रालय नई दिल्ली।

40 सरोजिनी नायडू — डॉ0 माजदा असद, प्रथम संस्करण 1991-1997, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसधान और प्रशिक्षण परिषद - 1991, नई दिल्ली।

41 सरोजिनी नायडू — ले0 सुरेश सलिल - 1979

42 राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास — प्रकाशक- शिवलाल अग्रवाला एण्ड क0लि0 आगरा-1948

43 राष्ट्रीय आन्दोलन — ले0 प्रभुदयाल मीतल, प्रकाशक - राष्ट्रभाषा पुस्तक भण्डार, मथुरा 1979

44 कांग्रेस का सरल इतिहास — ले0 ठा0राजबहादुर सिह, राजहस प्रकाशन नई दिल्ली, 1949

45 भारतीय स्वतत्रता आन्दोलन में महिलाओं का योगदान — बानो सरताज, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली।

46 कांग्रेस का इतिहास — ले0 पट्टाभिसीता रमैया, तीन खण्डों में।

47 आजादी की सघर्ष कथा — ले0 शकरसहाय सक्सेना, ग्रन्थ विकास आदेश नगर, जयपुर

48 सरोजिनी नायडू — ले0 उमा पाठक।

49 सरोजिनी नायडू — ताराअली बेग, प्रकाशन विभाग सूचना और प्रसारण मत्रालय, भारत सरकार।

50 शान्तिदूत महात्मा — ले0 मनोरमा जफा, निदेशक प्रकाशन विभाग सूचना और प्रसारण मत्रालय भारत सरकार, पटियाला हाउस, नई दिल्ली।

51 सरोजिनी नायडू — ले0 पद्मिनी सेन गुप्ता, साहित्य अकादमी, रविन्द्र भवन, फिरोजशाह मेहता रोड, नई दिल्ली।

(ग) परिचय ग्रन्थ

1 इडियन मार्टियर्स	(खड प्रथम, द्वितीय, तृतीय) प्रकाशन विभाग, भारत सरकार नई दिल्ली।
2 फ्रीडम मूवमेन्ट इन बगाल	सपादक निर्मलकुमार सिन्हा, शिक्षा विभाग, पश्चिमी बगाल।
3 स्वाधीनता सग्रामे बगलार नारी	(बाग्ला) कमलादास गुप्त वसुधारा प्रकाशनी, कलकत्ता।
4 डायरेक्टरी ऑफ इडियन वूमेन टुडे	सपादक अजीर कौर, इडिया इटरनेशनल पब्लिकेशस, बी 116 नीतिबाग, नई दिल्ली।
5 द फारमिग आफ इडियन कास्टीट्यूशन	(खण्ड प्रथम) बी0शिवराव, द इडियन इस्टीट्यूट ऑफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, नई दिल्ली।
6 'एट द क्रास रोड'	कमलादेवी चट्टोपाध्याय, नेशनल इफारमेशन एड पब्लिकेशस लिमिटेड, बबई।
7 वूमेन मूवमेंट इन इडिया	कमलादेवी चट्टोपाध्याय।
8 द अवेकनिग आफ इडियन वूमेन	कमलादेवी चट्टोपाध्याय, एवरी मैन्स प्रेस, मद्रास।
9 द स्कोप आफ हैप्पीनेस	विजयलक्ष्मी पडित, विकास पब्लिशिग हाउस, दिल्ली।
10 रोल आफ वूमेन इन फ्रीडम मूवमेंट	(1857-1947) डॉ0 मनमोहन कौर, स्टर्लिंग पब्लिकेशन्स, 3640, मोरीगेट, दिल्ली-61
11 इडियन वूमेन हुड टुडे	मारग्रेट कजिस, किताबिस्तान इलाहाबाद।
12 इडियन ए नेशन	एनी बेसेंट, मद्रास।
13 वेक-अप इडिया	एनी बेसेंट, मद्रास।
14 द एनी बेसेंट काटेम्परेरी बुक	(1847-1947) सपादक, जेम्स, कजिस, बेसेंट सेटेनरी सेलीब्रेशन कमेटी, अडयार, मद्रास।
15 भारतीय स्वाधीनता आदोलन और महिलायें	पी0एन0 चोपड़ा-शिक्षा एव समाज कल्याण मत्रालय, भारत सरकार।

(घ) अंग्रेजी पुस्तकें

Select Bibliography

Primary Source

(i) Poetical Source

Naidu Sarojini	The Golden threshold, William Hemmann, London-1905
	The Bird of Time, William Heinmann London 1912
	The Broken Wing, William Heinmann London-191
	The Scentred Flute, Dodd Mead and Co New York 1937
	The feather of the Dawn, Asia Publish House Bombay 1961

(ii) Prose work and Pamphlets

Saroniji Naidu	Speeches and writing of Sarojini Naidu G A Natesan and Co Madras 1919
	The soul of India, The Cambridge Press Madras 1919, A Pamphlet

Secondary Source

Books on Sarojini Naidu

1 Ayyar P A Subrahmanya	Sarojini Devi, Cultural Books Madras 1957
2 Baig Tara Ali	Sarojini Naidu publishing division Ministry of Information and Broadcasting, Govt of India New Delhi, 1974
3 Bhatnagar Ram Ratan	Sarojini Naidu The Poet of a nation, Kitab Mahal, Alld 1947
4 Dalway, Turubull H C	Sarojini Naidu, Select poems Oxford University Press, Bombay 1930

5 Dastoor P E — Sarojini Naidu - Rao and Raghvan Mysore 1961
6 Gupta A N & Satish — Sarojini Naidu, Select poems, Prakash Book Depot Bareilly, 1976
7 Gupta Rameshwar — Sarojini Naidu, The Poetess Doaba House Delhi 1975
8 Jha Amarnath — Mrs Sarojini Naidu A Pesonal Homage, Indian Press Alld 1949
9 Naravane V S — Sarojini Naidu, Orient Longmans New Delhi, 1977
10 Rajya Lakshmi P V — The Lyric spring Abhinav Publications New Delhi, 1977
11 Sen Gupta Padmini — Sarojini Naidu, Asia Publishing House, Bombay 1966
12 Bannerjee Hiranmay — How thou singest my master Orient Longmans, Calcutta 1961
13 Basu Lotika — Indian writers of English verse Calcutta University Press, Calcutta 1933
14 Chattopadhya Harindra Nath — Life and myself, Nalanda Publications, Bombay, 1948
15 Bhushan V N — Ed The Peacock Lute Padma Publications, Bombay 1945
16 Dwivedi Amarnath — Indo Anglian Poetry Kitab Mahal Allahabad-1979
17 Gangoly, O C , — Landscape in Indian Literature and Art Lucknow, 1964
18 Madhvand, Swami & Mazumdar, R C — Great womens of India Mayavati Advaita Ashram Almora 1953
19 Mazumdar, R C — Struggle for Freedom, Bhartiya Vidya Bhawan Bombay 1969
20 Mehrotra, K K — Ed Essays and studies, Lokbharti Publications, Allahabad, 1970

21 Dutta Toru — Ancient Ballads and Legends of Hindustani Kitabistan, Allahabad 1941

22 Ahiya Sahib Singh — "The Humour of Mrs Naidu" The Modern Review (Feb 1962)

23 Anand Mulk Raj — "The Nightingale of India" Affairs Vol II (1931)

24 Bhattacharya K K — "Sarojini Devi the greatest woman of our time" The Idol of the Nation "The modern Review April' 1949

25 Chattopadhyay Harindranath — My sister Sarojini "My Magazine' March, 1937

26 Ghosh Latika — "Sarojini Naidu Calcutta Review 1949

27 Pt Jawaharlal Nehru — "Sarojini Devi A tribute in India's Parliament The Hindustan Review, LXXXII, April 1949

28 Raja Sir Maharaj Singh — "Srimati Sarojini Naidu" The Indian Review (April 1949)

29 Asian Relations — Report of the Proceedings and Document at the first Asian Relations Conference New Delhi, 1947 Asian Relations Organisation New Delhi, 1948

30 Pattabhi Sitaramayya — The History of the Indian National Congress Padma Publication Bombay 1946 47

31 Amarnath Jha — Sarojini Naidu A Private Publication

32 Nirmal K Bose — My days with Gandhi, Nishana 1953

33 Azad Maulana A Kalam — India Wins Freedom 1959

34 K K Bhattacharya — Sarojini Naidu 'The greatest women of of our Time'

35 Shankar Ghosh — The Renaissance to Militant Nationalism

36 O P Goyal — Studies in Modern Indian Political

37 A Appadorai — Indian Political thinking from - Naoraoji to Nehru

38 Raghukul Tilak — Sarojini Naidu Select Poems, 1999, Rama Brothers Educational Publishers, Bank Street Karol Bag New Delhi

(ङ) पत्र पत्रिकायें

1 हरिजन

2 नवजीवन

3 यग इण्डिया

4 बाम्बे क्रॉनिकल

5 गाधी सन्देश

6 स्त्री दर्पण

7 दि लीडर

8 माई मैगजीन - मार्च 1937